Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain.

Arya Samaj Foundation Chennai and

JEEVAN SAHITYA 1941

K. V.
18.
DWAR

078753

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

078 753

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

* तमसो मा ज्योतिर्गमय *

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन साहित्य

१ : अंक ७ | सम्पादक हरिभाऊ उपाध्याय | फरवरी : १९४१

सुनहला स्वप्न

आज हमारी संस्कृति पर कुछ खतरे दिखायी दे रहे हैं। इस संस्कृति का निर्माण सदियों में हुआ है और यहाँ आयी हुई विभिन्न जातियों ने उसमें अपना सहयोग दिया है। भारतवर्ष केवल भौगोलिक सीमाओं से ही एक राष्ट्र नहीं है, बल्कि मनोवैज्ञानिक कारणों से भी वह अखण्ड है। विभिन्न धर्मानुयायी होकर भी भारतीयों की सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पृष्ठ-भूमि एक ही-सी है हिन्दुओं और मुसलमानों का गुरुजनों के प्रति आचरण, पारिवारिक सम्बन्ध, वैवाहिक प्रथायें और कर्मानुसार जाति-पद्धति के आधार प्रायः एक ही हैं। साहित्य, संगीत और कला में दोनों जातियों का संसर्ग स्पष्ट झलक रहा है। कोई भी बाहरी आक्रमण हमारी इस मनोवैज्ञानिक एकात्मता को नष्ट नहीं कर सका। भारत के जन-समाज में अब भी वे झगड़े कहाँ हैं, जिनमें भिन्न-भिन्न समुदायों के नेतृत्व का दम भरनेवाले शिक्षित-वर्ग सीटों के बटवारे के लिए उलझे हुए हैं?

आजादी के लिए हम उत्सुक हैं और यह बिल्कुल स्वाभाविक है, परन्तु उसको पाने की चेष्टा के साथ-साथ हमें वह योग्यता भी अर्जन करनी चाहिए, जिससे हम उसकी रक्षा कर सकें। और उस योग्यता का मूल स्रोत तो व्यक्तिगत तथा सामाजिक अनुशासन ही है। उसके बिना स्वतन्त्रता एक सुनहला स्वप्न-भर है।

सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

प्रकाशक

सस्ता साहित्य मण्डल

कनाट सर्कस — नई दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

१. **झाँकी** (कविता)—[श्री देवदत्त शास्त्री, एम. ए., एम. ओ. एल.] २७७

२. **पूना का साहित्यिक पर्व**— [श्री हरिभाऊ उपाध्याय] २७८

३. **चारित्र्य**— [श्री किशोरलाल घ० मश्रुवाला] २८३

४. **एक स्मृति**—[श्री महादेवी वर्मा, एम. ए.] २८५

५. **पठन-पाठन का प्रचार**— [श्री कालिदास कपूर, एम. ए. एल. टी.] २८७

६. **जीवन में 'साधन' और 'साध्य'**— [श्री प्रेमनारायण माथुर, एम. ए.] २९०

७. **सौष्ठव-पूजा**— [श्री प्रभाकर माचवे, एम. ए., साहित्यरत्न] २९४

८. **'कल्याणी' का अकल्याणी चित्रण**— [श्री नरोत्तमप्रसाद नागर] २९७

९. **सुन्दर समन्वय**—[श्री गणेशलाल शर्मा] ३००

१०. **हिन्दी के बाल-साहित्य पर एक दृष्टि**—[श्री सुमनेश : श्री सुधीर] ३०२

११. **बन्दी**—[श्री 'विकल'] ३०६

१२. **प्रस्तुत प्रश्न**— ३०७
'अश्लीलता' किसे कहें ? (श्री किशोरलाल घ० मश्रुवाला); 'साहित्य' और 'प्रगतिशीलता' (श्री नन्ददुलारे बाजपेयी एम. ए.)

१३. **नयी पुस्तकें**— ३१०

१४. **कसौटी पर**— 'साहित्यिकी'; 'जीवन-यात्रा'; 'आहुति', 'हमारा योग व उसके उद्देश'; दो नयी किताबें ३११

१५. **सैर-सपाटा**— ३१६

१६. **कृष्ण-मन्दिर में**— ३१७

१७. **क्या और कैसे ?**— ३१९
आदर्श; हिन्दी पत्रकार-संघ; गागर में सागर; एक सुझाव; भूल-सुधार; स्व० श्री कृष्णकान्तजी मालवीय

'मण्डल' की ओर से

'मंडल' के एक प्रेमी पाठककी इच्छा है कि

श्री घनश्यामदास बिड़ला की 'बापू' पुस्तक

की ५० प्रतियाँ उन व्यक्तियों में मुफ्त बाँट दी जायें जो राष्ट्रीय विचार के हों पर गांधी-विचार धारा से मतभेद रखते हों। इसलिए जो व्यक्ति इस कोटि में आते हों, वे इस बात के प्रमाण के साथ =)॥। आने डाक के टिकट भेजें, उन्हें पुस्तक की एक प्रति बुकपोस्ट से पोस्टल सार्टीफिकेट लेकर मुफ्त में भेज दी जायगी।

पाठकों को यह जानकर खुशी होगी कि

हाथ-काग़ज के लिफाफे, कार्ड व चिट्ठी लिखने के काग़ज

नये वर्ष से हमने अपने प्रधान-कार्यालय नई दिल्ली तथा इन्दौर-शाखा में विक्रयार्थ रखे हैं। हमने लेटरहैड आदि छापने का भी प्रबन्ध कर रखा है। जो सज्जन कोरे काग़ज या लिफाफे चाहें तो वैसे और अपने नाम के छपाने चाहें तो वैसे हम उनको हमेशा उनकी रुचि और मर्जी के अनुसार दे सकेंगे। नमूने के लिए।) के टिकट भेजिए।

सस्ता-साहित्य-मण्डल, कनाट सर्कस, नई-दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
078753

जीवन-साहित्य

असतो मा सद्‌गमय; तमसो मा ज्योतिर्गमय; मृत्योर्माऽमृतंगमय।

फ़रवरी, १९४१ नई दिल्ली | सम्पादक हरिभाऊ उपाध्याय | वर्ष पहला अंक सातवाँ

झाँकी

१

आज मा की श्री निराली!
नत वदन, तन धूसरित है
हत विभव, मन संकुचित है
तप्त कांचन-वल्लरी सी पड़ गयी है देह काली!
आज मा की श्री निराली!

२

अंग सब जकड़े कड़े हैं
रूक्ष कच बिखरे पड़े हैं
भाल पर संताप से है जल रही सिन्दूर-लाली!
आज मा की श्री निराली!

३

काँपता पल-पल उरस्थल
साँस लेता ज्यों मरुस्थल
कनक-कुण्डल की कथा क्या? दीखते सब अंग खाली!
आज मा की श्री निराली!

४

दीनवसना, लुंठिता-सी
विह्वला-सी, कुंठिता-सी
नयन में अमृत झलकता, हाथ में है गरल-प्याली!
आज मा की श्री निराली!

देवदत्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूना का साहित्यिक पर्व

पूना का हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन बड़ी आशंकाओं और सरगर्मियों के वातावरण में हुआ। पिछले दिनों स्वागत-समिति में जो झगड़े हुए उनसे तथा मनोनीत सभापति श्री सम्पूर्णानन्दजी के जेल जाने से यह आशंका भी होने लगी थी कि सम्मेलन हो सकेगा या नहीं—ख़ैर वह हो गया और कहना होगा कि काशी के मुक़ाबले ठीक-ठीक ढँग से ही हुआ। 'राष्ट्रभाषा की व्याख्या' इस सम्मेलन की चर्चा व सरगर्मी का प्रधान विषय था। इंदौर-सम्मेलन में जो व्याख्या तय पायी थी उसके एक अंश का बड़ा विरोध कुछ हल्कों में हो रहा था। 'जो नागरी या उर्दू लिपि में लिखी जाती हो' इस व्याख्यांश में से वे 'उर्दू लिपि' को निकाल डालना या उर्दू के साथ अन्य जैसे कैथी, रोमन, आदि लिपियों का नाम जोड़ना चाहते थे। उनका आशय यह था कि 'उर्दू लिपि' राष्ट्रलिपि नहीं है, और उर्दू भाषा तथा कुछ प्रान्तीय सरकारें उसे हिन्दीभाषियों पर, इस व्याख्या के सहारे थोप देना चाहती हैं। उनका यह सन्देह व भय दूर करने के लिए वह अंश पूना-सम्मेलन में इस तरह बना दिया गया है 'जो साधारणतः राष्ट्रलिपि नागरी में व कहीं-कहीं फारसी लिपि में लिखी जाती हो'। इसके द्वारा नागरी को साफ़ शब्दों में 'राष्ट्रलिपि' माना गया है और 'फारसी' का प्रचलित व्यवहार भी स्वीकार किया गया है। यह परिवर्तन वस्तुस्थिति का निदर्शक भी है। इसलिए अब यह आशा की जा सकती है कि इस विवाद का और इसके कारण उत्पन्न हुई कटुता का अंत हो जायगा। इस प्रश्न पर स्वागताध्यक्ष श्री वैशम्पायन व अन्त में उनके मित्रों ने भी समझदारी, दूरदर्शिता तथा राष्ट्रीय भावना का अच्छा परिचय दिया। 'राष्ट्रभाषा' का लक्षण ठहराने में हमें यह न भूलना चाहिए कि वह किसी जाति, प्रान्त या संस्कृति-विशेष की भाषा नहीं है, बल्कि सारे भारत-राष्ट्र के लोक व राज-व्यवहार की भाषा है और उसका स्वरूप व्यापक तथा प्रकृति लचीली ही रह सकती है। हिन्दी को जिन प्रान्तवासियों ने जैसे गुजरात, महाराष्ट्र आदि ने राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया है वह इसी अर्थ में व इसी अर्थ से कि वह राष्ट्रीय भाषा है, न कि किसी जाति या प्रान्त विशेष की जातीय या प्रान्तीय भाषा। यदि उसके मूल में राष्ट्रीय-संगठन का भाव न रहे, या उनके फल-स्वरूप राष्ट्रीय-संगठन न होता दिखायी दे, तो उसे उन भाषियों के लिए अपने सिर पर बिठाना फजूल समझना चाहिए। अतएव उन प्रान्तभाषा-भाषियों से भी निवेदन है कि वे राष्ट्रभाषा के स्वरूप का निर्णय करते समय संकुचित, जातीय, प्रान्तीय भावनाओं का आश्रय न लें और लोहे के छड़ की तरह सख़्त व अ-नम न बनें।

'लिपि-सुधार' के प्रश्न की चर्चा में भी सरगर्मी दीख पड़ी। 'ए' की जगह 'अे' व 'र' की जगह 'ꣻ' चिन्ह मंजूर होने के अलावा तमाम संशोधन-सूचनायें पुनर्विचार के लिए फिर एक उपसमिति के सिपुर्द हुईं। पाँच वर्षों में, उपसमिति, स्थायी समिति, आदि के मन्थन-स्वरूप सिर्फ दो अक्षरों के सुधारों का स्वीकृत होना और शेष का फिर अनिश्चित भविष्य के हाथों में सौंप दिया जाना—यह दिखलाता था कि हम कितने मन्दगामी हैं और अपनी तथा समय की आवश्यकता के प्रति कितने शिथिल व निर्जीववत् हैं! बड़े व दूर-परिणामकारी निर्णय करने के साहस का अभाव इसमें दिखायी देता है। विज्ञान व सत्य की शोध हमें जहाँ ले जाती है, वहाँतक बेधड़क दौड़ जाने की एवं समय की आवश्यकतायें हमसे जो कुछ चाहती हैं, उसे दिल खोलकर एक साँस में दे डालने की हिम्मत का परिचय जबतक हम न देंगे, तबतक हिन्दी-साहित्य की श्री-वृद्धि, राष्ट्रभाषा का प्रचार व उसके द्वारा राष्ट्रीय एकता की सिद्धि बहुत कठिन रहेगी।

हैदराबाद रियासत का लड़कियों की पाठशालाओं में भी उर्दू पढ़ाना अनिवार्य कर देना, पंजाब सरकार का जन-गणना में पंजाबियों की मातृ-भाषा 'हिन्दुस्तानी' लिखने का सरक्युलर, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकार का उर्दू-शिक्षा-सम्बन्धी सरकुलर, इन ...इयों का सम्मेलन ने विरोध किया। शिक्षण का माध्यम प्रान्तीय भाषा व राष्ट्र-व्यवहार का माध्यम 'हिन्दी' या 'हिन्दुस्तानी'—जो भी नाम रख लिया जाय—यदि इस सिद्धान्त को हम सब भारतवासी मान लें, और हमें मान ही लेना चाहिए—तो फिर पूर्वोक्त जैसी आपत्ति-योग्य कार्रवाइयाँ न होंगी; न होनी चाहिएँ। यदि हम सब भारतवासी यह न चाहते हों कि हमें राष्ट्र-भाषा के रूप में 'अँगरेज़ी' व राष्ट्र लिपि के तौर पर 'रोमन' स्वीकार करनी पड़े, तो हमें पूर्वोक्त सिद्धान्त को अपनाये बिना गति ही नहीं है। जहाँतक लिपि का सम्बन्ध है, नागरी के मुकाबले में फारसी लिपि का टिकना स्वभावतः व विज्ञानतः ही अशक्य है। जैसे-जैसे हमारी वृत्ति अधिक वैज्ञानिक व शोधक होती जायगी, वैसे-वैसे खुद फारसी-लिपि के हामी भी अपने दुराग्रह को अपने-आप छोड़ते चले जायँगे। संसार में वही वस्तु टिकी रहेगी जो सत्य अथवा विज्ञान के अधिष्ठान को पकड़ रखेगी तथा समयोपयोगिता के अनुसार अपने स्वरूप, गति-विधि आदि में संशोधन, परिवर्तन, परिवर्द्धन करती रहेगी। सत्य या विज्ञान को पकड़ रखने से हमारी दिशा-भूल न होगी व व्यवहारोपयोगिता पर ध्यान रखने से हमारी गति अकुण्ठित व सार्थक होती रहेगी।

सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष श्री वैशम्पायन का भाषण सरस, ओजस्वी व राष्ट्र-प्रेम से सना हुआ तथा सुन्दर हिंदी का नमूना था। उन्होंने राष्ट्र-भाषा के लिए 'हिन्दी' नाम का व शुद्ध स्वरूप का आग्रह किया। हमारी संस्कृति की ओर संकेत किया और बताया कि 'हिन्दी' 'हिन्दुस्तानी' वास्तव में नाम का नहीं 'हिन्दू' व 'मुस्लिम' वर्चस्व का विवाद है। हिन्दुस्थान में सब हिन्दुस्थानियों का पंचायती राज्य हो या हिन्दुओं का राज्य हो—इन विचारधाराओं के भेद या लक्ष्य से इसका संबंध है। उनका यह निदान मुझे ठीक मालूम होता है। मगर इसका उपाय या इलाज हमारी स्पिरिट या वृत्ति के संकोचन में नहीं, व्यापकता में है। यदि हम नामों व व्याख्याओं के बन्धन या मर्यादा में घूमते रहेंगे, तो एक राष्ट्रीयता को असम्भव बना देंगे, यदि हम 'स्पिरिट' को पकड़े रहेंगे तो जीते रहेंगे व फूले-फलेंगे। अनीश्वरवादी 'बुद्ध' को अवतार मान लेना 'स्पिरिट' का काम व परिणाम था—ईश्वरवादी मुहम्मद व ईसा को अवतार-श्रेणी में बिठाने की सूझ न आना या हिम्मत न होना नाम व व्याख्या के दायरे में घूमते रहने का परिणाम हुआ। 'हिन्दू' शब्द व व्याख्या के चक्कर में पड़े रहेंगे, तो हिन्दू-जाति के और टुकड़े बनाने में सहायक होंगे; हिन्दू-स्पिरिट को बढ़ावेंगे—आर्यता का सन्देश अपने प्रत्यक्ष जीवन व उच्चवृत्तियों अर्थात् विशालता, उदारता, सर्व-संग्राहकता द्वारा देंगे तो हिन्दू या आर्य संस्कृति को फैला सकेंगे। शुद्ध वृत्ति का आग्रह व बाह्याचार के प्रति उदार व सहिष्णु बनने से ही यह हो सकेगा। वैशम्पायनजी ने हिन्दी विद्वानों व नेताओं के भाषणों को अविकल रूप में छापकर प्रकाशित करने तथा आधुनिक नाट्यकला के अनुसार रंगमच के योग्य व आधुनिक राजनैतिक समस्याओं को लेकर लिखे गये नाटकों के अधिक लेखन की आवश्यकता बतायी।

सभापति श्री सम्पूर्णानन्दजी का भाषण हिन्दी-साहित्य व राष्ट्रभाषा-संबंधी मुख्य मुद्दों पर अच्छा प्रकाश डालनेवाला व मार्ग दिखलानेवाला था। उन्होंने यही नहीं बताया कि किन-किन विषयों पर हिन्दी में ग्रन्थ लिखे जाने चाहिएँ—पर यह भी बताया कि ग्रन्थ किसलिए व किन के लिए लिखे जाने चाहिएँ। कवियों को उन्होंने जगती के शोषितों और दलितों के क्रन्दन तथा अपमानित भारत के क्लान्तकलेवर और कोटि-कोटि नंगे-भूखों के कंकालों की ओर संकेत करके सुझाया है कि 'जो सच्चा कवि है, कला को जीवन से पृथक् करने की बात नहीं करता। सत्य केवल सुन्दर नहीं है, वह शिव भी है। अतः सत्कवि की वाणी में तृप्ति, उत्पीड़ित मानवजाति को सन्देश व उपदेश मिलना चाहिए।' आधुनिक कवि से उन्होंने 'आशा भरी दृढ़ता' न होने की शिकायत की है और उसे जताया है कि 'इसके लिए उसे तपस्या करनी पड़ेगी। व्यास व वाल्मीकि ने जिस मार्ग को प्रशस्त किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, उसपर त्याग, तपस्या व निर्भयता का ही पाथेय काम देता है। जो ऐसा कर सकता है वही समाज का पथ-प्रदर्शक बन सकता है। उसी की वाणी अमर होगी।'

आपके भाषण का मुख्यांश पिछले अंक में आ ही चुका है। कुल मिलाकर यह भाषण बहुत नपा-तुला व काम की बातों से भरा हुआ था।

सम्मेलन के साथ दूसरी—जैसे इतिहास, विज्ञान, समाजशास्त्र आदि की परिषदें करने का भी रिवाज पड़ गया है। मेरी राय में सम्मेलन के साथ एक राष्ट्र-भाषा-सम्मेलन तथा साहित्य-कला प्रदर्शिनी के अलावा और कोई परिषद् न होनी चाहिए। थोड़े समय में इन परिषदों का काम इतनी भाग-दौड़ में करना पड़ता है कि इनके साथ न्याय किया नहीं कहा जा सकता। ये परिषदें स्वतन्त्र रूप से होनी चाहिएँ और उनमें उन-उन विषयों के प्रश्नों पर सांगोपांग चर्चा होनी चाहिए। सम्मेलन का अधिवेशन भी दो दिन में पूरा हो जाना चाहिए। हम लोग समय की बचत का व उसके सदुपयोग का पूरा खयाल रखें, तो दो दिन में अवश्य सब काम पूरा हो सकता है।

पूना में भी राष्ट्र-भाषा, साहित्य, विज्ञान, दर्शन व समाज-शास्त्र-संबंधी कुल ५ परिषदें और हुईं। राष्ट्र-भाषा व साहित्य-परिषदों में स्वागताध्यक्षों व सभापतियों के भाषण के अलावा और कार्रवाई को असफल प्रदर्शन ही कहना होगा। राष्ट्र-भाषा परिषद् में काका साहब कालेलकर का भाषण उनके विरोधियों के लिए भी विश्वासोत्पादक हुआ था। साहित्य-परिषद् के स्वागताध्यक्ष मराठी के प्रसिद्ध साहित्यिक प्राध्यापक (प्रोफेसर) फड़के ने मराठी-साहित्य के वैभव का परिचय बहुत संक्षेप में कराया। पूना-जैसे मराठी इतिहास व संस्कृति के प्रमुख केन्द्र में हि० सा० सम्मेलन कराने का एक हेतु आपने बताया—**"हिन्दी और मराठी भाषाओं में सहयोग सरल हो जाय और बढ़ता भी रहे।...अलग-अलग प्रान्तों की भाषाओं में जितना अधिक सहकार्य होगा, उतनी ही सहानुभूति अधिक निर्माण होगी। इसलिए प्रान्तीय भाषाओं के साहित्यिकों को चाहिए कि वे एकत्र होकर विचार-विनिमय करें। इस दृष्टि से एक सामान्य भारतीय अथवा राष्ट्रीय भाषा को मानना ही चाहिए और (इसके लिए) हिन्दी का स्वीकार और समर्थन करना अनिवार्य ही सिद्ध होगा। मराठी के अभिमानी सेवकों को हिन्दी-भाषा के साथ विरोध रखने का कोई कारण नहीं हो सकता। मराठी साहित्य के एक प्रतिनिधि के नाते मैं आपको मराठी साहित्यिकों की ओर से हार्दिक सहायता का आश्वासन देता हूँ।"**

सभापति श्री नंददुलारेजी का भाषण बहुत मार्मिक व साहित्यिक मनोविश्लेषणात्मक था। उसका आवश्यक अंश अन्यत्र दिया गया है। मौखिक भाषण में उन्होंने साहित्यिकों की व्यावहारिक समस्याओं की ओर भी संकेत किया था, जो कि विचार करने योग्य थीं। इस भाषण में यदि साहित्यिक समस्याओं पर व गतिविधियों पर व्यावहारिक आलोचनात्मक प्रकाश भी डाला जाता, तो यह भाषण सर्वांगपूर्ण हो जाता। वाजपेयी जी का भाषण जितना ही मनन-योग्य था, सभा-संचालन में वह उतने ही असफल सिद्ध हुए।

विज्ञान-परिषद् के स्वागताध्यक्ष प्रा० आपटे ने भौतिक विज्ञान परिषद् के दो कार्य बताये—एक नये उपलब्ध ज्ञान का विचार-विनिमय व दूसरा भौतिक ज्ञान का जनता में अधिकाधिक प्रचार। इसमें हिन्दुस्तान के भाषा-वैचित्र्य की बाधा का उल्लेख करते हुए स्वीय देशी भाषा को सर्वथैव समर्थ बनाना। वैज्ञानिक पारिभाषिक संज्ञाओं के निर्माण के संबंध में आपने हिन्दी से सहयोग व मार्गदर्शन की अपेक्षा प्रकट की। महाराष्ट्र के गण्यमान्य विद्वानों के द्वारा हिन्दी के गौरव का यह समर्थन किस हिन्दी-प्रेमी को आल्हादित न करेगा?

विज्ञान-परिषद् के सभापति हिन्दी के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डाक्टर सत्यप्रकाश थे। उनके भाषण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

078753

से लोगों ने वैज्ञानिक तथ्यों पर प्रकाश पाने की आशा की थी; किन्तु आपका अधिकांश भाषण हिन्दी-भाषा-संबंधी विषयों के ऊहापोह में ही समाप्त होगया। यह भाषण हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण जँचता था न कि वैज्ञानिक परिषद् के सभापति का। आपने अहिन्दी प्रान्तों में हिंदी को उच्च शिक्षण का माध्यम बनाने पर ज़ोर दिया, जिसका काका कालेलकर ने अपने भाषण में विरोध किया। उच्च शिक्षण का माध्यम हिन्दी बनाने से प्रान्तीय भाषाओं का महत्त्व व स्थान नष्ट हो जाता है—यह काका साहब की दलील थी। डा० सत्यप्रकाश ने हिन्दी-हिन्दुस्तानी शब्द का घोर विरोध किया व राष्ट्रभाषा का नाम 'हिन्दी' व रूप विशुद्ध रहने पर ज़ोर दिया। पारिभाषिक शब्दों के संबंध में आपने अपनी नीति इस प्रकार घोषित की—

(१) हिन्दी और उर्दू के समझौते की आशा व्यर्थ है। हम चाहते हैं कि जिन्हे उर्दू से निष्ठा हो, वे उसके साहित्य की अभिवृद्धि करें। जिस प्रकार संसार की अन्य भाषाओं से हमारा विरोध नहीं, उसी प्रकार इससे भी विरोध नहीं है। पर हाँ, हम अपनी शक्ति हिन्दी की सेवा में लगावेंगे, और इसकी हमें स्वतंत्रता होनी चाहिए।

(२) जितने शब्द संस्कृत और प्राकृत साहित्य में प्रयुक्त हुए हैं उनका तदर्थ में व्यवहार करना चाहिए।

(३) ऐसे पाश्चात्य शब्द जो यूरोप की सब भाषाओं में समान हों, उनको सुविधा के लिए ग्रहण किया जा सकता है, यदि उनके कोई पर्याय हमारे यहाँ नहीं हैं। पर ये सब विशेष परिभाषाओं के लिए ही हैं, न कि साधारण शब्दों के लिए।

(४) अपनी भाषा की मर्यादा एवं रूपरेखा पर दृष्टि रखते हुए फारसी-अरबी शब्द भी (यदि नितांत आवश्यक हो तो) अपनाये जायँ, पर अपनाते समय भावना किसी के साथ समझौते की न हो।

(५) कहाँ पर संस्कृत शब्द लेने चाहिएँ और कहाँ प्राकृत, अंग्रेज़ी, जर्मन या फारसी—इसके लिए कोई नियम नहीं बनाया जा सकता है। यह बात विशेषज्ञों और जनता दोनों के अधीन है। संभव है कि कुछ शब्दों के हिन्दी, उर्दू और पाश्चात्य पर्याय तीनों ही प्रचलित होते रहें। जैसे (१) दूरदर्शक, दूरबीन, टेलस्कोप। (२) वायुयान, हवाई जहाज़ और एयरोप्लेन (३) डाकखाना और पोस्ट ऑफिस। (४) कोर्ट, कचहरी और न्यायालय। ये पर्याय अमर हो गये हैं, और जनता ने सबको स्वीकार कर लिया है। एक के लिए कई पर्यायों के उपयोग होने में कोई हानि भी नहीं।

(६) जबतक रासायनिक व्यापार पर हमारा अधिकार नहीं है, और जबतक हमारा राष्ट्र अपने शब्दों को यथोचित महत्त्व न देगा, तबतक व्यापारिक पदार्थों के लिए हमें विदेशी शब्द ही ग्रहण करने होंगे।

(७) पारिभाषिक शब्दों में जबतक कोई विशेष कारण न हो परिवर्तन न करना चाहिए।

(८) उच्च वैज्ञानिक साहित्य की अभिवृद्धि केवल राष्ट्रीय भाषा के साहित्य में की जानी चाहिए। सब प्रान्तीयों को राष्ट्रभाषा की "विज्ञान-परिषद" का सदस्य होना चाहिए। के बंगाली, हिन्दी, मराठी, गुजराती और द्राविड़ सबके सहयोग से एक पारिभाषिक शब्दावली बनावें।

(९) जिस प्रकार आवश्यकता पड़ने पर अंग्रेज़ी विद्वान् जर्मन या फ्रेन्च के अध्ययन में गौरव की हानि नहीं समझते हैं, उसी प्रकार जिस किसी व्यक्ति को आवश्यक हो वह अपनी निकटवर्ती उर्दू भाषा का भी अध्ययन करके उसके साहित्य से लाभ उठावे। इसमें न कोई द्वेष की बात है और न विवाद की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शन-परिषद् के स्वागताध्यक्ष प्रा० जलोटा ने अपने सरस भाषण के द्वारा यह साबित कर दिया कि दर्शन जैसे रूखे विषय में भी कैसे रस डाला जा सकता है ? आपने बताया कि "साहित्य का मूल कारण निरा मनोविनोद ही नहीं है। उसका एक प्रमुख कारण प्राकृतिक अनुभवों को योग्य रूप में प्रकट करना भी है। कथा-कहानियों, काव्य वा नाटक में चरित्र-चित्रण में, प्रकृति का साक्षात् कराना ही साहित्यिक की योग्यता का माप है। मूल प्रकृति वा साहित्यिक चित्रण में केवल यह भेद रहता है कि लेखक महाशय अपने अनुभव के अनुसार ही अपने दृष्टिकोण से प्रकृति के एक अंग-मात्र का ही चित्र-चित्रण कर पाते हैं और प्रकृति इतनी विशाल है कि उसके अगणित दृष्टिकोणों से अनेकानेक व्यक्ति आंशिक दर्शन करते हैं।' फिर आपने दिखाया कि जो साहित्य प्राकृतिक अनुभव की मूल शक्ति से वंचित हो जाता है वह निर्जीव व नीरस होजाता है। ऐसे शिथिल साहित्य की कला में कौशल तो अवश्य रहता है, किन्तु कर्म करने की शक्ति नहीं होती। साहित्य व दर्शन के क्षेत्रों के पारस्परिक संबंध के बारे में आपने बहुत यथार्थ कहा है—'साहित्य का प्रमुख कर्त्तव्य प्रकृति के अनुभव को अथवा प्रकृति के दर्शन को सर्वसाधारण के प्रमुख प्रकट करना है, और यही इष्ट है दर्शन-शास्त्र का। भेद केवल इतना ही है कि साहित्य की अनुभूति का प्रकाश सुलेखक की विवेकशक्ति के कौशल से कलामय, आकर्षक और सर्वप्रिय होता है, और दर्शन, विज्ञान आदि का आदर्श सर्वप्रियता नहीं केवल यथार्थता है।' इसी को मैं अपनी भाषा में कहूँ, तो साहित्य का ध्येय 'सुन्दर दर्शन' व दर्शन का ध्येय 'यथार्थ दर्शन' है। अन्त में आपने यह विश्वास प्रदर्शित किया कि यदि हमारी साहित्यिक दर्शन की जिज्ञासा, विज्ञान की अन्वेषणा, नीतिशास्त्र के नियमों और मनोविज्ञान के आधुनिक विचारों को साधन मात्र समझकर अपनी इष्टदेवी कला को सिद्ध करने का यत्न करें, तो निस्सन्देह वह साहित्य व दर्शन दोनों को ही प्रसिद्ध करने में सफल रहेंगे।

सभापति श्री गुलाबरायजी का भाषण बहुत विस्तृत था।

समाजशास्त्र परिषद् के स्वागताध्यक्ष प्रा० माटे ने मराठी साहित्य व विचारधाराओं तथा संस्थाओं के विकास का इतिहास बहुत अच्छे ढंग से बताया। आपकी राय में न्यायान्याय, समता-विषमता, व्यष्टि-समष्टिवाद, अर्थवाद इत्यादि सब बातें सापेक्ष्य हैं। उनमें स्थल-काल की विशेषता के अनुसार बार-बार बदल होगा और उनके अनुसार समाज में भी परिवर्तन होंगे। पर यदि इससे अधिक स्थिर और शाश्वत अधिष्ठान हम पा जायें, तो समाज-सुधार अधिक योग्य, हितप्रद और स्थायी होगा। यह अधिष्ठान है आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्तों का।

अन्त में आपने कहा—हमारे बीच भाषा की अर्गला है जो हमें दूर रखती हैं। हम एक राष्ट्र के पुत्र होकर भी एक दूसरे को समझ नहीं पाते। अब यह देखकर कि हिन्दी के द्वारा यह अलगाव और फुटकरपन दूर हो रहा है। मुझे बहुत ही हर्ष हो रहा है।"

सभापति श्री काका कालेलकर ने अपने मौखिक परन्तु सारगर्भ भाषण में बताया कि पहले समाज में वंशवाद था, बाद में वर्णवाद आया और अब वर्गवाद आ रहा है। अन्तःशुद्धि या अन्तः-साधना से शून्य बाह्य साधनों को बढ़ाकर समाज में शान्ति व न्याय स्थापित करने का जो प्रयत्न हुआ उससे वर्गवाद व वर्तमान विग्रह का ज़ोर बढ़ा है। अतः हमें बाह्य साधनों को नहीं, बल्कि अन्तः साधना को दूसरे शब्दों में दैवी सम्पद को बढ़ाना है,

इन भिन्न-भिन्न परिषदों के कारण पूना ज्ञान-सत्र या साहित्यिक पर्व का केन्द्र बन गया था। श्रद्धेय टण्डनजी के व्यक्तित्व ने कई कठिनाइयों को हलका करने में काफ़ी सहायता पहुँचायी। पूज्य काका सा० इस सम्मेलन में साक्षी-मात्र रहे। ऐसा लगता है, और यह बड़े दुःख व दुर्भाग्य की बात है, कि सम्मेलन काका सा० को खो रहा है। काका सा० के ये शब्द कि 'मैं अलग रहूँगा, परन्तु सम्मेलन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का द्रोह कदापि नहीं करूँगा' मेरे कानों में अबतक गूँज रहे हैं। क्या काका सा० के आलोचक इस गंभीर प्रतिज्ञा से प्रभावित न होंगे ?

स्थायी समिति तथा खुले अधिवेशन में डा० बाबूरामजी व प्राध्यापक चतुर्वेदीजी की चोंचें उनके लिए चाहे मनोरंजक होती हों, पर दूसरों के लिए क्षोभजनक हो जाती थीं। सम्मेलन व इस साहित्यिक पर्व के परिणाम व लाभालाभ पर जब मैं विचार करता हूँ, तो मुझे कहना पड़ता है कि महाराष्ट्र को हमने इन आयोजनों के द्वारा दिया कम व उससे लिया अधिक। हिन्दी-भाषियों को नतमस्तक होकर महाराष्ट्र के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए। हिन्दी-भाषी व हिन्दी-साहित्य अपनी देन से दूसरों को चमत्कृत करने के गौरव का आनन्दलाभ कब करेंगे ?

हरिभाऊ उपाध्याय

चारित्र्य

[किशोरलाल घ० मश्रुवाला]

मैं मानता आया हूँ कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को अपने शील की अधिक चिन्ता और अधिक आदर होता है और होना भी चाहिए। शीलभंग की सज़ा भी प्रकृति ने स्त्रियों के लिए अधिक कठोर और अधिक प्रकट बनायी है। आज की नयी पीढ़ी की स्त्रियों के क्या विचार हैं, यह मैं नहीं जानता; मगर एक पीढ़ी पहले तक स्त्रियों का यही विश्वास था कि पुरुष एक बार भले ही भ्रष्ट जीवन बितायें, मगर स्त्रियाँ तो किसी हालत में नहीं बिता सकतीं।

यह अंशतः सत्य कहा जा सकता है। पुरुष स्त्री के बिना भी अपने आपको कई तरह से भ्रष्ट कर सकता है, और इसीलिए यह नहीं कहा जा सकता कि जो पुरुष स्त्रियों से दूर रहा हो वह ब्रह्मचारी और संयमी भी ही होगा। हो सकता है कि कई लड़कों को विषय-ज्ञान अज्ञान दशा में ही दूसरे बिगड़े हुए लड़कों द्वारा होता हो, अथवा दूसरे प्राणियों को देखकर होता हो, किन्तु इस विषय की चर्चा यहाँ करने का मेरा इरादा नहीं है। वह किसी भी तरह होता हो, लेकिन यह निश्चय है कि स्त्री की अपेक्षा पुरुष के लिए चरित्र-रक्षा में अधिक कठिनाइयाँ हैं और इसीलिए पुरुष की भ्रष्टता को स्त्रियाँ भी दरगुजर करती आयी हैं अथवा यह कहें कि पुरुष की शुद्धता पर हमेशा ही शक करती रही हैं। उन्हें अपने चरित्र की रक्षा की अधिक चिन्ता और अभिमान भी रहता है।

इससे, जब भी कभी मैं यह सुनता हूँ कि अमुक स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध गन्दा है, तब मेरे लिए यह एक पहेली ही बनी रहती है कि उसमें स्त्री का पतन कैसे हुआ ? हिन्दू-शास्त्रों ने स्त्री को पुरुष की अपेक्षा अठगुनी कामासक्त बताया है और यह सूचित किया है कि स्त्री का शील रक्षण उसके चरित्र-बल के कारण नहीं, बल्कि समाज के अथवा पुरुष के अंकुशों और चौकीदारी के कारण होता है। महाभारत में तो यहाँ तक कहा है कि स्त्री की भोगेच्छा सदा अतृप्त रहती है। मुझे इन वचनों पर विश्वास नहीं हुआ। मुझे ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि पूर्ण अनुभव के बाद ये वाक्य लिखे गये हैं। मेरा अबतक यह मत कायम है कि अनुभव इसके विपरीत ही है।

इसलिए जब स्त्री के पतन की बात सुनता हूँ, तो मैं भौंचक् हो जाता हूँ। शायद यह मेरा भोलापन ही हो। यदि ऐसा कोई कहे कि किसी भी समाज में स्त्रियों का चरित्र अधिकांश पुरुषों से अधिक उच्च हो यह अपेक्षा ही मूर्खतापूर्ण है, तो उसे दोष नहीं दिया जा सकता। स्त्री और पुरुष दोनों एक ही वर्ग के प्राणी हैं। दोनों एक ही प्रकार की वासनाओं के पिण्ड और परिणाम हैं, इसलिए नब्बे फ़ीसदी पुरुषों के मन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में शील, पत्नीव्रत और ब्रह्मचर्य के प्रति जितना आदर होगा, उतना ही नब्बे फ़ीसदी स्त्रियों के मन में होगा; इससे कम तो नहीं हो सकता।

हो सकता है कि इस विचार में कुछ सत्यांश हो। लेकिन फिर भी मुझे हमेशा प्रतीत होता रहता है कि इसमें और भी कुछ विचार करने की गुंजायश रह जाती है, कुछ और स्पष्टीकरण होने की आवश्यकता रहती है।

इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध मानस-शास्त्री डाक्टर मेक्डुगल ने इस विषय में जो स्पष्टीकरण किया है वह विचार करने लायक है। वह कहते हैं कि स्त्री का स्वभाव अधिक भावुक होता है। उसके प्रति जो सहानुभूति प्रकट की जाती है, उसका असर पुरुष की अपेक्षा उसपर अधिक होता है। इसका अर्थ यह नहीं होता कि स्त्री की भोगेच्छा सदा अतृप्त ही रहती है, बल्कि यह कि स्त्री आमतौर से हमेशा स्नेह की, ममत्व की भूखी होती है। इससे उसके प्रति जो दाक्षिण्य प्रकट किया जाता है उसकी प्रतिध्वनि उसके हृदय में इतने जोर से उठती है कि उसे अपने हिताहित का अधिक भान नहीं रहता है और अपने प्रति स्नेह या सहानुभूति प्रकट करने-वाले को संतुष्ट करने के लिए वह सब कुछ करने को तैयार हो जाती है। यह हो सकता है कि यह वेग क्षणिक हो। बाद में उसका उद्वेग पहले वेग से भी अधिक बलवान हो, लेकिन उस क्षण तो वह भान भूल जाती है। धूर्त पुरुष उसके इस स्वभाव का फ़ायदा उठाते हैं और उसे अपना शिकार बनाते हैं।

इसका अर्थ यह नहीं है कि स्त्रियाँ कभी पुरुषों से अधिक विकाराधीन या धूर्त नहीं होतीं, और पुरुष उसे फँसाने के बदले खुद उसके जाल में नहीं फँस जाता। ऐसे उदाहरण भी बहुत-से मिलते हैं। लेकिन मैं मानता हूँ अधिकतर पुरुष की तरफ़ से ही पहल होती है और स्त्री उसमें बह जाती है।

इसलिए, जो स्त्री यह चाहती है कि उसका शील कभी खतरे में न पड़े, उसको अधिक सावधान रहना चाहिए। सबसे पहले उसे यह खयाल या अभिमान बिल्कुल ही छोड़ देना चाहिए कि सतीधर्म और पातिव्रत के उसके संस्कार इतने जबरदस्त हैं कि उसके बल के प्रभाव से उसपर कोई भी पुरुष मोहित होगा ही नहीं। ये संस्कार महत्त्वपूर्ण हैं, उनका बल भी बहुत है। फिर भी उस बल को इतना महत्त्व न देना चाहिए कि वह यह विचार दृढ़ कर सके कि पुरुषों के सहवास और संसर्ग में कोई भी मर्यादा न हो तो भी वह सुरक्षित है। इससे यह मानते हुए भी कि इन संस्कारों का बल सबसे ज़बरदस्त है, स्थूल मर्यादाओं के पालन की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

पातिव्रत के संस्कार डालने का प्रयत्न शास्त्रों, शिक्षकों और गुरुजनों ने कितना भी किया हो तब भी यह सदैव याद रखना चाहिए कि पानी 'कुँएँ में होगा तभी घड़े में आवेगा।'

यदि पुरुष शील में ढीला होगा, तो स्त्री का उसमें दृढ़ होना संभव नहीं है, क्योंकि ऐसा नहीं देखा जाता कि लड़की को भी पिता के गुण-दोष विरासत में न मिलते हों। इसलिए पुरुष की पत्नीव्रत सम्बन्धी भावना तीव्र होगी तो ही स्त्री की भावना भी तीव्र होगी; और चूँकि पुरुष में पत्नीव्रत की तीव्र भावना दिखायी नहीं देती, स्त्रियों को भी अपने पातिव्रत पर अधिक विश्वास नहीं रखना चाहिए।

जहाँ स्त्री के मन में अपने पति या कुटुम्ब से कुछ असंतोष हो, जहाँ उसका अनादर होता हो या उसके गुणों की क़द्र न होती हो, उसके प्रति कोई प्रत्यक्ष मधुर व्यवहार न दिखाया जाता हो, जहाँ आदर्श या स्वभाव-भेद का भान हो, वहाँ दूसरा पुरुष अपने आदर्श या स्वभाव के अधिक अनुकूल व्यवहार करनेवाला मिल जाय और ममता का तथा आदरयुक्त बर्ताव करे, सहानुभूति या अनुकूल भाव प्रकाशित करे, सिखावे, समझावे या उपयोगी बने, तो उसके प्रति मन में समभाव पैदा होना स्वाभाविक ही है। ऐसे पुरुष के दिल में यदि चोर छिपा हो अथवा बाद में आ घुसे तो पूर्वोक्त स्त्री-स्वभाव की भावनावशता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कृतज्ञ बुद्धि का उसके द्वारा दुरुपयोग होने का पूरा अंदेशा है।

इसलिए राजमार्ग—सैकड़ों स्त्रियों के लिए निर्भयता से विचरने का मार्ग—तो यही है कि पर पुरुष कितना भी निष्कपट, सादा, स्नेहमय, शुद्ध, आदर्शवादी क्यों न प्रतीत होता हो, उसके साथ एकान्त में न रहना, मज़ाक न करना, खास कारण के बिना अंगस्पर्श न करना और न होने देना; अर्थात् कुल मिलाकर मर्यादायुक्त व्यवहार करना चाहिए।

ऐसे स्त्री-पुरुष लाखों आदमियों में एक-दो ही हो सकते हैं, जो मर्यादा के बंधन में न रहते हुए भी पवित्र रहें। वे हमेशा यही अनुभव करते हैं कि उनकी उम्र पाँच साल की ही है और स्त्री-पुरुषों को माता या पिता अथवा लड़की या लड़के के सिवा और कुछ समझ ही नहीं सकते। ऐसे साधु-साध्वी पूज्य हैं, लेकिन जो कभी विकार का अनुभव कर चुके हों उन्हें तो—

तत्सृष्टसृष्टसृष्टेषु कोऽन्वखंडित धीः पुमान्।
ऋषिं नारायणमृते योषिन्मय्येह मायया ? ॥

—"ब्रह्मा से लेकर देव, दानव, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि कोई भी सर्जन-कार्य में स्त्री-पुरुष माया से खंडित न हुआ हो ऐसा पुरुष ऋषि नारायण के के सिवा कौन है ?" भागवत् का यह वचन सच मानकर ही चलना चाहिए। जो बात पुरुष के लिए है वही स्त्री के लिए भी समझनी चाहिए।[1]

अनु०—शकुन्तला विशारदा

१. लेखक की 'स्त्री-पुरुष मर्यादा' नामक गुजराती पुस्तक से।

एक स्मृति

[महादेवी वर्मा]

न जाने क्यों स्त्रियों की समस्याओं का ध्यान आते ही मेरे स्मृति-पट पर एक चित्र अपनी सम्पूर्ण मार्मिकता के साथ अंकित हो जाता है!

हम लोग बदरीकेदार की यात्रा के बहाने उत्तराखण्ड की उन ऊँची-नीची पर्वतश्रेणियों से परिचित हो रहे थे जो कहीं हिम से गली चाँदी और जमी चाँदनी के समान लगती थीं, कहीं धूप से सोने के तारों से बुने हुए दुकूल-सी फैली हुई थीं, कहीं गहरी हरीतिमा के कारण मरकत के प्रसाद की होड़ करती थीं और कहीं तृणहीनता के भूरेपन से धूल के गगनचुम्बी बवंडर की भ्रान्ति उत्पन्न कर देती थीं।

सभ्यता के शेष चिन्हों से सौ मील दूर एक बिखरे-से गाँव में से जाते-जाते, मार्ग के दक्षिण ओर स्लेट से छाये हुए, जीर्ण-शीर्ण घरौंदे-जैसे घर के खुले सहन में कुछ बालकों को पट्टी लिए लिखते-पढ़ते देखकर मेरा मन कौतुक से भर आया और जिज्ञासा से पैर उसी ओर बढ़ने लगे। बच्चे कुछ अधनंगे, कुछ टाट के विचित्र पैंजामे पहने, कुछ कम्बल के टुकड़ों से गूँथे हुए और कुछ सूत के तार-तार होकर झूलनेवाले कुरते लटकाये शिव के बराती जैसे जान पड़ते थे। हमें देखकर कई आश्चर्य से मुहँ खोले हुए ही रह गये, कई हमें किसी दूसरे लोक का प्राणी समझकर हमारी प्रत्येक गतिविधि का यथार्थ निरीक्षण करने के लिए उठकर खड़े हो गये और कई सुई-डोरे का का अक्षय वरदान माँगने दौड़ पड़े। उनके बीच में जो स्त्री बैठी हुई थी उसे मैंने तब देखा जब वह उस कोलाहल को रोकने के लिए खड़ी हो गयी। उसकी गोद में ४–५ मास का दुधमुहाँ शिशु था, और शरीर पर अन्य पहाड़िनों-जैसा पतले, काले और खुर्दरे कम्बल का परिधान, जिसे उसने कमर पर लपेटकर किसी धातु के कांटे के सहारे कंधे पर अटका रखा था। तेल के अभाव में काली से भूरी हो जानेवाली, रूखी और हवा से उड़ती हुई लटें उस सुकोमल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख की प्रहरी सी लगती थीं। आकृति सौम्य, कृश, पर तपस्या से दीप्त थी।

उसे देखकर मेरे मन में प्रश्नों का समारोह विकास पाने लगा। वह बालकों को पढ़ा रही थी अत: उसे कोई निरक्षर पहाड़ी स्त्री समझ लेना कठिन था और हमारे यहाँ की कोई सुशिक्षित महिला इस जीवित समाधि को स्वीकार करेगी यह विचार कल्पनातीत था। पर उस प्रशान्त मुखमण्डल पर विस्मय का कोई भाव न होकर एक ऐसा परिचयभरा स्वागत था, जो विदेश में अपने सजातीय को देखकर सहज ही उमड़ आता है और तब उसका परिचय भी प्राप्त हुआ। वह और उसके पति दोनों ही युक्त प्रान्तीय सुशिक्षित मिश्नरी हैं और उन पहाड़ी ग्रामों की अकथनीय दुर्दशा से आर्द्रहृदय होकर वहीं बस गये हैं। उनका वह बालक भी उन्हीं पहाड़ों के निष्करुण और कठोर अंक में भूमिष्ठ हुआ है। पति को तो आस-पास के ग्रामों की खोज-खबर रखना भी अच्छा लगता है, पर शिशु को लेकर दूर जाने में असमर्थ होने के कारण वह पड़ोसियों के बच्चों को ही पढ़ाती-लिखाती रही है, तब हृदय के किसी कोने में संस्कारजन्य उपेक्षा ने 'उँह, यह तो मिश्नरी है' में अपना परिचय दिया अवश्य, परन्तु मेरे जीवन का सम्पूर्ण सत्य उस स्त्रीत्व और मातृत्व की गरिमा के सामने आदर से प्रणत होगया। असंख्य विलास और सुख के साधनों से भरे-पूरे समाज से विदा लेकर वह २२ वर्ष की युवती, उन नंगे मलिन बालकों की माँ बनने वहाँ गयी है, जहाँ आभूषणों का नाम नहीं, वस्त्रों का पता नहीं और प्रसाधनों की पहुँच नहीं! उपचार के साधनों से अपरिचित उस लोक में यमराज ही वैद्य बन जाते हैं और मृत्यु ही व्याधि से छुटकारा देनेवाली ओषधि की भूमिका निभाती है। सूर्य को मस्तक पर चढ़ाकर भी 'दीप तले अँधेरा' की कहावत चरितार्थ करने के लिए हृदय में अज्ञान को पाले हुए उस देश में मूक पशु जैसे प्राणी ही मित्रता की भीख देते हैं और चीड़ और देवदार के वन ही सहचर होने का गर्व करते हैं। प्रकृति के रौद्र और सौम्य रूप को एक ही मूर्त्ति में प्रतिष्ठित करनेवाले उस पाषाणी मन्दिर में क्रन्दन के आरोह-अवरोह में मँडराती हुई वायु का तीर सा स्पर्श ही मनोरंजन की व्याख्या करता है और अचल हिम से ज्वालामयी किरणों की चंचलक्रीड़ा ही विनोद की संज्ञा पाती है।

इन्हीं दम घोट देनेवाले पत्थरों के बीच में, मसले फूल के समान जान पड़नेवाली जर्जरित कुटिया की छाया में बिना किसी सुविधा के उसने अपने इस शिशु को जन्म दिया है, जिसके नवनीत से अंग कम्बल के टुकड़े से छिल-छिल कर दृढ़ बन रहे हैं। उसने अपने सारे लौकिक सुख और अलौकिक स्वप्न मानो आँसुओं के साथ ही इस सभ्यता से चिरउपेक्षित वर्ग को संकल्प कर दिये हैं, तभी इन विषम परिस्थितियों में भी एक त्यागमय आनन्द उसके साधनापूत शरीर में पारे-सा दौड़ता जान पड़ता है।

मैंने जब अपने वर्ग में से उस महीयसी के लिए कोई उपमान ढूँढना चाहा, तो मेरा मन मानो खिलौनों की दुनिया में घूमकर खाली हाथ लौट आया। इसके साथ किसी को तौलना क्या सहज है?

हमारी जगमगाती सभायें, हमारे अलंकृत व्याख्यान और हमारे उलझे-सुलझे प्रस्तावों के गोरखधंधे क्या हमारी सहज आत्मविज्ञप्ति के साधनमात्र नहीं हैं? यह सत्य है कि हम पलित-केशों के वार्धक्य से लेकर कुञ्चित अलकोंवाली किशोरता तक समान रूप से प्रसाधित शृंगारित होकर केवल रमणीत्व की दुहाई देती हुई, इन्द्र-धनुषी मेघाडम्बर के समान किसी भी सुधार-सभा को प्रदर्शिनी में बदल सकती हैं। पर क्या यह भी सत्य है कि हमारा हृदय उस दलित-पीड़ित मातृत्व के प्रति जागरूक है, जो हमारे चारों ओर फैली हुई जीवन की सुरीली लय को आर्तक्रन्दन में बदलता रहता है?

क्या हम जानती हैं कि जब हम अपने नेत्रों में विद्युत् भरने के लिये अंजन सार रही हैं, तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असंख्य स्त्रियों की आँखों की ज्योति जलते आँसुओं में बुझ रही है ? क्या हमने कभी अनुमान किया है कि जब हम अपने ओठों पर लालिमा सँवारती हैं, तब करोड़ों पीड़िताओं को अपने विवर्ण और सूखे ओठों को दाँतों से दबा-दबाकर हृदय के उजड़ते हाहाकार को रोकना पड़ता है ? क्या हम समझती हैं कि जब हमारे कानों के लिए बिजली और तारामण्डल की समता करनेवाले कुण्डल गढ़े जाते हैं, तब अगणित दुःखिनी माताओं के कानों में, भूखे बच्चों का क्रन्दन गला शीशा ढालता रहता है ? क्या कभी रंग-बिरंगी साड़ियों चूड़ियों और अमूल्य प्रसाधनों के लोक में बैठ कर हमने अनुभव किया है कि हम उन अभागिनियों की भी प्रतिनिधि हैं, जिनके पैरों में दुर्बलता के मारे खड़े होने की भी शक्ति नहीं है, जिनके हाथ काम करते-करते चलनी हो गये हैं, जिनके शरीर पर लज्जानिवारण के लिए पर्याप्त चिथड़ा भी नहीं है और जिनकी रूखी जटा बनी हुई लटों को कड़ुआ तेल तक देवदुर्लभ पदार्थ है ? अवश्य ही हमने यह जीवन नहीं देखा, नहीं समझा, नहीं अनुभव किया, इसी से बालकों के समान खिलौनों को ही हमने सब महत्त्व दे डाला, जिस दिन जीवन के महान् सत्य से हमारा साक्षात्कार हो जायगा, उस दिन उसी मिश्नरी महिला के समान हम 'करनी' और 'कथनी' के बीच की खाई को अपनी सहज साधना से सम कर देंगी।

पठन-पाठन का प्रचार

[कालिदास कपूर]

भारतवर्ष में पुस्तकें नहीं बिकतीं, समाचार पत्रों और पत्रिकाओं की खपत बहुत कम है। यह शिकायत सभी प्रकाशकों की है, देशी भाषाओं के हों या अंग्रेज़ी भाषा के। अंग्रेज़ी भाषा की पुस्तकों तथा समाचारपत्रों अथवा पत्रिकाओं की जो कुछ खपत है, उसका अधिकांश श्रेय यूरोपीय जनता को है जो अपना देश छोड़ यहाँ बसी हैं। जिन भारतवासियों पर अंग्रेज़ी सभ्यता का काफ़ी असर पहुँच चुका है, उनमें भी पुस्तकें तथा समाचार पत्रों को खरीदकर पढ़ने का शौक है। परन्तु इसके आगे अंधकार-ही-अंधकार है। निरक्षरों की बात छोड़िए, उन्हें पढ़ने-पढ़ाने का शौक न हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है, पढ़े-लिखे लोगों में भी पुस्तकें तथा समाचारपत्रों को खरीदकर पढ़ने का शौक बहुत-कम है। क्या कारण है ?

पुस्तकों की कम बिक्री पढ़े-लिखे लोगों की संख्या बहुत कम होने के कारण ही नहीं है। यह ठीक है कि पुस्तक पढ़ने योग्य व्यक्तियों की संख्या यहाँ पाँच प्रतिशत से अधिक नहीं हैं। परन्तु भारत की जनसंख्या को देखते हुए पाँच प्रतिशत के हिसाब से भी पढ़ने-लिखने योग्य व्यक्तियों की बहुत-कुछ संख्या हो जाती है। संसार में १७ करोड़ व्यक्तियों की मातृभाषा अंग्रेज़ी है। लगभग इतने ही भारतवासी हिन्दी बोलते हैं। १७ करोड़ में लगभग एक करोड़ पढ़े-लिखे ज़रूर हैं। परन्तु पढ़ने योग्य सामग्री की बिक्री इस हिसाब से भी कम है। लगभग ७ करोड़ जापानियों के बीच प्रायः १२०० दैनिक पत्रों का प्रचार है। इन पत्रों में कोई ही ऐसा अभागा पत्र होगा, जिसकी-ग्राहक-संख्या ४००० से कम हो, ओसका मैनिची और असाही शिंबुन नामक दैनिक पत्र तो अपनी-अपनी ग्राहक-संख्या लगभग बीस-बीस लाख से भी अधिक बताते हैं। मासिक पत्रिकाओं की संख्या लगभग ५००० होगी। इनमें राजनीति, विज्ञान जैसे गम्भीर विषयों से सम्बन्ध रखनेवाली पत्रिकाओं की ग्राहक-संख्या साठ-सत्तर हज़ार के ऊपर है। जन-संख्या के विचार से हिन्दी-भाषा-भाषी प्रान्तों में जापान का सप्तांश पठन-पाठन होना चाहिए, दशांश नहीं, द्विदशांश भी नहीं। हिन्दी में 'कल्याण' को छोड़कर किसी भी मासिक पत्रिका की ग्राहक-संख्या ४००० से अधिक नहीं है। दैनिक हैं कितने, तिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर भी किसी की ग्राहक-संख्या ४००० से अधिक न होगी।

दूसरा बहाना निर्धनता का है। कहते हैं कि भारत बहुत निर्धन है। ठीक, व्यक्तिगत आमदनी का औसत इस देश में बहुत कम है। परन्तु, पाठक आश्चर्य करेंगे, व्यक्ति पीछे जितना सोना-चाँदी अब भी इस देश में है इतना संयुक्तराज, इंग्लिस्तान और फ्रांस को छोड़कर शायद ही किसी अन्य देश में हो। फिर जो कुछ निर्धनता है, आमदनी का औसत जिन लोगों के कारण गिर जाता है, उनमें से अधिकांश वही हैं जो निरक्षर हैं। साक्षरों में निर्धनता नहीं है। उनके पास इतना अवश्य है कि खाने-पीने, कपड़े और किराये का खर्च निकालकर (यदि घर अपना न हो) दैनिक पत्र के लिए तो खर्च कर सकें। नहीं, पढ़ने की सामग्री आवश्यक चीज़ समझी नहीं जाती। पुस्तकों के लिए तभी खर्च किया जाता है जब लड़के-लड़की को पढ़ाना अनिवार्य समझा जाता है और पढ़ाना तभी अनिवार्य माना जाता है जब उससे लड़कों की रोज़ी का सहारा हो, लड़की को अच्छा वर मिल सके। लड़के को रोजी मिल गयी, लड़की को वर मिल गया, पढ़ना खत्म, पुस्तकों से पिंड छुटा।

अन्य सभ्य देशों में रईस लोग पुस्तकों का आदर करते हैं। पढ़ें या न पढ़ें, परन्तु एक अपना पुस्तकालय ज़रूर रखेंगे। साहित्य का ज्ञान सामाजिक जीवन का एक अलंकार समझा जाता है। नहीं पढ़ते, तो बढ़िया जिल्द की पुस्तकों से अपना पुस्तकालय तो सजाये रखते हैं। यहाँ देखिए। अवध हिन्दी का केन्द्र है, कितने ताल्लुकेदार हैं, कितना रुपया, मोटरों पर खर्च करते हैं! उन्हें मोटर का शौक है, और अन्य शौक हैं, पुस्तकालय का शौक कितनों को है? क्यों नहीं, पुस्तकालय न रखने से उनकी इज्ज़त में बट्टा नहीं लगता? जनता के हृदय में, सभ्य समाज के हृदय में भी पुस्तकों के प्रति, पठन-पाठन के प्रति श्रद्धा नहीं है।

पढ़े-लिखे लोगों में भी पुस्तकों और पठन-पाठन के प्रति जो इतनी रुचि नहीं है उसके कुछ कारण तो समझ में आते हैं। उसमें से एक यह है कि देश में निरक्षरता इतनी अधिक है कि साक्षर भी उनमें डूब जाते हैं। सौ पीछे यदि पाँच साक्षर भी हुए तो अपनी रुचि, अपने रहन-सहन को उन्हें पचानवे निरक्षरों के ही अनुकूल बनाना पड़ेगा। भारतीय समाज निरक्षर है, यहाँ अंधकार का राज्य है, इधर-उधर के दीपक टिम-टिमाते ही दिखायी देते हैं, उनसे प्रकाश नहीं होता। मालूम होता है अपनी स्थिति पर वे आप शर्मा रहे हैं।

दूसरा कारण यह मालूम होता है कि हमारे स्कूलों और पाठशालाओं में बालक-बालिकायें पढ़ायी जाती हैं, परीक्षा के लिए। पढ़ाई का उद्देश्य यह नहीं होता कि पाठकों के हृदय में पुस्तकों के प्रति रुचि पैदा हो, उन्हें पुस्तकों में आनन्द मिल सके। पढ़ाई का अर्थ रटाई मान लिया गया है, जिसका नतीजा यह होता है कि पढ़नेवालों के हृदय में पुस्तकों के प्रति घृणा हो जाती है। स्कूल अथवा कालेज छोड़कर वे पढ़ने का नाम नहीं लेते।

किस प्रकार पढ़ने-लिखने का शौक बढ़ाया जाय, पुस्तकों के प्रति रुचि पैदा की जाय, साहित्य का निर्माण और प्रचार हो, लेखकों और प्रकाशकों का पोषण हो?

पहली आवश्यक बात तो यह है कि हम, अपनी शिक्षा-प्रणाली में परिवर्तन करें। पढ़ाने का काम याद कराना न हो, अपितु विषय में रुचि पैदा कराना हो। परीक्षा हो, परन्तु उसका उद्देश्य और ढंग दूसरा हो। शिक्षा के सम्बन्ध में हमें पूर्ण स्वराज्य प्राप्त है। विदेशी शासन का बहाना लेकर हम बैठे नहीं रह सकते। यदि सुधार न कर सकें, तो इसमें हमारा ही दोष है।

दूसरी बात प्रचार की है। चाय कोई बहुत अच्छी चीज़ नहीं है, तो भी प्रचार-कार्य ने चाय की खपत भारत में कितनी बढ़ा दी है, इसका पता इंडिया टी मार्केट एक्सपेंशन बोर्ड के आँकड़े देखने से चलता है। कोई ऐसा मेला नहीं होता जिसमें चाय न बटती हो। कोई ऐसा बड़ा स्टेशन नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसमें चाय का गुण बतानेवाले विज्ञापन न दिखायी देते हों, कोई ऐसा बड़ा अखबार नहीं जिसमें चाय का विज्ञापन न हो। क्या हम इस प्रचार-कार्य की सफलता से पुस्तक प्रचार-साहित्य प्रचार के पुनीत कार्य के लिए सबक नहीं ले सकते ?

प्रस्ताव यह है कि भारत के प्रकाशक, देशी भाषाओं के हों अथवा अंग्रेज़ी भाषा के, मिलकर एक केन्द्रीय संस्था बनायें, जिसका काम जनता में पठन-पाठन के प्रति रुचि पैदा करना हो। सरकार इस संस्था की आर्थिक और नैतिक सहायता करे, क्योंकि रुचि बढ़ने ही पर सयाने स्वयं पढ़ेंगे और अपने लड़के-लड़कियों को भी पढ़ने भेजेंगे। शिक्षा-प्रचार होगा तो उससे शासन-व्यवस्था उन्नत होगी, देश संगठित होगा, उसकी आर्थिक उन्नति भी होगी।

इस संस्था को बिना किसी कष्ट के आर्थिक सहायता मिल सकती है यदि यह नियम बना दिया जाय कि प्रत्येक प्रकाशक और लेखक को अपनी आमदनी का निश्चित अंश सेस (Cess) के रूप में इस संस्था को देना होगा। प्रकाशकों और लेखकों के वोट से इस संस्था का चुनाव हो और निष्पक्ष भाव से यह संस्था लोगों को पुस्तकें तथा समाचारपत्र खरीदने और बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करे। मेलों, सभा-भवनों, सिनेमा-गृहों, स्टेशनों, मन्दिरों और मसजिदों सभी जगह नये-नये आकर्षक विज्ञापनों द्वारा जनता के हृदय में पुस्तकों के प्रति रुचि बढ़ायी जाय। सरकारी अफ़सर और राष्ट्रीय नेता अपने व्याख्यानों में बातचीत में पुस्तकों और पुस्तकालयों का आदर करें। जगह-जगह पुस्तकालय खोले जायँ और उनकी धूम मचायी जाय। मेलों और स्टेशनों पर लाउडस्पीकरों द्वारा दिन में कई बार नयी पुस्तकों और पत्रिकाओं की सूचना दी जाय और जनता को पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाय। प्रत्येक मेले में पुस्तकों की प्रदर्शिनी हो, अन्य देशों में पुस्तक-प्रचार के आँकड़े दिखाये जायँ और दर्शक को समझाया जाय कि पुस्तक सोने-चाँदी के गहने से कम आदरणीय आभूषण नहीं हैं।

इस प्रचार-कार्य के साथ-साथ सस्ते और सरल साहित्य का निर्माण भी किया जाय और उसका प्रचार किया जाय। अभी साधारण जनता में भारी ग्रंथों के प्रति रुचि पैदा करना कठिन है। अभी उसके लिए हलकी पुस्तकों की आवश्यकता है, दाम कम हों, भाषा सरस हो, शैली मनोरंजक हो, विषय बोधगम्य हो।

इस सम्बन्ध में सरकारी सहयोग की और जो कुछ आवश्यकता हो, डाक-विभाग के सहयोग की बहुत आवश्यकता है। इस देश में पुस्तकों पर पोस्टेज बहुत ज्यादा है। वी० पी० करने में पुस्तक के दाम बढ़ जाते हैं। डाक-विभाग का नुक्सान न होगा और प्रचार-कार्य को सहायता मिलेगी यदि पुस्तकों पर पोस्टेज अखबारके बराबर कर दिया जाय। हमारी सरकारें करोड़ों रुपया प्रतिवर्ष देहाती उन्नति और शिक्षा-प्रचार पर खर्च करती हैं। इस खर्च को सफल करना है। साधारण साक्षरों को साक्षर बनाये रखना है, उनकी साक्षरता को बढ़ाना है। यह सब काम पुस्तक-प्रचार से ही हो सकेगा। आशा है, देश के नेता डाक-विभाग का ध्यान इस सुधार की ओर आकृष्ट करेंगे।

प्रकाशकवृन्द, यह लेख खास तौर से आपके लिए लिखा गया है। इस ओर ध्यान दीजिए, संगठन कीजिए। इसमें आपका लाभ है, जनता का उपकार है, देश की सच्ची सेवा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन में 'साधन' और 'साध्य'

[प्रेमनारायण माथुर]

जीवन में साधन और साध्य का क्या स्थान है, यह प्रश्न प्राय: उठाया जाता है। महात्मा गांधी जब यह कहते हैं कि हम सत्य और अहिंसा को अपना धर्म (Creed) समझें, केवल नीति नहीं, तो वह इसी प्रश्न के संबंध में अपने मत को प्रकट करते हैं। उनकी मान्यता यह है कि पवित्र साधन के बिना किसी पवित्र उद्देश्य की प्राप्ति हो सकती है, इसकी कल्पना करना भ्रम है। यहाँ साधन और साध्य की तनिक विवेचना कर लेना उचित होगा। 'साधन' एक मार्ग है, निरंतर बहनेवाला। साधन, गति है, अनन्त। इसके विपरीत 'साध्य' एक निर्दिष्ट स्थान है, उसमें अनन्त की नहीं, अंत की कल्पना है। 'साध्य' गन्तव्य है गति नहीं। हम यह सोचते हैं कि 'साधन' के द्वारा 'साध्य' की प्राप्ति होती है, इसलिए जीवन में मुख्य स्थान 'साध्य' का और गौण स्थान 'साधन' का है। 'साधन' धर्म नहीं हो सकता, ऐसा कर्त्तव्य नहीं बन सकता जिसका त्याग करने की कल्पना ही न की जा सकती हो। वह तो नीति का ही रूप ले सकता है। जो धर्म बन गया, वह फिर साधन कहाँ रहा ? वह तो 'साध्य' हुआ। साधन और साध्य के संबंध में उक्त विचार-धारा सामान्य रूप से स्वीकार की जाती है।

परन्तु इस प्रश्न पर विचार करने का एक-दूसरा दृष्टिकोण भी है। यह दृष्टिकोण जीवन में 'साधन' को प्रमुख स्थान देगा और 'साध्य' को गौण। इसका कारण स्पष्ट है। इस दृष्टिकोण को माननेवालों की दृष्टि में पहली चीज़ 'साधन' है, क्योंकि 'जीवन' का मेल 'साधन' ही से बैठ सकता है। 'साधन' ही निरन्तर बहनेवाला मार्ग है और जिसे हम 'साध्य' मानते हैं, वह तो उस मार्ग पर खड़े माइल स्टोन्स (Mile Stones) हैं, जिनका उस मार्ग से स्वतंत्र कोई अस्तित्व नहीं। उनका महत्त्व, तो केवल इतना ही है कि वे इस बात के द्योतक हैं कि हम कितना मार्ग तय कर चुके हैं। अगर मार्ग ही न हो, तो उन माइल-स्टोन्स का अस्तित्व ही कहाँ रह जाता है ? और मनुष्य का जीवन भी तो एक मार्ग के रूप में है। 'जीवन' का अर्थ ही निरन्तर चलना है। गति ही जीवन है। अत: जीवन में 'साधन' का क्या स्थान है, यह प्रश्न ही ग़लत है। जीवन तो स्वयं ही 'साधन' है ! परन्तु साधन है किस बात का ? उस स्थिति का जो इस 'साधन' का अन्त और उद्गम दोनों ही है, और इस वास्ते उससे परे है। उदाहरण से बात अधिक स्पष्ट हो सकेगी—जीवन एक निरन्तर बहनेवाली नदी के समान है और 'सागर' वह स्थिति है जो नदी से बाहर है और जो नदी का अन्त है, तो उसका उद्गम भी। इसका तात्पर्य यह हुआ कि जीवन का अगर कोई 'साध्य' है तो वह जीवन के अन्तर्गत नहीं हो सकता, वह तो उसके परे ही होगा, क्योंकि जीवन तो स्वयं ही साधन है। इसके अन्तर्गत जो होगा वह 'साध्य' नहीं हो सकता, वे तो केवल वे माइल स्टोन्स होंगे जो हम अपने मार्ग पर कहाँ तक आगे बढ़ चुके हैं, इसका संकेत करते हैं। ऐसी दशा में जीवन साधन है और 'मुक्ति' जीवन का साध्य। अस्तु जीवन में असली चीज़ साधन है, उसका त्याग करके हम अपने सच्चे 'साध्य' तक नहीं पहुँच सकते। उपरोक्त विचार जीवन के प्रति एक विशेष दृष्टिकोण के परिणाम हैं। इसको हम जीवन-संबंधी आध्यात्मिक दृष्टिकोण का नाम दे सकते हैं। जो व्यक्ति इस प्रकार के दृष्टिकोण को मानते हैं, उनके लिए जीवन में, संसार में ऐसा कोई कार्य नहीं हो सकता जिसे वह लक्ष्यरूप मान लें। उनकी दृष्टि में तो इस संसार में किसी काम की उपयुक्तता तथा औचित्य का प्रमाण ही यह है कि उनकी पूर्ति अपने निर्दिष्ट मार्ग पर चलते रहने के सिलसिले में हो जाये। अगर इसके विपरीत किसी कार्य की पूर्ति के लिए उस निर्दिष्ट मार्ग अथवा साधन से हटने की आवश्यकता मालूम पड़े, तो वह कार्य ही अनुचित और त्याज्य है। उदाहरणार्थ यदि हम सत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अहिंसा के सिद्धांतों के अनुसार आचरण करना जीवन का धर्म मान लेते हैं, तो संसार में कौनसा कार्य हमारे करने योग्य है और कौनसा नहीं? किसके लिए हमको चिन्तित रहना चाहिए और किसके लिए नहीं? ये प्रश्न ही नहीं उत्पन्न हो सकते। सत्य को लक्ष्य मानकर उसकी प्राप्ति के लिए अहिंसक मार्ग का अनुसरण करने के सिलसिले में जो सांसारिक कार्य पूरे हो जाते हैं, वे ही उचित हैं और अन्य का अनौचित्य भी इसी से स्पष्ट होजाता है। इसीलिए तो महात्मा गांधी ने कई बार इस बात को दुहराया है कि हिंसा से मिलनेवाली आज़ादी मेरे लिए त्याज्य है, मैं उसे स्वीकार नहीं कर सकता। हाँ, एक बात अवश्य है। इस प्रकार के विचार रखनेवाले लोगों का यह विश्वास और यह श्रद्धा होती है कि प्रत्यक योग्य सांसारिक लक्ष्य उस सही मार्ग पर चलने में अवश्य ही पूरा होगा। अतः जब महात्मा गांधी यह कहते हैं कि हिंसा द्वारा मिली आज़ादी मेरे लिए त्याज्य है, तो उसका अर्थ यह है कि उनका यह विश्वास है कि वह आज़ादी जो वास्तव में लेने योग्य है, अवश्य ही सत्य और अहिंसा के मार्ग पर आरूढ़ रहते हमको प्राप्त हो सकेगी। आखिर अच्छे और बुरे की पहिचान क्या है? जो चीज़ सत्य की ओर ले जानेवाली है वही अच्छी है, योग्य है, और जो हमको उससे परे हटानेवाली है, वही बुरी है। जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष है, अर्थात् सत्य की प्राप्ति है। अतः इस जीवन में भी वही लेने योग्य है, जो इस सत्य की प्राप्ति में हमारा सहायक हो। उपरोक्त विचार-धारा में 'साधन' और 'साध्य' की बहस रह नहीं जाती। यह इस जीवन का प्रश्न नहीं है। यहाँ तो साधन ही 'साध्य' है, उस मार्ग पर चलते रहना ही एक मात्र हमारा लक्ष्य है।

किन्तु जीवन के प्रति एक और दृष्टिकोण भी हो सकता है। यह दृष्टिकोण संसार की वास्तविकता और व्यावहारिकता को स्वीकार करता है। इसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के सामने हर समय काल और परिस्थिति की उपयुक्तता और आवश्यकता का ध्यान रखते हुए एक-न-एक सांसारिक लक्ष्य अवश्य रहता है, जिसकी प्राप्ति के लिए वह बराबर प्रयत्नशील रहता है। जीवन के यही लक्ष्य उसके 'साध्य' होंगे। अब प्रश्न यह है कि अमुक 'साध्य' तक पहुँचने के लिए जो 'साधन' काम में लाये जायें, उनके सम्बन्ध में किसी प्रकार की मर्यादा क़ायम रखना उचित है अथवा नहीं? इस दृष्टिकोण के अनुसार 'साधन' का निर्णय 'साध्य' का ध्यान रखकर ही किया जाना चाहिए। (The end justifies the means) अगर हमारा साध्य उत्तम है, तो उसके लिए जिन साधनों का भी प्रयोग करना हमें अनिवार्य मालूम पड़े उनका प्रयोग करना उचित होगा। यहाँ 'साध्य' और 'साधन' के सापेक्षिक महत्त्व का ध्यान रखना होगा। एक जितना महत्त्वपूर्ण होगा दूसरे का औचित्य अथवा अनौचित्य उसी हदतक पहले पर निर्भर रहेगा। इस बात को और अधिक स्पष्ट करने के पहिले 'पवित्र साधन' क्या है, इसपर कुछ विचार कर लेना उचित होगा।

पवित्रता का सम्बन्ध उससे है, जिसे हम रोज़मर्रा की भाषा में नैतिक कहते हैं। पवित्र साधन से हमारा तात्पर्य नैतिक साधन से होता है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि क्या नैतिक है और क्या अनैतिक? हम जानते हैं कि सत्य, प्रेम, सहानुभूति, ईमानदारी आदि गुणों की गिनती नैतिक गुणों में की जाती है। इनके विपरीत जितने भी गुण हैं, जैसे झूठ, रागद्वेष, हृदयहीनता और बेईमानी आदि, वे सब अनैतिक गुण माने जाते हैं। ऐसा क्यों है? अमुक गुण नैतिक और अमुक अनैतिक किस आधार पर माने जाते हैं? अगर हम बारीक और ऐतिहासिक दृष्टि से इस प्रश्न पर विचार करें, तो मालूम होगा कि जो गुण अनुभव से सामाजिक हित और उसके लिए सामाजिक व्यवस्था को क़ायम रखने की दृष्टि से ज़रूरी जान पड़े उनको मनुष्य ने नीति का जामा पहनाया और जो सामाजिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हित और उसके अनुरूप व्यवस्था के लिए बाधक मालूम पड़े उनको अनैतिक स्वीकार किया गया। यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि अगर प्रत्येक मनुष्य दूसरे को धोखा देना, दूसरे से द्वेष का व्यवहार करना आरम्भ कर दे,तो हमारी सारी जीवन-व्यवस्था ही छिन्न-भिन्न हो जायगी। अतः सामाजिक हित के लिए सामाजिक संगठन आवश्यक है और उस संगठन का सुचारू रूप से संचालन करने के लिए एक विशेष प्रकार का पारस्परिक व्यवहार ज़रूरी है और उस व्यवहार के अन्तर्गत आनेवाले गुणों को नैतिक गुणों का नाम दिया गया है। अस्तु, नैतिक और अनैतिक का अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। उनके पीछे सामाजिक उपयोगिता का दृष्टिकोण काम करता है। दूसरे शब्दों में अमुक गुण अच्छे इसीलिए माने जाते हैं कि साधारणतया वे सामाजिक दृष्टि से उपयोगी हैं। इसका यह भी अर्थ निकलता है कि विशेष समय पर ऐसी विशेष परिस्थितियाँ भी उत्पन्न हो सकती हैं कि जब वे ही गुण समाज और व्यक्ति के सच्चे हित-साधन की दृष्टि से बाधक साबित हों। ऐसी परिस्थिति में वह व्यक्ति जो नैतिक गुणों का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार नहीं करता, वरन् उसका महत्त्व इसी कारण से मानता है कि उनके पीछे सामाजिक हित की दृष्टि छिपी हुई है, किसी भी सामाजिक हित (जिसके अंतर्गत सच्चा व्यक्तिगत हित आ जाता है) के मुक़ाबले में अमुक नैतिक कहे जानेवाले गुणों को कदापि महत्त्व न देगा। कुछ उदाहरण लेने से हमारा तात्पर्य अधिक स्पष्ट हो सकेगा। किसी व्यक्ति को सफर करते समय रास्ते में एक चोर मिलता है। वह उस चोर से अपनी सम्पत्ति की रक्षा करना चाहता है; और ऐसा करने के लिए उसे झूठ बोलना पड़ता है। अब प्रश्न यह है कि ऐसी परिस्थिति में उस व्यक्ति का झूठ बोलना, जो साधारणतया अनैतिक गुण है, उचित था अथवा अनुचित? चूँकि झूठ बोलने का हेतु यहाँ उत्तम था, हम उस व्यक्ति का झूठ बोलना उचित समझेंगे। परन्तु यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि यदि उस सम्पत्ति की रक्षा करने के विचार से वह व्यक्ति उस चोर की हत्या कर डालता है तो उसकी हत्या करना उचित होगा अथवा अनुचित? संभवतः हमें कहना पड़ेगा कि चोर की हत्या करना अनुचित होगा! क्योंकि समाज की निगाह में साधारणतया मनुष्य की अपेक्षा धन का मूल्य कुछ न होगा। किन्तु इसके विपरीत यदि कोई मनुष्य अपनी आत्म-रक्षा के लिए किसी दूसरे मनुष्य की हत्या कर डालता है, तो वह अवश्य ही क्षम्य होगा। उपरोक्त उदाहरणों का यह अर्थ निकलता है कि जीवन में 'साधन' और 'साध्य' के स्थान का निर्णय करते समय निर्णय करनेवाले को दोनों का उसकी दृष्टि में क्या सापेक्षिक महत्त्व है, यह तौलना होगा। यही तो कारण है कि यदि एक मनुष्य चार पैसे के लिए अपने किसी साथी से ज़रा झगड़ता भी है, तो हम उसे उचित नहीं समझते, जबकि दस हज़ार रुपये के लिए उसके विरुद्ध मुक़दमा चलाना भी हम बुरा नहीं मानते।

यहाँ दो प्रश्न उत्पन्न होते हैं। कौन-सा 'साध्य' उत्तम है और कौन-सा हीन, इसका निर्णय कैसे हो? क्या नैतिक साधनों के द्वारा ही हम अपने 'साध्य' की प्राप्ति नहीं कर सकते?

पहले उत्तम साध्य के प्रश्न को हम लेंगे। इस संबंध में इतना ही कहना काफ़ी होगा कि इस बात को स्वीकार करते हुए भी कि क्या उत्तम है और क्या हीन, इस बारे में सचाई के साथ मतभेद हो सकता है, साधारणतया यह तय करना कठिन न होगा कि वास्तव में क्या सही है?

दूसरा प्रश्न साधन का है। नैतिक साधनों द्वारा हम अपने 'साध्य' तक पहुँच सकते हैं अथवा नहीं, इस प्रश्न के साथ एक मर्यादा जो प्रत्येक व्यवहारिक मनुष्य के सामने रहती है, उसे हमें भूलना नहीं चाहिए। वह मर्यादा है समय की। हम अमुक साध्य की पूर्ति अमुक समय में ही करना आवश्यक समझते हैं, उसकी पूर्ति के लिए अनन्त तक प्रतीक्षा नहीं कर सकते। अतः आपके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामने यह संभावना उत्पन्न हो सकती है कि आपका विरोधी आपकी सचाई और ईमानदारी का दुरुपयोग करके आपको अपने निश्चित लक्ष्य तक एक निश्चित समय में पहुँचने से रोक सके। ऐसी परिस्थिति में एक व्यावहारिक व्यक्ति के नाते आपको अपनी लक्ष्य-पूर्ति के लिए कुछ ऐसे साधन अपनाने पड़ सकते हैं जो सामान्यतया ठीक नहीं माने जाते। अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए उस सीमा तक आपको साधन के सम्बन्ध में समझौता (Compromise) करना पड़ेगा। यदि आपने ऐसा करने से इन्कार किया और अपने सिद्धान्तों पर आप अटल रहे, तो संसार आपके आदर्श और आपके सिद्धान्तों की सराहना कर सकता है; किन्तु वह आपको अपने पथ-प्रदर्शन के रूप में सही मानने में कभी स्वीकार नहीं करेगा और यदि किसी देश अथवा वर्ग ने इस प्रकार की एकांगी दृष्टि को अपनाया, तो उसकी शक्ति सदा कुण्ठित ही रहेगी। इस प्रकार का 'साधन' संबंधी समझौता दो परिस्थितियों में विशेष रूप से करना होगा—जब हमारे विरोधी के विरोध का कारण उसके आर्थिक और वर्गहित हैं, अथवा जब हमारा विरोधी कोई ऐसा व्यक्ति है जिसकी गणना सामान्यतया एक सामाजिक प्राणी (Social Being) में नहीं की जा सकती है अर्थात् जिसमें एक नागरिक की दृष्टि का सर्वथा अभाव है। पहली श्रेणी में राजनैतिक और आर्थिक संघर्ष आते हैं, और दूसरी श्रेणी में ऐसे व्यक्ति जैसे चोर, डाकू आदि।

'साधन' और 'साध्य' के विषय में जो कुछ हमने उक्त पंक्तियों में लिखा है, उसके आधार पर हम निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं—जिस व्यक्ति का दृष्टिकोण जीवन के प्रति वास्तविकता और व्यावहारिकता लिये हुए है, जो एक अनिश्चित समय तक अपनी लक्ष्य-पूर्ति के लिए प्रतीक्षा करने की कल्पना नहीं करता, उसके सामने मानव दुर्बलताओं के कारण ऐसे अवसर आ सकते हैं कि जब अपने 'साध्य' की पूर्ति के लिए उसे अपने उचित माने जानेवाले साधनों के साथ किसी हद तक समझौता करना पड़े। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार के समझौते की एक मर्यादा रखनी होगी। किन्तु इस मर्यादा को शब्द-बद्ध करना कठिन है। पिछले दिनों हिंसा-अहिंसा के प्रश्न को लेकर श्री राजगोपालाचार्य और महात्मा गांधी में जो मतभेद उत्पन्न हुआ था, उसका आधार यही दृष्टि-भेद था। एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ के नाते श्री राजाजी ने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए 'साधन' के (अहिंसा) प्रश्न पर समझौता करना ज़रूरी समझा। हाँ, श्री राजाजी की यह मान्यता कि इस प्रकार उन्होंने अहिंसा-सिद्धान्त के साथ किसी प्रकार समझौता (Compromise) नहीं किया है, अवश्य ही भ्रममूलक है। आदर्श और व्यवहार का सम्पूर्ण समन्वय आज तक कोई नहीं कर सका है और भविष्य में यह सम्भव हो सकेगा, ऐसी आशा रखना निराधार जान पड़ता है।

"इतने बड़े-बड़े उलट-फेर हो गये हैं और फिर भी दिन-पर-दिन यह अधिक-से-अधिक प्रत्यक्ष होता जा रहा है कि यह तो जो कुछ होनेवाला है, उसकी भूमिका है। हम सहज एक बड़ी व्यापक लड़ाई और उसकी भयंकर बरबादियों को ही नहीं देख रहे हैं, बल्कि आज हम एक बड़े महत्त्वपूर्ण क्रांति-युग में रह रहे हैं—जो आजतक के इतिहास के पन्नों मे आये हुए युग से भी अधिक व्यापक और विस्तीर्ण है। इस युद्ध का परिणाम कुछ भी हो, यह इन्क़िलाब तो अपना काम पूरा करेगा ही। जबतक यह होता रहेगा, तबतक इस धरती पर शांति और संतुलन कायम नहीं हो सकता।

हमें यह समझ लेना चाहिए कि पुरानी दुनिया बीत चुकी है। जो लोग उसके सबसे ज्यादा प्रतिनिधि रहे हैं, उनका कोई अस्तित्व नहीं रहा। वे तो उस गये-गुज़रे कल के प्रेतमात्र बनकर रह गये हैं।"

'लड़खड़ाती दुनिया'] —जवाहरलाल नेहरू— [स० सा० मण्डल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौष्ठव-पूजा

[प्रभाकर माचवे]

['कलावंत' या 'कलाकार' शब्द तो आपने सुना होगा ? उसका मतलब भी आप जानते होंगे। इस लफ्ज़ के अन्दर राजा रविवर्मा और अभी स्वर्गवासी हुए शारदाचरण उकील से लगाकर अल्फ्रे़ड थियेट्रिकल कम्पनी के परदे रँगनेवाले मियाँ और हरएक शहर में एकाध मिल जानेवाले 'फेंसी साइन-बोर्ड पेंटर' जैसे चित्रकार; उस्ताद अब्दुलरहीम खाँ और विष्णु दिगम्बर पलुस्कर से लगाकर 'राधेश्याम' के सहारे उपजीविका चलानेवाले हमारे गँवई पाँडेजी और बेड़नी मुन्नी; ताजमहल का नक्शा जिस इटालियन शिल्पी ने बनाया था वह और हमारे मोतीराम मिस्त्री वग़ैरह ललित-कलाओं के सब उपासक आते हैं। वैसे ही अगर अफ़लातून का ललित-कला और उपयोगी कलावाला वर्गीकरण मान्य किया जाये, तो गाँव के मोची, छीपा, नाई, कुम्हार, लुहार, सुनार वग़ैरह सभी सज्जन एक-न-एक प्रकार से कलाकार साबित हो सकते हैं।

एक शहर-निवासी बाबू कलाकान्त जिन्हें चित्रकला का काफ़ी ज्ञान है, संगीत के जो मर्मज्ञ हैं, स्थापत्य का जिनका गहरा अध्ययन है, काव्य के जो विशेषज्ञ हैं और गाँवों की हालत से जो बिलकुल नावाकिफ़ हैं, हाल ही में अमरीका में जो अपने चित्रों की प्रदर्शिनी पर नाम कमाकर स्वदेश लौटे हैं, जिन्होंने ज्यादा नहीं तो डेढ़ सौ से ऊपर कला-संबंधी और सौंदर्य-शास्त्र-विषयक किताबें अंग्रेज़ी हिन्दी वग़ैरह में पढ़ी होंगी; और जो सुवक्ता और चित्रपट की समालोचनाएँ आदि लिखने में भी माहिर हैं, पहली बार गाँव पर जाते हैं।

१. पेण्टर मियाँ, २. कथावाचक पाँडेजी, ३. मुन्नी बेड़नी, ४. मोचीराम, ५. रंगी खाँ छीपा, ६. ननकुआ नाई, ७. कल्लू कुम्हार ८. हरिजी हलवाई, ९. लछमन दर्जी, १०. सीताराम सुनार से उनका जो वार्तालाप होता है, वह नीचे दिया गया है।]

पेण्टर मियाँ

[पेंटर मियाँ का सील खाया हुआ मकान। लकड़ी और टीन के बड़े-छोटे टुकड़े। ब्लैक जपान, डिब्बे के और रँग, 'बुरुस', बेलतेल। भींत पर जर्जर पर्दा जिसपर किसी ऊँची हवेली के पास भद्दे और बेडौल किस्म के बगीचे और फव्वारों का चित्र भड़कीले रंगों में बना है। दूसरी तरफ़ काँच के फ्रेम में जड़ा हुआ, धनीराम सेठ की भावशून्य साँवली मुद्रा का एक 'एनलार्जमेंट' (जिसके गले में पन्ने के हार और सोने की चेन वग़ैरह बनायी गयी है, सिर पर पगड़ी और माथे पर चंदन)। मियाँ दुबले-पतले आदमी हैं। खसखसी दाढ़ी। पान से रँगे दाँत। रंगीन जाकिट। मगर आँखों और चेहरे से हिंदू जान पड़ते हैं। धोती पहिनते हैं। हाँ, एक बात मार्के की—खद्दर पहिनते हैं। बाबू कलाकांत अपना पेंट-सूट डाटे, गले में सस्ती जपानी मफलर, सिगरेट पीते जाते हैं और बातें करते जाते हैं।]

क०—ये ऐसे इस पेशे को करते हुए आपको कै बरस हुए ?

मियाँ०—पीढ़ी-दर-पीढ़ी पेशा है जनाब आप क्या समझते हैं ? मेरे वालिद ने नवाबसाहब की वो आला दर्जे की 'फोटू' बनायी थी कि मूँछ का हर-एक बाल गिन लो।

क०—अच्छा ? मगर यह पर्दा जो भींत पर टँग रहा है—

मियाँ०—हाँ, जी उसका एक किस्सा है। हमारे यहाँ एक बार रामलीलावाली एक कंपनी आयी थी। उसने हमसे पर्दा बनवाने की बात ठहरायी। रुपै की बात चली तो मैंने कहा—अजी दाम-वाम का क्या, वो तो आजायेंगे बाद में भी। काम देखिए। वो ख़ूबसूरत बगीचे की सीनरी बनेगी कि बस तबीयत फड़क उठेगी। फिर साहब, मैं उनकी भलमनसाहत पर भरोसा करके हमारे पड़ौसी पाँडेजी से पाँच रुपै उधार लेकर शहर गया। रँग लाया। छः दिन मिहनत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की। और रामलीलावाले महंत बाबा कहते क्या हैं कि देखो भई, डेढ रुपै में पर्दा दे दो, तो ले लेंगे। बोलो साब, डेढ़ रुपै का तो कपड़ा ही नहीं होगा। सौदा नहीं पटा। और रह गयी बात। फिर मैं जनाब, एक बार बंबई गया था। वह भी कुछ न पूछो। जिन्दगी में वह भी खासी ठोकर खायी। अब शहर का नाम नहीं लूँगा कभी। वहाँ सीखा 'फोटूगिराफी' और यह पर्दा अब मेरे फोटू खींचनेवालों के लिए काम देता है। बड़ा नफीज़ है। आप भी शौक़ करना चाहें तो—

क०—ना, ना, ना। फोटो-वोटो तो मैं अपने पसंद नहीं करता। मगर आपको यह खयाल नहीं होता कि इस बगीचे में जो फव्वारा आपने बनाया है वह महल से भी बड़ा बन गया ह ?

मि०—देखिए, नुक्स मत निकालिए। नुक्स निकालने बैठेंगे तो खुदा की इस कारीगरी में भी क्या कम नुक्स हैं? **'रंगी को नारंगी कहते और तत्त माल को खोया। चलती को गाडी कहते हैं, सुनसुन कबिरा रोया।'** अब बोलिए, मुझ जैसे हर हुनर आदमी की, जिसने ज़िन्दगी रंग-बुरुस में बिता दी, उसकी यह हालत हो फटे हाल कि आप जैसे कोई महर्बां आ भी जायें तो एक मोढा बैठने को नहीं दे पाऊँ। छिः छिः छिः.........

क०—हाँ, सचमुच, यह बुरी हालत है। पर यह खुदा की, कहाँ, इनसान की ही कारीगरी का नमूना है! और बुरा मत मानना, मैंने तो यों ही एक बात-की-बात कही थी। यह सामने जो एनलार्जमेंट बन रहा है, उसके कितने मिल जायेंगे तुमको ?—

मि०—'इनलारिजमिंट'? बडा मक्खीचूस है जी यह धनीराम सेठ! आप क्या समझे हैं?—फोटू, तिसपर कागज़, 'फिरेम', काँच-वाँच, ऊपर नाम लिखा लेंगे और घर पर बगीचे के गमलों पर नाम अलग से लिखा लेंगे और इस सबके बाद में, हाथ पर बड़ी मुश्किल से, पाँच रुपये पड़ जायँ, तो समझ लो, ग़नीमत! सो भी सेठानी-साहिबा की मुझपर ज़रा खास मेहर्बानी रहती है, इसलिए।

क०—त्च्, त्च्, त्च्। 'ओनली फाइव रुपीज़ फार ए'पोर्ट्रेट!!' विलायतों में एक-एक तस्वीर ये पैसेवाले लोग बाज़ी लगाकर हजारों गिन्नियों से खरीदते हैं।

मि०—आप भी कहाँ की बात छेड़ते हैं? कहाँ विलायत, कहाँ हम!

क०—तो इस तरह तुम्हारी माहवार आमदनी क्या हो जाती होगी ?

मि०—क्या महावार साहब? ये तो ऐसा है कि 'सीज़न-सीज़न' की बात है। कभी मेला-शेला हो गया तो फोटू-फोटू के ही आठ-दस रुपये एक रोज़ में हो जायँ। और नहीं तो महीने-के-महीने अठन्नी पर गुज़र जाते हैं। कभी तो फाक़ाकशी कर लेते हैं। हर रोज़ रोज़ेवाले को ईद कैसी? अब ये बारिश के दिन हैं तो छात्रियों पर नाम-लिखाई के कुछ मिल जायेंगे।

क०—छत्रियों पर नाम क्या दाम पर लिखते हो ?

मि०—अंग्रेज़ी हरूफ दो पैसे, उर्दू-हिंदी एक पैसा। सुन्हेरी हरूफ डेढ़ पैसा—

क०—बड़ी कम है जी तुम्हारी आमदनी! शहरों में सिनेमा के इश्तिहार रँगनेवालों को बीस-पच्चीस माहवार मिल जाता है और सिनेमा के आर्ट-डाइरेक्टर की तनख्वाह तो बीस-पच्चीस-सौ होती है।

मि०—कहाँ की बात कर रहे हैं आप? गरीबी में किसी कदर गुज़र कर लेते हैं। यहाँ तो यही राग है।

कथावाचक पांडेजी

[कलाकांतजी यह सोचकर गाँव में आये थे कि गाँववालों में कुछ आर्ट-सेंस (कला-दृष्टि) जाग्रत की जाय। उन्हें सौंदर्य के आध्यात्मिक आदर्शों पर कुछ सूचनायें दी जायें। उन्हें बताया जाय कि कला में प्रतीकों का क्या महत्व है, बिंबवाद क्या चिड़िया है, क्यूबिज़्म किसे कहते हैं?···

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

···और वहाँ चित्रकला के नाम पर उन्होंने पाया सेठ का एनलार्जमेंट, छत्री पर सुनहरे नाम, पर्दे पर वह बँगला जो पेंटर मियाँ को इस ज़िन्दगी में नसीब नहीं होगा, और उसकी सालाना आय उतनी, जितना कलावंत महाशय को प्रदर्शिनी में बताये गये उनके एक स्केच की क़ीमत हो—पाँच-छः-सौ रुपये !

कलाकांतजी दुःखित हृदय से आगे बढ़े। और उन्हें रास्ते में ही एक जगह बड़ी मंडली जुड़ी हुई मिल गयी। कथावाचक पांडेजी हारमोनियम पर 'राधेस्याम-विरचित रामाइन' गा रहे थे। बहतर शब्द तो यही होगा कि चीख रहे थे। पाँडेजी स्थूलकाय सज्जन थे, माथे पर चंदन, गले में रुद्राक्ष। बाक़ायदा बालों में माँग-पट्टी पड़ी थी, चुटिया भी उसी में झलक रही थी, अलग। कलाकान्तजी को संगीत और काव्य का वह एक साथ अपमान सहन नहीं हुआ और उन्होंने सोचा कि कथावाचकजी को ख़ूब आड़े हाथों लिया जाय। इतने में कथा समाप्त हो चुकी थी। आरती घूम रही थी। पैसे गिर रहे थे। श्रोतागण अपनी-अपनी जूतियों की खोज में व्यस्त, धीरे-धीरे, बिखर रहे थे। कलाकान्तजी पांडेजी के पास पहुँचते हैं और डाँटना शुरू करते हैं—]

'आपने यह सब क्या काव्य की हत्या करनी शुरू की है ? भोले-भाले लोगों की धर्मभावना को उकसाकर, उसे एक्स्प्लॉइट करके···

पाँडेजी बड़ी देरतक इस बकवास की ओर ध्यान ही नहीं देते। फिर किंचित घृणा से—'आर्या जान पड़ते हैं आप ! कहिए, बाबूसाहब, आपको क्यों प्रभु-नाम रुचेगा ? अंग्रेज़ी जो पढ़ गये, ये दो-दिन के लड़के···'

क०—'नहीं, मैं सचमुच जानना चाहता हूँ कि आप क्या रामायण पर कोई बहतर पुस्तक नहीं पढ़ सकते ? वाल्मीकि रामायण, रामचरितमानस, साकेत—

पाँ०—क्या बोले साहब आप—शाकेत या भाकेत, यह सब क्या बलाय है ?

क०—नहीं, मैं समझता हूँ कि राधेश्यामी तर्ज पर जो रामायण आप पढ़ते हैं वह एकदम काव्यगुणों से हीन—

पाँ०—क्या कहा आपने ? फिर कभी न कहिए। आप क्या समझे हैं अपने आपको ? यह रामाइन पंडित द्वारकानाथ के पुत्र और गुरुवर पंडित घासीराम के शिष्य (अपनी ओर इशारा करके) शालिग्राम शास्त्री, सकल वेदशास्त्रपारंगत ने बनायी है। आपने इसे क्या मजाख समझ रक्खा है ?

क०—अच्छा तो यह आप ही काव्यकृति है ? खैर। वह जाने दीजिए। और यह गाना जो आप गाते हैं इसमें अपने कंठ पर और श्रोताजनों की श्रवणेंद्रियों पर आप अत्याचार नहीं कर रहे हैं ? ऐसा आपको नहीं लगता ? और यह हारमोनियम-बाजा तो विदेशी वाद्य है, क्या इससे अच्छे ओर वाद्य अपने यहीं नहीं हैं ? जिनके द्वारा अपनी संस्कृति···

पाँ०—कथाबाचकी हमारे यहाँ पुश्तैनी चलती है। यह विद्या अब तुम कल-के-छोकड़े मुझे सिखाने आये हो। मैंने कहा न घोर कलजुग आगया। हाँ, तो रामबोला (अपने शिष्य की ओर संकेत करके) क्या आरती में दक्षिणा केवल छप्पन पैसा ही निकली ? बस श्रद्धा इस दुनिया से उठ चली। पतितपावन ! तूही पार लगा—!! राम-राम !! [क्रमशः]

यहाँ के कई फ़ौजी अफ़सर ग़दर के ज़माने में लूटपाट करके हिन्दुस्तान से कुछ जवाहरात ले गये थे।···पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह चीज़ उनके वंश में चली आती थी। अब गांधीजी यहाँ आये तो उनके कुटुम्ब की स्त्रियाँ आयीं और वह हार जो पुखराज का था गांधीजी के चरणों में रखकर कहने लगीं—हमारे पुरखे लूटकर भारत से यह लाये थे, बहुत दिन रखा, अब आपके तप का बखान सुना तो रखने की हिम्मत नहीं होती। गांधीजी ने हार को स्वीकार कर लिया। तप का ही यह चमत्कार है, वर्ना भेड़िये के मुहँ में गया ग्रास वापस नहीं आता।

'डायरी के कुछ पन्ने'] —घनश्यामदास बिड़ला— { सस्ता साहित्य मण्डल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कल्याणी' का अकल्याणी चित्रण

[नरोत्तमप्रसाद नागर]

जैनेन्द्रकुमारजी के नये उपन्यास का नाम है 'कल्याणी'। दो सौ से कुछ ऊपर इसमें पृष्ठ हैं, तीन खण्डों में यह बँटा हुआ है। इन खण्डों को उपन्यास का सिर, पेट और पाँव कह सकते हैं। सिर का नाम दिया गया है प्रारम्भिक। यह केवल एक पृष्ठ का है। इसमें एक वकील साहब का वकीली भाषा में परिचय दिया गया है। उपन्यास के पात्रों ने जो कुछ किया, किस तरह वे आगे बढ़े, उनकी विभिन्न क्रियाओं को खुद वकील साहब ने किस रूप में देखा, यह सब लिखकर वकील साहब छोड़ गये हैं। उन्हीं को, डॉक्युमेण्टरी विवरण के रूप में, जैनेन्द्रकुमारजी ने पेश किया है।

उपन्यास को यथार्थ का रूप देने की यह एक टेकनीक है। उपन्यास की भलाई-बुराई से, उसे लिखने की ज़िम्मेदारी तथा उसे लेकर उठनेवाले प्रश्नों से अपने को तटस्थ रखने का एक प्रयत्न भी इसे कह सकते हैं। वकीली भाषा का प्रयोग करें, तो पाठकों को भ्रम में डालने का यह टेकनिकल अपराध भी हो सकता है। लेकिन इन सब बातों को छोड़कर यहाँ हमें स्वर्गीय श्री० प्रेमचन्द का एक कथन याद आ रहा है। भविष्य के उपन्यास कैसे होंगे, इसकी रूपरेखा बताते हुए उन्होंने कहा है, **'भविष्य में उपन्यास जीवन-चरित्र के रूप में लिखे जायेंगे—वे जीवन-चरित्र किसी बड़े आदमी के हों, या छोटे को आज हम झूठ को सच बनाकर दिखाते हैं—अर्थात् कल्पित चरित्र चित्रित करते हैं; कल हमें सच को झूठ बनाकर देना होगा—अर्थात् सच्चे चरित्रों को कहानी बनाकर पेश करना होगा।'** जैनेन्द्रजी का यह उपन्यास सम्भवतः इसी तरह का एक प्रयत्न है।

प्रारम्भिक के बाद अब उपन्यास के पेट को ले लें। यह काफ़ी बड़ा है। उपन्यास के सिर और पाँव (जो केवल एक-एक पृष्ठ के हैं) के अनुपात में पेट इतना बड़ा है कि सिर और पाँव जैसे उसमें खो जाते हैं, केवल पेट-ही-पेट बाक़ी रह जाता है। पेट ख़ाली नहीं है, भरा हुआ है। इस उपन्यास की नायिका का जन्म चाहे जब हुआ हो, लेकिन उपन्यास का प्रारम्भ उस समय से होता है, जबकि वह गर्भवती होती है घटनाओं का काम भी एक ही वर्ष तक है—अर्थात् सन्तान के उत्पन्न होने तक। पेट जब तक भरा रहता है, उपन्यास चलता है, नायिका भी जीती है। इसके बाद उपन्यास भी खत्म हो जाता है और नायिका भी। तीन बजे उन्होंने पुत्र को जन्म दिया। तब स्वस्थ थीं, प्रसन्न थीं। अचानक, कुछ देर बाद हृदय की गति बन्द हो जाने से उनका देहान्त हो गया। कहानी यहाँ खत्म हो जाती है। इसके बाद जीवन शुरु होता है—उस नवजात शिशु का जीवन। लेकिन इस जीवन से सम्भवतः लेखक को कोई ग़रज़ नहीं—जब पैदा हुआ है, तो जी ही जायगा। उसके 'जीने' को देखने के लिए जब कल्याणी ही नहीं रुकी, तो लेखक क्यों रुके?

कल्याणी मरकर इतना दुःख, वेदना, कुत्सा छोड़ गयी है कि उपन्यास का पेट उसीसे भर जाता है। नवजात शिशु का यह दुर्भाग्य है कि उसे उपन्यास में स्थान नहीं मिल पाता। उपन्यास का प्रारम्भ उस मकान के चित्रण से शुरू होता है, जिसमें कल्याणी रहती थी। उस मकान का ही नहीं, उस मकान तक जानेवाले गली-कूचों का भी ज़िक्र है। सब कुछ उजाड़ और सूना हो गया है, उस घर की श्री चली गयी है। पीछे छोड़ गयी है वह एक शिशु और अपने बारे में इधर-उधर की चरित्र-सम्बन्धी कुत्सा—ऐसी कुत्सा, जिससे कल्याणी की इज़्ज़त पर ही आ बनती है। इसी कुत्सा को लेकर इस डॉक्युमेण्टरी उपन्यास का निर्माण हुआ है। इधर-उधर के परिचित-अपरिचित, कल्याणी के पति, स्वयं लेखक सब इस कुत्सा को, लाञ्छना को, लेकर आगे बढ़ते हैं। औरों की बात जाने दीजिए, स्वयं कल्याणी इस लाञ्छना को जैसे जीवन का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्यायवाची समझती है। इस उपन्यास का पेट ही नहीं, वरन् जैसे स्वयं कल्याणी का गर्भ भी इसे लाञ्छना से परिपूर्ण है। इस लाञ्छना ने उसे क़ैद कर दिया है, इसीके लिए वह जीती है और उसे आशंका है कि एक वर्ष से अधिक वह नहीं जी सकेगी। अपने गर्भ को उपलक्ष्य कर वह कहती है—'**इसीने मुझे क़ैद कर रखा है। नहीं तो अबतक मैं मर जाती...लेकिन मैंने भी तो इसे क़ैद कर रखा है। इस अनजन्मे पर मैं गुस्सा क्या करूँ ?**"

कल्याणी डॉक्टर है। उसकी डॉक्टरी एक आवरण के रूप में इस उपन्यास में आती है। रोगों को अच्छा करने या बढ़ाने वाली डाक्टरी के रूप में वह यहाँ नहीं आती बल्कि वह एक परदा बनकर आती है। कहा गया है—'**जानते हैं, डॉक्टरी क्या है ? डॉक्टरी है परदा। परदे के पीछे क्या है, सो भी आप जानते हैं ? पीछे जाने क्या नहीं है ?**"

परदे के पीछे क्या है ? निश्चित रूप से कहा जा सकता है, जीवन एक अनजन्मे शिशु का जीवन। लेकिन उपन्यास का आधार वह नहीं है। आधार है परदे के बाहर फैलनेवाली कुत्सा—ऐसी कुत्सा, जो जायज़ सन्तान को नाजायज़ बना देती है। जिसे सन्तान से जायज़-नाजायज़ की चिन्ता अधिक होती है। परदे को उठाकर उस जीवित सत्य को देखना वह नहीं चाहती—उसके अपराधी हाथ काँप उठते हैं। केवल बाहरी और ऊपरी व्यवसाय का अभिनय वह चलाती है। यह अभिनय ही अनिवार्य जीवन बनकर इस उपन्यास में आया है और इसका निर्माण हुआ है उस अजन्मे जीवित शिशु की उपेक्षा करके—सिर्फ़ इसलिए कि इस उपन्यास में कहानी कहनी है, जीवन नहीं देखना है, किसी चरित्र का निर्माण नहीं करना है। कहा गया है—"**उसकी मूर्ति गढ़ने का कष्ट मैं क्यों उठाऊँ ? मुझे तो कहानी कहनी है, इसमें संवेदन हुआ तो मैंने भर पाया।**' लेकिन संवेदन से दिल हल्का किया जासकता है, जीवन को नहीं सींचा जा सकता !

नतीजा इसका सामने है। उपन्यास का पेट काफ़ी बड़ा होगया है। उसमें समाया भी बहुत कुछ है। क्षेत्र उसका व्यापक है। लेकिन उसका होना न होना बराबर है। अजन्मे शिशु के जीवन के साकार और सफल रूप की आशा हम कर सकते हैं, लेकिन इस आशा का इस उपन्यास से जैसे कोई सम्बन्ध नहीं। इस उपन्यास में जीवन जिसे कहा गया है, जीवन का जो एकमात्र और अनिवार्य रूप हमारे सामने आता है, उसकी परिधि में इसका स्थान नहीं। स्थान रहने की गुंजायश होनी चाहिए, इस ओर देखने का अवसर तक नहीं मिलता। उद्देश्य नाम की चीज़ का अगर किसी उपन्यास अथवा साहित्यिक रचना से सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है, तो कहना होगा कि इस उपन्यास का उद्देश्य और चाहे जो हो, जीवन की ओर देखना नहीं है। मानो जीवन किसी कुमारी माता के पेट का कलंक है। इस कलंक की ओर आँख उठाकर वह नहीं देख सकती। जबतक वह बाहर नहीं आता, तबतक किसी तरह साँस लेती रह सकती है। बाहर आनेपर उसके प्राण-पखेरू उड़ जाते हैं।

ऐसी दुर्घटनायें जीवन में होती हैं, लेकिन उनसे जीवन की रचना नहीं की जा सकती—विशेषकर उपेक्षित शिशु की ओर से आँखें फेरकर।

जीवन-शिशु सामने पड़ा है। डाक्युमेण्टरी यथार्थ चित्रण ने उसका अस्तित्व सम्भव कर दिया है। उस जीवन-शिशु पर पड़ा है एक परदा—डाक्टरी का, क्रांति का, तपोवन का, गांधीवाद अथवा किसी और जीवन-नामधारी प्रवृत्ति का। कुछ लोग आते हैं। एक ने उँगली उठाकर प्रश्न खड़ा किया। दूसरे ने श्लीलता तथा भलमनसाहत की दुहाई देते हुए कहा—परदे के पीछे क्या है, यह किसने जाना है ? केवल ईश्वर ही जानते हैं। कुछ जानने का प्रयत्न करना ग़लत है। लेकिन इतने में यथार्थवादी हवा का एक झोंका आता है। दिखाई पड़ा, कुछ काला-काला है। यह कुछ क्या है, यह जानने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ज़रूरत नहीं। आगे बढ़ने के लिए इतना ही काफ़ी है। यथार्थवादी हवा का दूसरा झोंका उस कुमारी माता को सामने ला खड़ा करता है। उसपर भी डाक्टरी का आवरण पड़ा है—**"कल्याणी में यही अनबूझ हैं। चार में तीन हिस्से बात अनकही रखकर सिर्फ़ एक हिस्सा कहेंगी।"** जीवन को बढ़ाने में यह स्थिति चाहे मदद न दे, लेकिन उपन्यास को बढ़ाने में खूब मदद देती है। **'कल्याणी'** उपन्यास का सिर-पाँव चाहे जितना छोटा हो, लेकिन पेट कम नहीं है—वह बराबर बढ़ता ही जाता है। इस हद तक भारी हो चलता है, कि सँभाले नहीं सँभलता। सभी पात्रों के लिए वह बोझल हो उठता है। मुक्ति मिलती है उस समय, जब कल्याणी सन्तान को जन्म देती है—सन्तान को जन्म नहीं देती, बल्कि इस उपन्यास की बलिवेदी पर अपना जीवन चढ़ा देती है। रह जाता है वह जीवन-शिशु। ज़रूरत है ऐसे लेखक की जो उस शिशु से अपने जीवित-साहित्य को शुरू करे। इस उपन्यास की संवेदनशील गोद में उसके लिए स्थान नहीं है।

× × ×

बंजर भूमि पर इस उपन्यास का निर्माण हुआ है। इसका प्रत्येक चरित्र, प्रत्येक घटना, प्रत्येक स्पर्श—सबका उद्देश्य इसी बंजरता को उभार कर रखना है। कल्याणी की डाक्टरी, उसका गर्भ,—यह सब इसी बंजरता की पैरेड करते हैं। कल्याणी के पास सब कुछ है, लेकिन वह जीवन ही शून्यता को उभारने के लिए है। रोगियों के पास वह जाती है। उद्देश्य रोग को दूर करना नहीं, वरन् कुत्सा को उभारकर रखना है। प्रत्येक रोगी जैसे अवैध प्रेमी बनकर सामने आता है, लांछना और कुत्सा से पूर्ण। डाक्टरनी न होकर वह वेश्या भी हो सकती है—अपने शरीर को, शाब्दिक मानी में, तिल-तिल करके बेचती है। उसके जीवन की सम्पूर्ण व्यस्तता, उसका सार्वजनिक जीवन— सभी शून्यता का ही निर्माण करते हैं। वह एक ऐसा अन्धा कुआँ बनकर सामने आती है, जिसमें आज का सम्पूर्ण जीवन, इस जीवन के सभी पहलू—सभी वाद—खोते चले जाते हैं। ग़रीबों को मुफ्त दवा देती है, लेकिन व्यर्थ; क्रांतिकारी को आश्रय देती है लेकिन निरर्थक। उसके जीवन में, ले-दे कर प्रकाश की एक किरण दिखायी पड़ती है। लेकिन वह भी गाँधीवाद में जाकर गुम हो जाती है। रह जाता है एक अन्धा कुआँ—जिसे न जगन्नाथ का धाम पूरा कर पाता है, न दरिद्र-नारायण की सेवा, न लाल क्रांति, न गाँधीवाद और न ही काँग्रेसी प्रीमियर। अकेली वहीं रह जाती है—अकेली, अकेली, अकेली। दम तोड़ते हुए कहती है—**एक थे। वह अब गाँधी के हैं। गाँधी-सेवासंघ में क्या स्नेह को सुख[1] दिया जायगा—यह तो गाँधी को गांधीवाद में भून देना होगा। इससे बड़ी अकृतज्ञता—गाँधी की हत्या—और क्या हो सकती है ?**

बस गाँधी की हत्या पर ही नहीं है। मरकर भी कल्याणी एक जीवित शिशु को जन्म दे गयी है। क्या वह दिन कभी आयेगा, जब इस शिशु के चरित्र-निर्माण को कोई लेखक अपना विषय बनायेगा ? अबतक वह नहीं बन पाया है। उसकी खबर हमने ली भी है, तो उस समय जब वह बेहया और बेशर्म की तरह जीता बच कर जवान होने पर सामने आता है—एक प्रश्न और व्यंग बनकर। उस समय भी हम उसकी ओर उतना ध्यान नहीं देते, जितना कि उसकी प्रेमिका पर। वह केवल असंख्य कल्याणियों की संवेदनशील गोद का निर्माण करने की जैसे एक मशीन-मात्र है। लेखक को यह गोद मिल जाये और उस प्रेमिका की आँखों से गिरे हुए दो-चार आँसू—बस इतना ही काफ़ी है।

कल्याणी सबको आत्मसात करनेवाली इसी कुण्ड का—जीवन की सम्पूर्ण शक्तियाँ जहाँ पनप नहीं पातीं, ऐसी बञ्जर भूमि का—प्रतीक बनकर सामने आती है। उसकी बंजरता पर लेखक ने

---

१. श्री जैनेन्द्रजी से सूचना मिली है 'सुखै' शब्द मूल पुस्तक में गलत छपा है, 'सुखा' होना चाहिए था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परदा डालकर अस्पष्ट कर दिया है। इस अस्पष्टता को, परदे को, लेखक दूर करना नहीं चाहते। कहते हैं :—"**क्या आप सब कुछ जानना चाहते हैं ? एक स्त्री का सब कुछ जानना चाहते हैं—सब कुछ तो ईश्वर ही जानता है।**"

× × ×

कल्याणी की मृत्यु का स्कैण्डल चित्रित करने के बाद जैनेन्द्रजी की लेखनी रुक गयी है। जीवित रूप में कल्याणी सामने नहीं आती। किसी वकील के क़ागज़ों में से यह पुराना दफ़ीना निकला है। मालूम होता है, उसके शव को लेकर छीछालेदर चल रही है। आज का समाज, दुनिया का सारा ढाँचा निर्दय और नृशंस हो सकता है, लेकिन यह सब होते हुए भी उसमें 'उदारता' की कमी नहीं है। जीते जी वह भले ही कुछ न करे, लेकिन मरने के वक्त 'कफन' का टोटा कभी न होगा। यहाँ आकर सभी स्कैण्डलों का, दुनिया-भर की लांछना और कुत्सा का, अन्त हो जाता है। जैनेन्द्रजी की संवेदन-शील लेखनी ने दफ़नायी हुई इस कुत्सा को फिर से उभारा है। चाहते तो कल्याणी का परिचय उसकी जीवित स्मृति, कल्याणी-शिशु के द्वारा भी दे सकते थे। जीवित संसर्ग-स्पर्श की ज़मीन पर संवेदन खड़ा हो सकता था। लेकिन ऐसा नहीं हो सका। मृत्यु के प्रबल आकर्षण ने जैनेन्द्रजी की लेखनी को जीवन से दूर फेंक दिया है। संवेदन नहीं, यहाँ झुंझलाहट पैदा होती है—कल्याणी के प्रति नहीं, जैनेन्द्रजी की लेखनी के प्रति इसलिए नहीं कि उसने कल्याणी का चित्रण किया है, बल्कि इसलिए कि जीवित को छोड़कर गड़े मुर्दे को उसने उखाड़ा है।

कल्याणी, अपने-आप में, एक ऐसी भूमिका बनकर रह गयी है, जिसके मूल ग्रंथ का कुछ पता नहीं चलता। इस भूमिका का आधार मूलग्रंथ का अध्ययन नहीं, बल्कि इधर-उधर सुनी-फैली छिछली बातें, कुत्सा और लांछना हैं। मूल ग्रंथ को पढ़े बिना ही जैसे २०६ पृष्ठों की यह भूमिका लिखी गयी है। दुःख तो यह है कि लेखक इसीको जीवन और साहित्य मानते हैं। इसके आगे-पीछे भी कुछ हो सकता है, इसे वह देखना नहीं चाहते।

क्या सचमुच में जैनेन्द्रजी अपने साहित्य को इसी दायरे में रखना चाहते हैं ? यही उनकी साहित्य-रचना का उद्देश्य है ? उद्देश्य की इसी परिणति को क्या वह सफल मानते हैं ? एकाएक विश्वास नहीं होता। जैनेन्द्रजी से अनुरोध है, इस पर प्रकाश डालने की कृपा करें। यह जरूरी है। यह केवल जैनेन्द्रजी का ही नहीं, साहित्य का प्रश्न है—साहित्य की इसी परिणति पर क्या लेखक, आलोचक और पाठक को 'गर्व' करना होगा ?

सुन्दर समन्वय

[गणेशलाल शर्मा]

गाँवों में हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति का, आहार-व्यवहार का, खान-पान का, रहन-सहन का, रीति-रिवाज़ का, वेशभूषा का और आचार-विचार का ऐसा सुन्दर सम्मिश्रण हो चुका है कि बहुत से स्थानों पर हिन्दू-मुस्लिम का भेद मालूम करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। सदियों से एकता के बन्धन में बँधे हुए और वर्षों से साथ-साथ जीवन बितानेवाले ये देहाती भाई न मि० जिन्ना को जानते हैं और न ये अबोध भाई पाकिस्तान योजना को जानते हैं। न वे मुस्लिम लीग को जानते हैं न उसके कर्णधारों को। ये तो अपने उदर-पोषण के कार्य में दिन-रात ऐसे संलग्न रहते हैं कि इनको व्यर्थ की बातों के लिए समय ही कहाँ ? हाँ, शाम को काम से छुट्टी पाने के बाद थोड़ी देर हिन्दू-मुसलमान सब आपस में बैठकर आपस के सुख-दुःख की बात अवश्य करते हैं। प्रत्येक बात में ये लोग ऐसे घुल-मिल गये हैं कि इनकी मंडली में आप जावें, तो शनाख्त नहीं कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते कि कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान ! सब भेदभाव छोड़कर आपस में चिलम और बीड़ी पीते हैं। कपड़े-लत्ते सबों के समान हैं। असली समस्या इनके सामने गरीबी की है, जिसे दूर करने के लिए ये दिन-रात अनवरत परिश्रम करते हैं। यदि इनसे हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर कोई बात छेड़ता है, तो सरलता से इनका यही उत्तर होता है—हमारी तो पीढ़ियाँ ही यों ही खप गयीं। हमारी आपस में कौन-सी दुश्मनी है ? हम तो लड़ते-भिड़ते हैं फिर भी दुःख में तो ये ही आपस के लोग काम आते हैं। ये तो पढ़े-लिखे लोगों की बातें हैं, जो हममें फूट डालने की कोशिश करते हैं।

यह गाँव छोटा-सा कस्बा है। शिक्षा में पिछड़ा हुआ है। इसमें मुसलमानों के सौ से ऊपर घर हैं। सब-के-सब किसान हैं। ग़रीबी-का भार सबों पर है। यहाँ के ब्राह्मण और वैश्य भी खेती करते हैं। अधिक किसान धाकड़ जाति के हैं। यहाँ पर हिन्दू-मुसलमानों की एकता का और इनके परस्पर सुसम्बन्ध का ऐसा अनुपम उदाहरण मुझे देखने को मिला जिसने मुझे ये पंक्तियाँ लिखने को प्रेरित किया।

यहाँ के सभी किसान दिनभर खेतों में काम करते हैं। शाम को या कभी सुबह, झुण्ड-के-झुण्ड लोग एक चबूतरे पर बैठकर अपनी-अपनी फसल की और अपने सुख-दुःख की बातें किया करते हैं। इनका आपस में इतना कौटुम्बिक संबंध है कि हिन्दू लोग मुसलमान-परिजनों को **नूरा काका, सखीना काकी** और **फातमा बहन** कहकर बुलाते हैं। इधर ये लोग हिन्दू कुटुम्ब को **भेरा दादा, कजोड़ी मामा, जमना मामी** और **आनंदी बहन** इत्यादि रिश्ते के शब्दों से सम्बोधित करते हैं। और ये बातें यहाँतक ही सीमित नहीं हैं। एक बात और यह है कि हिन्दुओं के नाम यहाँ मुस्लिम रीति के अनुसार और मुसलमानों के नाम हिन्दू तरीके पर हैं ! यहाँ **नूरा माली** हिन्दू है और **बरदाराम** मुसलमान है। यहाँ **माँगीलाल** मुसलमान युवक का नाम है और **पार्वती** एक मुस्लिम युवती का। मैंने एक बार यह प्रश्न किया कि "तुम आपस में ऐसा नाम क्यों रखते हो ?" इस पर उत्तर सीधा-सादा यह है कि "......काका ने प्रेम से रख दिया तो अब हम क्यों बदलें ?" एक ने कहा—"पार्वती गणेशजी की माँ का नाम है इसलिए हमें बहुत अच्छा लगता है।" यहाँ के हिन्दू लोग पीर (जिन्हें ये शहीद महाराज न कह कर '**सेद**' महाराज कहते हैं) की पूजा बड़ी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक करते हैं और मुसलमान बजरंगबली की मनौती मानकर उनके प्रति प्रसाद चढ़ाते हैं। यहाँ के '**सेद**' महाराज हिन्दुओं के दुःख दूर करते हैं और हनुमानजी मुसलमानों के। क्या इतने गहरे सुदृढ़ सम्बन्ध को और इस अगाध श्रद्धा को, इस सुन्दर समन्वय को और प्राचीन संस्कृति को, इस मधुर मिलन को और एकता के दृढ़तर गठबंधन को मि० जिन्ना दूर कर सकेंगे ? कहाँ वह खोखला ज्ञान और मिथ्या कल्पना और कहाँ यह वास्तविक जगत का चिर संबंध ! सुन्दर सत्य !! अविचल आनंद !!!

त्यौहारों पर यहाँ हिन्दू-मुस्लिम की गंगा-जमुना का संगम अवर्णनीय ही है। आनंदातिरेक में ये लोग सब भेद-भाव भूलकर सब त्यौहारों पर खुशियाँ मनाते, पूजा करते और नये-नये वस्त्र पहनकर एक-दूसरे के यहाँ भेंट ले जाते हैं। संक्षेप में इतना ही लिखना पर्याप्त है कि होली के त्यौहार पर हिन्दू-मुसलमान सभी एक होकर फगुआ गाते हैं और रँग-गुलाल डालकर परस्पर बड़े उत्साह से इस महोत्सव का आनंद लूटते हैं। मोहर्रम के समय नये-नये वस्त्र पहनकर हिन्दू लोग अपने गले में ढोल लेकर मोहर्रम के आगे नाच-कूदकर जो तान लगाते हैं, वह देखने ही योग्य होती है। 'तहज़ीब' के ठेकेदारों को, मुस्लिम मत के 'रक्षकों' और हिन्दुओं के हिमायतियों को इधर आकर देखना चाहिए कि असली भारत कहाँ बसा हुआ है ? इसका संबंध कैसा है ? इसको कौन और कैसे तोड़ सकता है ? यदि किसी ने दुस्साहस किया भी, तो इसका परिणाम क्या होगा ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्यन्त हृदयग्राही बात तो शाम को मन्दिरों में देखने को मिलती है। **रामवचन पांडे** रामायण पढ़ता है और **मुश्ताक** फड़क कर ढोलक बजाता है, **सुखराम** करताल से तान मिलाता है और **खुदाबख्श** अपनी मधुर लोचदार आवाज़ से संगीत में सरसता पैदा कर देता है। एक दिन मुझे भी इनकी मण्डली में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहाँ पहुँचा तो फिर क्या था! सब लोग मारे खुशी के उछल पड़े। खुदाबख्श ने कहा "मास्टर साहब पेटी (हारमोनियम) आप बजाइए। मैं और पांडेजी आपका बतलाया हुआ भजन गाते हैं।" मैंने बाजा हाथ में लिया और वे दोनों गाने लगे—

"बन चले राम रघुराई, सँग चली जानकीमाई।"

श्रोतागण मंत्र-मुग्ध-से हो गये और उनके नेत्रों से प्रेमाश्रु-बरसने लगे! इन लोगों का प्रेम और भक्ति देखकर मैं भी उस दिन बहुत प्रभावित हुआ। क्या ये बातें अमिट नहीं हैं? अधिक क्यों, ही जब उस मुसलमान बालक **मसीतअली** ने झूम-झूमकर मस्त होकर जब यह भजन गाया तो मैं बाजा बजाना भी भूल गया! ऐसा मस्त हुआ।

मसजिदों में है खुदा और मन्दिरों में राम है।
जपते हैं हिन्दू-मुसलमाँ दोनों का एक नाम है॥
शंख काशी में बजाया और अजाँ काबे में दी।
खुद पुजारी खुद बिलाले आशिके इसलाम है॥
गौएँ गोकुल में चरायीं बकरियाँ मक्का में जा।
आप ही अहमद बनें और आप ही घनश्याम हैं॥
माला और तस्बी में बस एक नाम का ही फर्क़ है।
सच अगर पूछो हमें तो दोनों का एक काम है॥

इस वास्तविक भारत की झाँकी जिन्ना साहब को ज़रा भी दृष्टिगोचर हो जाय, तो वे अवश्य ही अपनी कुख्यात योजना को भूल जायँगे।

हिन्दी के बाल-साहित्य पर एक दृष्टि और एक योजना की रूपरेखा

[सुमनेश : सुधीर]

हिन्दी में कई एक संस्थाओं ने बाल-साहित्य प्रकाशित किया है और आज भी इस दिशा में प्रयत्न जारी है, परन्तु जिस शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक ढंग से यह साहित्य तैयार किया जाना चाहिए, उसका सबमें सर्वथा अभाव है।

आजतक जिन प्रकाशकों ने बाल-साहित्य का प्रकाशन किया है उनका मुख्य उद्देश्य प्रायः पैसा कमाना ही रहा है--यह कहते संकोच नही होता। उन्होंने अधिकतर वे ही पुस्तकें निकालीं, जिनके विषय में उन्हें विश्वास हो गया कि वे स्कूलों में चल सकेंगी। कई पुस्तकें ऐसी भी प्रकाशित हुई हैं, जो पाठ्यक्रम या पाठशाला में नहीं आतीं, पर उनके विषय में भी यह साफ सही बात है कि वे पुस्तकें बालकों के लिए निकाली जाकर भी बालकों के लिए सर्वांग-संपूर्ण काम की नहीं हो सकीं—नहीं हो सकतीं। कारण स्पष्ट है कि प्रकाशकों के दिमाग में यह दिशा भी एक व्यवसाय की धारा बन गयी और वे बिना किसी संकोच या हिचकिचाहट के बाल-साहित्य के प्रकाशक बन बैठे! वे बाल-विज्ञान से कोसों दूर-दूर आजतक रहे हैं और बालकों के लिए साहित्य-सृजन या प्रकाशन के पहले बालकों को पढ़ने का उन्होंने कभी प्रयत्न नहीं किया। शास्त्रीय और मनोविज्ञानिक दृष्टिकोण उनके सामने तक नहीं आया और वे सही माने में नहीं जान सके कि बालकों के मानसिक विकाश में सहारा और सहायता देनेवाली कैसी चीज़ हिन्दी में तैयार की जाये।

भारत की अधिकांश भाषाओं में निकले हुए बाल-साहित्य के अध्ययन का अवसर हमने पाया है और हिन्दी के बाल-साहित्य को भी हम गौर और गहराई से देख गये हैं। हमारा यह निश्चित मत है कि भारतीय भाषाओं में बाल-साहित्य का प्रतिनिधित्व करनें का श्रेय केवल गुजराती भाषा को है। कारण यही है कि गुजराती में बाल-साहित्य के प्रधान सृष्टा आचार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गिजुभाई थे और वे बाल-मनोविज्ञान के प्रकांड पंडित और अद्वितीय शिक्षा-शास्त्री थे, इसलिए उनकी देखरेख में जो भी चीज़ें निकली हैं वे नितान्त सुन्दर, उपयोगी और उत्कृष्ट हैं। पर हिन्दी के बाल-साहित्य के पीछे बल कितना है ? कितनी समस्या है ? कितना अध्ययन है ? कितनी लगन है ?

हिन्दी में उम्र के साथ-साथ चलनेवाला बाल-साहित्य नहीं है। हमारे प्रकाशक एक डंडे से सब भेड़ें हाँकते आये हैं। उन्होंने पुस्तकें प्रकाशित कर दीं। यदि कोई बच्चों के लिए पुस्तकें खरीदने विक्रेता के पास जायें, तो विक्रेता महोदय भी बच्चों के लिए निकाली हुई पुस्तकें ला देंगे। उन्हें न यह जानने की आवश्यकता है कि बच्चे की उम्र क्या है ? न यह कि बच्चा क्या पढ़ता है ? उन लोगों (प्रकाशकों) ने जहाँतक हमारा मत है, बाल-साहित्य को शिक्षण से आजतक भिन्न माना है और परिणाम यही हुआ है कि पाठ्य पुस्तकें जिस प्रकार भिन्न-भिन्न वर्ग के लिए तैयार की जाती हैं वैसे उनका साहित्य सब उम्र के बालकों के लिए नहीं हो सका है। फिर भी ग्राहक का बालक यदि ७ वर्ष का है तो भी १५ वर्ष के बालक के लिए निकाली हुई पुस्तक उसे सौंपी जावेगी। ५ वर्ष से लगाकर ११ वर्ष तक के लिए या वर्ग के लिए शास्त्रीय पुस्तकों की एकदम कमी है ! जबलपुर के मिश्रबन्धु कार्य्यालय ने इस दिशा में अवश्य ही एक प्रयत्न किया है और कुछ पुस्तकें प्रकाशित की हैं, परन्तु वे भी बाल-साहित्य की सर्वांग संपूर्णता के लिए समुद्र में एक बूँद के समान हैं।

बात यह है कि लोगों ने बाल-साहित्य के सृजन को एकदम साधारण-सी बात ही समझ लिया है। बाल-मनोविज्ञान के ज्ञाता इस तरफ से एकदम उदासीन रहे। साहित्य-महारथी और शिक्षा-शास्त्रियों ने बच्चों के लिए लिखना अपना अपमान समझा। इस सबके परिणामस्वरूप जो होना चाहिए वही आज हो रहा है। ज्ञान का भूखा बालक हमसे क्या चाहता है, इसे आजतक किसने पहचानने की कोशिश की ? किस लेखक या प्रकाशक ने आजतक इस बात की चिन्ता की कि किस आयु में बालक को क्या मिलना चाहिए ? किस उम्र में वह परियों की कहानियाँ पसन्द करता है ? किस उम्र में वीरता या जौहर की ? किस उम्र में विज्ञान, स्वास्थ्य या हँसी-मजाक और चतुराई की ?

बाल-साहित्य में नाटक और एकांकी नाटक अंगुलियों पर गिनने लायक भी नहीं। बालकों के पत्रों की पुस्तकें हमारी नज़र में एक भी नहीं आयी। संलाप भी अपूर्ण और नगण्य। यात्रा, विज्ञान, साधारण ज्ञान, स्वास्थ्य-ज्ञान, स्वास्थ्य, करतब, पशुपक्षी, कीड़े-मकोड़े, जलजन्तु, भूगोल, भूगर्भ और खगोल आदि के सम्बन्ध में हिन्दी में बच्चों के लिए हैं ही कितनी पुस्तकें ?

कहानियों के लिए हिन्दी-मन्दिर प्रयाग का प्रयत्न निस्सन्देह प्रशंसनीय है, परन्तु वहाँ भी हमें कहानियों का क्रम आयु और शास्त्रीय श्रेणियों के अनुसार नहीं मिलता। इसी प्रकार जीवन-चरितों के लिए छात्र-हितकारी पुस्तकमाला दारागंज, प्रयाग ने भी बहुत-कुछ किया है, परन्तु वह सब कुछ है केवल श्रेणी-विशेष के लिए ही। जिस श्रेणी और वर्ग के लिए उनकी पहली पुस्तक निकल गयी, उसी को स्टैण्डर्ड मानकर आगे की पुस्तकें प्रकाशित होती गयीं। गंगा ग्रंथाकार ने भी अपने कदम इस ओर बढ़ाये हैं परन्तु उनके साहित्य को बाल-साहित्य या शिशु साहित्य न रहकर किशोर-साहित्य कहना अधिक उपयुक्त होगा। इंडियन प्रेस द्वारा प्रकाशित बाल-साहित्य भी इसी श्रेणी में आता है। इसके अतिरिक्त हिन्दी पुस्तक एजेन्सी ने भी बाल-साहित्य प्रकाशित किया है, पर वह बाल-साहित्य है भी कि नहीं इसमें हमें सन्देह है। उनकी प्रायः तमाम पुस्तकों पर लिखा रहता है :

'बच्चों और बूढ़ों सबको हँसनेवाली कहानियाँ

यदि हास्यरस के साहित्य को पूरा करने के लिए उनकी पुस्तकें निकली हों, तो वे ज़ामें पर उनकी वे पुस्तकें—इसमें कोई सन्देह नहीं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चों के काम की जरा भी नहीं बन सकी हैं। बच्चों के लिए हास्य लिखने पर—साफ़ जाहिर हो जाता है कि उन्होंने बच्चों को समझाने का जरा भी अभ्यास नहीं किया। बच्चों के लिए हास्य कैसा हो? यह भिन्न लेख का विषय है; पर यह स्पष्ट है कि इस उद्देश्य में वे सफल नहीं रहे। ७ से १५ वर्ष के भिन्न-भिन्न बालकों को उनकी पुस्तकें सुनाकर उनका मत जानने का प्रयोग भी किया गया, पर हास्य या मनोरंजन तो दूर रहा, कई-कई बालक उकता तक गये! भद्दे-भद्दे अजीबोगरीब नाम ही तो हास्य के उत्पादक नहीं हैं। भोंदूराम, पेटूमल, दमड़ीबाई, छदामीलाल, ढपोरशंख और निठल्लू आदि नामों ने तो कई बालकों में हास्य के स्थान पर घृणा तक उत्पन्न कर दी है।

इसमें कोई शक नहीं कि व्यवसाय को सफल बनाने के लिए हिन्दी पुस्तक एजेन्सीवालों ने पुस्तकों का कागज बढ़िया लिया है, छपाई सुन्दर है, चित्र भी हैं, जो बालकों और बाल-प्रेमियों को आकर्षित करने के लिए काफी है; उनकी गिनती की कुछ पुस्तकें साधारणतया अच्छी भी हैं।

अपने आपको बाल-साहित्य का सर्वश्रेष्ठ प्रकाशक कहने और माननेवाला शिशु-कार्यालय भी इस दिशा में काफ़ी पिछड़ा रहा है। उनकी शायद बालकों के लिए सबसे अधिक पुस्तकें निकली हैं, परन्तु वहाँ भी न कोई आयु का लिहाज रखा गया है न कोई श्रेणी का क्रम। उनकी पुस्तकें हमने चाव और उमंग से देखीं; पर देखजाने पर हमारा मत यही हुआ कि कुछ-एक पुस्तकों को छोड़कर वे भी दूसरे प्रकाशकों से आगे नहीं निकल सके। केवल पुस्तकों की संख्या अधिक प्रकाशित करने से ही कोई सर्वश्रेष्ठ प्रकाशक नहीं हो जाता। फिर भी उन्होंने बच्चों के लिए कहानियों के अतिरिक्त खेलकूद, स्वास्थ्य, जीवन-चरित, कविता, विज्ञान आदि के सम्बन्ध में जैसे-तैसे कुछ-कुछ लेने का प्रयत्न किया है, लेकिन शिशु-साहित्य वे सम्पूर्ण हद तक प्रकाशित नहीं कर सके।

यदि ५ से १२ वर्ष की शिशु की आयु मानी जाये, तो उनकी अधिकांश पुस्तकें ९ से १२ वर्ष के काम की ही रहेंगी। बहुत कम पुस्तकें ऐसी होंगी जो ५ से ९ वर्ष तक के काम की हो सकें! इतना होने पर भी बाल-साहित्य में एक कमी ज्यों की त्यों बनी ही रही है।

बाल-साहित्य के प्रमुख प्रकाशकों के अतिरिक्त आदर्श ग्रंथमाला प्रयाग, हिन्दी पुस्तकालय मथुरा, पुस्तक भण्डार लहेरियासराय, हिन्दी भवन लाहौर, शारदा मन्दिर दिल्ली, पुस्तक भंडार कलकत्ता, बाल-साहित्य समिति कलकत्ता, युगान्तर प्रकाशन समिति पटना, बाल-शिक्षा समिति बाँकीपुर, ग्रंथमाला कार्य्यालय बाँकीपुर, हिन्दी प्रेस प्रयाग, साहित्य निकेतन प्रयाग, साहित्य सेवक संघ काशी, साहित्य कार्य्यालय प्रयाग, प्रसिद्ध पुस्तकालय, प्रमोद पुस्तकालय, तरुण भारत ग्रंथावली, सिटी बुक हाउस कानपुर, मरुधर प्रकाशन मन्दिर और अवस्थी आश्रम जोधपुर, पुस्तक भंडार जयपुर, हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर कार्य्यालय बम्बई, राजस्थान बुकडिपो दिल्ली और सस्ता साहित्य मण्डल दिल्ली आदि कई प्रकाशकों ने अपना छुटपुट प्रयत्न इस दिशा में किया अवश्य है, परन्तु उनका उद्देश्य ऊपर बतायी हुई प्रेरणा के अनुसार ही अधिकतर रहा है। बाल-साहित्य का प्रकाशन करने के पवित्र उद्देश्य ही से उन्होंने ऐसा किया हो, सो बात नहीं है।

बालक के लिए साहित्य-सृजन करने के पहिले बालक को, उसकी वृत्ति को और उसकी अपनी बात दुनिया को जान लेना नितान्त आवश्यक है। यदि हम अपनी ही दृष्टि से बाल-साहित्य का निर्माण करेंगे तो निश्चय ही बालकों के हित की अपेक्षा अधिक अहित होने की सम्भावना रहेगी। इसलिए आयु की प्रत्येक श्रेणी और उसकी आवश्यकता को ध्यान में रखकर तैयार किया गया साहित्य ही उत्तम साहित्य कहा जा सकेगा।

निम्नलिखित योजना ऊपर के प्रस्ताव का एक संकेत मात्र है। बाल-मनोविज्ञान के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधार पर शास्त्रीय दृष्टिकोण के सहारे बालकों के मानसिक विकास में सहायक होने के उद्देश्य से साहित्य-सृजन करने की योजना की रूपरेखा यों होनी चाहिए :—

दो श्रेणियों के लिए साहित्य निकाला जाये :

१. शिशु श्रेणी २. किशोर श्रेणी

आयु के क्रम से शिशु श्रेणी के ३ भाग हों (१) ५ वर्ष से ७ वर्ष (२) ७ वर्ष से ९ वर्ष (३) ९ वर्ष से ११ वर्ष

कई एक विशेष जानकारों ने यह भी सुझाया कि ५ से ९ वर्ष तक ही चार श्रेणियाँ हो और पाँचवीं श्रेणी ९ से ११ वर्ष तक हो।

इसी प्रकार किशोर श्रेणी के भी आयु के क्रम से ४ विभाग किए जाये :

(१) ११ वर्ष से १३ वर्ष (२) १३ वर्ष से १४ वर्ष (३) १४ वर्ष से १६ वर्ष (४) १६ वर्ष से १७ वर्ष

शिशु-श्रेणी के लिए आयु के उपरोक्त आधार पर बाल-साहित्य निम्नांकित रूपों में प्रकाशित होना चाहिए :

गद्य (१) कहानी (२) संलाप (३) एकांकी नाटक (४) पत्र

पद्य (१) कहानी (२) गीत (३) लोरियाँ (४) पहेली बुझौवल (५) फुटकर—चित्रों पर आधारित

इसी प्रकार किशोर-साहित्य भी आयु के क्रम को दृष्टि में रखते हुए निम्नांकित रूपों में प्रकाशित होना चाहिए :

गद्य (१) कहानी (२) संलाप (३) एकांकी नाटक (४) नाटक (५) पत्र (६) निबन्ध

पद्य (१) कहानी (२) गीत (३) फुटकर

शिशु और किशोर-श्रेणी में गद्य के लिए जो कहानी विषय रखा है, उसका क्षेत्र हमारी योजना में काफी विस्तृत है। हमने कहानी के २० भाग कर दिये हैं प्रत्येक में २० तरह की कहानियाँ हैं—

स्वास्थ्य, भूगोल, खगोल, धर्म, विज्ञान, साधारण ज्ञान, प्रकृति, इतिहास, मनोरंजन, यात्रा, महापुरुषों की, देश-विदेश की, जन्तु जगत, जल-संसार, दादी-नानी, काल्पनिक, गुपचुप, संस्था करतब की और फुटकर कहानियाँ।

और इस तरह हमारा समस्त साहित्य उपरोक्त विषयों से भरा-पूरा कला और कल्पना के आधार पर इस प्रकार तैयार किया हुआ होगा कि जिससे बालकों का साधारण ज्ञान इतना उन्नत और परिमार्जित हो सके कि उनको रात-दिन में काम आनेवाली बातों और वस्तुओं के परिचय में अनभिज्ञता न रहे और जीवन के क्षेत्र में वे सच्चे सफल युवक, युवतियों की तरह आगे बढ़ते नज़र आवें।

इस प्रकार की यह योजना बाल-समाज में मानसिक, शारीरिक और आत्मिक विकास के अभाव की सम्यक् पूर्ति करके बाल संसार में ऐसी संजीवनी फूँकनेवाली है कि जिससे राष्ट्र के कुम्हलाये हुए नव अंकुरों के पुनः पुष्पित और फलित होने की पूर्ण आशा है। [**लेखकों का अपना दृष्टिकोण लिये हुए यह लेख इसलिए यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है कि हम अपनी भाषा के अभाव को, यदि वह सचमुच है तो, दूर करने की ओर बढ़ें। इस सम्बन्ध में भिन्न दृष्टिकोण के लेखों का भी हम स्वागत करेंगे।—सम्पादक**]

'चरित्र' नहीं 'चारित्र्य'

"हमें महापुरुषों के चारित्र्य का अनुसरण करना चाहिए, न कि उनके चरित्र का। दरअसल महत्त्व चारित्र्य का है। शिवाजी महाराज ने सौ दो सौ किले बनवाकर स्वराज्य प्राप्त किया। इस-लिए आज यह नहीं समझना चाहिए कि उसी तरह किले बनाने से स्वराज्य प्राप्त होगा। किन्तु जिस वृत्ति से उन्होंने अपना जीवन बिताया और लड़ाई की, वह वृत्ति, वे गुण हमें चाहिएँ। जिस वृत्ति से शिवाजी ने काम किया उस वृत्ति से हम आज भी स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। ······इसीलिए चरित्र उपयोगी नहीं, चारित्र्य उपयोगी है।

'विनोबा और उनके विचार'] **—आचार्य विनोबा—** [**सस्ता साहित्य मण्डल**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंदी

['विकल']

कारागार की अँधेरी, छोटी कोठरी में भयंकर निशा के वक्ष-स्थल पर ताण्डव नृत्य करनेवाले रुद्र ! ऊँची-ऊँची पत्थर की विशाल चहारदीवारी से घिरी हुई लोहे की चमचमाती हुई प्रौढ़ शलाकाओं के बीच गले में तौक़, हाथों में हथकड़ी, पैरों में बेड़ी पहने हुए भी एक जगह न ठहर कर लाल-लाल आँखों से अंगारे बरसा, भीषण दहाड़ के साथ चक्कर काटनेवाले शेर ! अपने हृदय में न जानें कितनी अभिलाषाओं की बुरी तरह से गर्दन मसोस कर एक कसक के साथ बड़ी ही मस्ती से इठलाते हुए तसले पर 'इन्क़िलाब जिंदाबाद' का प्रलयंकर गान गानेवाले राष्ट्रीय गायक ! पशुवत् व्यवहार को भी शान्ति के साथ नीची निगाह किये हुए सहनशीलता की सीमा से दो हाथ आगे जाकर सहन करनेवाले सहनशील ! दूसरों की सेवा में अपने को खपा डालनेवाले स्वार्थपरता से रहित निस्वार्थ सेवी ! सुख को दोनों पैरों की ठोकर से ठुकरा कर दुख को हँसते हुए असीम आनंद के साथ गले से लगानेवाले देवता ! कलेजे में एक आह के साथ आग लगा देनेवाली चाह को लिये हुए पत्थर को चूर-चूर कर देनेवाली अहिंसा के उपासक ! भूले-भटकों तथा अंधों की आखें खोलकर सत्य की मशाल को जला उसके प्रकाश में सत्य मार्ग बतलानेवाले सत्पथ प्रदर्शक ! सर्दी, गर्मी, वर्षा, आँधी, भूख प्यास, सुख, दुख और आपदाओं की कुछ भी परवाह न करके गर्व के साथ सर को ऊँचा उठाकर दुनियाँ को देखनेवाले अचल हिमालय ! माता, पिता, भाई, बन्धु, बहन, स्त्री, पुत्र इत्यादि सगे साथियों और कुटुम्बियों के मोह को छोड़ देनेवाले निर्मोही ! शत्रु, मित्र, छूत, अछूत, जाति-पाँति के भेदभाव को त्याग जो भी सामने आ जाय उसीके चरणों में प्रेम से अपना सर रख देनेवाले आदर्श प्रेमी ! पीटर ! पीर ! प्रताप ! काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि दुर्गुणों का खून करके उसी रँगीले रँग में दिल को रंग कर इन्द्रिय-संयम करनेवाले संन्यासी ! तेग, तबर, तलवार, तमंचा, गोली, छुरी, बर्छी, कटारी, भाला इत्यादि सभी के आगे अन्याय का नाश करने के लिए जालिम के जुल्मों से डरकर मस्तक न झुका हर्ष से सीना ताने खड़े रहनेवाले स्वाभिमानी ! अत्याचार होते हुए देख अपने जले दिल की राख में छिपी क्रांति की चिनगारी को हवा लग जाने के कारण उठते हुए धुआँधार से विश्व को ख़ाक न बना, शान्ति, प्रेम, दया की धाराओं से बनी त्रिवेणी की धार में रोते और हँसते स्नान करनेवाले ठंडे ज्वालामुखी ! किसी दीन की दयनीय दशा को अश्रुधार के भँवर में पड़, चक्कर काटते, हाथ पैर पीटते, छटपटाते तथा बेदम को दम-दिलासे द्वारा उसे उछल-उछल कर डूबने से बचानेवाले सफल तैराक़ ! भूखे की पुकार को सुन अपने शरीर के समस्त रक्त को आहों से उड़ा, पुतलियों की काली घटा में छिपा कड़क और गड़गड़ाहट के साथ छपछपाते पलकों से कभी-कभी चपला को चमकने का मौक़ा देते हुए एक-एक बिन्दु का कण-कण बिखेर मूसलधार तथा गठरी बाँधकर बरसनेवाले जलधर ! अपनी आन और बान के हित के शरीर टुकड़े-टुकड़े भी कराकर याचक को निराश न होने देनेवाले महादानी शिवि ! अपने शत्रु के लिए भी मन, वचन, कर्म किसी भी प्रकार से अहित न करके इस उच्च आदर्श को सामने रख संसार को 'अहिंसा परमोधर्मः' का पाठ पढ़ानेवाले पाठक ! घर में सड़-सड़ कर मरने की अपेक्षा अपने देश की स्वतंत्रता के लिए शम-ए-आजादी का परवाना बन तिल-तिल करके मर-मिटने की अभिलाषा रखनेवाले वीर सत्याग्रही ! तेरे चरणों में किस अभिमानी का मस्तक गर्व के साथ नत न होगा। विश्व की विभूति बंदी ! तू धन्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत प्रश्न

'अश्लीलता' किसे कहें ?

अश्लीलता-संबंधी जो चर्चा 'जी० सा०' में चल रही है उसपर मैंने श्री किशोरलाल घ० मश्रुवाला की सम्मति माँगी थी। श्री मश्रुवाला न केवल गहरे विचारक व तत्वचिन्तक ही हैं, बल्कि सत्य-मार्गदर्शक भी हैं, सुधीन्द्र के कुछ अवतरण तथा मेरे लेख के कुछ शब्द उन्हें खटके। उनकी ओर संकेत करते हुए वे एक पत्र में लिखते हैं—

प्रिय हरिभाऊजी

"मुझे कवि मुक्तानंद की एक बात याद आती है। उनकी भाषा में कभी हलके शब्द नहीं आते थे, सहजानंद स्वामी[1] ने उन्हें आज्ञा दी कि लोग होली में बीभत्स गीत गाते हैं, उसके बदले कुछ अच्छे भजन उसी शैली के बनाओ। उन्होंने **'अविद्या छे नकटी नार, हरिथी पाछी भागे जो'** ऐसा एक पद बनाया, उसके आखिर की पंक्ति में उन्होंने लिखा—**'मुक्तानंद कहे एवा लोक पूरा दीसे पाजी जो'**। सहजानंद स्वामी ने कहा कि मुक्तानंद के पद में पाजी जैसा हल्का शब्द आ गया, यह आश्चर्य है। इससे मालूम होता है कि 'फाग' की कल्पना ही बीभत्सता पैदा कर देती है। फिर ज्यादा पद बनाने से रोक दिया !

इस तरह आपने अश्लीलता की निन्दा करने में ठीक उन्हीं शब्दों का इस्तैमाल किया, जिनके इर्द-गिर्द अश्लीलता की बेल बढ़ती है ! मेरे कहने में गलती हो तो बताइएगा। बाकी, सारा लेख अच्छा है।

उस लेख में पूछा गया है—"अश्लीलता क्या है ?" किसी ने पूछा है—जो प्रकृतिधर्म है, और जिस व्यवहार को भले ही दाम्भिक शिष्टता के कारण साफ शब्दों में न कहे, पर जिसे सारा जगत आनन्द के साथ ही करता है, उसका उत्साह-युक्त स्पष्ट वर्णन करने में क्या अश्लीलता है ?

इसका दूसरे सिरे से विचार किया जाय। वैसे अनेक प्रकृतिधर्म हैं, जिनका सारा जगत व्यवहार करता है और आनंद अनुभव करता है—उदाहरण शौच-क्रिया, दतौन वग़ैरा, क्यों इस विषय पर कभी कोई काव्य नहीं लिखता ? क्योंकि इस प्रकृतिधर्म के आचरण में से मद पैदा नहीं होता—सिर्फ़ प्रसन्नता ही होती है। ये योग-क्रियायें हैं, याने संयमधर्म के अनुकूल हैं।

लेकिन भोजन, शृंगार आदि के प्रकृतिधर्म मादक हैं। उनसे चित्त शुद्धि या शरीर-शुद्धि की सहज प्रसन्नता नहीं पैदा होती, पर मद का उन्माद—जिसे आनंद माना जाता है—होता है। जहाँ मादकता है वहाँ मर्यादा-धर्म उत्पन्न हो ही जाता है। इसलिए खान-पान के विषय में मर्यादा आवश्यक होती है, शृंगार में भी। जिस तरह इनके आचार में मर्यादा चाहिए वैसे ही उनके विचार और उच्चार में। जहाँ आचार में, विचार में या भाषा में मर्यादा टूटती है, वहाँ अश्लीलता आ जाती है—प्रकट या गुप्त। तब इन प्रकृतिधर्मों का आचार-विचार और उच्चार (उच्चार में इशारे का भी समावेश हो जाता है) में उचित मर्यादा का भंग ही अश्लीलता है।

लेकिन साहित्य और भाषा में से उच्चार की अश्लीलता तबतक नहीं जावेगी, जबतक इन प्रकृतिधर्मों के आचार और विचार में ही मनुष्य में मर्यादा को स्थान न हो। दारूबाज आदमी दारू-रस के गान को अश्लील मान न सकेगा। भोजन-प्रिय मनुष्य भोजन-रस के गीत को अश्लील कथा न मान सकेगा। इसी तरह काम-लोलुप स्त्री-पुरुषों की बात है। फिर, उसमें केवल शब्दों की तब्दीली होती रहेगी। गालियों में आयी हुई भाषा की जगह—अँग्रेज़ी या संस्कृत शब्दों का उपयोग होगा, स्पष्टोक्ति के बदले वक्रोक्ति, व्यंग्योक्ति, सूचना और (आज के समाज में) पारिभाषिकोक्ति (वैद्यक और विज्ञान की भाषा)

---

[1] गुजरात के स्वामीनारायण सम्प्रदाय के आद्य आचार्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस्तेमाल होगी। किसी-न-किसी तरह काम को उत्तेजित करने का काम चलता ही रहेगा। कभी-कभी निषेध के रूप में भी वही काम किया जायगा। असल ज़रूरत हमारे जीवन के आचार और विचार में ही मर्यादा लाने की है। श्री सुधीन्द्र की टिप्पणी में और आपके लेख के दो-तीन वाक्यों में मुझे जो खटका, वह इसी कारण खटका। अस्तु।

किशोरलाल

इस मार्गदर्शन के लिए मैं पूज्य किशोरलाल भाई का बहुत कृतज्ञ हूँ। ह० उ०

'साहित्य' और 'प्रगतिशीलता'

"आज हमारे साहित्य में एक नया प्रगतिशील आन्दोलन आरंभ हो चुका है। साहित्य के सभी नये आन्दोलन एक अर्थ में प्रगतिशील कहे जा सकते हैं क्योंकि वे किसी-न-किसी नयी सामाजिक या सांस्कृतिक प्रगति से उत्पन्न होते और किसी-न-किसी नवीन प्रगतिशील विचारधारा के सहचर हुआ करते हैं। मैं कहना यह चाहता हूँ कि पिछले तीन-चार प्रगतिशील आन्दोलनों के रहते अपने अति नवीन आन्दोलन का नाम 'प्रगतिशील' रखना विशेष उपयुक्त नहीं हुआ। इस नामकरण से भ्रम होता है कि हमारे पहले के आन्दोलन प्रगतिशील नहीं थे। प्रगतिशील ही नहीं वे प्रचलित साहित्य-सरणियों के विरुद्ध विद्रोहात्मक भी थे! ऐसी अवस्था में केवल इस अन्तिम आन्दो-का नाम 'प्रगतिशील' रखना कुछ ऐसा भ्रम है जैसे पुत्र अपना नाम पिता के नाम पर रख ले।

फिर, मेरे विचार से किसी साहित्यिक आन्दोलन का प्रगतिशील होना ही काफ़ी नहीं है। प्रगति तो प्राकृतिक गति है। वह परिवर्तनशील वस्तु-व्यापार का आवश्यक परिणाम है। तो क्या परिवर्तन का प्रतिबिंब होना ही साहित्य का स्वरूप या लक्ष्य है? मेरे विचार से नहीं। प्रथम तो परिवर्तन की सारी दिशाओं का परिज्ञान होना चाहिए। विकासमूलक शक्तियों और दिशाओं की पहचान होनी चाहिए। तभी हम कृत्रिम साधनों से (जिसके अन्तर्गत मानसिक रूढ़ियाँ, संस्कार और बाहरी सामाजिक अथवा राजनीतिक शक्तियाँ भी शामिल हैं) रोके हुए आवश्यक परिवर्तन को साहित्य द्वारा उद्घाटित कर सकेंगे और साथ-ही कृत्रिम साधनों से बढ़ाये हुए अनावश्यक परिवर्तन या विच्छेद को रोक भी सकेंगे।

यहाँ आप पूछेंगे कि साहित्यिक को इस प्रकार के बुद्धिव्यवसाय या विवाद में पड़ने की आवश्यकता क्या है? वह तो भाव-जगत का प्राणी है। वह यदि अपने भावों को सौन्दर्यपूर्ण साहित्यशैली से प्रकाशित कर देता है तो उसके लिए इतना ही पर्याप्त होना चाहिए। मैं इसे नहीं मानता। साहित्य केवल व्यक्तिगत भावों के प्रदर्शन की की भूमि नहीं हो सकता। व्यक्तिगत भाव भी आखिर क्या हैं? उस व्यक्ति-विशेष पर पड़े हुए विभिन्न ज्ञात-अज्ञात उपकरणों का प्रभाव। वे उपकरण उसे कहाँ से मिले? अपने समय के समाज और सामाजिक चेष्टाओं से। तब प्रश्न यह है कि वह उस समाज और उन चेष्टाओं को आँख मूँदकर क्यों ले? आँखें खुली क्यों न रखे और क्यों न अपने सामूहिक उत्तरदायित्व को समझे? यह केवल एक उत्तरदायित्व ही नहीं है, व्यक्तित्व का उन्नायक साधन भी है। फिर यह ऊपर से लदा हुआ कोई बोझ भी नहीं है, यह मनुष्य के सामाजिक प्राणी होने की स्वाभाविक सूचना है।

व्यक्ति और समाज के बीच चलनेवाले स्वाभाविक आदान-प्रदान को सचेत होकर ग्रहण करना काव्य-साहित्य को प्रगतिशील ही नहीं, उत्थान-मूलक भी बनाने में उपयोगी सिद्ध होगा। यदि हमने अनुकृति के आधार पर अथवा प्रतिरोध करने की क्षमता के अभाव के कारण कुछ विश्वासों, प्रभावों या अनुभवों को धारण कर रखा है, तो स्पष्ट है कि हममें साहित्यिक उत्कर्ष की संभावना बहुत थोड़ी है। यह असंभव नहीं कि इन व्यक्तिगत प्रभावों के आधार पर हम ऐसे साहित्य का निर्माण करें (बशर्ते हममें कुछ काव्यशक्ति है) जो कुछ दोनों तक बहुत काफी लोकप्रिय हो जाय, क्योंकि जनसाधारण तो अपना प्रतिबिंब ही साहित्य में देखना चाहता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्सर ढाल की ओर चलने में उसे सुविधा मालूम देती है, पर देश और जाति के स्थायी साहित्य में यह नीचे की ओर लुड़कना स्थान न पा सकेगा।

आप यह न समझें कि मैं साहित्य के लिए किसी रूढ़िबद्ध ऊँची नीति अथवा आदर्शवाद की सिफारिश कर रहा हूँ। ऐसा करना बिल्कुल ही मेरा लक्ष्य नहीं है। किसी बँधी-बँधाई लीक अथवा नपे-जुखे आदर्शों के पैमाने पर साहित्य की प्रगति और उसका उन्नयन नहीं हो सकता। बदलते हुए समय के साथ प्रगति का मार्ग भी बदलेगा। हमारे आदर्शों में भी परिवर्तन और उलट-फेर होंगे। मेरा आग्रह केवल इतना है कि हम आँख मूँदकर किसी वस्तु को न लें। न हम आये हुए प्रभावों अथवा नवीनता के झोंके में बह जायें और न विगत आदर्शों का स्वप्न देखते रहें। निराशा के लिए निराशा की फुलझड़ियाँ बरसाना हम साहित्य में बन्द कर दें और साथ ही आकाशकुसुम की आशा भी छोड़ दें।

मेरे कहने का मतलब यह नहीं कि साहित्य से करुणरस को अथवा ऊँची आदर्शात्मक कल्पनाओं को उठा देना होगा। उठाना या बैठाना हमें किसी को नहीं। साहित्य में आशा और निराशा, करुण और वीर सबके लिए समान स्थान है और रहेगा, किन्तु उनकी नियोजना प्रगतिमूलक और उद्देश्ययुक्त करनी होगी, निरुद्देश्य और अस्तव्यस्त नहीं। शेक्सपियर के दुःखान्त नाटक अथवा भवभूति का उत्तर रामचरित करुणा से भरे हुए हैं, किन्तु क्या वे शक्तिहीनता और निर्बलता उत्पन्न करते हैं? नहीं, वे हमारी भावना का इस प्रकार स्पर्श करते हैं कि उनसे जीवन के सुन्दर लक्ष्यों के प्रति आस्था बढ़ती है। इसी उन्नयिनी परिपाटी की रक्षा हमें करनी होगी और यह तब होगा जब हम साहित्य की प्रगति को जीवन के साथ संबद्ध किये रहेंगे।

साहित्य के साथ जीवन को संबद्ध किये रखने का मतलब सिर्फ़ इतना है कि जीवन संवन्धिनी आधारभूत चेतना साहित्य से लुप्त न हो जाये। हम मृत्यु के अथवा अगति के उपासक न बन जायँ। निराशा और आत्मपीड़न को अर्घ्य न देने लगें। इसका यह आशय नहीं कि साहित्य में निराशामूलक प्रवृत्तियों का चित्रण ही न किया जाय। किया वह अवश्य जाय पर आदर्श बनाकर नहीं। रचनाकार स्वयं उनमें अभिभूत होकर जीवन का लक्ष्य न छोड़ दे। जीवन का लक्ष्य है जीना। जीना जितना ही व्यापक और समुन्नत स्वरूप धारण कर सके, उतनी ही साहित्यकार की कृतकार्यता होगी। यहाँ मैं फिर कहूँगा कि जीने का व्यापक और समुन्नत स्वरूप कोई रूढिबद्ध वस्तु नहीं है, किन्तु वह सचेत सतत विकास है।

क्या इस सूत्र को मैं बुद्धिवाद या बुद्धिसूत्र कहूँ? बहुत व्यापक अर्थ में इसे यह नाम दे सकूँगा। आशय यह है कि वाद के रूप में बुद्धिवाद कुछ मोटी रेखाओं के भीतर घिरा है। साहित्यिक और सांस्कृतिक इतिहास में ऐसे युग आये हैं और आ सकते हैं जिसमें यह मोटी रेखाओंवाला बुद्धिवाद सहायक नहीं हुआ या न हो (उदाहरण के लिए बुद्धिमूलक के बदले विश्वासमूलक प्रगतियाँ भी हुई हैं) किन्तु प्रगतिशील चेतना के रूप में बुद्धि सदैव विकास के साथ रही है।

यदि इस सूत्र के कुछ बाहरी निदर्शन या दृष्टांत आप चाहें तो मोटे तौर पर मैं नीचे के निदर्शन दूँगा :

१. अति शृंगारोन्मुख प्रवृत्तियाँ (Morbidity) प्रगति के विरुद्ध हैं।

२. अति उदासीन प्रवृत्तियाँ प्रगतिमूलक नहीं।

३. केवल कौतूहल प्रगति के लिए बड़ी वस्तु नहीं।

४. केवल मनोरंजन प्रगति के लिए पुर्याप्त नहीं।

५. बाह्य संघर्ष की अपेक्षा बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक संघर्ष प्रगतिशील साहित्य में अधिक महत्त्व रखते हैं। यह दृष्टांत मैं साहित्यिक इतिहास के आधार पर दे रहा हूँ। मेरा विश्वास है कि ये वैज्ञानिक भी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे मैं आत्मचेतना अथवा जीवन-चेतना के नाम से पुकारूँगा। इसके अभाव में साहित्य सच पूछिए तो साहित्य-पद का अधिकारी नहीं होता। वह क्षयशील कला भी क्या कला कहा सकती है जो मृत्यु, आत्मपीड़न अथवा जीवनशोषण की ओर प्रगतिशील हो? इसके उत्तर में संभव है कुछ लोग कहें कि जीर्ण जीवन की अनिवार्य समाप्ति मृत्यु में ही होगी और नवीन जीवन का उद्भव उसके पश्चात् ही होगा। जीर्ण जीवन का अन्त मृत्यु ठीक है, किन्तु क्या वह मृत्यु हमारा आदर्श हो सकती है? आदर्श तो हमारा जीवन ही होगा। क्षय के लिए क्षय और मृत्यु के लिए मृत्यु की वरेण्यता हम किसी प्रकार प्रतिपादित नहीं कर सकते। दूसरे शब्दों में हम ह्रासोन्मुख या जीवन-विघातिनी कला की कला कहकर प्रशंसा नहीं कर सकेंगे। नन्ददुलारे बाजपेयी

(हि० सा० सम्मेलन की साहित्य-परिषद् के सभापतित्व भाषण से)

नयी पुस्तकें

पिछले दिनों नीचे लिखी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं:—

भारती-भंडार, काशी के प्रकाशन

दो एकांकी नाटक : लेखक—सद्गुरुशरण अवस्थी; पृ० सं० ८९; मूल्य ।।=)

सितारों के खेल [उपन्यास] : लेखक—उपेन्द्रनाथ 'अश्क'; पृ० सं० २५०; मूल्य १।।)

वन-श्री [कविता-संग्रह] : लेखक—गुरुभक्तसिंह 'भक्त'; प्रकाशक—सरस्वती-मंदिर, काशी; पृ० सं० १३१; मूल्य १)

रामनारायणलाल, इलाहाबाद के प्रकाशन

सरल अर्थशास्त्र : लेखक—दुबे और केला; पृ० सं० ६०३; मूल्य ३)

नागरिक शास्त्र की विवेचना : लेखक—गोरखनाथ चौबे, एम० ए०; पृ० सं० ३९७; मूल्य ३)

गद्यभारती [राष्ट्रभाषा हिन्दी की चुनीहुई गद्य-रचनाएँ] : संपादक—केशवप्रसाद मिश्र, पद्मनारायण आचार्य; पृ० सं० ५७६; मूल्य २।।)

विचार-विमर्श : [विवेचनात्मक लेखों का संग्रह] लेखक—सद्गुरुशरण अवस्थी; पृ० सं० १४६, मूल्य १।।)

चार उपन्यास [संसार के चार मशहूर उपन्यासों का संक्षिप्त भावानुवाद] : अनुवादक—इलाचन्द्र जोशी; पृ० सं० १४६; मूल्य ।।)

महाकवि 'हरिऔध' का 'प्रिय प्रवास' [आलोचना] प्रो० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री एम० ए०; पृ० सं० १७०; मूल्य १)

विश्व की कहानियाँ [खगोल विषयक] लेखक—श्री "देव"; पृ० सं० १०४; मूल्य ।।)

पुस्तक-मंदिर, कलकत्ता के प्रकाशन

भारतीय शासन-व्यवस्था : लेखक—श्री श्रीकान्त ठाकुर; पृ०सं० ३५३; मूल्य १।।) सजिल्द १।।

हवाई युद्ध : लेखक—डॉ० सत्यनारायण; पृ० सं० ६६; मूल्य ।।)

टैंक-युद्ध : लेखक—डॉ० सत्यनारायण; पृ० सं० ६६; मूल्य ।।)

हवाई हमले से हिफ़ाजत : लेखक—श्रीरा[म] वाजपेयी; प्रकाशक लीडर प्रेस प्रयाग; पृ० सं० १२७; मूल्य १)

पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय के प्रकाशन

पारिजात—हरिऔधजी की अनेक कविताओं का ५१५ पृष्ठों का विराट् संग्रह, मूल्य ४)

भाषा और साहित्य का विकास—लेखक—हरिऔधजी, ७३१, मूल्य ५)

कानन—श्री जानकीवल्लभ शास्त्री की कहानियों का संग्रह; पृष्ठ २०७; मूल्य १

विश्व-दर्शन—लेखक श्री व्रजनन्दनसहाय 'व्रजवल्लभ'; पृ० सं० १५३; मूल्य १)

सस्ता-साहित्य-मण्डल नई दिल्ली

लड़खड़ाती दुनिया : पं० जवाहरलाल नेहरू पृ० सं० १७५; मूल्य ।।)

डायरी के कुछ पन्ने : श्री घनश्यामदास बिड़ला मूल्य १।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कसौटी पर

श्री शान्तिप्रिय द्विवेदीजी की दो पुस्तकें—

(१) साहित्यिकी: प्रकाशक—ग्रंथमाला कार्यालय, बांकीपुर; मूल्य १।)

इस पुस्तक में श्री शान्तिप्रियजी के २६ निबंधों का संग्रह है। इन निबंधों का विषय हिंदी का प्राचीन और नवीन साहित्य है। कुछ निबंध टॉल्स्टॉय, शरत्चंद्र और रवीन्द्रनाथ के संबंध में भी हैं। निबंधों की शैली अधिकतर व्याख्यात्मक आलोचना की है, जिसमें लेखक का ध्यान साधारणत: आलोच्य ग्रंथ या ग्रंथकार के उस पहलू पर ही केन्द्रित है जो उनके मत से उत्तम और उपादेय है। यह व्याख्यात्मक दृष्टि ही इन निबंधों की जान है। निबंधों का विषय साहित्य होने के कारण यह भ्रम होना स्वाभाविक है कि ये किसी प्रकार की साहित्यिक आलोचना की जाति के निबंध हैं। वस्तुत: ऐसा भ्रम हुआ भी है और किसी-किसी ने इसी भ्रम के कारण द्विवेदीजी के इन निबंधों के साथ ऐसे निबंधों की तुलना की है जो साहित्यिक आलोचना की जाति के हैं। वस्तुत: द्विवेदीजी के ये निबंध रचनात्मक साहित्य के अंग हैं। इन्हें सहृदय पाठक इनके आलोच्य ग्रंथों को समझने के लिए नहीं पढ़ेगा, बल्कि द्विवेदीजी को समझने के लिए पढ़ेगा। हिन्दी में इस प्रकार साहित्यिक ग्रंथों पर वैयक्तिक विचार वाले निबंध शायद हैं ही नहीं। न-जाने क्यों हिन्दी में शुरू से ही साहित्य को निर्णयात्मक आलोचना का विषय ही मान लिया गया है। द्विवेदीजी ने भी इन निबंधों में कहीं-कहीं साहित्य को इस दृष्टि से देखने का उपक्रम किया ज़रूर है, पर वस्तुत: वे इस श्रेणी के आलोचक नहीं हैं। उनमें विश्लेषण की अपेक्षा संवेदना की प्रवृत्ति अधिक है, वे अपने को यथासंभव दूर रखकर आलोच्य को नहीं देखते, बल्कि यथासंभव नजदीक रखकर देखते हैं। इन निबंधों की उपस्थापन-शैली, विचार-भंगी और सजीव-भाषा, इसमें व्यक्त निर्णयों और विश्लेषणों की अपेक्षा अधिक महत्त्व की चीज़ हैं। श्री रामकुमार वर्मा ने इसी बात को कविजनोचित भाषा में इस प्रकार कहा है कि "लेखक ने अपना हृदय पिघलाकर उन (अपनी आलोचना के) आदर्शों को प्राप्त किया है। ये आदर्श लेखक के हृदय से उसी प्रकार निकले हैं जिस प्रकार सीपी के हृदय से मोती।" निस्संदेह यह पुस्तक आदर पाने योग्य है।

(२) जीवन-यात्रा—प्रकाशक वही; मू० ॥।=)

यह पुस्तक भी द्विवेदीजी के व्यक्तिगत विचारों का संग्रह है। इसका विषय साहित्य नहीं है, इसलिए इसके विषय में उस प्रकार का भ्रम नहीं हो सकता, जैसा कि पहली पुस्तक के विषय में संभव है। इसमें भी द्विवेदीजी का संवेदना-प्रवण-रूप व्यक्त हुआ है। वे जीवन को दूर बैठकर निरपेक्ष आलोचन की भाँति नहीं देखते, बल्कि अपनी अनुभूतियों, वेदनाओं और संस्कारों से (जो प्रधानत: संवेदना-मूलक हैं) सानकर ही देखते हैं। इसीलिए इन निबंधों में पाठक द्रष्टा की अपेक्षा भोक्ता का आनंद अधिक पाता है।

हजारीप्रसाद द्विवेदी

आहुति—लेखक-श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'; प्रकाशक-हिन्दी भवन अनारकली, लाहौर। मूल्य ॥=)

'आहुति' एक छोटा-सा नाटक है। श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी' ने कई नाटक लिखे हैं। मुझे उनके और कई नाटकों के भी पढ़ने का अवसर मिला है। 'प्रेमी' जी नाट्यकला से पूर्ण परिचित हैं।

यह इतिहासिक नाटक है। इतिहास की घटनाओं के साथ कुछ हेर-फेर किया गया है परन्तु नाटचकला की मर्यादा के अनुकूल ही यह परिवर्तन है। नाटक की घटनावली और पात्रों के क्रम-विकास में जो प्रधान उपकरण हैं उनकी ऐतिहासिकता अक्षुण्ण है। इससे अधिक नाटचकार का उत्तरदायित्व भी नहीं।

पौराणिक और ऐतिहासिक कथानकों और नायकों के चयन में जहाँ एक आबद्ध धारणा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण उसमें लेखक अधिक हेरफेर की स्वतंत्रता से वंचित रहता है, वहाँ दूसरी ओर उसी अतीत की पृष्ठभूमि की एक आलोक-परिधि भी होती है जिसके कारण वह जनरुचि के लिए पहिचानी पगध्वनि की भाँति आह्लादकर होती है।

'आहुति' में कथा की पेचीदगी नहीं है। यही सारल्य उसका गुण और कलावादी के लिए दोष है। पत्रों की गुम्फना में किसी गहरे अंतर्द्वन्द-प्रदर्शन के झमेले में न पड़कर सीधी-सादी दैनिक भावनाओं की अभिव्यंजना मिलेगी। विचार-संघर्ष जहाँ भी है गूढ़ नहीं। वह विचारों को परेशान करनेवाला नहीं है। वह केवल भावुकता को सजग कर देनेवाला है। इसमें क्षत्रियकुल की ऐतिहासिक वीरता की परिचालना की गयी है। मुस्लिम संस्कृति और उनकी मनुष्यता को भी बड़ी सहानुभूति के साथ ऊपर उठाकर मानव मात्र के अभिन्न स्वभाव की ओर संकेत किया गया है।

'वीर' और 'करुण' इस नाटक के स्वीकृत रस हैं। उनकी प्रतिष्ठा पूर्ण रूप से हुई है। स्थान-स्थान पर कथा का झुकाव वस्तुस्थिति की ओर अधिक न होकर आदर्श की ओर अधिक रहा है। कहीं-कहीं पर भाषा के प्रयोगों में मौलिकता और उक्तियों में लाक्षणिकता और सुखद विस्मयापन्नता है। परन्तु अधिकांश में 'प्रेमी'जी की शैली नितांत सरल, सुबोध और व्यक्त है। उसे साधारण कक्षा के बच्चे भी पढ़कर आनन्द ले सकते हैं। मुसलमान पात्र हिन्दीमिलवाँ उर्दू बोलते हैं, परन्तु वैसे और सभी पात्र बोल-चाल की साधारण भाषा का प्रयोग करते हैं। संवादों में उतनी वाक्‌चातुरी चाहे न हो परन्तु दौड़ है और रसात्मक आकर्षण भी है। अभिनय के लिए नाटककार को जिस तल पर उतरना पड़ता है उसपर 'प्रेमी'जी उतरे हैं और उन्होंने नाटक के प्रमुख अंग रसात्मकता को नहीं छोड़ा है। नाटक का अंत जिस प्रकार किया गया है उसमें 'प्रेमी'जी की कला का अच्छा पता लगता है।

सद्‌गुरुशरण अवस्थी

हमारा योग व उसके उद्देश[१]

'योग' में आम लोगों की कोई दिलचस्पी नहीं। उसे वे साधु-संन्यासियों और वैरागियों के काम का समझते हैं। जिन्होंने गीता पढ़ी है या हिन्दू-धर्म में झाँका है, वे योग को तरह-तरह से जानते व मानते हैं। गीता में भी कहीं कहा है 'समत्वं योग उच्चते' और कहीं बताया है 'योगः कर्म सुकौशलम्'। फिर ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग आदि भी बताये गये हैं। पढ़े-लिखे लोग आमतौर पर योग से 'हठयोग' या 'पातञ्जल योग' समझते हैं। पतञ्जलि ने योग की व्याख्या की है—"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" जितने विद्वान उतने अर्थ व व्याख्या हो गयी है। मेरे ख़याल से 'जीव को शिव से मिला देना' योग का सरल अर्थ व उद्देश है।

इस जमाने के पढ़े-लिखों में श्री अरविन्द ने एक खास तौर के योग की साधना की है। मूल प्रेरणा और आधार तो उन्हें उपनिषदों और गीता ही से मिला है; परन्तु उसके मार्ग या साधना में नवीनता और उद्देश में विस्तार है। हिन्दी में उनके अंग्रेज़ी निवन्ध 'The Yoga and its objects' का हिन्दी अनुवाद 'हमारा योग व उसके उद्देश्य' नाम से, आचार्य अभयदेवजी के सम्पादन में श्री अरविंद ग्रंथमाला पांडिचेरी से प्रकाशित हुआ है। उसे जब हिन्दी-पाठक पढ़ेंगे तो मेरी बात का समर्थन करेंगे। वे कहते हैं, योग का 'उद्देश व्यक्तिगत मुक्ति नहीं है, यद्यपि मुक्ति योग की एक आवश्यक अवस्था है, बल्कि इसका उद्देश है मनुष्य-जाति की मुक्ति। या सतयुग को फिर से पृथ्वी पर लाना। व्यक्तिगत मुक्ति को वे 'ज्ञान की संकुचित गति' मानते हैं और कहते हैं कि ज्ञान की गति जब विस्तृत होती है तब जनक, अजातशत्रु और कार्तवीर्य जैसे योगी संसार के सिंहासनों पर आरूढ़ होते हैं और विभिन्न शब्दों का शासन करते हैं।' वे मानते हैं कि भारतवर्ष

१. मूल्य ।।), पृष्ठ संख्या ५६, छोटी साँची, सोल एजेंन्ट्स दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (पुस्तक मन्दिर), त्यागरायनगर, मदरास।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ईश्वर ने इस कार्य के लिए कम-से-कम इस चतुर्युगी के लिए चुना है। उनका यह अवलोकन है। कि 'मनुष्य और वस्तुओं की प्रवृत्ति इस समय बेमेल हो गयी है, इनका सामञ्जस्य बेसुरा हो गया है। उसको पुनः सामंजस्यपूर्ण, सुरीली बनाने के लिए मनुष्य के हृदय, कर्म और मन के समग्र रूप से परिवर्तित होने की आवश्यकता है। उनके मत में यह इस योग द्वारा ही हो सकता है।

इस योग-साधना की त्रिविध प्रक्रियायें हैं—

"आत्म-समर्पण का संकल्प करना।"

आत्मज्ञान के द्वारा आधार से अलग होकर स्वरूप में प्रतिष्ठित होना।

सर्वत्र, समस्त वस्तुओं में और समस्त घटनाओं में ईश्वर का दर्शन करना, कर्मफलों को और स्वयं कर्मों को भी ईश्वर के अर्पण करना, और उसके फलस्वरूप अज्ञान से, अहंकार से, छुटकार पा जाना, और शुद्ध, मुक्त, सिद्ध और आनन्दमय हो जाना।

इनका सविस्तर विवेचन भरसक सरलशैली में किया गया। योगी अरविन्द की योग-कल्पना को जानने की यह प्रारंभिक पुस्तक है और इस रूप में वास्तव में पढ़ने व मनन करने योग्य है। 'योग' शब्द पढ़कर ही हमें चौंक न उठना चाहिए। योग के ज्ञान व साधन की आवश्यकता उस प्रत्येक मनुष्य के लिए है जो अपने जीवन को कुछ बनाना चाहते हैं। सफल व सार्थक जीवन के लिए तो योग-साधन उसी तरह अनिवार्य है जिस तरह पौधे के लिए पानी, प्रकाश व हवा। नियत, नियमित व निश्चित जीवन योग की प्रथम सीढ़ी है। इस प्राथमिक साधना से ही मनुष्य बड़े-बड़े कार्यों को करने में समर्थ हो जाता है। तब पूर्ण योग-साधन से सामर्थ्य कितना बढ़ सकता होगा, उसकी दिव्य शक्तियों का कितना विकास हो सकता होगा, इसकी कल्पना की जा सकती है। 'नर को नारायण करने' की शक्ति योग में ही है। प्रस्तुत पथदर्शिका को पढ़कर पाठक योग बल को पहचाने और योगी अरविंद के व्यापक योगादर्श की झाँकी किये बिना न रहेगा।

ह० उ०

दो नयी किताबें

दो नयी किताबों का जिक्र करना है। किताबें मिलते समय देनेवालों ने चाहा कि मैं सम्मति दूँ और पढ़ने पर दोनों ने मन को छुआ भी। वे हाल में छपीं इसी से नयी नहीं, हिंदी लेखनशैली की परम्परा में भी नयी हैं। वे हैं श्री घनश्यामदास बिड़ला की 'बापू' और 'डायरी के कुछ पन्ने'।

'बापू' पुस्तक निकलने से पहले भी देख सका था। कुछ अंश फिर देख गया हूँ। घनश्यामदास जी को गांधीजी का काफ़ी साथ मिला है। सम्पर्क तब मिला जब बिड़लाजी कुछ हरे थे। अब विचार पक रहे हैं तब भी गांधीजी की छाप पड़ ही रही है। कहना चाहिए उस छाप के तले ही बिड़लाजी का मानसिक विकास हुआ। गांधीजी को अध्ययनीय से अधिक बापू के रूप में उन्होंने लिया। तो भी बापू की छाप सामनेवाले की विवेक-बुद्धि को स्तब्ध तो करे, मन्द नहीं करती। और बिड़लाजी जैसे शायद अपने सगे पिता को सप्रश्न भाव से देख सकने में असमर्थ हों वैसा गांधीजी के प्रति उनका सम्बन्ध नहीं हो सकता। गांधी उनके लिए कम पिता नहीं हैं पर मानों उन्हीं बापू से उन्हें उत्तेजन मिलता है कि बिड़ला उनको समझें और आदर के साथ विवेकपूर्वक भी उन्हें अंगीकार करें।

'बापू' पुस्तक में यही दोनों तत्त्व हैं। गांधीजी के प्रेमल संस्मरण हैं। साथ ही उनके गांधीपन को यानी गांधीजी के जीवन की मूल निष्ठा को आकलन करने का भी प्रयास है।

संस्मरणात्मक भाग एकदम निर्मल, कोमल और हृदयस्पर्शी है। अनायास वह अपने आप में हिंदी-लेखनकी स्वच्छ शैली का नमूना हो गया है।

विवेचनात्मक भाग, कुछ बौद्धिक और भारी हो गया है। उसका कारण एक कठिनाई है। गांधीजी के जीवन के दो सूत्र हैं: सत्य और अहिंसा। इन सूत्रों को समझना कैसे हो? गांधीजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो प्राणों द्वारा उन्हें साधने के प्रयासी हैं। अर्थात् उनके लिए अहिंसक होने से अलग अहिंसा को जानने जैसा कुछ नहीं है। इसी तरह सत्य का शोध सत्यमय होते जाना है। परिणाम यह कि गाँधीजी का तर्क अनुभव से आगे नहीं बढ़ता। अनुभव में जो पाया है, बुद्धि-तर्कना द्वारा उसीको रूप और उसी को व्याख्या मिली है। जो भीतर में उपलब्ध नहीं है बुद्धि द्वारा उसे पकड़ने का प्रयास गांधीजी में नहीं है। गांधीजी के यह प्रमुख विशेषता है।

बिड़लाजी अहिंसा को बुद्धि से पकड़ने की ओर वहाँ तक बढ़ गये हैं कि जहाँ स्पष्ट मालूम होता है कि उनका अनुभव साथ न दे सका होगा। बछड़ेवाली चूक तो भूमिका में महादेवभाई ने सुझा ही दी है। राम और कृष्ण को ईश्वरवाची अर्थ में नहीं वरन् व्यक्ति रूप में देखने और फिर उनकी हिंसा का अहिंसा के साथ पूर्ण समन्वय समझने की भूल भी काका साहब के पत्र में बतायी गयी है। ये भूलें आकस्मिक नहीं। ये उनको चुभी नहीं, इसीसे जान पड़ता है कि अहिंसा सम्बन्धी उनका प्रतिपादन अनुभव-सिद्ध से अधिक तर्क-साध्य धरातल पर चला है। विवेचनात्मक भाग में सावधान साधक को वैसी कचाई लग सकती है। अहिंसा और सत्य जैसी प्राण-शक्तियों को बुद्धि से बाँधने में वह खतरा है ही। इस क्षेत्र में जानना होने से भिन्न नहीं है। Knowing is be coming. अहिंसा को अहिंसक होने के द्वारा और सत्य को सत्याचरण के द्वारा ही जाना जा सकता है। बाकी ज्ञान अज्ञान है।

अध्यात्म की ज़मीन पर शब्द शब्द नहीं रहते, स्फुलिंग हो जाते हैं। कहा है कि मन्त्र की एक मात्रा का फ़र्क़ इष्ट को अनिष्ट बना देता है। पर उस ऊँचाई की कचाई बिड़लाजी की पुस्तक में दीख भी मिले, बाक़ी पुस्तक निर्दोष कही जा सकती है।

'बापू' अध्ययन नहीं है। बिड़लाजी गांधी से इतनी दूर नहीं हैं कि अध्ययन का उन्हें सुभीता हो सके। उस विषय में वह पूरी तरह अपने को परे नहीं कर सकते। मैं अपने को बचाकर समझने की पद्धति का उतना क़ायल भी नहीं। लेकिन अध्ययन के लिए दृष्टि तटस्थ चाहिए। पर पुस्तक में गांधी व्यक्ति नहीं 'बापू' हैं। बापू के रूप में गांधीजी के व्यक्तित्व के अवयवों और समवाय का पृथक्करण दुर्लभ है। उस काम के लिए युग की समूची परिस्थिति की पृष्ठिभूमि देकर गांधीजी को एक जवाब, एक इलाज, एक घटना के रूप में देखना होगा, जिससे हमारा इतना ही संबंध हो कि हम उसके दर्शक हैं। बिड़लाजी में गांधी से इतनी दूरी या अनासक्ति नहीं है। अतएव गांधीजी से अधिक गांधी से प्रभावित बिड़लाजी का व्यक्तित्व इससे व्यक्त होता है। ठीक भी तो है, धूप से हम सूरज को देखते हैं और गांधी के प्रभाव में गांधी की वास्तविकता को देख सकते हैं। 'बापू' पुस्तक उसके लेखक पर बापू की छाप का सही लेखा है। वह सही है, इसीमें पुस्तक की क़ीमत है। सही बिड़लाजी के अभ्यंतर की ओर से, क्योंकि गाँधीजी की ओर से सही होने का तो सवाल ही नहीं है। और वह चित्र सजीव और सहज है, यह पुस्तक की साहित्यिक सफलता है। मैं मानता हूँ कि हिन्दी का आज का लेखक खरेपन और स्वच्छता के लिए उसे अपने आगे नमूने के तौर पर रख सकता है।

दूसरी पुस्तक है 'डायरी के कुछ पन्ने।' डायरी सन् ३१ की है, तभी लिखी गयी। पर कारणवश पुस्तक सन् ४० की होकर भी ४१ की कही जा सकती है। डायरी यह हृदय की नहीं, समय की है। सबसे क़ीमती आत्मा की डायरी होती है। उसकी क़ीमत साधक के लिए और सर्वकालीन है। पर समय की डायरी की भी कम क़ीमत नहीं। इतिहास के लिए वह दस्तावेज़ का काम देती है। कम-से-कम यह पुस्तक तो एक क़ीमती ऐतिहासिक दस्तावेज़ ज़रूर रहेगी।

इतिहास के बाजार में घटनाओं का पक्का माल आता है। भीतर कारखाने के अन्दर उन घटनाओं के ताने और बाने में क्या कुछ होता जाता है, इतिहास की आँख वहाँ नहीं पहुँचती; यद्यपि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास का हृदय उसके लिए उत्सुक रहता है। उसी का नक्श हूबहू उतार जाना छोटी बात नहीं है। भावुक भावना में गाढ़ा रंग डालना घटना को फीका बनाता है, पंडित घटना को हिसाब में जोड़कर भावना का दारिद्रय रहने देता है। घनश्यामदासजी की डायरी में बहुत अच्छा सन्तुलन है। गोलमेज़ के नाटक का नेपथ्य अपनी यथार्थता में सामने दीख आता है।

पुस्तक में गांधी केन्द्र-रूप हैं। परिधि भी केन्द्र के हिसाब से होती है। गोलमेज़ का पूरा चिट्ठा इसे नहीं कह सकते; पर जितना है उतना सच्चा है। बेशक उसमें लेखक की रुचि-अरुचि आ गयी है। चित्र में भी तो श्याम-गौर रहता है। सच्चाई में वह बाधक नहीं। पुस्तक में भी उनकी रुचियाँ और अरुचियाँ व्यक्त होती हैं; पर उसमें कौशल और ईमानदारी का योग है। वही कला।

पुस्तक में दो बातें अपूर्व मिलीं। अपूर्व से मतलब कि हिन्दी पुस्तकों में वह गुण नहीं मिलते। एक यह कि बड़ी-से-बड़ी बात सहज घरेलू ढंग पर कही गयी है। उसमें प्रयास नहीं है, खींच-तान नहीं है। जीवन का स्वस्थ और यथानुपात दृष्टि-कोण है। जैसे छोटी बात भी छोटी नहीं और बड़ी बात भी बड़ी नहीं। अपनी-अपनी जगह दोनों का एक-सा महत्त्व है। बिड़लाजी की इस क्षमता पर मुझे अचरज तक है और मैं उसका अभिनन्दन करता हूँ। दूसरी है, उनकी अलिप्त और अनाविल शैली। प्रान्तीय और घरेलू शब्दों को उन्होंने ऐसी खूबी से डाला है कि उनकी जगह शिष्ट और संस्कृत समझे जानेवाले शब्द फीके रहते। उन्होंने बात को सम्हाला है और भाषा अपने-आप सँवर गयी है। मन को और बुद्धि को थाम कर चलाया है और भाषा इसमें संयत होकर भी सहृदय रही है। इस पुस्तक की ताज़गी "बापू" से भी मुझे बढ़ी हुई मालूम हुई।

जैनेन्द्रकुमार

समालोचनार्थ प्राप्त

साहित्य-सदन, अबोहर (पंजाब) के प्रकाशन

आज का जापान : संपादक—रघुवीरसहाय; पृ० सं० १६२; मूल्य १)

विश्वधाय : लेखक—भगवानदास वर्मा; पृ० सं० ६४; मूल्य ।)

ग्रामसुधार (नाटक) : लेखक—सैयद कासिम-अली; पृ० सं० ९९; मूल्य ।।=)

ईसप-नीति-निकुंज (१) : रचयिता—अध्यापक रामेश्वर 'करुण'; पृ० सं० ९६; मूल्य ।।)

लाल-गोपाल : लेखक—अध्यापक रामेश्वर 'करुण'; पृ० सं० ४०; मूल्य =)।।

बाल-गीत : लेखक—रामावतार विद्याभास्कर; पृ० सं० १०४; मूल्य ।।)

युगांतर-साहित्य-मंदिर, भागलपुर

युगवाणी (कविता) : ले०—माहेश्वरीसिंह 'महेश,' एम० ए०, पृ० सं० ४७; मूल्य ।।=)

सुहाग (कविता) : ले० उपर्युक्त; पृ० सं० ५२; मूल्य ।।)

मानव (कविता) ले० श्यामविहारी शुक्ल 'तरल'; प्रकाशक—साहित्य-निकेतन कानपुर; पृ० सं० ८०; मूल्य ।।)

सेवा-पथ (नाटक) : ले०—सेठ गोविंददास; प्रकाश-हिन्दी भवन, लाहौर पृ० सं० १०८; मूल्य ।।।)

भार्गव-पुस्तकालय, बनारस के प्रकाशन

भाभी के पत्र: ले०—श्री 'व्यथित हृदय'; पृ० सं० १४४ मूल्य १।)

पर्वोत्सव विवरण: ले०—श्री 'सुदर्शन'; पृ० सं० १२४; मूल्य ।।=)

सवारियों की कहानियाँ: ले०—श्री 'व्यथित हृदय'; पृ० सं० १२३; मूल्य ।।=)

वर्तमान-साहित्य-मण्डल, दिल्ली के प्रकाशन

पोलैण्ड का बलिदान: ले०—ठा० राजबहादुर सिंह पृ० सं० १५३; मूल्य १), १।।)

हिटलर और युद्ध: ले०—आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री; पृ० सं० १५६; मूल्य १।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंचप्रदीप (कहानियाँ): लेखक—श्री केतानसिंह 'चंचल'; प्रकाशक—एम० बी० जैन एण्ड ब्रदर्स, ग्वालियर; पृ० सं० १११; मूल्य ।॥)

रोग-विज्ञानम् : लेखक—श्री सुरेन्द्रकुमार शर्म्मा; प्रकाशिका—पंडित सरोजनी देवी वैद्या, चिड़ावा; पृ० सं० ११६; मूल्य २॥)

हिन्दी व्याकरण : ले०—श्री रुद्रदत्त मिश्र 'साहित्यरत्न'; प्रकाशक—रूपलाल एण्ड सन्स, लश्कर; पृ० सं० १५६; मूल्य ॥)

आर्यसमाज के उज्वल रत्न : लेखक—पं० जयदेव शर्मा, विद्यालंकार; प्रकाशक-आर्यसाहित्य मण्डल लि० अजमेर; पृ० सं० ८०; मूल्य ।)

हितैषी-पुष्पांजलि : संग्राहक—"हितैषी"; प्रकाशक—हितैषी पुस्तक भंडार, उदयपुर; पृ० सं० ३००; मूल्य ।), ।~)

षष्ठांश : मूललेखक—स० सुब्रह्मण्य भारती; अनु०—षष्ठांश के सेवक; प्रकाशक–भारती प्रचुरालयम्, तिरुवल्लिक्केणी, मद्रास; पृ० सं० ४०; मूल्य ≡)

भारतीय सभ्यता का विकास : लेखक—श्री कालिदास कपूर; मूल्य ।।)

साम्राज्य और उनका पतन : लेखक—श्री भगवानदास केला; प्रा० भारतीय, ग्रन्थमाला, वृन्दावन; पृ० सं० २२८ मूल्य १);

अनुभूत पशु- चिकित्सा : लेखक—श्री कुँवर सुरेन्द्रसिंह 'इन्द्र'; प्रकाशक—युवराज-प्रकाशन-मन्दिर; पृ० सं० १४४; मूल्य ।॥)

हिन्दुस्तान बनाम पाकिस्तान : लेखक—श्री रुद्रनारायण अग्रवाल; प्रकाशक-लाजपतराय पब्लिशिंग कम्पनी, कलकत्ता; पृ० १५७; मूल्य ।॥)

समाजवाद, क्रान्ति और कांग्रेस : लेखक ?; प्रकाशक—आचार्य नरेन्द्रदेव; पृ० १०१; मू० ।=)

खिलौना : लेखक—डॉक्टर इन्द्रसेन; पृ० सं० १६; मूल्य =)

शम्भू के साथ एक दिन : लेखक—तथा प्रकाशक श्री के० एस० वेंकटरमणी; पृ० सं० ३२ : मू० ≡)

गुजराती

शुभसंग्रह—(भाग ९ वाँ) : सस्तु साहित्य वर्धक कार्यालय; पृ० संख्या ७०४; मूल्य २)

ग्राम पंचायतनो कायदो : ले०—नरहरि द्वा० परीख; प्रकाशक—नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद; पृ० सं० ५०; मूल्य ।)

सैर-सपाटा

नया वर्ष नया सन्देश, नया जीवन लेकर आता है, तो क्यों न वह नया साहित्य भी लेकर आये ! कई नवोदित सहयोगियों ने अपने सफल वर्ष समाप्त किये हैं। 'जीवनसखा', 'प्रीतलड़ी', ने अपने-अपने नववर्षांक निकाले हैं और 'विशाल भारत' ने एंड्रयूज़ अंक।

'जीवनसखा' के अंकों और इस विशेषांक को देखकर यह कहना होगा कि इसका नाम बिल्कुल सार्थक है। आरोग्य-शास्त्र का सुन्दर मासिक होने से यह वास्तव में 'जीवन सखा' ही है। विशेषांक में **प्राकृतिक चिकित्सा, इंद्रियनिग्रह की समस्या, प्रकृति बनाम दवा, आधारनिदान, भाजी और फल, भोजन और धूप, योग और स्वास्थ्य, विटामिन की कहानी, विद्युत-चिकित्सा,** आदि लेखों से पता चलता है कि सम्पादक स्वास्थ्य के विषय में सब विचार-धाराओं के लेख जुटाने में कितने सतर्क हैं। कहना नहीं होगा कि एक-एक लेख इसका पठनीय और आचरणीय है।

'प्रीतलड़ी' पत्र भी अपने ढंग का अनोखा है। इसमें एक ऐसी विचार-धारा प्रवाहित रहती है कि जो हमें ईर्ष्या, वैमनस्य, मनोमालिन्य, कुत्सा के अनिष्ट वातावरण से दूर ले जाकर प्रेम, स्नेह, भ्रातृभाव, और सुसंस्कृति के स्वर्ग में बिठा देती है। आज की दुनिया में कम-से-कम ऐसे साहित्य की बहुत आवश्यकता है। पर अंकों के देखने से लगता ऐसा है कि ऐसे सुन्दर आनन्द के उत्सव में जितनों को हाथ बँटाना चाहिए, उतने बँटाते नहीं।

'विशाल भारत' के 'एंड्रयूज़ अंक' से दीनबन्धु के जीवन की विविध घटनाओं की जानकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलती है। उसमें दीनबन्धु की समस्त जीवन घटनाओं का क्रमिक वृत्त ढूँढ़ना व्यर्थ होगा। फिर भी भारतीयों के दीनबन्धु के संपर्क और सहयोग के संस्मरण पर्याप्त मात्रा में हैं, जिनसे उनके मानव-प्रेम, भ्रातृभाव, करुणा और सच्ची मनुष्यता के भावों से ओतप्रोत हृदय की झलक मिलती है। इसके अतिरिक्त श्री इलाचन्द्र जोशी का '**छायावादी तथा प्रगतिपंथी कवियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण**' मननीय लेख है। एक लेख में श्री श्रीराम शर्मा ने सम्मेलन की कुल विचारणीय समस्याओं का हल सुझाया है और हिन्दी-उर्दू, लिपि, हिन्दी-प्रचार, संस्थागत संगठन, साहित्य-सेवा के साधनों आदि के बारे में उनके विचार युक्तिसंगत और व्यावहारिक हैं। अंक संग्रहणीय है।

श्री बनारसीदासजी का 'मधुकर' हर पखवाड़े आकर नयी-नयी काम की बातें बतला जाता है। उनका यह प्रस्ताव कि 'कार्यक्षेत्र का विभाजन और कार्य-शक्ति का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए।' कितना व्यावहारिक है यह 'मधुकर' के अंकों की झाँकी लेने से ही पता चल सकता है।

'मधुकर' के अंकों में ग्रामों में ज्ञान और शिक्षा का प्रचार, ग्रामगीतों, कहानियों, कहावतों शब्दों का संग्रह, स्वास्थ्य संबंधी व जीवनोपयोगी चीज़ों की जानकारी आदि अच्छी-अच्छी बातें हैं, जिनसे हम व्यावहारिक जीवन में लाभ उठाते हुए अपने साहित्य, भाषा, व संस्कृति की सर्वांगीण उन्नति का उपक्रम कर सकते हैं। विशेषता यह है कि लेख जितने ही रोचक हैं उतने ही उपयोगी भी हैं। अगर हरेक प्रांत में या राज्य में 'मधुकर'-जैसे पत्र चल निकलें 'जो अपना दृष्टिकोण व्यापक रखते हुए परिमित क्षेत्र में ठोस काम कर सकें और देश-विदेश के सांस्कृतिक उपवनों से जीवनप्रद रस ग्रहण करके जनता के सामने रख सकें', तो हमें विश्वास है कि वे जनता की ज्यादा सफल सेवा कर सकें। आशा है, 'मधुकर' दिन-दिन ठोस कार्य करता रहेगा।

'हंस' ने नये साल से '**साहित्य-समस्या**' स्तंभ खोला है, जिसमें श्रीजैनेन्द्र ने '**युद्ध और लेखक**' में युद्ध की व्याख्या करते हुए लेखक को युद्ध के प्रति क्या रुख रखना चाहिए, यह बतलाया है। उसी अंक में श्री शिवदानसिंह चौहान ने '**विश्व-साहित्य के प्रकाशन की योजना**' रखी है जो प्राणमान है। इसके अनुसार संसार का सर्वश्रेष्ठ साहित्य हिन्दी में अनुवादित किया जायगा। विषयों को उन्होंने २० भेदों में विभक्त किया है; जिनमें मानव से सम्बन्धित खास-खास शास्त्र आ जाते हैं। योजना पर उन्होंने सम्मति भी चाही है, सहयोग भी चाहा है। प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी को उसे देखना चाहिए। **सु०**

कृष्ण-मन्दिर में

आचार्य नरेन्द्रदेव : काशी विद्यापीठ के आचार्य (प्रिंसिपल) पद पर रहने के कारण आचार्य नाम से विख्यात नरेन्द्रदेवजी संस्कृत, इतिहास, राजनीति और समाजशास्त्र के प्रकाण्ड पंडित हैं। आचार्यजी ने हिन्दी में अनेक ग्रन्थ लिखे हैं।

श्री श्रीप्रकाश : विद्वद्वर डॉक्टर भगवान्दास के सुपुत्र श्रीप्रकाशजी विद्वान पत्रकार और सिद्धहस्त लेखक हैं। राजनीति आपका अत्यन्त प्रिय विषय है।

श्री सुभद्राकुमारी चौहान : 'झाँसी की रानी' कविता की रचयित्री सुभद्राकुमारी हिन्दी की सर्वप्रथम राष्ट्रीय कवयित्री हैं। उनकी 'मुकुल' (कवितायें) तथा 'बिखरे मोती' (कहानी-संग्रह) कृतियों पर दो बार सेकसरिया पुरस्कार मिला है।

श्री पद्मकान्त मालवीय : अभी-अभी दिवंगत हुए प्रख्यात पत्रकार और लेखक पं० कृष्णकान्त मालवीय के सुपुत्र, हिन्दी के सुकवि हैं।

श्री नरदेव शास्त्री : हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक और ज्वालापुर महाविद्यालय के आचार्य हैं।

श्री बद्रीदत्त पांडे तथा **श्री रघुकुल तिलक** सुपरिचित हिन्दी-लेखक हैं।

श्री भवानीप्रसाद तिवारी : मध्यप्रान्त के प्रसिद्ध कवि और राजनीति के विद्वान हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या और कैसे ?

आदर्श

महात्माजी के तत्वावधान में जो सत्याग्रह देश में चल रहा है वह अहिंसा-प्रयोग की दृष्टि से आदर्श व बहुत ध्यान देने योग्य है। अहिंसा की परीक्षा ही यह है कि वह प्रतिपक्षी के मानस को बदलने का प्रयत्न करती रहे। यह तभी हो सकता है जब हमारे मन में किसी तरह का हिंसा, प्रतिहिंसा या द्वेषभाव हमारे विरोधी के प्रति न हो। इसकी क्या पहचान ? हम उसके कष्ट व दुःख से लाभ न उठावें, उसे विपत्ति में पड़ा देखकर खुश न हों, अपना विरोध प्रदर्शित करते हुए भी उसके नैतिक भावों को आघात न पहुँचने का ध्यान रक्खें। सत्याग्रह में विजय का आधार सत्याग्रही का स्वयं कष्टसहन है, न कि विरोधी-प्रतिपक्षी को परेशान करना या मुसीबत में डाल देना। इसलिए सत्याग्रही उन तमाम अवसरों को बचावेगा जो सत्याग्रह के दर्म्यान विरोधी को अकारण परेशानी में डाल सकते हों। खुद सत्याग्रह से उसके सामने जो-कुछ कठिनाइयाँ खड़ी होती हों, सत्याग्रह-संचालन के सिलसिले में महात्माजी सरकार को परेशानी न हो, इसका बड़ी बारीकी से खयाल रख रहे हैं। पटना व लाहौर में भीड़ ने मर्यादा तोड़ दी तो उन्होंने भीड़ होने देना बन्द कर दिया। भाई प्यारेलाल नायर ने जब वर्धा के आसपास सत्याग्रह किया तो जनता को जानबूझ कर खबर नहीं की गयी। सत्याग्रह का प्रभाव भीड़ के कारण नहीं, सत्याग्रही की योग्यता के कारण होता है। भीड़ भी उनके प्रभाव का एक चिन्ह ज़रूर है; परन्तु वही भीड़ जो सत्याग्रह के नियमों का पालन करती हो। जो उनका भंग करती है वह तो उल्टा सत्याग्रह को कमज़ोर बनाती है, उसपर धब्बा लगा देती है। यह बात सत्याग्रहियों को अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए।

इसी तरह महात्माजी ने यह आदेश दिया था कि बड़े दिनों में सत्याग्रह रोक दिया जाय इसका यही उद्देश्य था कि अंग्रेज़ों के धार्मिक त्यौहार के दिनों में उन्हें सत्याग्रह-संबंधी कार्रवाइयों की चिन्ता में न रहना पड़े। एक और ताजा मिसाल लीजिए। उन्होंने आदेश दिया है कि जो सत्याग्रही जुर्माना दे सकते हों वे खुशी से दे दिया करें। जब्तियों से जो कटुता बढ़ती थी वह इससे रुक जायगी। कटुता न बढ़ने देना अहिंसा का एक लक्षण है। प्रतिपक्षी के मनोभावों के प्रति इस मृदुलता के मर्म को कई लोग समझ नहीं पाते और महात्माजी व सत्याग्रह-पद्धति पर आक्षेप करने लगते हैं। उन्हें यह याद रखना चाहिए कि सत्याग्रह का मुख्य हेतु प्रतिपक्षी के दिलोदिमाग पर असर डालना ही है —अपने स्नेह-युक्त कष्ट-सहन के द्वारा। यही सच्ची तपस्या है। और इस दृष्टि से वर्तमान सत्याग्रह प्रत्येक समाज-शास्त्री व मानस-शास्त्री के अध्ययन की चीज़ है। यदि समाज में से हिंसा, युद्ध, कलह को मिटाना है तो समाज-व्यवस्था व समाज-शान्ति के अहिंसात्मक, सभ्य-शिष्ट उपाय हमें ढूँढ़ने ही होंगे। अत: महात्माजी इस समय जो पदार्थ-पाठ हमें दे रहे हैं उसका बहुत बारीकी से व तन्मय होकर हम सबको अध्ययन व मनन करना चाहिए।

हिन्दी पत्रकार-संघ

यह खुशी की बात है कि दिल्ली में तारीख २७–१–४१ को अ० भा० हिन्दी पत्रकार-संघ की स्थापना हो गयी। वैसे तो संपादक-सम्मेलन के रूप में एक आयोजन समय-समय पर होता रहा है, परन्तु हिन्दी पत्रकार-सम्मेलन के अवसर पर उसे हिन्दी पत्रकार-संघ के नाम से अब स्थायी रूप देकर हिन्दी पत्रकारों ने एक बड़े अभाव की पूर्ति की है। हिन्दी पत्रकारों में सौहार्द-सहयोग व सद्भाव बढ़ाना, पत्रकारों व पत्रकार-कला के गौरव व मर्यादा की तथा हितों व अधिकारों की रक्षा करना, पत्रकार-कला की उन्नति के अन्य आयोजन करना उसका उद्देश स्थिर किया गया है। प्रथम वर्ष के लिए बाबू मूलचन्दजी अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

('विश्वमित्र'-संचालक) अध्यक्ष, पंडित इन्द्र ('अर्जुन'-संचालक) उपाध्यक्ष, श्री हरिशंकर विद्यार्थी ('प्रताप'-संपादक) मंत्री, श्री विष्णुदत्त 'तरंगी' सहायक मंत्री व श्री मिहिरचन्द धीमान् कोषाध्यक्ष निर्वाचित हुए हैं। इनके अलावा १० प्रतिष्ठित पत्रकारों की मिलकर कार्य-समिति बनायी गयी है। अगले अधिवेशन के लिए अजमेर का निमंत्रण स्वीकार किया गया है।

पत्रकार-सम्मेलन की मूल-प्रेरणा का उद्भव यद्यपि अंग्रेजी सम्पादक-परिषद्-सम्बन्धी हिन्दी पत्रकारों के असन्तोष से हुआ और उसे व्यक्त करनेवाला एक प्रस्ताव भी सम्मेलन ने पास किया, फिर भी उसका अन्तिम फल इस स्थायी संघ के रूप में मधुर निकलता दीखता है—यह विशेष सन्तोष की बात है। परमात्मा इसके कार्य-वाहकों को दृढ़ता के साथ अपनी महान् जिम्मेदारी को निबाहने का बल व धैर्य देते रहें। ह० उ०

गागर में सागर

'जीवन-साहित्य' जहाँ थोड़े ही दिनों में लेखकों की कृपा व स्नेह का पात्र बन गया है वहाँ उसका कलेवर छोटा होने के कारण वह प्रतिदिन मिलने-वाले सहयोग को अपना नहीं पा रहा है इसका हमें बड़ा खेद है। जी० सा० में प्रकाशनार्थ इतने लेख आ चुके हैं और आते रहते हैं कि उन्हें यथावसर दे सकना भी कठिन हो रहा है। कई लेखों को तो ३-३ मास पूर्व स्वीकृत कर लेने पर भी अभी तक दिया नहीं जा सका। इसके लिए हम उन लेखक-बन्धुओं से क्षमाप्रार्थी हैं।

परन्तु जबतक कई अनिवार्य कारणों से कलेवर नहीं बढ़ाया जाता तबतक इसका एक सुन्दर और सफल उपाय यह है कि हमारे कृपालु लेखक जो कुछ लिखें, नपा-तुला लिखें—जैसे काँटे पर सोना तोला जाता है, वैसे शब्द-शब्द, अक्षर-अक्षर तोला जाये।

छोटे टाइप के जी० सा० के ३ पृष्ठ तो लेख की पराकाष्ठा निश्चित हुई है, इससे भी छोटे-छोटे लेखों और विचारों का जी० सा० स्वागत करेगा। वस्तुतः लेख का मूल्य उसके विस्तार से नहीं आँका जाना चाहिए, बल्कि अर्थगांभीर्य से, विचारों की प्रौढ़ता से। यह तभी हो सकता है जब लेखकबन्धु यह तय कर लें कि उन्हें अपने लेखों की गागर में विचारों का सागर भरना है। सागर के पास जाते हमें डर लगता है, पर गागर पल-पल पर हमारी प्यास बुझाती रहती है।

निराधार विरोध

कुछेक पत्र-संपादकों ने रुपये की पत्र-मुद्रा (नोट) पर हिंदी भाषा-नागरी लिपि में एक 'रुपया' न छपा होने का इलजाम सरकार पर लगाया है। पर वह विरोध है निराधार। उसमें अवश्य ही 'एक रुपया' छपा है, फ़र्क सिर्फ़ इतना ही है कि 'रुपया' में 'र' का वही रूप प्रयुक्त हुआ है जो आज साहित्य-सम्मेलन ने मंजूर कर लिया है 'ɍ'। यह चिन्ह नया नहीं है, बल्कि पुरानी सब हस्तलिखित प्रतियों में पाया जाता है और श्र, प्र, घ्र आदि का ऐसा रूप होने का कारण 'ɍ' का होना ही है। कालान्तर में हमने 'र' का पूर्व-रूप बदल कर ही आज की मुसीबत पैदा कर ली है।

एक सुझाव

'र' का 'ɍ' रूप पुनः मंजूर करके साहित्य सम्मेलन ने बड़ी समझदारी का काम किया है। इससे 'र' को संयुक्त करने की सारी कठिनाई एक दम समाप्त हो जाती है बल्कि 'रेफ़' का टण्टा ही मिट जाता है। 'रेफ़' के चिन्ह(र्) को यदि अब हम छोटी 'इ' की मात्रा के रूप में लगाने लग जायें, तो कितना अच्छा हो ? यही एक मात्रा ऐसी थी जो वर्ण के पहले लगा करती है। इस प्रकार यह भी वर्ण के बाद में लगने लग जाया करेगी। सु०

भूल-सुधार

२७८ पृष्ठ की अंतिम-पंक्ति में कुछ भूलें रह गयी हैं। पाठकगण उसे इस प्रकार समझें :—

भारतीय सरकार का जन-गणना में हिन्दी-भाषियों की मातृ-भाषा 'हिन्दुस्तानी' लिखने का सरक्युलर, बम्बई व पंजाब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व० श्री कृष्णकान्तजी मालवीय !

पंडित कृष्णकान्तजी मालवीय के आकस्मिक देहावसान से हिन्दी का एक महारथी लेखक उठ गया। हिन्दी में सर्वप्रथम राजनैतिक मासिक पत्रिका—'मर्यादा' निकालने का श्रेय आप ही ने प्राप्त किया था। 'अभ्युदय' के वे वर्षों संपादक रहे। हिन्दी के स्वतन्त्र और निर्भीक लेखकों में उनका ऊँचा स्थान था। अन्तर्राष्ट्रीय विषयों में उनकी गति बहुत अच्छी थी। देशभक्ति और राष्ट्रीयता उनमें कूट-कूटकर भरी हुई थी। उनकी लिखी 'सुहागरात' आदि पुस्तकें आज हिन्दी-पाठकों में बड़े चाव से पढ़ी जाती हैं। उन्होंने उस काल में हिन्दी-सेवा आरम्भ की थी, जबकि आजकल के कई ख्यातनामा लेखकों और कवियों का जन्म भी नहीं हुआ था या शैशव-काल था। उनका हिन्दी-सेवाव्रत अखण्ड कायम रहा। उनको यमराज ने ऐसे समय में हमसे छीन लिया, जबकि उनका विद्यमान रहना हिन्दी की उन्नति के लिए मूल्यवान था। ईश्वर उनके परिवार-वालों और सुहृदों को उनके इस कठिन वियोग को सहन करने का बल दे और उनकी स्वर्गस्थ आत्मा को शांति।

हृ० उ०

ज़रूरी सूचना

हमारे पास 'जीवन-साहित्य' के प्रथमांक की एक भी प्रति नहीं रही है, इसलिए ग्राहकगण कृपया उस अंक को मँगाने का कष्ट न उठावें। —व्यवस्थापक

दन्तामृत (रजिस्टर्ड)

दाँतों की बीमारियों के लिए अपूर्व स्वदेशी मञ्जन

दाँतों और मसूढ़ों की सब बीमारियों यहाँ तक कि पायोरिया तक के लिए यह मञ्जन इतना गुणकारी सिद्ध हुआ है कि भारत के साधारण श्रेणी से लेकर श्रीमन्त एवम् राजा-महाराजाओं और कौंसिलों के सदस्य तो इसका व्यवहार करते ही हैं, कई अंग्रेज़, जो कि अपने देश की चीज़ों के सिवा बाहर की बहुत कम चीज़ें इस्तेमाल करते हैं, वे भी अपने देश के टूथ-पाउडर एवम् पेस्टों से इससे अधिक लाभ पाकर इसके भक्त बन गये हैं।

जिसने एक बार इस मञ्जन का इस्तेमाल किया, वही सदा के लिए इसका भक्त बन गया। मूल्य टीन की डिबिया ।≡), बड़ी शीशी ।=), छोटी शीशी ।)

श्रीयुत. एम. के. आचार्य, एम. एल. ए. (मद्रास)—"आपका दंत-मंजन तो **मैंने अपनी दंत-पीड़ा के लिए गत पाँच वर्षों में व्यवहृत देशी-विदेशी सब मंजनों से श्रेष्ठतर पाया।** मंजन दाँतों, मसूडों और तालु के घावों पर जादू का-सा असर दिखलाता है।"

श्री. एम० एस० बरदाचार्य एडवोकेट (मद्रास हाईकोर्ट)—"दो वर्ष पूर्व मुझे दंत-पीड़ा हुई थी जो बढ़ती ही गयी और मसूडों में घाव हो गये; **परन्तु आपके मंजन से अब मेरे मसूडे स्वस्थ हैं और दाँत में पीड़ा नहीं होती।** मैं तो कहूँगा कि मेरे व्यवहृत दंत-मंजनों में सर्वश्रेष्ठ आपका दंतामृत ही है।"

मिलने का पता—**मैनेजर, 'राजस्थान आयुर्वेदिक औषधालय,' अजमेर**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीमा कम्पनी ही क्यों ?

अधिक ब्याज दे सकने का कारण !

बीमा कम्पनी और बेंकों की रुपया देने की नीति में बड़ा अन्तर है । बेंकें अपना रुपया कभी लम्बी मियाद के लिए देना पसन्द नहीं करती क्योंकि उन्हें कभी भी रुपए की जरूरत पड़ सकती है । और इसीलिए वे ज्यादा ब्याज भी पैदा नहीं कर पातीं । इसके विपरीत बीमा-कम्पनियाँ सदा यह चाहती हैं कि अगर उनका रुपया सुरक्षित है तो वह ज्यादा से ज्यादा समय के लिए लगा रहे और इसलिए रुपया सुरक्षित रखते हुए भी वे ब्याज अच्छी पैदा कर लेती हैं और इस दृष्टि से वे बेंकों की अपेक्षा अधिक मजबूत होती हैं । और इसी-लिए वे अपने ग्राहकों के लिए ज्यादा ब्याज पैदा कर सकती हैं ।

स्वदेशी बीमा कम्पनी, लिमिटेड

ने सारा खर्च काट कर और जोखिम के लिए रुपया अलग निकाल कर भी ६) प्रतिशत से अधिक ब्याज पैदा किया है और उसीसे प्रभावित और उत्साहित होकर स्वदेशी ने अपने यहाँ रुपया जमा करने की नयी योजना निकाली है कि जिसके अनुसार कोई भी व्यक्ति १००) से लेकर १०,०००) तक कम्पनी में डिपाजिट के रूप से निम्न ब्याज पर जमा कर सकते हैं—

एक वर्ष की मुद्दत पर	...	३) प्रतिशत
दो वर्ष की मुद्दत पर	...	३।) प्रतिशत
तीन वर्ष की मुद्दत पर	...	४) प्रतिशत

ब्याज हर छठे महीने मिलता है । विधवाओं, बच्चों और संस्थाओं को यह सूद हर महीने भी मिल सकता है ।

सफलता का प्रमाण

रुपया जमा करने की यह योजना जनवरी १९४० से शुरू हुई है । इस थोड़े समय में ही उसमें काफी सफलता मिली है और अधिकाधिक मिलती जारही है । प्रमाण लीजिए—

१ जनवरी से ३० जून तक	६ मास में जमा हुए—३९,४३४) रु०
१ जुलाई से ३० नवम्बर तक	५ मास में जमा हुए—९०,६९३) रु०
	११ मास में कुल रुपया जमा हुआ १,३०,१२७) रु०

कम्पनी की मज़बूती का बड़ा प्रमाण

उसने अपने बीमेदारों को आजीवन और मियादी बीमे पर

१८) तथा १४) रुपया प्रतिवर्ष बोनस दिया है ।

और हिस्सेदारों को कई वर्ष से ९) प्रतिशत मुनाफ़ा दे रही है ।

विशेष ब्यौरा जानने के लिए लिखिए या मिलिए

श्रीचन्द दौनेरिया, मैनेजिंग डायरेक्टर ।

स्वदेशी बीमा कम्पनी लि०, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संग्रह करने योग्य ग्रन्थ

कुलीनता

[ले० सेठ गोविन्ददासजी]

त्रिपुरी के कलचुरि नरेश विजयसिंह देव और राजगोंड़ वंश स्थापक यदुराय के ऐतिहासिक कथानक को लेकर इस नाटक की रचना की गयी है। स्टेज पर खूब सफलता के साथ खेला जा सकता है। हिन्दी के मौलिक नाटकों में इसे प्रधान स्थान दिया जायगा। मूल्य १)

सुनीता

श्री जैनेन्द्रकुमार का यह बहुविख्यात उपन्यास अबकी बार सुलभ साहित्य माला में प्रकाशित किया गया है। मूल्य तीन रुपया की जगह अब सिर्फ दस आने हैं। बढ़िया छपाई और काग़ज़। पृ० सं० २००; सस्तेपन की हद है।

उर्दू हिन्दी कोश

(संशोधित-परिवर्द्धित संस्करण)

इस अत्यन्त उपयोगी कोश में उर्दू और उर्दू में काम आनेवाले अरबी, फारसी, तुर्की, इब्रानी, पोर्तुगीज आदि भाषाओं के लगभग साढ़े ग्यारह हज़ार शब्दों का सरल हिन्दी में अनेक पर्यायवाची शब्द देकर अर्थ किया गया है और यह भी बतलाया गया है कि प्रत्येक शब्द किस भाषा का है, साथ ही लिंग, विशेषण, अव्यय आदि भी बतलाये हैं। मुहाविरों और क़ानूनी शब्दों का भी संग्रह किया गया है। अब की बार पहले से एक हज़ार शब्द अधिक दिये गये हैं। मूल्य वही २।।) ढाई रुपया।

नीति-विज्ञान

[ले० श्रीगोवर्द्धनलाल एम० ए० बी० एल०]

नीति, सदाचार या धर्म की वैज्ञानिक आलोचना। हिन्दी में अपने विषय का सबसे पहला ग्रंथ। सदाचार की उत्पत्ति, उसका विकास, धर्म और ईश्वर से उसका सम्बन्ध, धर्मों के द्वारा किये गये अत्याचारों का इतिहास, धर्म और मज़हब आदि बातों पर अपूर्व प्रकाश। लेखक की बरसों की समस्या का फल। विद्वानों द्वारा अतिशय प्रशंसित। मूल्य २) रुपया, राजसंस्करण का ३) रु०

अरबी काव्य-दर्शन

[ले० प्रो० महेशप्रसाद आलिम-फ़ाज़िल]

अरबी भाषा के काव्य-साहित्य में से नीति, युद्ध, शृंगार, वैराग्य आदि की सूक्तियों को चुनकर इस ग्रंथ में संग्रह किया गया है। एक-एक सूक्ति पढ़कर आप फड़क उठेंगे। मू० १।)

नोट--अपने नज़दीक की दूकान से खरीदिए, नहीं तो फिर हम से मँगाइए। हमारा सूचीपत्र मँगा लीजिए।

संचालक--हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय, हीराबाग, बम्बई ४

उपरोक्त पुस्तक सस्ता साहित्य मण्डल की सब शाखाओं पर मिलती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबी जनरल इंश्योरेंस कंपनी लि०

चेयरमेन--सेठ ब्रजमोहन बिड़ला

आयोजित पूँजी--४५,००,०००) रुपये

भुगतान पूँजी--१४,४०,०००) रुपये

ज़िन्दगी, आग, जहाज़ और (मोटर आदि सब) दुर्घटनाओं का बीमा कराने में

सबसे सुरक्षित बीमा कम्पनी

इसमें बीमा कराइए या एजेंसी लीजिए

जहां हमारे प्रतिनिधि नहीं हैं, उन शहरों में जीवन-बीमा-विभाग के लिए

एजेण्टों की आवश्यकता है

प्रार्थनापत्र भेजिए

↓

जनरल मैनेजरः--

८, रॉयल एक्सचेन्ज प्लेस, कलकत्ता

या

बम्बई, कराची, रामपुर, लाहौर, मद्रास, नई दिल्ली, कानपुर, पटना शाखाओं को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग
के
प्रकाशन

१—**प्रेमघन-सर्वस्व (प्रथम भाग)**—ब्रजभाषा के आचार्य स्वर्गीय पंडित बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की सम्पूर्ण कविताओं का सुसम्पादित और सम्पूर्ण संग्रह। भूमिका माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन और प्रस्तावना आचार्य पंडित रामचन्द्र शुक्ल ने लिखी है। मूल्य ४।)

२—**वीरकाव्य संग्रह**—हिन्दी-साहित्य के वीररस के कवियों की चुनीहुई सर्वश्रेष्ठ कवितायें और उनके साहित्य की विस्तृत आलोचना। सम्पादक—श्री भागीरथप्रसाद दीक्षित साहित्यरत्न और श्री उदयनारायण त्रिपाठी एम० ए०। मूल्य २)।

३—**डिंगल में वीररस**—डिंगल भाषा के आठ श्रेष्ठ वीररस के कवियों की कवितायें तथा तथा उनकी साहित्यिक कृतियों की आलोचना। सम्पादक—श्री मोतीलाल मेनारिया एम० ए०। मूल्य १।।)

४—**संक्षिप्त हिन्दी-साहित्य**—हिन्दी-साहित्य का संक्षिप्त और आलोचनात्मक इतिहास प्राचीन काल से आधुनिक काल तक की हिन्दी-साहित्य की समस्त धाराओं तथा प्रवत्तियों पर प्रकाश डालतेहुए विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। लेखक—पंडित ज्योतिःप्रसाद मिश्र 'निर्मल'। मूल्य ।।।)

५—**चित्ररेखा**—हिन्दी के प्रसिद्ध रहस्यवादी कवि प्रोफेसर रामकुमार वर्मा एम० ए० की कविताओं का अपूर्व संग्रह। लेखक को इसी पुस्तक पर देवपुरस्कार प्राप्त हुआ है। मूल्य १।)।

आधुनिक कवि—(१) प्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए० की लिखीहुई अब तक की सर्वश्रेष्ठ कविताओं का संग्रह। यह संग्रह स्वयं कवयित्री ने किया है और पुस्तक के प्रारम्भ में अपनी कविताओं की प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में प्रकाश डाला है। मूल्य १।)

बाल-साहित्य-माला
१. **वीरशतमन्यु** (कविता) मूल्य ।)
२. **छत्रपति शिवाजी** (जीवनी) मूल्य ।)
३. **बालभारती** (कविता) ठाकुर श्रीनाथसिंहजी की बालोपयोगी सर्वश्रेष्ठ कवितायें। मूल्य ।-)
४. **बालकथा** (कहानी) सौभाग्यवती श्रीमती कमलाबाई किबे मूल्य ।=)
५. **बालकवितावली** (कविता) मूल्य ।)

सम्मेलन-पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रयाग की यह मुखपत्रिका है, इसमें प्रतिमास पठनीय साहित्यिक लेख प्रकाशित होते हैं। हिन्दी के प्रचार और प्रसार पर विस्तृत प्रकाश डाला जाता है। सम्मेलन की प्रगति का परिचय प्रतिमास मिलता रहता है। इसके सम्पादक साहित्य-मन्त्री श्री ज्योतिःप्रसाद मिश्र 'निर्मल' हैं। वार्षिक मूल्य केवल १)।

पता— **साहित्य-मन्त्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक नए नगर की स्थापना

आगरे में "स्वदेशी" का विराट आयोजन

आगरे की स्वदेशी बीमा कम्पनी के प्रधान संचालक श्रीमान दौनेरियाजी अपनी सूझ-बूझ, लगन और परिश्रम के लिए प्रसिद्ध हैं। उनकी दस वर्ष की तपस्या तथा कम्पनी के माननीय डाइरेक्टरों के अनवरत परिश्रम के फलस्वरूप आज "स्वदेशी" ने अपना जो स्थान बना लिया है वह सचमुच आश्चर्य में डालनेवाला है। बीमे के उसूलों के लिहाज से स्वदेशी की तुलना आज किसी भी बड़ी कम्पनी से की जा सकती है। उसका आजीवन दुर्घटना का बीमा तो सर्वथा एक नई चीज़ है और उसका काफ़ी प्रचार हुआ है। अधिक ब्याज पर सुरक्षित रूप से रुपया जमा करने की उसकी योजना भी निरन्तर सफल होती जा रही है। अलीगढ़ में सूत का एक बड़ा मिल अभी हाल में कम्पनी ने लिया है जिसमें अच्छा मुनाफा होने की सम्भावना है। कम्पनी के प्रधान कार्यालय के लिए अपनी इमारत हाल ही में ख़रीदी गई है। जिसके साथ की ज़मीनें बेचकर कोई दस हज़ार का मुनाफ़ा हुआ है और कोठी मुफ्त में बच गई है। लाखों रुपया और दूसरे कामों में लगाने के बाद अब कम्पनी उद्योग-धन्धों और मकानों की उन्नति में कुछ रुपया लगाना चाहती है और इसके लिए उसकी—

एक और नई योजना

एक आदर्श नगर की स्थापना सम्बन्धी है। इस नगर में एक हजार कोठियों के लिए स्थान होगा। और प्रत्येक कोठी को एक बीघे तक स्थान मिलेगा। नगर के लिए शहर से अलग, पर चुंगी की हद से एक के अन्दाज़ पर स्थान तलाश किए जा रहे हैं और चार ऐसी बड़ी-बड़ी जमीनें देखी जा चुकी हैं जहाँ यह नगर बस सकेगा। इस नूतन "नगर" में यह विशेषताएँ होंगी—

१—बिजली और पानी का अपना प्रबन्ध होगा। जिसमें खर्च आगरा शहर से बहुत कम होगा।

२—पक्की सड़कें, नालियाँ, पार्क और बगीचे होंगे। और अपना स्कूल, अस्पताल आदि होंगे।

३—शहर आने जाने के मोटर बस रहेंगी जिनमें नाम मात्र के किराए पर नगरवासी आ-जा सकेंगे।

४—नगर में आवश्यक वस्तुएँ मिलने के लिए छोटा-सा बाज़ार होगा।

५—जमीन की कीमत बहुत कम क़रीब पाँच छः आने प्रति वर्ग गज होगी।

६—इस नगर में आगामी दस-बारह साल में कम्पनी अपनी तरफ से १५—२० लाख रुपया लगावेगी। जिससे जो लोग जमीन या मकान के लिए रुपया लेना चाहेंगे उन्हें मामूली ब्याज पर रुपया मिल सकेगा। और जिसे वे धीरे-धीरे क़िस्तों में अदा कर सकेंगे।

७—शहर के सैकड़ों झगड़ों से यह नगर बरी रहेगा। यहाँ लोग आराम से सुख-शान्तिपूर्वक रह सकेंगे। रिटायर्ड लोगों के लिए तो यह नगर स्वर्ग समान होगा।

कम्पनी ने इस नगर की योजना को सफल बनाने के लिए एक अलग विभाग खोल दिया है। एक एक्सपर्ट एंजीनियर की अधीनता में काम शुरू होगया है और मकान बनवाने के दूसरे साधनों के अपने कारखाने खोले जा रहे हैं। ईंटों के लिए दो भट्टे खोल दिए गए हैं।

जो महानुभाव इस योजना में शामिल होना चाहें वे अभी से अपना नाम कम्पनी के दफ़्तर में रजिस्टर करा सकते हैं। इसके लिए उन्हें प्रति बीघा सिर्फ २५) रु० पेशगी जमा कराने होंगे। इस रुपये को वे वापस भी ले सकेंगे यदि ३० सितम्बर १९४१ तक उन्हें जमीन न मिल सके या वे कम्पनी की शर्तों को मंजूर न करें।

स्वदेशी ने अपनी कोठी के साथ की जमीन के २८ प्लाट एक दिन में बेच दिए थे और पचासों आदमियों को निराश रहना पड़ा था। इस नगर में भी ऐसी समस्या होने की सम्भावना है क्योंकि बाहर के सैकड़ों आदमी इस नगर में आना पसन्द करेंगे। अतः जो लोग इस योजना से लाभ उठाना चाहें वे अपना नाम जल्दी रजिस्टर करालें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वोदय

के

दूसरे वर्ष की जिल्द

जिसमें

श्री विनोबा की 'ईशावास्योपनिषत्' की अर्थ-सहित टिप्पणियाँ
श्री काकासाहब की 'वर्धा-शिक्षण-विषयक' तथा 'आकाश-दर्शन'
पर
आकृतियों के साथ लेखमाला
'आश्रमवासी उल्लू' के परिहासात्मक
और
राष्ट्रभाषा, लिपिसुधार, वर्धा-शिक्षण एवं सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक विषयों पर
अधिकारी व्यक्तियों के लेख हैं
गांधी-सेवा-संघ के महत्त्वपूर्ण मालिकन्दा सम्मेलन के अवसर पर दिये हुए
पू० गांधीजी *तथा* **सरदार वल्लभभाई के**
महत्त्वपूर्ण तथा अधिकृत भाषण भी आप इसमें पढ़ सकेंगे। मू० सिर्फ़ रु० ४)

व्यवस्थापक **सर्वोदय कार्यालय** बजाजवाडी, वर्धा (सी० पी०)

किशोरों का एकमात्र सचित्र मासिक

संपादक—रामदहिन मिश्र
गेट अप आकर्षक
वा० मू० ३)

किशोर

सह०—हंसकुमार तिवारी
चित्रादि नयनाभिराम
नमूने की एक प्रति ।)

बिहार, संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत और बरार तथा बड़ौदा के शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत

इसमें प्रेरक कवितायें, देश और दुनिया का मुख उज्ज्वल करनेवाले अमर नर-वीरों की जीवन-गाथायें, किशोर-जीवन की रोज-दिन की समस्यायें, उनके कुछ प्रश्न और प्रश्नों के समाधान, साहसिक कथा-वार्ता, देश-विदेश की बात, साहित्य, शिल्प, समाज और राजनीति की सहज-सरल आवश्यक चर्चा, ज्ञान-विज्ञान, जीव-जंतु, इतिहास आदि सभी ज्ञातव्य बातों पर प्रकाश डाला जाता है। देश के भावी भाग्य-विधायकों के लिए 'किशोर' एक उपयोगी ज्ञान-विज्ञान का कोष ही नहीं, उज्ज्वल भविष्य के निर्माण का सर्वश्रेष्ठ साधन है।

इसमें आचार्य काका कालेलकर, हरिऔधजी, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, स्वामी भवानीदयाल संन्यासी, श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, मुक्त, डॉक्टर रविप्रताप, श्री राधाकृष्ण, आरसी, नेपाली, श्री सोहनलाल द्विवेदी, स्वर्ण सहोदर, केसरी आदि की उपयोगी रचनायें छपती है।

भावी नागरिक-निर्माण की सद्प्रेरणा से अपने-अपने घरों, गाँवों, शिक्षण-संस्थाओं, पुस्तकालयों और वाचनालयों में 'किशोर' को स्थान दीजिए।

व्यवस्थापक—'किशोर', बाँकीपुर (पटना)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका व्यापार

केवल सुन्दर और चित्ताकर्षक

- ब्लाक
- छपाई
- कलेन्डर
- कार्ड बोर्ड बक्स
- लेबिल आदि

पर ही निर्भर है

इसलिये
उपरोक्त सामग्री के
लिये—

फोन नं०
६३२७

मुरारी फ़ाइन आर्ट वर्क्स,
४, दरियागंज देहली

ब्रांच-
कटराबंड़ियान
देहली

को हमेशा याद रखिये

ब्रांच-
कसेरट बाजार
आगरा

और हमारे
२० वर्ष के अनुभव
से लाभ उठाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी'

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।

(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।

(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है कि 'कहानी' सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं...यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिये।

श्री जैनेन्द्र—

'...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...'

श्री सुदर्शन—

'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम क़ीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—

'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब—सब विचार से अंक सर्वांग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा—

'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है—अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय—

'कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई...'

श्री पहाडी—

'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी-पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेंगीं।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २॥) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-यात्रा में

विधवा का करुण क्रन्दन

पाषाण पुरुष-हृदय

पर कोई असर नहीं करता है।

क्योंकि

वह अपनी वृद्धावस्था के लिए अथवा अपनी प्रिय पत्नी के लिए या अपने प्यारे बच्चों के लिए संकट-समय का एकमात्र सहारा जीवन-बीमा नहीं कराता।

सहृदय होकर बिड़ला-बन्धुओं द्वारा प्रबन्धित

न्यू एशियाटिक में

बीमा कराइए

जिसने	१६३४ ई० में		१५,३८,५०
,,	१६३५	,,	२५,०१,०००
,,	१६३६	,,	३०,६६,७५०
,,	१६३७	,,	३५,५६,५००
,,	१६३८	,,	४१,७४,७५०
,,	१६३६	,,	५०,११,७६८

बीमे किये हैं

और जो प्रगतिशील बीमा कम्पनी है।

योग्य एजेएटों की शहरों तथा कस्बों में आवश्यकता है।

न्यू एशियाटिक लाइफ इन्शुरेंस कम्पनी, लिमिटेड

कनाट सर्कस, नई दिल्ली

शाखाएँ:—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, नागपूर, हैदराबाद (दक्षिण), लाहौर, पटना, संगठन कार्यालय—अर्नाकुलम (कोचीन), कानपुर, तंजोर, त्रिचनापल्ली, कोलम्बो, रंगून इत्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हंस-परिवार' की अनुपम योजना के सदस्य बनिए

[१] **भारतीय-पुस्तक-माला**
(क) कायाकल्प (३ भाग)
(ख) स्नेह-यज्ञ [१-२]

[२] **'हंस' पुस्तकें**
(क) मा [भाग १-२]
(ख) गाड़ीवानों का कटरा [भाग ३]
(ग) सात इनक़लाबी इतवार [भाग १-२-३]

[३] **गल्प-संसार-माला**
१० प्रमुख प्रान्तीय भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ कहानी-संग्रह ।

[४] **प्रगतिशील पुस्तकें**
(क) नया हिन्दी-साहित्य : एक दृष्टि और पाँच अन्य पुस्तकें

[५] **नवसृजन ग्रंथावली**
(क) शोभा : ले० इन्द्र वसावड़ा
(ख) संजीवनी : ले० 'सोपान'
(ग) प्रायश्चित्त [भाग १-२] : ले० सोपान

[६] **जाग्रत-महिला-साहित्य**
(क) पिकनिक; लेखिका—कमलादेवी चौधरी
(ख) पिया; लेखिका—उषादेवी मित्रा
(ग) कौमुदी; लेखिका—शिवरानी देवी

[७] **आज की किताब**
(क) कँटीले तार [भाग १-२]
(ख) जाई-जुई और ९ अन्य पुस्तकें

[८] **'हंस' मासिक १२ अंक**

[९] **'कहानी' मासिक के १२ अंक और १।) मूल्य की 'कोकिला' नामक पुस्तक भेंट ।**

इसके साथ हम जिन प्रवृत्तियों का संक्षिप्त विवरण दे रहे हैं उनका कुल मूल्य रु० ३३-१४-० होता ह । पर हम अपने बहुत-से कृपालु ग्राहकों तथा विशेषतया सार्वजनिक संस्थाओं की सुविधा के लिए यह चाहते हैं कि इन प्रवृत्तियों को मात्र २५ रु० में दें । इसमें हमें आज की महँगी के जमाने में कितनी हानि उठानी पड़ेगी, यह हमारे दयालु सहायकगण समझ ही सकते हैं : यह संस्था तो सेवा के लिए ही खड़ी है । इन नौ प्रवृत्तियों के ग्राहक बननेवालों को हम 'हंस-परिवार' का एक सदस्य मान लेंगे और उनकी सूची आदि भी समय-समय पर प्रकाशित करेंगे ।

इस मूल्य में निःशुल्क बारह महीने तक दो मासिक हर महीने मिलते रहेंगे और एक वर्ष में छोटी-बड़ी कुल मिलाकर ४७ पुस्तकें मिलेंगी जिनकी पृष्ठसंख्या कुल जोड़कर १०,००० के लगभग होती है; अर्थात् पत्रिका के पृष्ठों और सामग्री को छोड़कर २॥) रु० में १००० पृष्ठ मिलते हैं । इससे सस्ती योजना भारत की किसी प्रान्तीय भाषा में तो क्या, अंग्रेजी में भी नहीं है । यह योजना बेजोड़ है । निस्सन्देह ।

इन पुस्तकों में विविधता कितनी है, इसका परिचय नीचे लिखे परिचय से मिल जायगा ।

[१] १२०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रमुख भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद । [२] १२०० पृष्ठों में संसार के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद । [३] २४०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रान्तीय भाषाओं से सुन्दरतम कहानियों का अनुवाद, जिसमें आप भारतीय साहित्य की सम्पूर्ण गतिविधि से परिचित हो जाते हैं । [४] प्रगतिशील दृष्टिकोण से लिखे निबन्धों, कहानियों और कविताओं के ६ संग्रह । १००० पृष्ठ की उत्तम पाठ्य-सामग्री आपको देंगे । [५] गुजराती साहित्य के सर्वश्रेष्ठ तीन उपन्यासों का अनुवाद, ९०० पृष्ठों में उपस्थित किया गया है । [६] महिलाओं के लिए उन्हींके दृष्टिकोण से लिखे उपन्यासों और कहानियों के तीन ग्रन्थ-रत्न । ये आपके परिवार में पत्नी तथा माँ-बहन के लिए स्वास्थ्यकर मानसिक भोजन प्रदान करेंगे । [७] 'आज की किताब' के अन्तर्गत एक वर्ष में आपको १२ किताबें मिलेंगी जिनमें आज की समस्याओं का सुलझाव रहेगा । अधिकांश तो ये छोटे-छोटे उपन्यास होंगे जो आपको अपने यथार्थवाद से चौंका देंगें ।

सरस्वती-प्रेस, बनारस : इन्दौर : लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल्ली में

सब प्रकार की उत्तम छपाई

और खास करके

हिन्दी पुस्तकों की छपाई

का काम

फेडरल ट्रेड प्रेस

नया बाज़ार : दिल्ली : : फोन नं० ५३७७

में

बहुत अच्छा और सावधानी से

किया जाता है

एक बार परीक्षा कर देखें

यही एक प्रमाणपत्र काफी है कि हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ प्रकाशन-संस्था

'सस्ता साहित्य मण्डल' की पुस्तकें

हमारे यहाँ छपती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरती

[कलापूर्ण प्रगतिशील मासिक]

संपादक { सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन
प्रफुल्लचंद्र ओझा 'मुक्त'

प्रत्येक हिन्दी-पाठक के लिए नियमित रूप से आरती पढ़ना आवश्यक है, क्योंकि इसके हर अंक में आपको मिलेगा—

—विश्व की विविध प्रवृत्तियों का परिचय।
—भारतीय साहित्य की गति-विधि का निर्देश।
—साहित्यिक, सामाजिक और राजनीतिक विषयों पर नवीनतम विचार।
--ओजपूर्ण कहानियाँ और कवितायें।
—संसार के महापुरुषों का उत्कृष्ट शब्द-चित्र।
—उत्पीड़ित मानवता की विद्रोहपूर्ण हुंकार।
—गम्भीर और प्रभावशाली टिप्पणियाँ।

ग्राहक बनकर और विज्ञापन देकर लाभ उठाइए

वार्षिक मूल्य ५) एक प्रति ।।)

नमूने के लिए आठ आने का टिकट भेजिए।

आरती-मंदिर, पटना सिटी

माधुरी का विशेषांक

प्रकाशित हो गया। इसमें हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ लेखकों और कवियों की कहानियाँ, कविताएँ, लेख और निबन्ध हैं। पृष्ठ-संख्या २०० से ऊपर। दो भावपूर्ण तिरंगे चित्र, कई व्यंग्य चित्र और अनेक सादे चित्र। मूल्य १।)

इसी संख्या से जो लोग ग्राहक बनेंगे, उनको यह विशेषांक मुफ्त ही मिलेगा। विशेषांक बहुत नहीं छपा है। देर से ग्राहक बननेवाले इसे न पा सकेंगे।

आज ही वार्षिक मूल्य ६।।) भेजकर ग्राहक बनिए

मैनेजर—माधुरी, लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिरला जूट मेनुफैक्चरिंग

कम्पनी लिमिटेड के

जूट कारपेट

अति सुन्दर और आकर्षक होने पर भी
मज़बूत तथा क़ीमत में भी बहुत सस्ते हैं।

इसलिए

किसी भी प्रकार की सजावट के लिए
सब लोग जूट कारपेट को ही पसन्द करते हैं।

मिलने का पताः—

सभी जूट कारपेट की दुकानों में

तथा

खन्ना इन्डस्ट्रीज, बनारस सिटी
नेशनल नॉवेल्टी स्टोर, कानपुर
जेठमल भोजराज, दार्जिलिंग

और

बङ्गाल स्टोर्स, लिमिटेड

टेलीफोन नं० कलकत्ता ३१३३, नं० ८ए चौरंगी प्लेस, कलकत्ता में भिन्न-भिन्न प्रकार के मनोहर डिज़ाइन, आपकी इच्छानुसार आपकी आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं।

एजेंसी के लिए निम्न पते पर लिखें :—

टेलीफोन नं० कलकत्ता ५६५ टेलीग्राम—जूट वीवर

बिरला जूट मेनुफ़ैक्चरिंग कम्पनी लिमिटेड

नं० ८ रायल एक्सचेञ्ज प्लेस, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचयांक
फरवरी में प्रकाशित हो रहा है

यह

साहित्यिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक मासिक पत्रिका

साधना

सम्पादक
श्री सत्येन्द्र
एम० ए०

संचालक
गयाप्रसाद
एण्ड संस

साधना

का

विशेषांक होगा

इसमें

हिन्दी-साहित्य के धुरन्धर विद्वानों और लेखकों के महत्त्वपूर्ण लेख और सारगर्भित रचनायें तथा उनका पूरा परिचय दिया जायगा। इसकी पृष्ठ-संख्या साधारण अंक से चौगुनी होगी। इसका अलग से मूल्य १) है; किन्तु

३० फरवरी तक ग्राहक बननेवालों को

विशेषांक मुफ्त

यों तो हिन्दी-जगत में अनेक पत्र-पत्रिकायें हैं पर

——साधना——

ही एक ऐसी मासिक पत्रिका है जो केवल २) वार्षिक मूल्य में ही उच्चकोटि की विविध-विषय विभूषित सामग्री भेंट करती है, आप भी ग्राहक बनिए।

मनीआर्डर भेजने का पता—

साधना-कार्यालय, बाँके-विलास, आगरा

सभी प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता—गया प्रसाद एण्ड सन्स, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तरी भारत की एक देशी रियासत की चहारदिवारी के भीतर से निकलनेवाला और रियासती जनता के हक़ूकों के लिये लड़नेवाला

हिन्दी का राष्ट्रीय साप्ताहिक पत्र

प्रजा-सेवक

वार्षिक मूल्य ४) (सम्पादक—अचलेश्वरप्रसाद शर्मा) एक प्रति -)॥

इस पत्र में आप प्रति सप्ताह भिन्न-भिन्न रियासतों के ताजे समाचार, लेख, कविताएँ, कहानियाँ, चित्र, कार्टून आदि पढ़िए।

इसके अलावा अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष और देश की राजनैतिक गति-विधि के भी पूरे समाचार पढ़िए।

चूँकि यह अखबार प्रत्येक रियासत में जाता है और अपनी निर्भीक नीति के कारण दिनों-दिन इसकी ग्राहक-संख्या बढ़ती जा रही है, इसलिए यह विज्ञापन का भी एक सर्वोत्तम साधन है।

विज्ञापन की दरों और अन्य जानकारी के लिए निम्न पते से पत्र-व्यवहार करें।

पता—

मैनेजर—प्रजा-सेवक कार्यालय, गांधी बाजार, जोधपुर।

युवकोपयोगी तीन अनुपम पुस्तकें

आत्म संयम—लेखक—पं० जगपति चतुर्वेदी। यह पुस्तक कई प्रसिद्ध अंग्रेजी, संस्कृत, पाली तथा हिन्दी पुस्तकों के आधार पर लिखी गई है। संसार में अपने शत्रु पर विजय पाना उतना कठिन नहीं, जितना काम, क्रोध आदि षट्विकारों, मन तथा वासनाओं पर विजय पाना कठिन है। इस पुस्तक में अपने मन, वाणी आदि इन्द्रियों तथा वासनाओं पर अधिकार करने के सहज सरल उपाय बताये गये हैं। हिन्दी में अपने ढंग की यह एक ही पुस्तक है। मूल्य १)

देश की आन पर—लेखक—गणेश पांडेय। इस पुस्तक में देश-प्रेम और देश-भक्ति के लिए अपने सर्वस्व निछावर करनेवाले वीर-वीरांगनाओं की कहानियों का संग्रह है। प्रत्येक कहानी बहुत ही आकर्षक शैली में लिखी गई है, ओजस्वी और जोरदार भाषा में लिखीहुई कहानियाँ प्रत्येक युवक को देश-प्रेम में मतवाला बनानेवाली हैं। सुन्दर कवर से युक्त पुस्तक का मूल्य ।॥)

चरित्र-निर्माण की कहानियाँ—लेखक—श्री व्यथितहृदय। इस पुस्तक में उन कहानियों का संग्रह है, जो विद्यार्थियों और नवयुवकों के चरित्र पर अद्भुत प्रभाव डाल सकती है। चरित्र-निर्माण के लिए इससे बढ़कर उपयोगी पुस्तक नहीं मिल सकती। मूल्य ।॥)

मैनेजर—छात्र-हितकारी पुस्तकमाला, दारागंज, प्रयाग

कानपुर के सोल एजेंट-साहित्य निकेतन, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृतिक चिकित्सा

का

सचित्र मासिक

पत्र

जीवनसखा

का

विशेषाङ्क प्रकाशित

हो गया

विशेषाङ्क के कुछ लेख और उनके लेखक

औषधोपचार व्यर्थ—महात्मा गांधी
स्वास्थ्य और प्राकृतिक चिकित्सा—प्रिन्सिपल केदारनाथ गुप्त
प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास-एक प्रकृतिवादी
आधार-निदान—डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह
इन्द्रिय-निग्रह की समस्या—डा० वरनर मैकफेडेन
गांधीजी की दिनचर्या—श्री घनश्यामदास बिड़ला
योग और स्वास्थ्य—स्वामी शिवानन्द
बेवकूफी की भी हद होती है—भदन्त आनन्द कौसल्यायन
प्रकृति बनाम दवा—श्री आनन्दवर्धन
रोग और जडी-बूटियाँ—डा० एल० कामेश्वरम्
हम क्या अवश्य खायें ?—श्री महेशचन्द्र अग्रवाल
विटामिन की कहानी—डा० एस० जे० सिंह
फल और भाजियाँ—श्री जानकीशरण वर्मा
भोजन और धूप—श्रीयुत ए० विजय घोष
विद्युत-चिकित्सा—डा० दिलकश
जीर्ण रोग, उनका कारण और निवारण—श्री विट्ठलदास मोदी
बद्धकोष्ठ चिकित्सा—प्रो० भवानीप्रसाद
आँखों का सौन्दर्य कैसे सुरक्षित रहे ?—डा० आर० एस० अग्रवाल

पचास से अधिक चित्रों से सुसज्जित बृहद् विशेषाङ्क का मूल्य केवल १) है; पर यह सभी नये और पुराने ग्राहकों को मुफ्त मिलेगा। वार्षिक चंदा ३) आज ही भेजकर प्राप्त कीजिए।

मैनेजर—जीवनसखा, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महापुरुषों की महान रचनाएँ

नये संसार के निर्माण में व्यस्त प्रकृति के हाथों की झंकार हैं और उस नये संसार में रहने के लिए हमें जानना होगा कि उस झंकार में क्या है ?

और

हमारा यह दावा है कि यदि आप इस ओर से उदासीन नहीं हैं तो आप अवश्य मानते होंगे कि इस दिशा का समुचित ज्ञान प्राप्त कराने में केवल

सस्ता साहित्य मण्डल का ही प्रकाशन

आपका साथ देता रहा है

मानव-जीवन को सुखी और शान्तिमय बनाने के लिए देश-विदेश के महान-व्यक्तियों की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक (१०० से अधिक) पुस्तकों के अन्त में

प्रकाशित नयी पुस्तकें

१—**खादी-मीमांसा** : खादी पर अद्वितीय ग्रंथरत्न। मूल्य १।)

२—**मेरी मुक्ति की कहानी** : महात्मा टॉलस्टाय की जीवन-कथा और संस्मरण। मूल्य ।।)

३—**समाजवाद : पूँजीवाद** : बर्नार्ड-शॉ की एक किताब के आधार पर लिखी सुन्दर पुस्तक। मू० ।।।)

४—**विनोबा और उनके विचार** : प्रथम सत्याग्रही आचार्य विनोबा के मननीय विचार। मूल्य ।।)

५—**बापू** : घनश्यामदास बिड़ला की प्रसिद्ध पुस्तक। मू. ।।।), १) २)

६—**लड़खड़ाती दुनिया** : पंडित जवाहरलाल नेहरू के आज की दुनिया का सच्चा चित्र खींचने वाले लेख। मूल्य ।।)

[सोल एजेन्सी-प्रकाशन]

डायरी के कुछ पन्ने—श्री घनश्यामदास बिड़ला की दूसरी रोचक पुस्तक जिसमें दूसरी गोलमेज़ परिषद् के मधुर संस्मरण हैं। दाम १।।)

सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सर्कस, नई दिल्ली

शाखायें:— दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आपको हिन्दी की नई प्रवृत्ति के सम्बन्ध में जानकारी है ?

सन् १९३७
सन् १९३८
सन् १९३९
सन् १९४०
को छपी हुई हिन्दी की नवीन पुस्तकों का

वार्षिक विवरण ज्ञात है ?

क्या आप अपने पुस्तकालय को बहुत ही अपटूडेट देखना पसंद करते हैं तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी की नई-से-नई प्रवृत्ति से सान्निध्य रखना चाहते हैं

—— यदि हाँ, तो ——

हमारा नया सूचीपत्र मुफ्त मँगाकर देखने की कृपा कीजिए

हमारा यह दावा है कि हम नई से नई और उत्तम से उत्तम हिन्दी पुस्तकें अपने स्टाक में रखते हैं और अपने ग्राहकों को कभी भी किसी शिकायत का अवसर नहीं आने देते।

हमारी दो प्रवृत्तियाँ

आलोचना-जगत का एकमात्र मासिक

साहित्य-सन्देश

सम्पादक—श्री गुलाबराय एम० ए०
तथा
श्री महेन्द्र

वार्षिक ६) रु०, विद्यार्थियों से २) रु० मात्र
अभी बननेवाले ग्राहकों को उपन्यास-अंक मुफ्त मिलेगा।

समालोचनात्मक ग्रन्थों का

प्रकाशन

हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास,
साहित्य की झाँकी :: सुमित्रानंदन पंत,
गुप्तजी की कला :: प्रसादजी की कला,
तथा
साकेत : एक अध्ययन आदि

पत्र व्यवहार का पता—

साहित्य-रत्न-भण्डार, ५३ ए, सिविल लाइन्स, आगरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-साहित्य' या 'सस्ता साहित्य मण्डल' के ग्राहकों को,

पौने मूल्य में

स्वाधीनता के भाव, उच्च संस्कार, शील-प्रेरणा और स्फूर्ति के लिए

साधना-मन्दिर-प्रकाशन

श्रीयुत बनारसीदास चतुर्वेदी हिन्दी-साहित्य में अद्वितीय शब्दचित्र और जीवनी-लेखक हैं। उनकी तथा महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, दीनबन्धु एण्ड्रूज, साधु वास्वानी और भदन्त आनन्द कौसल्यायन की लिखी कृतियाँ पढ़िए और प्रचारित कीजिए।

बनारसीदास चतुर्वेदी लिखित

१ जापान के गांधी कागवा ~)
२ अराजकवादी एमा गोल्डमेन ~)
३ अराजकवादी लुई माइकेल ~)
४ अराजकवादी मैलटेस्टा ~)
५ प्रिंस क्रोपाटकिन ~)
६ महापंडित राहुल सांकृत्यायन ~)
७ अराजकवादी माइकेल बाकूनिन ~)
८ इवान तुर्गनेव ~)
९ पतिव्रता जयिनी ~)
१० श्रीमती हैरियट एलीजबेथ स्टो ~)
११ भारत भक्त दीनबन्धु एण्ड्रूज ~)
१२ स्व० देवमित्र धर्मपाल ~)
१३ मंगलमय महावीर (साधु वास्वानी) ~)
१४ स्वामी भवानीदयाल संन्यासी (राजबहादुर सिंह) ~)
१५ भगवान बुद्ध (भदन्त आनन्द कौसल्यायन) ~)
१६ बालशिक्षण और माँ-बाप (भानुकुमार जैन) ~)
१७ विप्लव-गान या क्रान्ति-गीत ~)
१८ अमर-गान भाग १ (रविन्द्रनाथ ठाकुर) ~)
१९ मेरी भावना (जुगलकिशोर मुख्तार))॥
२० पुस्तक महिमा और पुस्तकालय (लक्ष्मण त्रिपाठी))॥
२१ शान्तिनिकेतन का हिन्दी-भवन (दीनबंधु एण्ड्रूज) मुफ्त

सेठ गोविन्ददास के नाटक

१. तीन नाटक [सजिल्द, एक रंगे बढ़िया डस्ट कवर सहित] ४॥)
२. कर्त्तव्य [पौराणिक नाटक] १॥), सजिल्द १॥।)
३. हर्ष [ऐतिहासिक ना०] १।), ,, १॥)
४. प्रकाश [सामाजिक ना०] १॥, ,, १॥।)
५. स्पर्धा [एकांकी ना०] ।=)
६. सिद्धान्त-स्वातंत्र्य ॥)
७. सेवा-पथ ॥।)
८. नाटक आलोचना और उद्धरण १)
९. नाट्य-कला-मीमांसा ।)
१०. अंकुर [पद्य-संग्रह] रत्नकुमारी ॥), ,, ॥।)

अन्य पुस्तकें

११. संसार को भारत का सन्देश [अनु० लाला कन्नोमल जैन एम. ए.] १॥।)
१२. शिक्षा-मीमांसा [लेखक पं० गोपाल दामोदर तामसकर एम. ए. एल. टी.] १।), सजिल्द १॥।)
१३. औद्योगिका [ले० पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी] ॥।) सजिल्द १)
१४. रसज्ञ-रंजन [ले० महावीरप्रसाद द्विवेदी] ॥।)

प्राप्ति स्थान :—सस्ता-साहित्य-मण्डल, नई दिल्ली

शाखायें—दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमला

[महिलाओं की अपनी मासिक पत्रिका]

संपादक—श्री बाबूराम विष्णु पराड़कर

सहायक—श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी

मैनेजर, 'कमला', गायघाट, बनारस

नारी-जागरण का महान् सन्देश सुनानेवाली हिन्दी की प्रमुख सर्वोत्तम मासिक पत्रिका 'कमला' के प्रकाशन से हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं की दुनिया में एक अजीब तहलका मच गया है। हर एक उसकी गम्भीरता और उपयोगिता का कायल हो रहा है। यदि आपका विश्वास न हो तो एक प्रति मँगाकर देख लें। नमूने के लिए।=) के टिकट भेजिए। वार्षिक मूल्य ४।।) रखा है। आज ही चंदा भेजिए या नमूने मँगाइए।

विनयपत्रिका पर दैनिक 'आज' की सम्मति--

टीकाकार श्री देवनारायण द्विवेदी; प्रकाशक-भार्गव पुस्तकालय, गायघाट बनारस। पृष्ट ३८४, मूल्य ग्लेज कागज़ का २।), रफ का २)। कमीशन।) प्रति रुपया।

गोस्वामी तुलसीदास का यह पावन ग्रन्थ भक्तिरस से ओतप्रोत है। इसमें भक्ति, वैराग्य और दीनता की वह निर्झरिणी प्रवाहित होती है जिसमें निमज्जन कर हृदय निर्मल हो जाता है। इसके एक-एक पद में हमें गोस्वामीजी के भक्ति-प्रवण अन्तस्तल की झाँकी मिलती है। परन्तु भाषा की क्लिष्टता के कारण बहुत से पाठक गोस्वामीजी की इस अमर कृति के आस्वादन से वंचित रह जाते हैं। रामचरितमानस की भाषा में यह बात नहीं है। इसी से अपढ़ ग्रामीणों के मुख से भी हमें रामायण की चौपाइयां सुनने को मिल जाती हैं। पर विनयपत्रिका की भाषा कुछ क्लिष्ट है। भक्तवर बैजनाथ तथा अन्य कितने ही विद्वानों ने इसी कठिनाई को दूर करने के लिए इसकी टीकाएँ की हैं। नयी टीकाओं में श्री वियोगी हरि की टीका बहुत प्रसिद्ध है। टीका में स्थान-स्थान पर श्री वियोगी हरि की टीका की अशुद्धियों की चर्चा की गयी है। यह ठीक है कि ऐसे उत्तम ग्रन्थों को टीका की भूलें खटकती हैं, किन्तु ऐसे पावन ग्रन्थ में यत्र-तत्र किसी की अशुद्धियों की चर्चा करते जाना तो और भी खटकता है। माना कि द्विवेदीजी ने किसी असत् उद्देश्य से ऐसा नहीं किया पर इस प्रसंग को छोड़कर भी वे टीका कर सकते थे।

प्रस्तुत टीका में पहले पद दिये गये हैं। फिर क्रमशः भावार्थ, शब्दार्थ और 'विशेष', विशेष में गीता, श्रीमद्भागवत, रामचरितमानस देवीमहात्म्य से तथा सूरदास, ललित किशोरी, कालिदास आदि के तुलनात्मक पद दे देने से टीका की उपयोगिता और भी बढ़ गयी है। टीका की भाषा सरल और सुबोध है। पुस्तक संग्रहणीय है।

विवाहोपलक्ष्य में भेंट देने की महान् वस्तु क्या ?

वही स्त्री-जगत् में हलचल मचानेवाली पुस्तक

क्या आप किसी के पिता और पति हैं ?

यदि हाँ तो

भाभी के पत्र

पढ़िए और अपनी स्त्री तथा कन्याओं को पढ़ाइए,

भूमिका-लेखक—कृष्णदेवप्रसाद गौड़ 'बेढब' बनारसी   लेखक—श्री व्यथित हृदय

मूल्य सजिल्द १।)

पता—भार्गव पुस्तकालय, गायघाट, ब्रांच, चौक, कचौड़ी गली, बनारस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्रेड मार्क

तारा छाप कागज़

स्वदेशी

सस्ता

सुन्दर

टिकाऊ

भारतीय मूलधन, प्रबन्ध
परिश्रम का
ध्यान रखते हुए सदा
स्टार पेपर मिल का कागज़ व्यवहार करें

एजेन्ट—

बिहारीलाल मदनलाल जयपुरिया

श्री महालक्ष्मी मारकेट

फोन नं० ६६३५ : : इम्पीरियल बैंक के पास दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Regd No L4671

पंडित जवाहरलाल नेहरू
की
नवीन चमत्कारपूर्ण रचना

हिंदुस्तान की कहानी

सस्ता साहित्य मण्डल
नई दिल्ली

मार्तण्ड उपाध्याय द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नई दिल्ली, में छपकर वहींसे मार्तण्ड उपाध्याय मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

तमसो मा ज्योतिर्गमय
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन साहित्य

वर्ष १ : अंक ८ सम्पादक मार्च : १९४१
हरिभाऊ उपाध्याय

लेखकों का सवाल

"हम दया चाहते हैं ? दया भी मिल जायगी, अगर हम काफ़ी दयनीय बनें। लेकिन हमें हिम्मत के साथ कहना चाहिए कि दया हमें नहीं चाहिए। क्योंकि दया और दयनीय का सम्बन्ध दो आदमियों के बीच अप्राकृतिक सम्बन्ध है और अगर दया नहीं चाहिए तो हम दयनीय न बनें। आर्थिक दैन्य इसीसे बुरा है कि वह व्यक्ति में आत्मिक दैन्य लाता, उसे दयनीय बनाता है। लेकिन अर्थ-मुक्ति संत की शक्ति और अपरिग्रह ब्राह्मण की शोभा है। कौन कहता है कि निर्धन होकर व्यक्ति गौरवशाली नहीं हो सकता ? बल्कि सच्चे गौरव का मार्ग स्वेच्छित निर्धनता के सिवा दूसरा है ही नहीं। अतः धन न हो, पर लेखक उस कारण दयनीय न बने। कर्तव्य पर जोर इसलिए है कि लेखक पहले मानसिक दैन्य से छूटे, प्रकृति की ओर से वह अधिकारी बने। प्रकृत अधिकार कर्तव्य-पालन के सिवाय और किसी राह नहीं आता। कर्तव्य-पालन से इधर-उधर हट कर शोर-संगठन से अगर क़ानूनी अधिकार कुछ पा भी लिया जा सकता हो तो प्रकृत शक्ति के अभाव में वह बेकार ही रहता है, उस क़ानूनी सुविधा से लाभ लेने वाले भी दूसरे निकल आते हैं।"

जैनेन्द्रकुमार

प्रकाशक
सस्ता साहित्य मण्डल
कनाट सर्कस नई दिल्ली
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

१. निर्वाण-भिक्षा (कविता) — ३२१
[साहित्याचार्य्य सत्यव्रत 'सुजन' एम. ए.]

२. 'बापू' और मेरी कुछ शंकायें— ३२२
[डॉक्टर भगवान्दास]

३. अश्लीलता का आरंभस्थान— ३२८
[श्री किशोरलाल मश्रुवाला]

४. हमारा दोष भी भूषण है— ३३०
[आचार्य विनोबा]

५. स्वर्गीय पं० रामचन्द्र शुक्ल— ३३१
[डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल एम. ए. डी. लिट्.]

६ तरुण से—[वियोगी हरि] ३३४

७. सौष्ठव-पूजा[प्रभाकर माचवे, एम. ए.] ३३६

८. एक पत्र—देवराज उपाध्याय एम. ए.] ३३८

९. जीवन का उषाकाल—[प्रभुदास गांधी] ३४१

१०. पूना-सम्मेलन के अनुभव— ३४३
[भानुकुमार जैन]

११. मक़बरे—[शादीराम जोशी, एम. ए.] ३४५

१२. प्रस्तुत प्रश्न— ३४[illegible]
जीवन-साहित्य में समालोचना का स्थान (मोहनचन्द्र जोशी, एम. ए.); उलझन (सिद्धराज ढड्ढा); नामोपार्जन की लालसा (कन्हैयालाल भिण्डा 'शान्तेश')

१३. कसौटी पर— ३५०
लड़खड़ाती दुनिया; बुलबुल; सेवापथ; प्राणदान; मानव; साहित्य-सदन अबोहर के प्रकाशन

१४. जीवन-समस्यायें— ३५[illegible]

१५. सहयोगियों में से— ३५[illegible]

१६. हिन्दी की हलचलें— ३५[illegible]

१७. सैर-सपाटा— ३५[illegible]

१८. क्या और कैसे ? [सम्पादकीय] ३५[illegible]
लेखक व 'मण्डल'; हमारी प्राचीन राष्ट्र-भाषा; नवीन हिन्दू धर्म; अभी देर है; 'विश्ववाणी'; स्व० आचार्य शुक्लजी!

१९. मण्डल की ओर से— ३६[illegible]

कुछ अनमोल अंग्रेज़ी पुस्तकें

My Experiments with Truth	(Gandhiji)	4	0	0
Hind Swaraj	,,	0	4	0
Self restraint *Vs.* Self-Indulgence	,,	2	0	0
To the Students	,,	2	0	0
Cent per cent Swadeshi	,,	1	8	0
Satyagraha in South Africa	,,	4	8	0
From Yervada Mandir	,,	0	2	0
Bleeding wound	,,	0	12	0
Bhagavad-Gita	(C. R.)	0	6	0
Upanishad	,,	0	6	0
The Power of Non violence	(R. B. Gregg)	2	0	0
An Autobiography	(Jawaharlal Nehru)	5	4	0
Glimpses of World History	,,	6	0	0
Letters from a father to his daughter	,,	0	8	0
History of the Congress	P. Sitaramayya	2	8	0
Home and Village Doctor	Satish C. Dass Gupta	5	0	0

मँगाइए—

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

शाखायें : दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१००० सज्जनों को 'जीवन-साहित्य'

आधे मूल्य में

'जीवन-साहित्य' तथा मण्डल के वर्तमान ग्राहकों की सिफ़ारिश पर

प्रिय ग्राहक बन्धु,

'जीवन-साहित्य' की महत्ता एवं उपयोगिता को समझकर आपमें से अनेक बन्धुओं ने कई बार अपने मित्रों, साथियों या परिचित संस्थाओं के लिए चाहा कि हम 'जीवन-साहित्य' उनको आधे मूल्य में दें। अतः हमने तय किया है कि आगामी २ महीने के अन्दर आप जिन-जिन लोगों की सिफ़ारिश करेंगे उनको 'जीवन साहित्य' १) वार्षिक में दिया जायगा। उसके लिए निम्न नियमों को ध्यान रखना आवश्यक होगा।

१—इस पत्र के दूसरी ओर छपा फार्म भरकर भेजना होगा।

२—ग्राहकों का मूल्य इस आर्डर फार्म के साथ ही पोस्टल सार्टिफिकेट या डाक के टिकटों के रूप में आना चाहिए।

३—प्रत्येक ग्राहक चार सज्जनों से अधिक की सिफ़ारिश नहीं कर सकेंगे।

४—इन ग्राहकों के रुपये हर हालत में पेशगी आनी चाहिएँ। वी. पी. से अंक नहीं भेजा जायगा।

५—ऐसे ग्राहकों को मण्डल के स्थायी ग्राहकों अथवा 'जीवन-साहित्य' के साधारण ग्राहकों को मिलनेवाली पुस्तकों पर कमीशन-संबंधी रियायत नहीं मिल सकेगी।

६—अप्रैल के अन्त तक यह संख्या पूरी हो जानी चाहिए। पर अगर इससे पहले यह पूरी हो गयी तो १००० से ज्यादा ग्राहक १) में नहीं बनाये जावेंगे। अतः हर हालत में दो महीने तक ठहरना नहीं चाहिए। शीघ्रता करें।

भवदीय

मार्तण्ड उपाध्याय

मन्त्री

सस्ता साहित्य मण्डल

यहाँ से काटकर भेजिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पत्र भरकर भेजिए

जी० सा० ग्राहक-संख्या
मण्डल
(यहाँ अपनी ग्राहक सं० लिखें)

स्थान ______________

ता० ______________

आपकी सूचना पढ़ी। ठीक है। मैं अपने निम्न ४ मित्रों के नाम और पते लिखता हूँ और इनके ४) पोस्टल सार्टिफिकेट / डाक के टिकिटों या मनीआर्डर से भिजवा रहा हूँ। आप इनको ...... अंक से १ वर्ष के लिए जी० सा० का ग्राहक बना लें।

भवदीय

नाम ______________

पूरा पता ______________

____

____

मित्रों के नाम

(१) ______________
____
____
____

(३) ______________
____
____
____

(२) ______________
____
____
____

(४) ______________
____
____
____

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-साहित्य

असतो मा सद्गमय ; तमसो मा ज्योतिर्गमय ; मृत्योर्माऽमृतंगमय ।

मार्च, १९४१ | सम्पादक | वर्ष पहला
नई दिल्ली | **हरिभाऊ उपाध्याय** | **अंक आठवाँ**

निर्वाण-भिक्षा

खो गया मैं डगर में ही, रह गया अन्वेष प्रीतम !
द्वीप मैं जल से रहा घिर
उच्च तो भी गर्व से सिर,
यों जलधि उमड़े कि मेरा चिह्न हो निःशेष प्रीतम !
भ्रान्त मैं, घूर्णित बवंडर
परिधि अपनी बाँध, बँधकर,
हे महामारुत ! उठो, मैं मिल बहूँ अनिमेष प्रीतम !
जीत मैं, चढ़ अमर-मन्दिर
आज उल्का-सा रहा गिर,
किन्तु गिरते भी चलूँ दे ओज का उन्मेष प्रीतम !
दीप हूँ मैं मृत्तिका का
एक युग से टिमटिमाता,
ज्योतिमय, तुममें बुझूँ, बस एक कण्ठश्लेष प्रीतम !

सत्यव्रत 'सुजन'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बापू' और मेरी कुछ शङ्कायें

[डॉ० भगवान्दास]

श्री घनश्यामदासजी बिड़ला

नमस्कार

कल रात आपकी लिखी पुस्तक समाप्त की। एक-एक अक्षर पढ़ा—जिस दिन मिली (प्रायः तीन महीने हुए), उसी दिन कुछ पत्र पढ़े—बहुत रोचक जान पड़ी—छोड़ने का जी नहीं चाहता था—पर अन्य आवश्यक कार्य आकर विघ्न करते रहे हैं—आपाततः पन्ने उलटने से तृप्ति नहीं--अक्षर-अक्षर पढ़ने को जी चाहता था—ऐसे ही पढ़ा। प्रत्येक पृष्ठ पर लाल पेंसिल से कई-कई निशान बनाता जाता था, इसीसे समाप्त करने मे इतना विलम्ब हो गया। अवकाश मिलने पर फिर भी पढ़ने का विचार है।

गांधीजी ऐसे उत्तमोत्तम अलौकिक चरित-नायक ही से कथा सुन्दर हो जाती है—जैसे रामजी की कथा। फिर जब चरित का निरूपण करनेवाला भी सब प्रकार से योग्य मिले तब क्या कहना, सोने मे सुगन्ध। चित्रण के विषय जैसे मनोग्राही हैं, वैसी ही आपकी भाषा भी सुन्दर है। गांधीजी का रूप सामने आ जाता है। पच्चीस वर्ष का घनिष्ठ परिचय; बहुत सहवास, गांधीजी के आश्रमों मे, वा नगर-नगर के आपके ही गृहों मे; गौरवशाली, दूरगामी, व्यापक फल-वाले भी, और साधारण भी, राजनीतिक कार्यों मे चरित-नायक का निकटतम संग-साथ; उनके कुटुम्बभूत आश्रमो से और आश्रमवासियों से पूरा परिचय; महात्माजी के लिए, चिर-परिचय से उत्पन्न हार्दिक श्रद्धा-भक्ति—वह भी अन्ध-श्रद्धा नहीं, बहुत समय तक नितान्त छिद्रान्वेषण में विफल होकर, विवेकपूर्ण; सांसारिक व्यवहार में अतिसाधारण दक्षता—यह सब योग्यता जब लेखक मे हो, जैसी आपमें है, तब क्यों न ग्रन्थ बहुत उपयोगी, बहुत रोचक, तथ्य-प्रदर्शक, शिक्षाप्रद भी हो। आपमे, जैसा स्वाभाविक व्यवहार का कौशल है, वैसी ही स्वाभाविक उत्तम साहित्य के निर्माण की शक्ति भी है, यह मुझे पहले विदित नहीं था; इस ग्रन्थ की रचना से प्रमाणित हुआ। इसमे, अपने-अपने स्थान पर ललित हास्य रस भी मिलता है—यथा गांधीजी की 'कंजूसियों' के वर्णन मे; पर उसमे जो हँसी आती है वह अपहास नहीं, प्रीतिहास है; उससे भी गांधीजी के लिए, पाठक के मन मे स्नेहमय भक्ति ही बढ़ती है। एवं बहुत कोमल करुण रस भी है, यथा एक मरणासन्न स्त्री की, महात्माजी को एक बेर देख लेने की इच्छा को पूरा करने के लिए, बहुत कष्ट उठाकर भी महात्माजी का उसके पास जाना। महात्माजी की धर्म-वीरता का और भीष्म-प्रतिज्ञाओं के पालन का, अन-शन आदि तपस्या का वीर रस तो पृष्ठ-पृष्ठ पर देख पड़ता है; उपमा स्थान-स्थान पर बड़ी रोचक और हृदयग्राही दी गयी है; आचार-नीति और राजनीति के प्रश्नों का विचार भी भरा हुआ है; दोनों का समन्वय महात्माजी किस रीति से करते हैं, इसका बहुत अच्छा निरूपण किया है। स्थान-स्थान पर संस्कृत के श्लोक और योग के सूत्र और संयुक्त प्रान्त की तथा राज-पूताना की हिन्दी के दोहे आदि, बड़े मौक़े से, ठीक स्थल पर, रखकर, प्रसंग और आशय उज्ज्वल कर दिया गया है, और उन संस्कृत आदि वाक्यों का जीवद् भाष्य, महात्माजी के चरित के उदाहरण से, कर दिया गया है।

आपने, इस ग्रन्थ से, हिन्दी-साहित्य-भांडार को एक उत्तम रत्न समर्पण किया है।

कुछ और लिखना आवश्यक है। जिस वाक्य से आपने ग्रन्थ समाप्त किया है, "को जाने कल की", उसीसे इस शेष वक्तव्य का आरम्भ करता हूँ। यदि गांधीजी का अति उदार, अति सात्त्विक, अति अथक, अति तपोमय महाप्रयास सफल हो गया (और भारत-माता का प्रत्येक सच्चा सन्तान हृदय से मानता है कि सफल हो जाय) तब तो युग-युग तक महात्माजी, न केवल भारत मे अपितु समस्त मानव संसार मे, 'अवतार' कर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के माने जायँगे। अन्यथा, यदि सफलता मे त्रुटि हुई, अधूरी, कच्ची रही तो उनके भीतर ही कोई प्रतिबन्ध रहा, ऐसा पीछे आनेवाले इतिहास-लेखक को मानना पड़ेगा। जब उनका कोई विशेष प्रयास सफल नहीं होता, तब वे स्वयं भी कह दिया करते हैं कि मेरे मे ही कोई त्रुटि रही; पर उनका आशय प्रायः तपस्या और सद्भाव की शुद्धि की त्रुटि से रहता है। इतिहास-लेखक, स्यात्, विचार मे त्रुटि, कार्यक्रम के संकल्पन-संचालन प्रतिपादन मे न्यूनता को विफलता का हेतु बतावेगा।

मेरे ऐसे तपोहीन, क्षुद्रबुद्धि से पुरानी पोथियों के वाक्यों का ही अर्थ लगानेवाले, किन्तु,

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति,
भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया",

इसको जैसा स्वयं साक्षात् महात्माजी मानते हैं, उतना ही अथवा उससे भी अधिक व्यापक अर्थ मे माननेवाले, जीव को, महात्माजी के परम प्रभावशाली प्रयोगों मे, एक भारी न्यूनता आज बीस-बरस से जान पड़ती रही है; जिसीसे, मेरी रजस से दूषित, अस्वच्छ दृष्टि में कांग्रेस के प्रयत्न, पुनः पुनः बहुत वेग से आगे बढ़कर, पुनः पुनः रुक जाते हैं। यह तो नहीं कह सकते कि फिर पुरानी अवस्था को लौट जाते हैं; पर, हाँ, यह कहना पड़ता है, कि सारी अवस्था संशयित हो जाती है; और कभी-कभी तो, पुरानी अवस्था से भी अधिक नीची अवस्था मे गिर जाने का भय होने लगता है। मेरा आशय, इस विषय मे, जो है, वह प्रायः आपको विदित ही है। हिन्दी-अंग्रेज़ी पत्रों मे बीस वर्ष से निरन्तर लिखता ही रहा हूँ।

आपने स्वयं, मृदु शब्दों मे, इस त्रुटि का संकेत किया है। "निर्णय पहिले करते हैं और दलील पीछे उपजाते हैं; तर्क कुछ लूला-सा लगता है", "उनकी दलील निर्णय के बाद बनती है, इसलिए पंगु-जैसी लगती है" (पृष्ठ १४३–१४५)। ऐसे वाक्य आपने पुनः पुनः पुस्तक के अन्तिम भाग मे लिखे हैं; और अपनी ही शंका का समाधान भी आपने पुनः पुनः किया है। पर शंका रही जाती है। जैसे ऊपर कहा, इस शंका का समाधान भविष्य ही करेगा। यह आशा तो अवश्य है कि महात्माजी ने, जैसा, मैत्री आदि की भावना से, अपने चित्त का, अपने हृदय का अत्यन्त मार्जन और प्रसादन किया है, **"मैत्री करुणा मुदितोपेक्षाणां पुण्याऽपुण्य सुख दुःख विषयेषु भावनातः चित्तप्रसादं"** (योग-सूत्र), तो परमात्मा उनके लिए उस सूत्र को भी सिद्ध कर देगा, जिसका आपने उद्धरण किया है—**"सत्यप्रतिष्ठायां क्रिया फलाश्रयत्वम्"** पर यह भी देख पड़ता है, कि महात्माजी ने ही सत्य के साथ असत्य को मिला रखा है, अहिंसा के साथ हिंसा को; नहीं तो उसी की 'महामाया' देवी का संसार-कार्य बंद हो जाय। महामहर्षियों, पूर्ण कहलानेवाले अवतारों के भी संकल्प सब सरोतर पूर्ण नहीं हुए। शरीरधारी अवतार भी निर्दोष नहीं हो सकता। अथ च, अवतारों को भी क्षुद्रतर सेवकों का, सहायकों का, भय-स्थानों की चेतावनी देनेवालों का, बनकटी करनेवालों का, प्रयोजन होता ही है। रामजी ने तो वानरों से सहायता ली। इसलिए तपः-शून्य, अन्तःप्रकाश शून्य, अतः शक्तिहीन हृदयवाले, पर यथाकथंचित् मानव-समाज की क्षुद्र सेवा करने की इच्छा रखनेवाले, मेरे ऐसे जीव को, जो महात्माजी के प्रयोग-क्रम मे न्यूनता जान पड़ी, उसकी सूचना उनको तथा जनता को देते रहना, कर्त्तव्य धर्म समझ पड़ा; इसलिए ऐसा करता रहा। वह आपको विदित ही है।

यह पुनः कहता रहता हूँ, और फिर से कहता हूँ, कि गांधीजी के प्रयोग में 'दोष' नहीं, केवल 'न्यूनता' है। जो किया गया, वा किया जा रहा है, वह तो उत्तम ही था, और है; पर उसके साथ-साथ कुछ और भी करने की नितान्त आवश्यकता है—इतना ही वक्तव्य है।

गीता मे, कृष्ण ने, **"अभयं सत्त्वसंशुद्धिः"** और **"ज्ञानयोगव्यवस्थितिः,"** दोनो की आवश्यकता दिखायी है। देवी भागवत मे कहा है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूल प्रकृतिरूपिण्याः संविदो, जगदुद्भवे,
प्रादुर्भूतं शक्तियुग्मं, प्राण-बुद्धि-अधिदैवतं ।

प्राण भी चाहिए, बुद्धि भी चाहिए। मनु ने कहा है, **तपो, विद्याच, विप्रस्य निःश्रेयसकरं परं ।**

इसको यदि यों पढ़ें,

तपो, विद्याच, लोकस्य सर्वश्रेयस्करं परं ।

तो और भी अधिक समयोपयोगी हो। तप भी हो, समाज-व्यवस्था करनेवाली विद्या भी हो, तभी सबका सब प्रकार का कल्याण हो सकता है।

जैसा आपने लिखा है, जैसा समस्त मानव जगत् देख रहा है, गांधीजी ने भारत के मुमूर्षु शरीर मे नये 'प्राण' का संचार कर दिया है। पर 'बुद्धि' का, उत्तम समाज-व्यवस्था को साधनेवाली विद्या का, वैसा नया संचार नहीं किया है। इसी से तरह-तरह का भय है। उनका कहना है, कि हृदय शुद्ध होने से ज्ञान भी आप से आप हो जायगा। किन्तु प्राचीन ऋषियों का ऐसा मत नहीं है। दोनों की शिक्षा साथ-साथ होनी चाहिए। किसी भी बच्चे को, कोई भी माता, पिता, आचार्य, केवल सदाचार की शिक्षा नहीं देते। साथ-ही-साथ सद्विद्या का भी आरम्भ कर देते हैं। आपने स्वयं पुनः पुनः लिखा है कि महात्माजी 'स्वराज' का अर्थ और रूप दूसरा समझते हैं, उनके अनुयायी दूसरा; 'आज़ादी' का वे दूसरा, अनुयायी दूसरा; 'कांस्टिटचुएंट असेम्बली' शब्द के अर्थ का भी शायद यही हाल है; आत्यंतिक अहिंसावाद के विषय मे, द्वितीय हृदय जैसे उनके अन्तरंग, श्री राजगोपालाचारी से भी उनका मतभेद हो गया (पृ० १६८-१७६)। अधिनायक मे एक ओर, अवान्तर नायकों मे और साधारण योधाओं मे दूसरी ओर, इस प्रकार से बुद्धि का असौम्य, वैषम्य, ज्ञान और विचार का भेद—यह कांग्रेस के और भारत के लक्ष्य की सिद्धि के मार्ग मे बड़े भय का स्थान है। मेरे ऐसे दुर्बल-दृष्टिवाले को ऐसा सूझ पड़ता है। इसी भयस्थान की सूचना, और "मनु" के कहे, परम 'स्वदेशीय' 'स्वराजीय' प्रकार से, उस भयस्थान के बचाने के उपाय की सूचना, केवल सेवाबुद्धि से, आज बीस वर्ष से, मैं कर रहा हूँ।

देशव्यापी अभय का संचार भी चाहिए, तो देशव्यापी ज्ञान के योग की भी प्राप्य लक्ष्य के ठीक स्वरूप के ज्ञान-सहित-प्रयोगरूपिणी दूरदर्शिता की भी, साथ ही साथ आवश्यकता है। देशव्यापी नया प्राण भी चाहिए, तो देशव्यापिनी नयी (अर्थात् पुनर्नवीकृत अति प्राचीन) बुद्धि भी चाहिए। देशव्यापी तपस् भी चाहिए, तो देशव्यापिनी, स्वराज के सच्चे रूप की, (उत्तम परमार्थी 'स्व' के राज की, न कि अधम स्वार्थी 'स्व' के राज की), विद्या भी चाहिए। एक बार, काशी मे, ९ जनवरी, सन् १९२७ को, गांधीजी से, इस विषय पर, मुझे प्रायः १ घंटे से अधिक, प्रश्नोत्तर रूप मे, आलाप करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उस समय, उन्होंने ऊपर कही, 'स्वराज' की व्याख्या को विस्पष्ट स्वीकार किया था। पर इस व्याख्या का, देश में, चर्खा और खादी के ऐसा, प्रचार करने से इन्कार किया था। जो हेतु इस इन्कार के लिए उन्होंने बताये, वह आज तक मेरी समझ मे नहीं आये। यह प्रश्नोत्तरी काशी के 'आज' पत्र मे, १९ फरवरी सन् १९२७ के अंक मे, महात्माजी से परिशोधन करा लेने के बाद, छपी है।

निष्कर्ष यह कि, 'स्वराज', 'पूर्ण स्वतन्त्रता', 'अहिंसा', 'सत्य', 'सत्याग्रह', आदि शब्दों की आवश्यक व्याख्याओं का अभाव, और 'एकान्त-वाद' और 'अत्यन्तवाद' का भाव—इन दो कारणों से, स्वयं गांधीजी के वाक्यों और कार्यों मे असंगति है, और उनके और अनुयायियों के भावों और समझों मे भेद होता रहता है; जिसी से कांग्रेस का कार्य बन-बनकर बिगड़-बिगड़ जाता है, और फिर-फिर बनाना पड़ता है—जैसे बिना 'सिमेंट' के बालू का मकान। 'अभय', 'श्रद्धा', 'देशभक्ति', 'तपस्या', 'आत्मबलि'—ये सब बालू और ईंट हैं; लक्ष्यभूत 'स्वराज' के सच्चे रूप का ज्ञान 'सिमेंट' है। केवल जोश से,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम नहीं बनेगा; होश भी परमावश्यक है। और आत्यन्तिकता, ऐकान्तिकता सृष्टि में है ही नहीं; जिसने इसे बनाया, उसीने 'द्वं-द्व'-मयी बनाया; 'एक'-मयी उससे भी बन ही न सकी। आपने ही लिखा है कि गांधीजी स्वयं मानते हैं, जैसा भागवत मे कहा है, कि "जीवो जीवस्य जीवनं"। मुझे याद है, काशी में ३० नवम्बर, १९२० को, सेंट्रल हिन्दू कालेज के पास एक मैदान मे, असहयोग सत्याग्रह के आरंभ के लिए, महात्माजी ने सार्वजनिक सभा को, व्याख्यान द्वारा, उपदेश दिया; उसमे उन्होंने कहा कि यदि कोई ठीक-ठीक 'सत्य' कहना चाहे तो उसे 'मौन' रहना पड़ेगा। यही ऋषि-सम्मत है; 'अहिंसा' भी, 'सत्य' भी, सापेक्ष होते हैं। यह सब बात भी जनता को समझाते ही रहना चाहिए। प्राचीन ग्रन्थों के परिशीलन से सबका समन्वय सहज में हो जाता है। निरपराध को पीड़ा देना, 'हिंसा' है; ऐसी 'हिंसा' न करना 'अहिंसा' है; अपराधी को न्याय-प्राप्त, उचित मात्रा मे, उचित रूप में पीड़ा देना 'हिंसा' नहीं है, 'दण्ड' है, जो 'कर्त्तव्यधर्म' है; भारत की वर्त्तमान अवस्था मे, राजनीतिक संघर्ष मे, भारत-जनता का, 'निरुपद्रव' और 'शान्त' प्रतिरोध ही, वर्त्तमान शासन के रूप को बदलने के लिए, परम कर्त्तव्य है। हाँ, सन्यासी के लिए जीवन के सभी व्यवहारों मे, आत्मत्राण के वास्ते भी, व्याघ्र, सर्प आदि का भी हनन अधर्म है, उनका त्राण, 'योधा', 'क्षत्रिय', राजाधिकारी', 'दण्डधर' का कर्त्तव्य है। इसी हेतु से, परशुराम के पिता जमदग्नि के मामा, महर्षि विश्वामित्र ने, सर्व अस्त्र-शस्त्रों के परम वेत्ता परम प्रयोक्ता होकर भी, रावण के मामा मारीच, सुबाहु आदि राक्षसों के निवारण के लिए, राम लक्ष्मण को दशरथजी से माँगा; दशरथ के पूछने पर, कि आप स्वयं सर्वसमर्थ होकर क्यों नहीं इन राक्षसों का हनन कर देते, तो उन्होंने उत्तर दिया, "न्यस्तदण्डा वयं विभो", हमने तो राज्य का, दण्डधरत्व का, दण्ड का, सन्यास कर दिया है राम-लक्ष्मण के द्वारा ही यह सब राक्षसों के निवारण का कार्य होना है, उन्हीको सब अस्त्र-शस्त्र की विद्या दूँगा। यदि 'एकान्तवाद' का असत्याग्रह न किया जाय, तो वाक्यों और कार्यों मे असंगति न हो। 'गर्म कपड़ा न पहनो'—जाड़े मे; 'ढंडा कपड़ा पहनो'—गर्मी मे; कोई असंगति नहीं। 'परम अहिंसा-भाव से लड़ाई'—भारत के वर्त्तमान शासन से; 'दण्डरूपिणी हिंसा'—आत्म-रक्षणार्थ, अन्य अवस्थाओं मे; कोई असंगति नहीं। श्री महादेव देसाई ने, आपकी पुस्तक के 'आदि वचन' मे, जो सेवाग्राम पर पागल शृगाल के आक्रमण की कथा लिखी है, और किस तरह गांधीजी से बाजाबिता बाक़ायदा इजाज़त लेकर तब उस बेचारे दयापात्र सियार की हिंसा हत्या, नितरां अकारुण्य से (!) की गयी है, उससे महात्माजी के कोमल चित्तवाले अनुयायियों को घोर विचार उत्पन्न होगा, और बलवान चित्तवाले अनुयायियों को (जैसे श्री कृपलानीजी को) प्रबल हँसी आवेगी।

जिस तरह आपने महात्माजी के अन्य विचारों, भावों, चरितों की समीक्षा-परीक्षा की है, उसी तरह, आपने यदि उनकी लिखी 'हिन्द-स्वराज' पुस्तिका के भावों और विचारों पर, और वर्त्तमान समय मे उनकी उपयोगिता पर, अपने विचार प्रकट किये होते, तो पुस्तक अधिक रुचिकर और उपयोगी हो जाती। एक ही स्थान पर, केवल अस्पतालों ही के सम्बन्ध मे, उसका नाम-ग्रहण मात्र आपने कर दिया है। ग्रन्थ मे, कितने ही स्थानों पर, कोमल शब्दों की ओट मे, यह तो संकेत आपने कर ही दिया है, कि गांधीजी के सभी विचार और भाव समयोपयोगी नहीं हैं; किन्तु इनपर सब जनता के समक्ष, उसकी बुद्धि की वृद्धि और राजनीति की शिक्षा के लिए, विस्पष्ट विचार होना आवश्यक है। आप भी जानते हैं, कि गांधीजी के घनिष्ठ अनुयायियों मे से एक भी, उनके इन 'अति-वादों' से सहमत नहीं है; और साधारण जनता तो चक्कर मे पड़ी ही रहती है; यद्यपि उनकी तपस्या, त्याग, निस्स्वार्थता, हृदय-शुद्धि के हेतु से, उनके प्रयोगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को, परम श्रद्धा से, अनुयायी जन अपनाते हैं, और उनसे देश में बड़ी प्रगति, एक प्रकार की, हुई है; यद्यपि उसमें भारी भयस्थान, नेता और नीत मे भावैक्य होते हुए भी, बुद्धि के अनैक्य के कारण उत्पन्न हो रहे हैं।

जैसा, महात्माजी नें, 'हिन्द-स्वराज' ग्रन्थ मे लिखा है, क्या आप उससे सहमत हैं कि, रेल, तार, डाक, सभी यंत्र, छापाखाना और छपी पुस्तक भी, घड़ी, मोटरकार, कला की वस्तु, स्फटिक (संगमरमर) के प्रासाद, मन्दिर, बाजे, चिकित्साशास्त्र, चित्र, सौगन्धिक वस्तु, हिंस्र पशुओं के निराकरण के लिए तलवार, बन्दूक आदि, बाइसिकिल, मोटरकार आदि, यहाँ तक कि लम्प, लालटेन का भी, और बिजली, गैस, आदि का हो तो अवश्य ही, तथा निजी सम्पत्ति, सभी का, पृथ्वी से लोप कर दिया जाय और केवल ग्राम-जीवन, और सूर्यदेव ही के साथ जागना, सोना, रह जाय ? 'स्वराज' के रूप का, अभी से ही, स्पष्टीकरण यदि न कर दिया जाय तो पीछे, ऐसी बातों पर, घोर मतभेद होकर, महा उत्पात, भयंकर उपद्रव इस देश मे उत्पन्न होंगे; जैसे योरप मे इस समय उत्पन्न हो गये हैं, जैसे-जैसे स्पेन से दो तीन वर्ष तक, जन-धन-संहारकारक, गृह- कलह हुआ।

यदि आर्ष, अति प्राचीन, अति स्वदेशी, आध्यात्मिक तत्वों से, और वर्ण-आश्रम-धर्म के सच्चे उसूलों से, परस्पर परामर्श और निर्णय करके काम लिया जाय, तो यह सब उलझनें सहज में दूर हो जायं।

"तस्माद् विद्वान् भवति नाऽतिवादी" (उपनिषत्)
"आश्रयेन् मध्यमां वृत्तिं; अति सर्वत्र वर्जयेत्।"
बीच का रास्ता पकड़ो; अति मत करो; तो रेल, तार, कल-कारखाने, निजी सम्पत्तियाँ, सभी वस्तु उपयोगी, मानव-जाति का सुख बढ़ानेवाली होंगी। अन्यथा ग्राम-जीवन ही पर क्यों सन्तोष किया जाय; जंगली मनुष्यों की सी और अधिक सादगी क्यों न अपनायी जाय; वा वन्य पशुवत्, वा वृक्षवत्, वा पाषाणवत् जीवन क्यों नहीं; वा प्रलय की महाशान्ति ही क्यों नहीं ? 'रामराज' महात्माजी का प्रिय है; तो वाल्मीकि रामायण में अयोध्या नगरी का वर्णन पढ़िए; क्या वह ग्रामजीवन ही था ? रावण की लंका जैसी ही वह नगरी विशाल, समृद्ध, सम्पन्न, प्रासादमयी, यंत्रमयी थी; पर हाँ, वहाँ राक्षसी हिंस्र भाव नहीं था; सब जीवन मर्यादित था।

"देश-काल-निमित्तानां भेदैः धर्मो विभिद्यते।"

भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के लिए धर्म भिन्न होते हैं। विविध वर्ण-धर्मों और आश्रम-धर्मो मे, गांधीजी के भावों के लिए भी, वनस्थ और संन्यास आश्रमो मे, साधारण जनता के भावों का; नियमन नियंत्रण के साथ। दंड-रूपिणी हिंसा के लिए, गृहस्थ धर्म और क्षात्र धर्म मे; ऐकांतिक अहिंसा के लिए, वनस्थ और संन्यास धर्म मे; और उससे घटकर, ब्राह्मण धर्म मे; इत्यादि। इस समय 'पोलिटिकल सन्यासियों' को ही सत्याग्रह मे जाना चाहिए, यह विचार जो गांधीजी ने अब अपनाया है, वह सर्वथा न्याय-संगत, आर्ष सिद्धान्तसंमत है। पर इसको तरह-तरह से, साधारण जनता को समझाते रहना चाहिए। मुसलमानो के लिए 'सयासती फ़क़ीर' और हिन्दुओं के लिए 'राजनीतिक संन्यासी', ऐसे शब्दों का प्रयोग करके कहना चाहिए कि, इस महाप्रयत्न के लिए ऐसे ही आदमी चाहिएँ, जो 'दुनियबी ख़ाहिशों, ख़ुदग़र्ज़ियों, हिर्सों, हवसों' को, दिल से तर्क कर चुके हों, 'जो सांसारिक स्वार्थों, व्यावहारिक वासनाओं, इच्छाओं, लोभों को मन से, चित्त से, हटा चुके हों, देश की स्वतंत्रता, स्वाधीनता, स्वराज के लिए, और उस स्वराज का स्वरूप ऐसा ऐसा होगा।

एक और बात विचारने की है, 'हिन्दू-मुस्लिम एका करो', 'छूत-अछूत-भेद छोड़ो' ऐसा गांधीजी के निरंतर पुकारते रहने पर भी हिन्दू-मुस्लिम-वैमनस्य ही बढ़ा; अछूतपन की जड़ नहीं कटी; हिन्दुओं की जात-पाँत का भेद वैसा ही बना है; खादी भी स्वयं बद्धमूल नहीं हुई, कांग्रेस के बल से ही चल रही है; कांग्रेस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के भीतर, व्यक्तियों मे, कमेटियों मे भी एका नहीं है, प्रत्युत परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, पदलोलुपता, प्रत्यक्ष झगड़े बहुत हैं; इस सबका क्या कारण है? महात्माजी की तपस्या के सफल होने में क्या प्रतिबन्धक है? यह सोचने, विचारने, प्रकाश करने की बात है। मै इस विषय मे अपना मत तो पचासों सैकड़ों, बार प्रकाशित कर चुका हूँ।

आपसे भी मेरी सूचना है कि आप इन विषयों पर, गांधीजी के विचार और अपने विचार विस्तार से, पुस्तक की दूसरी जिल्द के रूप मे प्रकाशित करे, तो लोक का बहुत उपकार होगा।

यदि मुझसे कोई अनुचित शब्द, महात्माजी के लिए लिख गये हों, तो मै उनके श्रद्धालु भक्तों से क्षमा की प्रार्थना करता हूँ। और यह भी दावे के साथ कहता हूँ कि मै भी उनके, इस समय मे अद्वितीय गुणों का श्रद्धालु ही हूँ; पर अंधभक्त नहीं हूँ। जैसे सब 'अतियों' को बचाना चाहिए वैसे 'अतिश्रद्धा' को भी। काशीखंड में कथा है, शिव और विष्णु की परस्पर भक्ति प्रसिद्ध है, "शिवस्य हृदयं विष्णुः विष्णोश्च हृदयं शिवः" पर वेदव्यास ने, शिव के मन्दिर में अपनी अति भक्ति, विष्णु के लिए, स्तुतियों से प्रकट की, शिव के पार्षद नन्दी को क्रोध हुआ; शापाशापी की नौबत आयी। दूसरे अवसर पर देवताओं ने कुतूहलवश, ऐसी ही कूटनीति के प्रकारों से, (चुटकी लेना और बढ़ावा देना के) स्वयं शिव और विष्णु मे युद्ध करा दिया; अस्त्र-शस्त्र से युद्ध हो गया; शिव का परशु विष्णु के वक्ष-स्थल पर घाव करके टूट गया; विष्णु ने शिव का गला ज़ोर से पकड़ा, इससे उसमे ख़ून का दाग़ हो गया। पीछे समझे कि, माया देवी की सहायता से, देवताओं ने नाटक कराया; शर्माये; मेल किया; फर्से का घाव, श्रीवत्स का शोभावर्धक अंक होगया; गले पर जमे रक्त का उत्तम नील-वर्ण होगया; विष्णु का एक नाम और बढ़ गया, श्रीवत्सांक; शिव के दो, खंडपरशु और नीलकंठ यह सब पुरानी कथाएँ, पुराण मे, रूपक बनाकर रोचक भी, और सांसारिक व्यवहार के लिए नितान्त शिक्षाप्रद भी ऋषियों ने रख दी हैं।

पत्र 'अति' विस्तीर्ण हो गया। क्षमा कीजिएगा। निष्कर्ष कि, मै भी महात्मा गांधी का हृदय से श्रद्धालु हूँ; और उनकी तपस्या, उनका महाप्रयत्न, भारत जनता के उद्धार के लिए सफल हो, यह प्रतिदिन परमात्मा से मनाता ही रहता हूँ; और उनके कार्य की पुष्टि के ही लिए, यदि कुछ न्यूनता उसमे, मेरी अल्प बुद्धि को, जान पड़ती है, तो उसकी सूचना उनको और जनता को दे देना, अपना कर्त्तव्य धर्म समझता हूँ। किसीको इसमें सन्देह मत हो।

सुन्दर पुस्तक के लिए पुनरपि धन्यवाद।

शुभचिंतक

भगवान्दास

"स्कूल में मैं पानी नहीं पीता था। प्यास लगती तो घर जाकर पी आता था। एक दिन मौलवी साहब ने छुट्टी देर से दी। प्यास बहुत लगी थी। घर गया तो रोता हुआ गया। माँ से शिकायत की कि मौलवी साहब ने छुट्टी नहीं दी और प्यास के मारे मुझे बड़ी तकलीफ हुई, मैं अब स्कूल नहीं जाऊँगा। उसी वक्त मेरे ताऊ पण्डित लीलाधर, जो मेरी बातें सुन रहे थे वहाँ आगये। उन्होंने मेरी पीठ पर एक थप्पड़ दिया और घुड़ककर कहा—जाओ स्कूल। नहीं जायेंगे! क्यों नहीं जाओगे? "मैं बिना पानी पिये ही, रोता हुआ उलटे पाँव लौट गया। तबसे पानी की व्यवस्था स्कूल ही में की गयी। एक लोटा रखा गया। नन्हकू कहार लोटे को माँजकर अलग रखता था। मुझे प्यास लगती तो उसीसे पानी पिया करता।

३० दिन : मालवीयजी के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्लीलता का आरम्भस्थान

[किशोरलाल मश्रुवाला]

शृंगार-रसिक साहित्य में सुरुचि की हद कब पूरी होती है, और अश्लीलता कब शुरू होती है इस विषय पर श्री हरिभाऊजी ने मेरी राय माँगी है। किसी एक लेख में यह विचार जाहिर किया गया है कि कामना में से हम पैदा हुअे हैं। इसके मारने से हजारों में से अेकाध मनुष्य ही छूट सकता है। दूसरे सबके सब वर्षों तक उसमें आसक्त रहते हैं। इस वास्तविकता का हम खयाल करें, तो इसमें श्लील-अश्लीलता का वाद मचाना दंभ है, और अकारण है। इसमें सिर्फ लेखन-शैली की सुरुचि-कुरुचि, याने रोचकता-अरोचकता की दृष्टि से टीका की जा सकती है। जैसे कि ग्राम्य-गाली की भाषा का उपयोग साहित्यिक क्षेत्र में अरुचिकर माना जायगा। लेकिन संस्कृत, फारसी या अंग्रेजी विद्वत्तायुक्त शब्दों द्वारा, या परोक्ष-संकेत (Indirect Suggestion) द्वारा किया हुआ वर्णन रोचक माना जायगा। याने, यह भाषा-प्रागल्भ्य का विषय है, श्लीलता-अश्लीलता का नहीं। अगर भाषा की ग्राम्यता और अप्रगल्भता को अश्लील मान लें तो अश्लीलता की यही सरल व्याख्या मिल जायगी। इस दृष्टि से, जैसे कई साहित्यकार मानते हैं, 'परोक्ष-संकेत' 'संस्कृत शब्द', जैसे भाषा-संकर-कारक शब्द प्रयोग--यद्यपि उसका शृंगाररस से कोई सम्बन्ध नहीं—अश्लीलता है।

यह शायद आखिरी हद की राय है। लेकिन ठीक विचार पर पहुँचने के लिअे अैसी सीमान्त राय ठीक उपयोगी होती है।

इसमें यह विचार बताया गया है कि श्लील-अश्लीलता का वाद दंभ है। दंभ कब पैदा होता है? जब अेक काम से परहेज रखने में आमतौर पर मनुष्य को भलाई और सच्चाई का अनुभव और फायदा मालूम हुआ है, लेकिन जब अेक शख्स वह परहेज रख नहीं सकता, फिर भी उसका लाभ उठाना चाहता है, तब वह दंभ का आसरा लेता है। याने, दंभ भलाई और सच्चाई का मायावी रूप है। इसलिअे, यदि कोई शिष्टता का दंभ ही करता हो, तो उसके मूल में कुछ भलाई और सच्चाई बसती है। वह कौन-सी है, यह हमें खोजना चाहिअे।

काम-वासना के साथ अश्लीलता का खयाल पैदा ही क्यों हुआ? यह सवाल पूछते हैं तो और भी दो सवाल पैदा होते हैं। मनुष्य को दिगम्बर दशा की क्यों लज्जा लगी? और दूसरे प्राणियों की तरह अपने कामाचार को प्रकट करने से वह क्यों लज्जित हुआ? क्यों उसके साथ अेकान्त सेवन की जरूरत महसूस की? इसमें नीति-अनीति की भावना पैदा होने के पहले कौपीनधारण और काम-गोपन में कुछ भलाई और सच्चाई का जब मनुष्यजाति ने आम-तौर पर अनुभव किया होगा, तभी नग्नता और प्रसिद्ध कामाचार में अनीति, अश्लीलता, लज्जा वगैरा महसूस की होगी। और जब नग्नता और प्रसिद्ध कामाचार को दोषरूप समझने लगा, तभी उसका वर्णन करने में भी वह श्लीलता-अश्लीलता का विवेक करने लगा।

न केवल कामाचार ही, बल्कि और भी दूसरी प्राकृतिक क्रियायें हैं, जो मनुष्य अेकान्त में ही करना पसन्द करता है, और उसके वर्णन में कुछ-न-कुछ परहेज रखता है। उदाहरणार्थ मलमूत्र-विसर्जन। सुना है कि अरबलोग दतौन भी अेक दूसरे के सामने नहीं करते। किसी को जाहिर में करते हुअे देखकर उन्हें वैसी ही घृणा होती है, जैसे किसी को वमन या नाक या गला साफ करते हुअे देखकर कई लोगों को होती है। कह सकते हैं कि ये सब प्रकृति-धर्म हैं, इनके दर्शन, श्रवण और व्याख्यान में घृणा क्यों? विचार करने से मालूम होता है कि इन सब क्रियाओं के पीछे अेकसमान बात है। वह यह कि इन्हें करते हुअे कुछ-न-कुछ अशौच-गंदगी पैदा होती है। इन सब क्रियाओं के बाद कुछ-न-कुछ सफाई की जरूरत रहती है। वह सफाई न होने से ग्ला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैदा होते हैं। इन क्रियाओं को बार-बार करने की जरूरत पैदा होना रोग का चिन्ह है। प्रकृति-वश मनुष्य इनसे मुक्त नहीं हो सकता। फिर भी ये सब शरीर में पैदा हुअे किसी-न-किसी अशुद्ध पदार्थ को बाहर फेंक देने के लिअे उत्पन्न हुअे प्रकृति-धर्म हैं। कफ, पित्त, श्लेष्म पैदा ही न हो तो सबसे अच्छा है, और अगर मलमूत्र के भी पैदा हुअे बगैर खुराक पच सकती तो कोई उसकी इच्छा न करता। लेकिन, जब वे पैदा होते ही हैं तब उनका बाहर फेंका जाना ही अच्छा है। अन्दर रुक जाने से वे शरीर को हानि पहुँचाते हैं। बाहर निकल जाने से आराम देते हैं। लेकिन बाहर जाकर वे गंदगी फैलाते हैं। इसलिअे इनका प्रत्यक्ष दर्शन घृणास्पद होता है। यही बात कामाचार की है। अगर मनुष्य स्थिर-वीर्य बन सके, वीर्य-वमन की उसे कोई तलब ही न हो, तो उसे कोई असन्तोष न होगा। दस साल में अेक बार भी उलटी न हो, अेक बार भी खाँसी न हो, नाक को नाम-मात्र ही साफ करना पड़े, तो क्या कोई उसे कष्ट मानेगा; या सद्भाग्य समझेगा? इसी तरह कोई मनुष्य यह अनुभव न बता सकेगा कि जितने समय उसे कामेच्छा हुई, उतने समय में कोई वास्तव में हानि पहुँची है।

जब पेट में पित्त बहुत जोर करता है पर उलटी नहीं होने पाती, जब फेफड़ों में कफ भरा है और निकलने नहीं पाता, जब नाक में श्लेष्म जमा हुआ है पर छूट नहीं सकता, जब मलमूत्र का अवरोध हो जाता है, तब आदमी परेशान हो जाता है। फिर जब उलटी हो जाती है कफ-श्लेष्म छूटने लगता है, मलमूत्र के मार्ग खुले होते हैं, तब उसे आराम होता है, स्वास्थ्य अनुभव करता है। लेकिन किसी स्वस्थ आदमी को क्या कभी यह इच्छा हो सकती है कि हर रोज दिन में दो-चार बार उलटी करने की खाँसी और जुकाम बने रहें, और दिन में १०-१२ बार दस्त-पेशाब की तलब उत्पन्न हो? क्या वैसा करने के लिअे वह कोई ओषधि का सेवन करता है? क्या इन क्रियाओं पर कवितायें बनाता है? अथवा, संकेत (Suggestion) द्वारा इनकी तलब अपने या दूसरों में पैदा करने की कोशिश करता है?

यही बात कामाचार की है। कामविकार तीव्र रूप में उत्पन्न होने पर उसके शमन की इच्छा होना, और पित्त-विकार होने पर उलटी करने की इच्छा होना, दोनों स्वास्थ्य की दृष्टि से अेक-सी चीजें हैं। दोनों के वमन से कुछ सेहत मालूम होती है। सेहत कुछ-न-कुछ अंश में आनन्दप्रद होती ही है। लेकिन काम-विकार के साथ प्रकृति ने अपना अेक दूसरा हेतु जोड़ दिया है, और इसलिअे इस विकार के साथ प्रकृति ने ज्यादा जोशीले और सुख के स्व-सूचन (Auto-suggestions) जोड़ दिये हैं। और इन सूचनों ने इतर प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य (विशेषतः पुरुष) को इतना ज्यादा उत्सुक बना दिया गया है। रात-दिन वह उसी के पीछे पागल बन जाता है। कई बीमारियाँ अैसी होती हैं कि उसमें मनुष्य को खाने और उलटी करने की तलब आरी-पारी से होती है। कहते हैं कि रोमन लोगों में यह रोग फैशन के रूप में स्वीकारा गया था। तब उसमें भी आनंद के स्व-सूचन होते थे। सद्भाग्य से अैसे आदमी कम होते हैं और हमारे देश में इसमें सुख की भावना करानेवाला ललित साहित्य नहीं है। पर काम-विकार में आनन्दसूचन कराने का संस्कार आदि काल से चला आया है, और सारी मानवजाति में व्याप्त है। उसका असर समाज और व्यक्ति के जीवन के अन्य सम्बन्धों तक पहुँचता है, और इसी कारण से इसके वर्णन आदि में विवेकशीलता की जरूरत पैदा होती है।

कई बहुत बड़े विद्वानोंकी राय है कि स्त्री-पुरुष के प्रेम और कामविकार में अन्वय-व्यतिरेकी सम्बन्ध है। याने, या तो कामविकार से स्त्री-पुरुष-प्रेम हो सकता है, अथवा स्त्री-पुरुष प्रेम से कामविकार कुछ-न-कुछ अंश में रहता ही है। इन विद्वानों ने माता-पुत्र, पिता-पुत्री और भाई-बहन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के प्रेम में भी कामविकार का बीज खोज निकाला है। मेरे नम्र मत में यह प्रेम का विकृत अथवा विकृत प्रेम का ही दर्शन है, और कामविकार में बहुत अधिक ध्यानग्रस्त और रोगग्रस्त होने का परिणाम है। स्वस्थ दशा में कामशामक प्रेम का भी अनुभव हो सकता है, और वह दाम्पत्य प्रेम में भी—बल्कि विशुद्ध दाम्पत्य प्रेम में अधिक मात्रा में—हो सकता है।

अगर मेरी इस दृष्टि में गलती न हो, तो अश्लीलता का आरम्भस्थान निश्चित करना मुश्किल न होगा। स्त्री-पुरुष के प्रेमयुक्त संबंधों का आलेखन चित्र द्वारा, शब्द द्वारा, नाटक द्वारा, या संकेत (इशारे के) द्वारा हो, अगर उसका कुल मिलाया हुआ परिणाम प्रेक्षक या श्रोता के तथा लेखक और भाग लेनेवाले पात्रों के दिल में कामविकार को संचरित करनेवाला और अन्त में उसमें वीर्यवमन की तलब पैदा करनेवाला हो, तो वह अश्लील है। फिर चाहे उसका बाह्य-स्वरूप ग्राम्य हो या शिष्ट साहित्यिक या वैज्ञानिक हो। अगर वह आलेखन कामशायक हो, और मनुष्य को स्थिर-वीर्य होने में मदद देनेवाला हो, तो वह श्लील है। उसके फल से उसकी परीक्षा की जाय।

इसी न्याय से कृष्ण और गोपियों के प्रेम व्यवहार के वर्णनों का किसी ने बचाव किया वह कहता है कि जिस प्रेम ने गोपियों के कामविकार को स्थाअी रूप से नष्ट करके उन्हें निष्काम कर डाला, उसे कैसे अश्लील कहें? इन वर्णनों के विषय में यह उत्तर सही हो या न हो, यह कसौटी अवश्य ठीक है।

अेक बात सच है कि अश्लील शब्द, साहित्य और कला का रोग हमारे देश में इतना जूना और व्यापा हुआ है कि करीब-करीब वह असाध्य-सा मालूम होता है। अपशब्द कहने की आदत अभी अन्तिम पच्चीसी तक शिक्षित-अशिक्षित, गुरु-शिष्य सभी में लगभग व्यापी हुई थी। हमारे संस्कृत और प्राकृत दोनों के शृंगार-रसिक साहित्य और कला में अश्लीलता की पराकाष्ठा है। यह वस्तु गयी नहीं, सिर्फ नये रूप में आ रही है। उसे नापसन्द करनेवाले इतने अल्पमति में हैं कि उनकी अवगणना हो सकती है। लेकिन अेक ही हो, तो भी उसका धर्म है कि वह अपनी नापसंदगी स्पष्ट रूप में जाहिर करे।

हमारा दोष भी भूषण है।

आचार्य विनोबा

अंग्रेज या यूरोपीय इतिहासकार हमसे कहा करते हैं कि 'तुम आपस में लड़ते रहे। अन्तस्थ कलह करते रहे।' आपस में लड़ना बुरा है, यह तो मैं भी मानता हूँ। लेकिन यह दोष स्वीकार करते हुए भी मुझे इस आरोप पर अभिमान है। हम लड़े, लेकिन आपस में। इसका अर्थ यह हुआ कि हम एक हैं, यह बात इन इतिहासकारों को भी मंजूर है। उसके आक्षेप में ही यह स्वीकृति आ गयी है। कहा जाता है कि यूरोपीय राष्ट्र एक दूसरे से लड़े; लेकिन अपने ही देश में, आपस में नहीं लड़े। लेकिन इसमें कौनसी बड़ाई है। एक छोटे से मानव-समुदाय को अपना राष्ट्र कहकर यह शेखी बघारना कि हमारे अन्दर एकता है, आपस में फूट नहीं है, कौनसी बहादुरी है? मान लीजिए कि मैंने अपने राष्ट्र की 'मेरा राष्ट्र यानी मेरा शरीर' इतनी ही संकुचित व्याख्या बनाली; तो आपस में कभी युद्ध भी नहीं होगा। हाँ, मैं ही अपने मुँह में चट से थप्पड़ जड़ दूँ तो अलबत्ता लड़ाई होगी। परन्तु 'मैं ही मेरा राष्ट्र हूँ' ऐसी व्याख्या करके मैं अपने भाई से, माँ से, किसी से भी लड़ूँ, तो भी वह आपस की लड़ाई नहीं होगी। क्योंकि मैंने तो अपने साढ़े तीन हाथ के शरीर को ही अपना राष्ट्र माना है। सारांश, हम आपस में लड़े यह अभियोग सही है, परन्तु वह अभिमानास्पद भी है क्योंकि इस अभियोग में ही अभियोग लगानेवाले ने यह मान लिया है कि हम एक हैं, हमारा एक ही राष्ट्र है।

[सस्ता साहित्य मण्डल, 'विनोबा और उनके विचार']

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्गीय पं० रामचन्द्र शुक्ल

[पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल]

तीन तारीख फर्वरी के प्रातःकाल 'पहाड़ी' जी ने रेडियो स्टेशन से आकर बताया कि पं० रामचंद्र शुक्ल अब इस संसार में नहीं हैं! मैं ठक्-सा रह गया। विश्वास करने को जी नहीं करता था। १९ जनवरी को वे लखनऊ विश्वविद्यालय की पाठ्यक्रम-समिति में सम्मिलित हुए थे और मेरे यहाँ ठहरे थे। काशी विश्वविद्यालय की हिन्दी-साहित्य-समिति की ओर से एक चिट्ठी, जिसमें उन्होंने हस्ताक्षर किये थे, मुझे तीन ही चार दिन पहले मिली थी। कौन जानता था कि इतने शीघ्र ही अनभ्र वज्रपात हो जायगा? शायद समाचार गलत हो, कुछ समय तक यह आशा बनी रही। किन्तु जब काशी से आकर डाक्टर केसरीनारायण शुक्ल ने बताया तो पता चला कि वह आशा निराशा ही थी।

शुक्लजी का निधन समस्त हिन्दी-जगत् के लिए एक अतुलनीय दुःखद घटना है। उनके शिष्यों और सहयोगियों के लिए तो जिनके हृदय में वे घर कर गये थे और जिनके लिए उनके हृदय में जगह थी, वह उसी प्रकार व्यक्तिगत क्षति है जैसे उनके परिवार के लिए। मैंने ६-७ वर्षों तक उनके चरणों में बैठकर शिक्षा ग्रहण की है और उतने से अधिक समय तक अध्यापन कार्य में मैं उनका सहयोगी रहा। इस बीच उनके हृदय के सौंदर्य का दर्शन करने का जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ उसने इस समय मेरे शोक को अत्यन्त तीव्र कर दिया है। हिन्दी-साहित्य का तो आज एक स्तंभ टूट गया है। उनके निधन से इसकी जो क्षति हुई है वह अनुमान लगाने की बात नहीं। हिन्दी के विभिन्न क्षेत्रों को उनकी प्रतिभा का दान मिला है और ऐसा कोई विषय नहीं जिसे उन्होंने छुआ हो और अलंकृत नहीं किया हो।

हिन्दी-जगत् में वे अद्वितीय निबंधकार थे। उनके निबंध हिन्दी की अमूल्य निधि हैं। निबंधों के लिए उन्होंने मनोविज्ञान की कठिन भूमि को चुना। करुणा, क्रोध, भय, उत्साह, लोभ और प्रीति, श्रद्धा-भक्ति, लज्जा और ग्लानि आदि विषयों पर उन्होंने निबंध लिखे। उनकी दृष्टि विस्तृत किन्तु अत्यंत पैनी थी। उनका विश्लेषण गहरा और विवेचन सूक्ष्म होता था। विचारों की गहराई के कारण उनकी भाषा का कहीं-कहीं दुरुह हो जाना आवश्यक था किन्तु उन्होंने विषय को इस निपुणता के साथ स्पष्ट किया है कि पाठक यदि थोड़ा-सा प्रयत्न करे तो जटिल-से-जटिल गुत्थी शीघ्र ही खुल जाती है और बात आसानी से समझ में आ जाती है। उनका दृष्टिकोण दार्शनिक था। हेकल के 'रिडल ऑव दि यूनिवर्स' का उन्होंने हिन्दी अनुवाद किया था। उसकी भूमिका के रूप में उन्होंने जो विवेचन दिया है, उससे उनके दर्शनशास्त्र के पांडित्य का पता चलता है।

'हिन्दी-शब्दसागर' हिन्दी का सबसे बड़ा कोष है जो गहन पांडित्य और वर्षों के अनवरत अध्यवसाय का परिणाम है। उसके सहकारी संपादकों में शुक्लजी प्रमुख थे। उस यज्ञ के सफलता से पूर्ण होने में शुक्लजी के पांडित्य और उनकी प्रतिभा का बड़ा हाथ है। कह सकते हैं कि शुक्लजी की प्रतिभा ने शब्दसागर को गहराई दी।

साहित्य की गतिविधियों और प्रवृत्तियों का युगानुरूप निरूपण करते हुए **'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास'** उन्हीने निर्मित किया। उस इतिहास को पढ़ने से पता चलता है कि शुक्लजी का हिन्दी-साहित्य का ज्ञान कितना गहरा था। हिंदी-साहित्य की पूरी कहानी तो उन्होंने अपने उक्त ग्रंथ में दी ही, उसके साथ-साथ उन्होंने विभिन्न कवियों पर जो मार्मिक दृष्टि डाली है और उनकी विशेषताओं का स्पष्टीकरण किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

साहित्य के इतिहास ही में नहीं सामान्यतया इतिहास में भी उनकी गहरी रुचि थी। इसी रुचि के कारण उन्होंने मेगास्थनीज़ के भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवरण को हिंदी रूप दिया था और फारस का एक इतिहास बड़ी छानबीन के बाद लिखा था।

हिंदी में नवीन आलोचना का सूत्रपात तो एक प्रकार से शुक्लजी ने ही किया है। आलोचना के क्षेत्र में निर्णय दे देने भर की प्रवृत्ति को उन्होंने उतना प्रश्रय नहीं दिया। उन्होंने प्रधानता दी आलोचना के व्याख्यात्मक स्वरूप को। जिन परिस्थितियों में कवि या लेखक का उदय हुआ, उसके मस्तिष्क का निर्माण हुआ, उसकी प्रवृत्तियों को रूपाकार मिला, पृष्ठभूमि के रूप में उनका वर्णन करके उन्होंने रचना के अंतरतम में प्रवेश किया और उसकी बहुविध विशेषतायें दिखलायीं। इस प्रकार उन्होंने काव्य के अध्ययन के संबंध में वह परिस्थिति उपस्थित की जिससे पाठक अपने आपको उस स्थिति में अनुभव करे जिस स्थिति में अनुभव करके रचयिता ने अपनी रचना का निर्माण किया। यह समानुभूति शुक्लजी की आलोचनाओं की विशेषता है, जिसने उनकी तीव्र अंतर्दृष्टि को वस्तुत तथ्य-निरूपण में समर्थ बनाया। **'हिंदी काव्य में रहस्यवाद'** में उनकी आलोचनात्मक दृष्टि पूर्ण प्रखरता के साथ प्रकट हुई, प्रखरता ने उसमें समानुभूति को थोड़ी देर के लिए एक ओर ढकेल दिया था, परंतु बहुत समय तक यह बात न रही और आधुनिक काव्य के संबंध में भी वह समानुभूति उनके हिंदी-साहित्य के इतिहास के नवीन संस्करण में पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित दिखायी दे रही है।

पर शुक्लजी साहित्य के समर्थ विश्लेषक और साहित्य-सिद्धांत के शुष्क विवेचक ही नहीं थे। वे स्वयं भी भावुक कवि थे। उनका प्रसिद्ध काव्य **'बुद्धचरित'** उनकी ओर से साहित्य को एक बहुमूल्य भेंट है। व्रजभाषा के ऊपर यह लांछन सा लगाया जाता था कि उसमें कोई उच्च कोटि का महाकाव्य नहीं है, जो कुछ बने भी वे सर्वप्रिय न हो सके। शुक्लजी के इस ग्रंथ ने इस अभाव की पूर्ति की। यद्यपि आर्नल्ड के 'लाइट ऑव एशिया'' के आधार पर इस काव्य का प्रणयन हुआ है फिर भी आनंद आता है उसमें स्वतंत्र काव्य का सा ही और यह पता भी नहीं चलता कि विदेशी भाषा में लिखे किसी ग्रंथ की इसमें छाया भी है।

उनकी स्फुट कविताओं की संख्या भी काफी है। उन्होंने अपनी कुछ कविताओं का शीर्षक रखा था **'हृदय के मधुर भार'**। ये कवितायें सचमुच उनके उदय के मधुर भार को वहन करनेवाली हैं और इस प्रकार सच्ची कवितायें हैं। किंतु उनमें भी उनका चिंतक स्वरूप छूटा नहीं। उनकी भावुकता भी इनमें दार्शनिकता की आवरण पहनकर आयी है। कुछ लोगों के लिए इस आवरण को बेधकर उनकी भावुकता का दर्शन करना कठिन हो जाता है। इसलिए उनकी कविता के वास्तविक मूल्य का अंकन नहीं हो पाता।

स्वयं शुक्लजी का विचार था कि उनका स्वाभाविक क्षेत्र रचनात्मक साहित्य है। उन्हें बड़ा भावुक हृदय मिला था। रचनात्मक साहित्य को छोड़कर आलोचना और अध्यापन के क्षेत्र में आने में उन्हें बड़ा त्याग करना पड़ा। साहित्य के अपने गहरे ज्ञान को दूसरों तक पहुँचाने के उद्देश्य से उन्होंने स्रष्टा होने के अमिट आनन्द का परित्याग कर दिया। परन्तु थोड़ा-सा दुःख इस बात का उनके अंतरतम में बना ही रहा कि उन्हें दूसरों की ही कृतियों का पर्यालोचन करने को वाध्य होना पड़ता है और अपनी ही सृष्टि करने के लिए अनवच्छिन्न अवकाश नहीं मिलता। यदि यह अवकाश उन्हें मिला होता तो वे साहित्य को कितना अभिनव दान दे जाते, जो विस्तार और गहराई दोनों में महान् होता।

किन्तु इस त्याग से जहाँ हम एक क्षेत्र के दान से वंचित रहे, वहाँ दूसरे क्षेत्र में उसने इस कमी को कहीं अधिक मात्रा में पूरा कर दिया। इससे हमें अत्यंत उत्कृष्ट आलोचनायें प्राप्त हुईं और हिंदी-साहित्य के गहन अध्ययन का विद्यार्थियों में विस्तार हुआ। इतना ही नहीं, उनके स्रष्टा स्वरूप ने उनकी आलोचनाओं को भी केवल आलोचना से ऊपर उठाकर वह रूप दे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया जिससे वे स्वयं रचनात्मक स्थायी साहित्य की कोटि में आ गयीं। उनकी आलोचनाओं को पढ़ते समय केवल मस्तिष्क ही सक्रिय नहीं होता, हृदय का भी विस्तार होता है। **'गोस्वामी तुलसीदास'** में राम-राज्य की व्याख्या पढ़ते हुए हृदय में अपने आप तरंगमालायें उठ आती हैं। ओर, ऐसे स्थल उनकी रचनाओं में विरल नहीं हैं।

भाषा के ऊपर शुक्लजी का बड़ा अधिकार था। उनके सूक्ष्म विचारों ने उसे उन्हें व्यक्त करने में क्षम बनाया। परंतु वे स्वयं भाषा के विद्वान् और अधिकारी लेखक ही नहीं थे, भाषा-शास्त्र के प्रगाढ़ पंडित भी थे। इसका पता उनके बुद्धचरित के आरंभ में दिये हुए निबंध से चलता है, जिसमें उन्होंने ब्रज, अवधी और खड़ी का भेद दिखलाया है।

शुक्लजी का व्यक्तित्व उनकी विद्वत्ता से भी अधिक आकर्षक था। पांडित्य और सौजन्य का उनमें दुर्लभ मणिकांचन संयोग था। वे बड़े सरल और निरभिमान थे। पांडित्य का गर्व उनको छू भी न गया था। उनकी गंभीर मुद्रा पहले दूर से उनके प्रति आदरभाव उत्पन्न करती थी। पहले-पहले देखनेवालों को वे दूर-दूर हटे-से लगते थे। किंतु धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों उनके साथ संपर्क बढ़ता जाता था, त्यों-त्यों व्यक्ति उनको अपने निकट-से-निकट पाता था। वे जितने ही सरल थे उतने ही तरल भी। उनका हृदय सदैव सबके लिए सद्भाव और स्नेह से भरा रहता था। जो उनके संपर्क में आता, उसके हृदय में उनके लिए श्रद्धा घर कर जाती और वह सदा के लिए उनका भक्त बन जाता। उनके चारों ओर शांति, पवित्रता और शीतलता का मंडल घिरा रहता था, जो सबके लिए संक्रामक होता था।

साथ ही उनकी प्रकृति बड़ी विनोदी थी। पद-पद पर विनोद भरी बातें कहते थे। कक्षा में उनके भाषण सुनने में बड़ा आनंद आता था। कभी-कभी तो ऐसी विनोदभरी बात कह जाते थे कि कक्षा की कक्षा खिलखिला उठती थी, किंतु विशेषता यह कि उनकी गंभीर मुद्रा में जरा भी अंतर नहीं आता था। कक्षा में शुक्लजी को देख कर विद्यार्थी कभी-कभी सोचा करते थे, शुक्लजी भी कभी हँसते होंगे? किंतु जब अध्यापन कार्य में मैं उनका सहयोगी हो गया, तब मुझे पता चला कि शुक्लजी भी कितना जी खोलकर हँसते हैं। उनकी इसी विनोदशीलता के कारण उनके गहन पांडित्य से भरे व्याख्यान भी मनोरम लगते थे।

शुक्लजी के बहुमुखी पांडित्य की गहराई का पूरा-पूरा अनुमान उनके ग्रंथों से भी नहीं लग सकता। कागज पर सब कुछ आ भी कहाँ पाता है? इसका अनुमान वे ही लगा सकते हैं जिन्होंने स्वयं उनके मुहँ से शिक्षा पायी है। इतिहास, दर्शन, मनोविज्ञान, भाषाशास्त्र तथा संस्कृत, अंगरेज़ी और बंगला साहित्य के वे अच्छे ज्ञाता थे। हिंदी के विषय में कहना ही क्या है। उसके साहित्य ने पिछले पचास वर्षों में जो आभ्यंतर उन्नति की है उसके तो वे प्रतीक ही हैं। लगभग पचास वर्ष पहले हिंदी-साहित्याकाश ने चंद्रास्त का अनुभव किया था। आज फिर वही अनुभव उसके प्राणों को रुला रहा है।

Princes and Captains leave a little dust,
And Kings a dubious legend of their reign
The swords of Caesars, They are less than rust
THE POET DOTH REMAIN

कुछ रजकण ही छोड़ यहाँ से चल देते नरपति-सेनानी
सम्राटों के शासन की बस रह जाती संदिग्ध कहानी
गल जाती हैं विश्वविजेता-चक्रवर्त्तियों की तलवारें,
युग-युगतक, पर, इस जग में है अजर-अमर कवि (कवि की वाणी)

अनु० सुधीन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरुण से

[वियोगी हरि]

जैसे कवि है, कलाकार है, सैनिक है, नेता है, वैसे तुम्हारा भी व्यवस्थित स्थान है। तरुण, तुम्हारा अपना एक संप्रदाय है, अपना एक विज्ञापन है।

वैसे यौवन कोई नयी चीज़ नहीं; वह सनातन से है। पर उसका कोई संप्रदाय पहले नहीं था; विज्ञापन उसका दुनिया के सामने नहीं आया था।

बूढ़ों ने सदा तुम्हारी अप्रिय टीका की, पर तुम्हारे पूर्वकालिक युवक उनकी टीका से रुष्ट नहीं होते थे। शायद उनके संक्रामक असर से वह अकालवृद्ध हो जाते थे। आत्मदुर्बलता-सूचक शील उनके तारुण्य को अंदर-ही-अंदर खोखला करता चला जा रहा था, और उन्हें इस महान् क्षय का पता भी नहीं चलता था।

बाद को तुम्हें अपने पूर्व के युवकों की यह कमज़ोरी नज़र आयी, और यौवन-पुष्प को पूर्ण विकसित कर देनेवाले अविनय को तुमने भरसक उत्तेजन दिया।

तुम्हें यह सत्य स्पष्ट हो गया कि शील या विनय के रहते, जो बुढ़ापे के सहचर हैं, यौवन का मादक फूल कभी खिल नहीं सकता।

विनय की रस्सी से जीर्ण-शीर्ण शरीर ही आबद्ध हो सकता है। युवक-शक्ति के जोरदार झटके को विनय बर्दाश्त नहीं कर सकती।

तरुणाई वह प्रबल बाढ़ है, जो शील और विनय-जैसे जीर्ण ठूँठों को बहा ले जाती है।

विनय के ज़ोर से गलितयौवन ही झुकते हैं। शक्तिधर तारुण्य को झुकाने की उसमें ताक़त नहीं। उद्दण्डता उसका भूषण है; और नम्रता है दूषण।

जिसकी आँखों पर आवरण न चढ़ा हो, वह युवक ही कैसा? तुम्हारी उत्तान आँखों में खुमारी का होना स्वाभाविक है। इसीलिए सीधा पैर रखना तुम्हारे लिए अधर्म है।

जिनका यौवन गलित हो चुका है, वही नाप-नापकर या फूंक-फूंककर पैर रखते हैं। कूद-फाँद करनेवाले अल्हड़ युवक ज़मीन की तरफ़ देख-देखकर नहीं चला करते।

गंभीर विचार और उच्च चिंतन तुम्हारे सामने आने की भी हिम्मत नहीं करते। तुम इन दोषों से हमेशा सावधान रहते हो। तुम मानते हो कि विचार या चिंतन से यौवन में शिथिलता पैदा होती है, उसकी सहज तेजस्विता मारी जाती है।

सर्वत्र तुम खूब खुलकर खेलना चाहते हो। न किसीको बाँधना चाहते हो, न खुद बँधना चाहते हो। यौवन के अमर्याद राज्य में तुम्हारा मन बिल्कुल मुक्त विचरता है। नियंत्रण का पाप तुम बर्दाश्त नहीं कर सकते।

तरुण शक्तियों को तुम अत्यंत उदारता से खर्च करते हो। संयमशीलता, तुम्हारी दृष्टि में, कृपणता है।

तरुण कभी कृपण नहीं होता। और जो हृदय का उदार है, उसका विचार या चिंतन से क्या सरोकार? सोचते-विचारते तो बूढ़े कृपण हैं, जिन्हें सदा शक्ति-संचय का ही लोभ रहता है।

बाढ़ ठहरना नहीं जानती। उसमें तो वेग-ही-वेग होता है। ठहरना और सड़ना तो तालाब के जीर्ण जल के भाग्य में लिखा है।

तुम्हारे विपक्ष में भी काफ़ी कहा जाता है। लेकिन आलोचना के आघातों से जगत् में बचा ही कौन है?

एक बड़ा आरोप तुम्हारे ऊपर यह किया जाता है कि तुमसे विषय-विकारों को उत्तेजन मिलता है। ठीक है; पर विकारों को निंदित क्यों माना जाये?

विकारों को तुम बलपूर्वक रोकना या निर्दयता से बाँधना नहीं चाहते—तो क्या यह कोई गुनाह है? स्वाभाविक है कि युवक का सरस हृदय किसी विकार पर अंकुश नहीं रखना चाहता। यौवन का तक़ाज़ा है कि तुम स्वच्छन्द विचरो, और तुम्हारे मनोविकार भी सर्वथा स्वच्छन्द विचरें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर तुम सभी मनोविकारों को एकसमान उत्तेजन देते हो। कभी काम को हृदय से चिपटा लेते हो, कभी क्रोध को; इसी तरह कभी विराग को और कभी अनुराग को। तुम अहंकार और द्वेष से भी घृणा नहीं करते। मोह को भी प्यार करते हो, और मात्सर्य को भी। मनोविकारों के प्रति तुम्हारे निष्पक्ष प्रेम की कोई क्यों टीका करे? तुम्हें तो सभी विकारों में एक-सा आनंद आता है।

विचार तो ठंडे मट्ठे के जैसा है, उसे तुम क्यों ग्रहण करोगे? तुम तो गरम चाय के जैसा उत्तेजक विकार ही पसन्द करोगे।

तुम मानते हो कि यौवन की सुखद यात्रा में 'रोमांस' का होना आवश्यक है। रोमांसहीन यौवन तुम्हारी दृष्टि में विना गंध का फूल है।

चढ़ती हुई जवानी में उस प्रेम का होना जरूरी है, जिसे बूढ़े टीकाकार मोह और पाप कहते हैं; उस जोश का होना उसमें ज़रूरी है, जिसे वे ईर्ष्यालु आलोचक अविचार और दुस्साहस समझते हैं; उस स्वातंत्र्य का होना उसमें आवश्यक है, जिसे उन्होंने अविनय और अनियंत्रण का नाम दे रखा है।

और सच कहा जाये तो इन्हीं तत्त्वों से यौवन का निर्माण होता है; यौवन के सुनहरे स्वप्न इन्हींसे बनते हैं। युवक तो सदा स्वप्न ही देखता है; न कभी वह सोता है, न जागता है। सोते तो अबोध बच्चे हैं, और जागते हैं चिन्ता-ग्रस्त बुड्ढे।

तुम्हारे गजब के स्वप्न होते हैं। कभी तो तुम तेज़ाब-जैसे प्रणय के सुखद वायुमण्डल में तैरने लगते हो, और कभी द्वेष के शांतिप्रद दावानल में सुलगने लगते हो। तुम्हारे राग और विराग दोनों के ही स्वप्न रसपूर्ण होते हैं।

तुम एक ही क्षण में अपना तन, अपना मन और अपना सर्वस्व कोमल या कठोर वासना के चरणों पर अर्पण कर देते हो। तुम अपने यौवन-काल में कवि-जगत् की नयी-पुरानी उपमाओं का प्रयोग करते-करते कभी थकते नहीं।

तुम्हारी मान्यता है कि कमबख्त मनुष्य-योनि प्रेम को 'प्रगट' करने के लिए उपयुक्त नहीं। इसलिए तुम कभी तो भ्रमर और कीट बन जाते हो; कभी चकोर और चातक; और कभी मीन और मयूर!

ठोस आलोचक तुम्हारे उन्मत्त कल्पना-विहार को मोह और गंदगी में सना हुआ भले ही देखें, तुम तो उसे अपनी ज़बान या क़लम से शुद्ध और दिव्य प्रेम ही कहोगे।

तुम्हारी 'दिव्य' की व्याख्या भी अनूठी है। तुम स्वर्ग को कभी देखते हो, तो शैतान में ही। तुम्हारे ईश्वर का वास वासना में है, अतः तुम्हारी प्रत्येक वासना दिव्य है। जिसे कि वे नरक मानते हैं उसे तुम स्वर्ग कहते हो; और जिसे वे स्वर्ग समझते हैं, उसे तुम नरक कहते हो। वृद्ध-दृष्टि और युवक-दृष्टि में यही तो मूलतः अन्तर है।

जो जैसा हो उसको वैसा ही देखना या मानना युवक का धर्म नहीं; यथार्थ दर्शन तो जड़ या स्थिर बुद्धिवालों का काम है। स्थित-प्रज्ञता का दोष तरुणों में नहीं मिलेगा।

तुम्हारा एक-एक शब्द वज्र के हथौड़े से गढ़ा हुआ होता है, यद्यपि होता वह मोम का है। जब तुम बोलते हो, तुम्हारी शब्दयोजना तब बड़ी भीषण और मोहक होती है।

तुम्हारा स्वाभाविक गुण अहंकार फूला नहीं समाता, जब तुम छाती ठोक-ठोककर कहते हो—"सागर को मैं श्वास के स्फुलिंगों से ही सुखा दूँगा; हिमालय की पसलियाँ अपने वज्र मुक्के से चूर-चूर कर दूँगा; मेरे गंभीर गर्जन से पृथिवी थरथर काँपने लगेगी; सूर्यमंडल को तो एक ही झटके से नीचे गिरा दूँगा। मैं युवक हूँ; मैं विप्लव का प्रलयंकर दूत हूँ।"

यथार्थवादी आलोचक तुम्हारा सिंहनाद सुनकर कहेगा—यह सब तुम्हारा उन्मत्त प्रलाप है। न तो सागर ही सूखा, न हिमालय की पसलियाँ ही चूरचूर हुईं, न पृथिवी ही डगमगायी, और न सूर्यमंडल ही ऊपर से गिरा।

ग़रीब आलोचक इसीलिए गड़बड़ में पड़ जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि वह तरुणों की अतुकान्त कविता को समझता नहीं। गणित का दुर्बल ज्ञान रखनेवाला ठोस आलोचक युवक के रोमांचकारी भाव और भाषा का अर्थ कैसे समझ सकता है ?

अहंकार और मनोविकारों को दबाने या दफनाने का दुर्भाग्यपूर्ण प्रयत्न करनेवालों की घातक बुद्धि तुम्हारी कठिन-कोमल भाषा को ग्रहण कर ही नहीं सकती।

कई पूर्वकालिक युवकों ने पथभ्रष्ट होकर अपनी यौवन-संपत्ति को कठोर तपश्चर्याओं में लगा दिया था। यौवन-काल के आरंभ में ही वे रोग, जरा और मृत्यु से भयभीत हो गये थे। जीवन के रमणीय बसंत में उन अभागों ने अपने हाथों आग लगा दी थी और इसी तरह रक्त-संघर्ष से भी पीछे क़दम हटा लिया था।

फिर भी उलटी खोपड़ी के स्तुतिकारों ने उनके ऐसे-ऐसे युवक-विरुद्ध आचरणों की महिमा गायी। उन अकालवृद्ध युवकों की नीरसता को बड़ी शान से 'मार-विजय' का नाम दिया गया, और उनकी कायरता को 'विश्व विजय' के नाम से पुकारा गया !

युवकों को उनके इस कृत्य से शर्मिन्दगी उठानी पड़ी।

उनके अनुचित कृत्यों का तुम्हें आज प्रायश्चित्त करना पड़ रहा है। काम और क्रोध को अपने यौवन-रक्त से सींच-सींचकर उनके ऐतिहासिक कलंक को तुम आज धो रहे हो।

पूर्वकाल के उन पथ-भ्रष्ट तरुणों को तुमने तार दिया। तुम धन्य हो, तुम्हारा जीवन स्तुत्य है।

सौष्ठव-पूजा

[प्रभाकर माचवे]

(गतांक से आगे)

मुन्नी बेड़नी

[थोड़ी दूर जाने पर कलाकान्तजी ने देखा गाँव के एक सिरे पर कलाली की दूकान है। यहाँ पर भी उतनी ही भीड़ है जितनी पंडितजी की कथा में इट्ठी हुई थी। कलाल की दूकान से सट-कर ही एक छोटा-सा मकान। कुछ साफ। दीये के आसपास गुलाबी कागज का चिराग़दान। उसकी भीषण रोशनी में एक नारी आकृति। हाँ, नारी-आकृति ही कहना ठीक होगा : क्योंकि मुद्रा उसकी अभ्यस्त लज्जाहीनता से काफ़ी परुष और कठोर दीखती है। खोटे सलमे-गोटे की किनारी की भड़कीली ओढनी, वैसा ही भड़कीला लहँगा। खोटे ज़ेवरात। मुहँ में काफी-सा पान। यह बेड़नी है। उसके पीछे एक ढोलक बजानेवाला है, और यह बेड़नी अपने बीभत्स हावभावों से एक प्रकार का नृत्य करने का अभिनय करती है, जो एकदम सुरुचि को आघात पहुँचानेवाला है। साथ ही नाक के स्वर में कुछ गाती जाती है, जिसके शब्द काफी विकारोत्तेजक और अर्थहीन हैं।

कलाकांतजी यहाँ रुक जाते हैं। थोड़ी देर ठहरते हैं। मजमा जब कम हो जाता है, तब उससे प्रश्न पूछते हैं।]

क०—तुम यह पेशा क्यों करती हो ?

बे०—क्योंकि मेरे लिए दूसरा पेशा नहीं है।

क०—तुझे इस नरक में किसने ढकेला ?

बे०—मेरी माँ ने।

क०—माँ ने ?

बे०—हाँ माँ के पेट ने ? पेट की आग प्रबल होती है ?

क०—तो तुम्हारा इस छोटे से गाँव में नाचने गाने पर निर्वाह हो जाता है ?

बे०—आप सवाल पूछकर मुझे क्यों हैरान कर रहे हैं ? मैंने कहा न कि नाचना-गाना अब कहाँ रहा है ? जो कुछ है, निरा बहाना है। सामने कलाल है। लोग आते हैं। पीते हैं। उनके मनबहलाव को मैं हूँ, मेरे साथी हैं। दूक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मांस…

(कलाकांत के दिमाग में सहसा ईसा की 'यह मदिरा मेरा रक्त समझो और यह रोटी मेरा मांस'—यह पंक्ति घूम जाती है।)

क०—ऐं! रक्त और मांस! मांस और रक्त!—मृत और जीवित!—क्या तुम सचमुच कुछ और नहीं कर सकतीं?

बे०—और क्या करूँ? पढ़ी-लिखी तो हूँ नहीं।

क०—चरखा तो कात सकती हो?

बे०—वह काफी हो जायगा? दो-आना रोज़? और अबतक के संस्कार? और मेरे ही अकेली के संस्कार नहीं, इस सारे समाज के संस्कार। हमें संसार कुलीना मान लेगा?

क०—तो इस नृत्य और संगीत को ही क्यों नहीं एक ऊँचे किस्म का पेशा बनाती हो?

बे—आपके कहने का मतलब क्या है?

क०—यानी यही कि तुम सिर्फ नाचो-गाओ। शरीर-विक्रय न करो। नृत्यकला सीखो—कथाकलि की मुद्राएँ, उदयशंकर की पद्धति, रागिणी देवी का पौर्वात्य नृत्य…

बे०—आप कौन-कौन से नाम ले रहे हैं? मैं उनमें से एक भी नहीं जानती। मैं इतना जानती हूँ कि मेरे नाच और गाने में से वह बात जिसे आप जैसे समझदार पढ़े-लिखे घृणा करते हैं, निकाल दीजिए। अगर वही चीज़ कम हो जाय, तो आप जानते हैं, हमारी क़ीमत दो-कौड़ी की बाकी रहेगी। हमारा यहाँ रहना नहीं हो सकेगा। गाना जो मैं कभी-कभी धार्मिक या अच्छे भाव से गाती हूँ, तो उसे मेरे सामने की दूकान से आनेवाले श्रोता कहते हैं—अलोना, नीरस, फीका।

क०—(खुद से) हाँ, 'pep'! उस किस्म की चरपराहट जिसे हम अश्लील और घृणित और त्याज्य कहकर जीवन से काट देने की चाह कर रहे हैं—वह जीवन से बँधी हुई एक वृत्ति है। उसे समूल उखाड़कर फेंकना संभव नहीं है उस वृत्ति को आप संस्कृत कर सकते हैं। पर उसके लिए जिस बौद्धिक विकास की आवश्यकता है—वह आज हरएक पा सकता है? हमारी आज की आर्थिक व्यवस्था (या दुर्व्यवस्था) में वह सुविधा हर एक के पास है?

और सभ्य समाज भी क्या करता है? उसमें भी कहाँ है सुरुचि? व्यवहार-पूजा के नाम पर वह उन्हीं ग़लत मूल्यों को, जीवन की अर्थशून्य और खोखली क़ीमतों को दिल से चिपटाये बैठा है। आज बेड़नी का गाना—'अँधरिया है रात सजन रैंबो के जैबो' हमें अश्लील लगने लगता है और रविबाबू ने ज़रा ज्यादह अवगुंठित शब्दों में वही भावना कह दी कि—'Traveller must thou go?' कि बस, हम उसमें रहस्यवाद और न जाने कौनसे-कौनसे 'वाद' खोजने लग जाते हैं। यहाँ से वहाँ तक मनुष्य-स्वभाव एकसा है। जन्म से हम समान हैं। मृत्यु में हम समान हैं। तो जीवन और मरण के बीच के इस छोटे से व्यवधान में हमने प्रभु को पाने की जो राहें बनायीं—सत्य की राह, शिव की राह, सुंदर की राह—उनमें क्यों झगड़ा पैदा कर लिया? क्यों हमने सत्य से सुंदर को विलग माना, क्यों सुंदर को अशिव??……

नहीं, सौन्दर्य भावना हर-एक में है वही जन्म-जात। वह बेड़नी हो कि बाणभट्ट की महाश्वेता हो। कम-अधिक प्रमाण में परिष्कृत। देहात की उस नाचनेवाली के जो बच्चा है, उसके साथ उसकी स्निग्ध मातृ-सुलभ दृष्टि तुमने देखी है? कलाकार, तू वह नहीं देख पाया है। वह देख लेना। और फिर तुझे बेंड़नी से बचने की, घबराने की और भागने की ज़रूरत नहीं रहेगी। जो जितना ही अधिक चरित्रहीन है, वह उतना ही अधिक दया का पात्र है। हम उससे घृणा नहीं कर सकते, क्योंकि वैसा मैं दावे के साथ अपने लेखक-मित्र और प्रत्येक पाठक से—चाहे वह शहरी हो या देहाती—पूछूँ, तो चरित्रहीन कौन नहीं था? या नहीं हो सकता? हम सब मानव हैं, दुर्बल मानव देहधारी!!! ईसा ने मैग्डैलीन पर पत्थर फेंकनेवाले हरएक से पूछा था—तुममें से पत्थर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही फेंके जिसने आजीवन एक भी पाप नहीं किया हो । एक की भी हिम्मत नहीं हुई थी ।

अतः कलाकार, आगे चलो । मन में वही एक ईसा का पवित्र वचन घूम रहा है—'Judge not, lest ye be judged' (किसी की टीका-टिप्पणी करो, क्योंकि तुम खुद टीका-टिप्पणी के विषय बन सकते हो) आगे चलकर क्यों न यों कहें—Begin by judging ourselves— पहले आत्मनिरीक्षण होना चाहिए ।… …

(क्रमशः)

एक पत्र

जसवन्त कॉलिज, जोधपुर

श्रद्धेय सम्पादकजी, नमोनमः

हाल ही में एक कवि-सम्मेलन में जाने का अवसर मिला था । यहाँ के प्रायः सब कवि और हिन्दी के साहित्यानुरागी व्यक्ति उपस्थित थे । कविता-पाठ की समाप्ति होने पर एक सज्जन खड़े हुए और उन्होंने कविता पर विचार प्रकट किये । उन्होंने कहा कि मैं कविता के इर्द-गिर्द जो झाड़-झंखाड़ सा उठ आया है, और जिसके कारण उसका स्वरूप छिप ही नहीं गया, विकृत हो गया है मानो वह राहु-ग्रस्त चाँदनी-सी सिसकती हो, उसकी सफ़ाई कर दूँ । झाड़-झंखाड़ में प्रमुख हाथ संगीत और शब्दाडम्बर का है, और जबतक इन दोनों से कविता मुक्त नहीं होगी, उसका वास्तविक स्वरूप निखरकर हमारे सामने नहीं आ सकता । न जाने क्यों, अपनी-अपनी रुचि ही तो है । ऐसा मालूम हुआ कि जैसे उनकी बातें आयीं और ऊपर-ऊपर ही चली गयीं, हमारे हृदय को छू नहीं सकीं । मन में प्रश्न-सा रह गया ।

बात यहीं तक नहीं रही । जब हम अपने दो साहित्यिक मित्रों के साथ चले, तो फिर वही चर्चा छिड़ी । अमुक की कविता में यह त्रुटि थी, अमुक की कविता में शब्द-योजना ठीक नहीं थी और 'उसकी कविता तो आज जमी ही नहीं इत्यादि-इत्यादि । मेरा मन तो उपरोक्त शब्दाडम्बर और संगीत के नाम पर की गयी कविता की सफ़ाई को लेकर उलझा हुआ था ही । इस वार्तालाप से और भी ज़रा चिन्तनोन्मुख हो गया, और मेरे मन में विचारों की लड़ी सी बँध गयी और रोना आ गया, हिन्दी-साहित्य की वर्तमान दशा पर । सोचा और समझ पाया कि क्या कारण है कि आज हिन्दी में यूरोपीय लेखकों की तरह मसलन् बर्नार्ड शा, तुर्गनेव, चेकव और गोर्की की तरह तेजःपुज नक्षत्रों का उदय नहीं होता ? हमारे यहां इनका उदय ही कैसे हो ? किसी महान् प्रतिभाशाली क्रान्तिद्रष्टा हृदय के चिर-मुंदे गुहा-द्वार को अपनी स्वर्ण-किरणों से छू देनेवाला लेखक तो आसमान से टपक पड़ता नहीं । हमारे समाज में उत्पन्न किन्हीं परिस्थितियों की लाचारी, बेबसी ही उसे हमारे सामने खड़ा करती है । लेखक का अवतीर्ण होना ही क्यों ? इतिहास की कोई भी घटना Engels के शब्दों में innumerable intersecting forces and infinite series of parrallelogram of forces के resultant स्वरूप हैं । वह बौद्धिक चेतना, वह समाज के हृदय को चीरकर बहने वाली जीवन्त धारा ही हमारे पास कहाँ है, जिन्होंने उन विश्ववंद्य कलाकारों को जन्म दिया था ? जब हमारे यहाँ के पाठकों का दल ज़रा ऊँचा उठकर विचार करेगा, अपने धरातल को ऊँचा उठायेगा और अपने साहित्यिक धर्म तुला को ठीक करेगा, तभी तो लेखकों को भी बरबस ऊँचा उठना पड़ेगा । नहीं तो जबतक हम 'बुधुआकी बेटी', 'सरकार तुम्हारी आँखों में' इत्यादि से ही संतुष्ट हैं, तबतक लेखकों को क्या पड़ी है कि अपने को कष्ट दें ? इसी शब्दाडम्बर की बात लीजिए न । माना कि शब्दाडम्बर है ही । पर क्यों है ? क्यों लेखक शब्दाडम्बर के पीछे हाथ धोकर पड़े रहते हैं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीलिए न कि हम इसे पसन्द करते हैं, शब्द-योजना पर दाद देते हैं और संगीत पर तालियों की गड़गड़ाहट से सर पर आसमान उठा लेते हैं। मैं कहता हूँ कि जरा-सी उपेक्षा इन सब चीजों के प्रति दिखलावे, फिर देखे, कौन माई का लाल कवि है जो एक पग भी इस ओर बढ़ने का साहस करता है ?

ऊपर के मित्रों की बातचीत से यह बात मालूम हुई कि जैसे ये लोग साहित्य के क्षेत्र में अभ्यंतर और बाह्य को पृथक् समझते हैं, भाव, कल्पना और उसकी अभिव्यक्ति को अलग-अलग चीज़ मानते हैं। गिरा को अर्थ से भिन्न समझते हैं। पर क्या वास्तव में वे भिन्न हैं ? क्या हम एक को दूसरे से अलग रखकर विचार कर सकते हैं और क्या ऐसा करना समीचीन होगा ? मैं मानता हूँ कि किसी साहित्यिक रचना की शब्द-योजना, रूप-सौष्ठव, और बाह्य रूप को लेकर चर्चा चलती है, कविता में आये अलंकारों और शब्दों को लेकर विचार-विनिमय हुआ करते हैं, परन्तु यह तभी तक ठीक है जबतक ये आलोच्य विषय के स्वाभाविक अंग-से प्रतीत होते हों, बाहर से चिपकाये-से नहीं। इन दोनों को अलग-अलग कर देखना मानो सजीव साहित्य का अंग-भंग करना होगा। यहाँ पर हमें फ्रांस के प्रसिद्ध लेखक फ्लेंबर्ट (Flanbert) के लेख का कुछ-अंश याद आरहा है। उसने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि वे रचनायें जिनमें रूप और शैली पर अधिक ध्यान दिया गया-सा प्रतीत होता है, अधिकतर निम्न कोटि की हैं, उच्चतम श्रेणी की नहीं। और एक जगह तो उसने यहाँतक कहा है कि जिसे हम निर्दोष, निर्मल और पूर्ण शैली कहकर पुकारते हैं वह एक व्यर्थ के वाग्जाल के सिवा और कुछ भी नहीं। उसने विश्व के महान साहित्यिक महारथियों के बारे में लिखते हुए कहा है कि उन्हें शैली के लिए प्रयत्न करने की जरूरत नहीं पड़ती। सारी खामियों के होते हुए भी वे शक्तिशाली हैं; पर हम लोगों की कृतियों की पूर्णता की ही गिनती होती है। जो बहुत बड़े लेखक होते हैं वे अक्सर बहुत बुरा लिखते हैं; यही उनके लिए अच्छा भी है। हमें उनमें कला और रूप की खोज नहीं करनी चाहिए, बल्कि छोटों में करनी चाहिए। मैं इन पंक्तियों को प्रत्येक साहित्यानुरागी और आलोचक के विचार के लिए सामने रखता हूँ। मेरा विश्वास है जहाँ पर हम शब्दों के चुनाव में त्रुटि पाते हैं; भावों की अभिव्यक्ति में विशृंखलता पाते हैं, वहाँ अवश्यमेव आत्म-स्पर्श की अनुभूति में विडम्बना है, कवि अपनी अनुभूति का पूर्ण तादात्म्य नहीं कर पाया है। अनुभूति जिस मात्रा में हमारे हृदय को स्पर्श करेगी, उसी मात्रा में हमारी भाषा और वाणी में शक्ति आयेगी।

अपनी बात स्पष्ट करने के लिए एक और उदाहरण दे दूँ। आजकल 'गुंजन' इन्टर की कक्षा के विद्यार्थियों को पढ़ा रहा हूँ। 'गुंजन' है भी थोड़ा सा कठिन; पर विद्यार्थीगण जब मुझसे यह कहते हैं कि मैं 'गुंजन' की कविताओं को समझ तो गया हूँ, पर उन्हें express (व्यक्त) नहीं कर सकता तो यह बात मेरी समझ में नहीं आती। मेरा उत्तर यह होता है कि यह असंभव है कि यदि आपने कविता के भावों को हृदयंगम कर लिया है तो उसके अर्थ लिख न सकें। या तो आपने भावों को ठीक से समझा नहीं है या आप व्यर्थ ही आत्म-विश्वास को खोकर यह कह रहे हैं कि आप अर्थ लिख नहीं पाते। जिस कवि-सम्मेलन की चर्चा चल रही है, उसके कवियों से यदि मैं एक ही प्रश्न पूछता कि भाई, तुम हृदय पर हाथ रखकर कहो कि आपमें से यहाँ कितने हैं, जिन्होंने इसलिए कविता लिखी कि वे इसके लिए लाचार थे, किसी अन्तर्प्रेरणा ने उन्हे अपने को बेताब कर दिया था; क्या आपमें से बहुतों की संख्या ऐसी नहीं थी जिन्होंने 'कूँख-काँखकर' इसलिए कविता लिखी, कि कवि-सम्मेलन में कविता सुनानी थी, तो इस प्रश्न का वे क्या उत्तर देते ? उच्च साहित्य के प्रणयन के लिए एक ही नियम है और वह है ईमानदारी का। ईमानदारी अपने प्रति, अपने भावों के प्रति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभूतियों के प्रति और पाठकों के प्रति । इसी ईमानदारी के अभाव में साहित्यिक विडम्बनायें उठ खड़ी होती हैं ।

समालोचना के क्षेत्र में एक तरह की भ्रांत धारणा होती है, जिसको मैं एक व्यक्तिगत अनुभव और सच्ची घटना को लेकर स्पष्ट करने की कोशिश करूँगा । हमारे यहाँ तीन स्कूल के कवि हैं । (वह स्कूल-वस्कूल तो नहीं, पर मैंने चर्चा की सुविधा के लिए यह नाम दे रखा है) (१) इस पार स्कूल (२) उस पार स्कूल (३) मझदार स्कूल । पहले स्कूल का कवि कहता है "ले चलेगा क्या मुझे इस पार से उस पार नाविक" ? दूसरा कहता है "क्यों चलें उस पार कवि, इस पार ही मधुमास होगा" । तीसरा कहता है "इस पार नहीं, उस पार नहीं, मझदार डुबा देना नाविक" । तीसरे स्कूल की कविता को लेकर एक बार चर्चा चली । यहाँ के एक बड़े साहित्यिक और आलोचक ने कहा कि भाई मेरा वश चलता तो मझधारवाली कविता की तरह कविताओं पर साहित्यिक नियंत्रण करता क्योंकि इस कविता के द्वारा नवयुवकों में अकर्मण्यता का प्रचार होता है । क्या ही विकृत आदर्श है कि मनुष्य कायर होकर समर-क्षेत्र से भाग जाय और बीच ही में डूब मरने की कामना करे ! मैंने कहा भाई "इसमें अकर्मण्यता की क्या बात है ?" उन्होंने कहा, "मझधार का अर्थ है ही क्या, इस पार नहीं उस पार नहीं, तो मझदार में जाओगे ही कहाँ ?" मैंने कहा कि साहित्य प्रधानतः काव्य, तो शुद्ध भाव है और है Communication । कविता के लिए हमारे पास एक ही माप-दण्ड है और वह यह है कि जो कुछ कवि कहना चाहता है, अच्छा या बुरा इससे मुझे मतलब नहीं, वह हमारे हृदय के अनुभूति-खण्ड से कहाँ तक लगाव ला सका है, वह जिस 'मूड' में है उस 'मूड' में हमें कहाँ तक प्रवाहित कर सका है ? यदि हम उसकी एक-एक स्वर लहरी पर, बधिक की वीणा पर न्यौछावर हो जानेवाले मृगशावक की तरह आत्म-समर्पण कर देते हैं तो काव्य सफल है । (Duty of on artist is to communicate a mood) मझधारवाली कविता पर विचार करते समय हमें यह देखना चाहिए कि जिस खीझ या झुँझलाहट के भाव को कवि हमारे सामने रखना चाहता है उसे कितनी सजीवता के साथ रख सका है; शब्दों के द्वारा हृदय की किस गहराई में ले जाकर हमारी वेदना जागरित कर सका है ? मैं यह कभी नहीं कहता कि मझधारवाली कविता उच्च कोटि की है, परन्तु कहना यही है कि कविता के ऊपर विचार करते समय हम जिस कसौटी का आश्रय ले रहे हैं वही भ्रामक है । सच्चे हृदय से निकले उद्गार हृदय के सच्चे भाव, कभी भी मनुष्य को मानवता से गिरा नहीं सकते । वे हमें बल देते हैं । शक्ति प्रदान करते हैं । क्या तुलसी की यह कविता 'मोसम कौन कुटिल खल कामी !' आपमें आत्म विश्वास की कमी पैदा करती है ?

सम्पादकजी, यह एक लम्बा सा पत्र मैं आपके पास लिख गया । पहला कारण तो यह है कि आपके विचारों से लाभ उठाना चाहता हूँ । और दूसरा यह कि मेरे मन में ग्लानि-सी थी कि मैंने आपके लिए बहुत दिनों से कुछ नहीं लिखा, सोचा, चलो 'माखन बेचत हरि मिले, एक पंथ दो काज' ।

आपका विनीत
देवराज उपाध्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन का उषाकाल

[प्रभुदास गांधी]

(क्रमागत)

मूल स्थान

बालकपन की स्मृतियाँ ताज़ी करने बैठते ही स्मृतिपटल की दरारों से एक के बाद एक कई शृंखलाबद्ध कहानियाँ निकल पड़ती हैं। स्वर्गवासी मगन काका जब पहलेपहल हमें अफ्रीका ले गये, तब मैं मुश्किल से चार बरस का हूँगा। फिर भी जान ऐसा पड़ता है मानो वह यात्रा अभी-अभी ही की हो।

आँख जैसे अतीत की साक्षिणी है, उसी तरह कान भी हैं। निरे बचपन से पिताजी, माता, तथा मगन काका से उनके स्वभाव की, संकट की और उनके कार्यकलाप की बातें कहानियों की तरह सुनता आया हूँ। इसलिए अपनी बात कहते-कहते उनकी याद बरबस आ जाती है। आप-बीती का स्मरण करने में पुरखों के अनुभव के संस्मरण भी दृष्टि-पथ में दौड़ आते हैं। इसलिए कहानी का आरम्भ फीनिक्स से शुरू करने की जगह कुतियाणा से ही शुरू करना उचित जान पड़ता है।

कुतियाणे में गांधी-कुल की कुल-देवी—यदि मेरी स्मृति ठीक है तो—सतीमा का मन्दिर है। मूर्तिपूजा आदि जिसके लिए रूढ़ियाँ नहीं हैं, ऐसे हमारे कुल के युवक को विवाह के समय नववधू के साथ कुतियाणे जाकर कुल-देवी के चरणों में पड़कर अपना विवाह मंजूर कराना पड़ता है। यद्यपि दक्षिण अफ्रीका, पूर्व अफ्रीका, अदन और भारत में चारों ओर हम चचेरे भाई फैले हुए हैं, फिर भी मूल-स्थान हमारा कुतियाणा है—यह इस रिवाज से ज्ञात होता है। हमारे पुरखे वहाँ कब, कहाँ से आकर बसे—इसका अन्वेषण नहीं हो सका है। जो नाम आज प्राप्त हैं, उनमें सर्व-प्रथम लालजी गांधी का नाम आता है। लालजी गांधी की पाँचवी पीढ़ी में गांधी-कुल के महा-पुरुष—गांधी-कुटुम्ब के पितामह—उत्तमचन्द गांधी पैदा हुए और सातवीं पीढ़ी में विश्ववन्द्य महात्मा मोहनदास करमचन्द गांधी।

कोई २४ वर्ष पहले एक बार जब मैं अपने मूलस्थान गया, तब कुल के मूलपुरुषों की कथा—इतिहास—की अपेक्षा कुल की मूलभूमि—भूगोल—का प्रभाव मेरे मन पर गहरा पड़ा था। 'बापू' के जाज्वल्यमान अद्वितीय व्यक्तित्व के मूल में कैसे समाज की भूमिका थी, यह यदि डेढ़-पौने दो सौ वर्ष की आयु का कोई पोरबन्दर-निवासी और जीवित समाजशास्त्री मिल सके, तो उससे यथावत् सुन सकेंगे। शान्तनु से लगाकर जनमेजय तक की आठ पीढ़ियों के प्रत्यक्ष दृष्टा बादरायण मुनि थे, तभी वे महाभारतीय समाज को लिपिबद्ध कर सके। 'बापू' के आगे पीछे के समाज का इतना लम्बा और अपनी विवेक-बुद्धि को जाग-रूक रखकर तटस्थ रहते हुए इतना गहरा अव-लोकन करनेवाला कौन मिलेगा? बापू की अपनी कलम से अधिक श्रेष्ठ साक्षी मिलना सम्भव नहीं दीखता, परन्तु भूगोल तो अपनी कथा युग-युग तक कहेगा ही।

कुतियाणा काठियावाड़ की जूनागढ़ रियासत का एक क़स्बा है, जो भादर नदी के तट पर है। प्राय: भादर नदी का पट चौड़ा है, पानी बहुत उथला है, पर कुतियाणे से कुछ आगे चलकर काले और सख्त पत्थरों की काली मजबूत क़तार को चीरकर नदी ने अपना मार्ग बनाया है। मुलायम पानी ने पत्थर की चट्टान के दो टुकड़े कर डाले हैं जैसे चाकू खरबूजे के दो टुकड़े कर देता है। विशाल पट में बहता हुआ उथला पानी एकत्र और गहन बनकर गम्भीर घोष करता हुआ वहाँ से आगे बढ़ता है।

एक ओर भादर नदी उत्पीड़न में से निर्मलता और नम्रता के साथ मार्ग निकालने की कला दिखाती है, तब दूसरी ओर हिमालय के आगे रजकण-जैसी तुच्छ वस्तु पर स्वस्थान पर सुशोभित 'बरड़ा' की पहाड़ी सहिष्णुता की प्रेरणा देती है। शिखर इसके औसतन् छ: सौ से आठ सौ फ़ीट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊँचे हैं, कुछ घनी झाड़ियों से दुर्गम दीखते हैं, तो कुछ संन्यासी के मुण्ड की भाँति हैं और ग्रीष्म के उग्र सूर्यातप फैलाते हुए ऐसे दुर्द्धर्ष बन जाते हैं कि उनपर निगाह नहीं ठहरती। पश्चिमी सीमा में बिछी हुई बरडा की पहाड़ी, पूर्व की ओर उठा हुआ उन्नत गिरनार, बगल में पहरा देती हुई ओसम की घाटी मानो बहारवटा[१] खेलने का निरन्तर निमंत्रण दे रही है। प्रत्येक चोटी जीवन की धूप-छाँह के बारे में लापरवाह होने का मंत्र मनुष्य को सिखा रही है। 'सौराष्ट्र की रसधार' के मर्मज्ञ कवि श्री मेघाणी के पदचिन्हों पर जो कोई वहाँ के 'चारण' और 'मेर' जातियों के बीच परिभ्रमण करेगा उसको वह सारी भूमि सभ्यता से ओतप्रोत बहारबटे के रणघोष से गूँजती हुई जान पड़ेगी।

कुतियाणे से दो मंजिल दक्खिन में पोरबन्दर नगरी के परकोट को छूता हुआ नील सिन्धु अहर्निश धीर-गंभीर निनाद करता हुआ अपने जल का अर्घ्य चढ़ाकर संतप्त मातृभूमि को सतत शीतल बनाता रहता है। द्वारिका से लेकर भावनगर तक के किनारेवाले इस रत्नाकर-सागर के सामने की ओर कोई किनारा है ही नहीं। ऐसे भव्य सागर-तट के वे दिव्य ज्वारभाटे, आकाश से लगा हुआ उसका असीम अंचल भीषण बीचिमाला की उसकी अनन्त श्रेणियाँ और उसका गहरा नीला रंग मानव-हृदय में अतृप्त जिज्ञासा संसार की थाह लेने की महत्त्वाकांक्षा और नयी-नयी साहसिकता के लिए आगे बढ़ने की आकांक्षा उत्पन्न करते हैं।

फिर इधर महासागर के तट पर पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ बालू का विशाल पट चित्त पर निराला ही असर डालता है। इस पट में यात्रा करते हुए न तो दीखता है समुद्र का पानी और न नजर आती है शस्यश्यामल भूमि। जरा-सी धूप तेज होते ही वहाँ पर मृगजल के सरोवर लहराते हुए नजर आते हैं और उस निर्मल जल के किनारे झूलती हुई नारियल की वृक्ष-घटा अपनी मनमोहक परछाईं उसमें डालती हुई दीख पड़ती है। बुद्धि और पिछला सारा अनुभव चीख-चीख कर कहता रहे कि वहाँ पर जमीन है, पानी है ही नहीं, फिर भी आँखें हमें उस स्थान पर घसीट लाकर जब बुद्धू बनाती है, तभी उन सरोवरों का और किनारेवाले नारियलों का मिथ्यात्व प्रतीत होता है। फलतः कट्टर-से-कट्टर नास्तिक को भी वेदांत की—संसार के मिथ्यात्व की—तरंगों में दिलचस्पी आने लगती है।

संक्षेप में 'बरडा' के उस छोटे - से प्रदेश में पृथ्वी की सारी भूगोल के लाक्षिणक स्वरूप मौजूद हैं। सब प्रकार की भौगोलिक संस्कृतियों को वहाँ शरण मिल सकती है। नदी-किनारे की प्रेरणा वहाँ प्राप्त है। भादर के तटवर्ती हरे-भरे खेत संतोष प्रदान करते हैं। पहाड़ियों की तपस्या आकर्षक है। 'बरडा' की चोटी और दरियों में मतंगाकार भैंसों को लेकर जाते हुए अहीर और चारणों की ऊँची ललकारें वेदकालीन ऋचाओं की याद दिलाती हैं; समुद्र की गंभीरता हृदय को गहराई में ले जाती है; सामुद्रिक व्यापार देश-विदेश की संस्कृतियों का संबंध पैदा करता है; और मृगजल की माया सावधान बनाती है। ऐसी जगह पर बसा हुआ समाज सर्वतोमुखी कुशल हो, यह स्वाभाविक ही है। यदि नहीं होता तो उसका सबब बाहर से सिरपर सवार होनेवाला कोई खतरनाक संकट ही हो सकता है। (क्रमशः)

---

१ राजा के साथ झगड़ा हो जाने पर राज्य के भाई-बन्धु या बहादुर राज कर्मचारी या फ़ौजी व्यक्ति रियासत का त्याग कर रियासत के प्रति बाग़ी हो जाता है तब वह 'बहारवटिया' कहलाता है। हिन्दी में इसका कुछ भाव 'बटमार' शब्द में आता है परन्तु बहार-वटिया अकसर राजनैतिक भूमिका के बटमार होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूना-सम्मेलन के अनुभव

[भानुकुमार जैन]

[मैं समझता हूँ कि भानुकुमारजी के इन आलोचनात्मक विचारों को पाठक आत्म-निरीक्षण की भावना से पढ़ेंगे। अपने पत्र में उन्होंने यह आशंका प्रकट की है कि 'इसे छापने का साहस हिन्दी के अन्य पत्रों को न होगा।' मैं नहीं कह सकता उनका यह भय कहाँतक उचित व यथार्थ है ? ह० उ०]

पुणें सम्मेलन में जाने की पूर्व तैयारी न थी। अभी-अभी १५ दिन स्वदेश और अन्य स्थानों में भ्रमण कर लौटा ही था कि साथियों ने कहा—पुणें-सम्मेलन चलना है। ७ बहिनें और ५ बन्धुओं का संघ चल पड़ा। यह संघ 'बम्बई हिन्दी-विद्यापीठ' के कार्य्यकर्त्ताओं का था।

पुणेंवाले अतिथियों का स्वागत करना खूब जानते हैं। उनके आराम का पूरा खयाल रखते हैं। विनय और स्वयंसेवकी—पथप्रदर्शकवृत्ति उनमें खूब है। स्त्री पुरुषों का एक क्षेत्र में समरस होकर कार्य करना, निष्ठा, लगन और तत्परता ये सब महाराष्ट्र के ग्रहण करने योग्य गुण और संस्कार हैं।

स्वागत-समिति की अपनी कठिनाइयों के होते हुए भी जिस व्यवस्था से सम्मेलन का कार्य्य हुआ, वह अभिनंदनीय था। सुना है—स्वागत-समिति के पास हिन्दी के कई प्रतिष्ठित विद्वानों के ऐसे पत्र आये थे जिन्होंने पुणें आने के लिए स्वागत-समिति से कई अप्रासंगिक और उजड्ड शर्त्तें पेश की थीं कि जिनका उत्तर देना भी इष्ट नहीं था। हिन्दी-भाषी विद्वानों की संस्कृति का यह एक नमूना था।

काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की ओर से (या स्वतंत्र ?-पता नहीं) एक पुस्तक-विक्रेता भी वहाँ पुस्तकें बिछाकर बैठे थे। नयी प्रकाशित 'हिन्दी' पत्रिका और कुछ अन्य छोटे ट्रेक्ट श्री वैशंपायनजी (स्वागताध्यक्ष महोदय) को खरीदने पड़े। कम-से-कम पत्रिका तो बिना मूल्य और प्रचारार्थ देना उन पुस्तक-विक्रेता महोदय का कर्त्तव्य था। लेकिन वे स्वागताध्यक्ष महोदय को भी न जान सके और शायद उन्हें इसका अधिकार भी न हो! लेकिन ऐसे मौकों पर प्रमुख व्यक्तियों को जो व्यक्ति जान सके ऐसा ही कार्यकर्त्ता होना चाहिए।

श्री नृसिंह चिन्तामणि केलकर का भाषण मननीय था। श्री संपूर्णानंदजी का भाषण पठनीय, काम की बातों से युक्त और व्यवहार्य था। मुख्य और विभागीय स्वागत-भाषणों में जितनी विचार-सामग्री, राष्ट्र और संस्कृति के प्रति प्रेम, लगनशीलता समर्पणवृत्ति और भावना-पूर्णता थी वह हमारे हिन्दी के महारथी भाषण-कर्त्ताओं के लिए अनुकरणीय और आदर्श थी।

पूज्य टंडनजी का भाषण काफी गंभीर था; जो उनके हृदय की सचाई और उनके व्यक्तित्व को प्रगट करता था। उनपर होनेवाले तरह-तरह के आक्षेपों का पूर्ण निराकरण श्री टंडनजी ने किया। सम्मेलन के मुख्य कर्णधार श्री टंडनजी ही हैं, महाराष्ट्रवासियों ने इस तथ्य को पुणें में अनुभव किया।

पूज्य काका साहब का अंतिम दिन का और इतिश्री का भाषण मार्मिक था। काशी-सम्मेलन में इससे भी ज्यादह मार्मिक भाषण हम उनका सुन चुके थे।

मनोरंजन का कार्यक्रम बिना जातीय भेद-भाव के महाराष्ट्र में प्रचुर मिलते हैं। स्त्री-पुरुष सम्मिलित रूप से नाटकादि और अन्य सामाजिक कार्य्यों नें हिस्सा ले सकते हैं। इसे हिन्दी प्रान्तों के प्रतिनिधियों ने वहाँ देखा। इस एकीकरण को उन्हें अपनाना चाहिए। औंध की राजकन्या का कीर्त्तन प्रायः सबको पसंद आया। मैंने तो अन्य प्रौढ़ कीर्त्तन देखे हैं, इसलिए उसमें सिर्फ अभिनयात्मक ढंग ही लगा। लेकिन राष्ट्रीय और प्रचार कार्य के लिए, खासकर ग्रामीणों, अपढ़ और मूर्ख जनता के लिए—मेरा विश्वास है—हरिकीर्त्तन से बढ़कर और कोई अच्छा उपाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। एक बात और है—इस हरिकीर्तन में चाहे भगवद्भजन ही हो और कुछ व्यक्ति चाहे उस भगवद्भजन को नापसंद ही करते हों; लेकिन कई व्यक्तियों के झुंड का लय और तालबद्ध होकर एक स्वर में आत्मानंद को प्राप्त होना कितना सुखदायक है! इसे हरिकीर्तन में बैठकर ही जाना जा सकता है। मतवाली मीरा का आत्मानंद और भगवान कृष्ण की रासलीला का आनंद शायद इसमें मिल सकता है; पर मेनका और उदयशंकर आदि विश्वविख्यात नर्तकों के नृत्य में नहीं। कारण—उनमें Professional (व्यापार) और दर्शाने की वृत्ति (भावना) ज्यादह काम करती है।

स्वागत-समिति ने कवि-सम्मेलन न रखकर दूरदर्शिता का काम किया था; पर मनचले दोस्तों को हिन्दी और हिन्दीवालों की कहाँ चिन्ता है? स्वागत-समिति द्वारा पूर्व निश्चित कार्यक्रम में भी खलल डालकर कविसम्मेलन कर ही डाला। "मान न मान, मैं तेरा मेहमान" का प्रदर्शन किया। एक षोडशवर्षीय कुमार भी शृंगारिक कविता सुना गये। लोग चकित हुए। श्री बेढबजी की एक-दो रचनाएँ भी श्रोतावर्ग को अप्रासंगिक लगीं। हमारा समाज या साधारण जन-वर्ग अभी इतना आगे नहीं बढ़ा है। और न सामूहिक अवसरों पर इतना आगे बढ़ना इष्ट ही है।

खुले अधिवेशन में एक साधारण प्रस्ताव पर कई घंटे सिर्फ मत लेने में ही गुजर गये। जबकि टंडनजी (स्पीकर आफ दि यू० पी० एसेम्बली) मौजूद थे। सम्मेलन के कार्यकर्त्ता और विद्वान् प्रतिनिधियों की यह अक्षमता सराहनीय नहीं। काशी सम्मेलन की धींगामस्ती का हमें भान है। फिर हमारे बम्बई के जीवन में भी हिन्दी-भाषियों की जो दुर्दशा इस नाते है, उसका भी हमें कटु अनुभव है। हम हिन्दीवालों की यह दुर्दशा कब सुधरेगी, हम नहीं जानते।

मेरा ख़याल है पुणेंवालों में सहयोग और कार्य्यप्रणाली का ज्ञान अच्छा है। लेकिन हम चाहे थोड़े से ही प्रतिनिधि वहाँ गये; उनपर हमने कोई स्थायी और प्रभावकारी छाप नहीं छोड़ी। व्यवहार, सफाई और साधारण शिष्टाचार के नियमों तक का हमने उल्लंघन किया है। नूतन मराठी विद्यालय के अधिकारियों ने विद्यालय को एक पवित्र और विद्याप्रचारिणी संस्था समझकर दम्पतियों को ठहराने की आज्ञा स्वागत-समिति को नहीं दी थी। लेकिन एक कुटुंब को यह शिकायत बड़े असंतोषपूर्ण शब्दों में करते मैंने सुना। नैतिक दृष्टि से इस शिकायत में कितना अविवेक था यह कल्पना की जा सकती है।

हमारे प्रतिनिधियों ने इस संस्था की गेलरियों, कमरों और दीवालों की जड़ों को पान की पीक और थूक से गंदा कर रखा था। पानी की टांकी वाले तुरंत साफ़ हो सकनेवाले पाखानों को भी गंदा हमने देखा। हमारे साहित्यिकों में स्वास्थ्य के नियमों की इतनी जानकारी तो होना ही चाहिए! इतना होने पर भी किसी स्वागत-सदस्य की ओर से इस वाजिब शिकायत की कानाफूसी तक हमें जानने का मौक़ा नहीं मिला। अतिथि-सत्कार में मौन सहनशीलता यहाँ देखने को मिली।

कई सम्मेलन के पदाधिकारियों और साहित्यिकों में हमें छिछलापन और बचपन नजर आया। हमारे प्रतिष्ठित और मान्य कवियों—यहाँ तक कि किसी श्रद्धापात्र कवियित्री के लिए भी भद्दा मज़ाक हमने इन लोगों से सुना। हम शरम के मारे गड़ गये और हमारा दुःख इस नाते अपार है।

उच्च संस्कारिता, गंभीरता और व्यक्तित्व की छाप लेकर हम महाराष्ट्र से चले। अपने-अपने प्रान्त की योग्य संस्कृति का प्रतिनिधित्व और सभ्यता का प्रदर्शन हमें पुणें जाकर करना था; पर हम हिन्दीवालोंने वहाँ जाकर देने का सब कुछ गँवाया और सीखने का बहुत-सा मसाला लेकर चले आये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मक़बरे'

[शादीराम जोशी]

न जाने इस बात में क्या रहस्य है कि पहले तो आदमी बड़ी-बड़ी दीवारें और छतें खड़ी करके चलती हवा का प्रवेश बंद कर दे और फिर पंखे लगा-लगाकर हवा को चलता हुआ अनुभव करने की कोशिश करे: पहले तो परदे डालकर दिन ही में अँधेरा कर ले और फिर उस अँधेरे को दूर करने के लिए बिजली की बत्तियाँ जलाये; पहले तो प्रकृति से नाता तोड़कर ईंटों और पत्थरों के संदूकों में अपने आपको बंद कर ले और फिर गमलों में फूल और पौदे लगाकर प्रकृति का सम्पर्क प्राप्त करने की कोशिश करे।

मनुष्य के सर्वांगीण जीवन का विकास प्रकृति की गोद ही में हो सकता है। प्रकृति से दूर रह कर, बनावटी परिस्थितियों में रहकर, न शारीरिक विकास ठीक तौर पर हो सकता है और न मानसिक और आध्यात्मिक। पृथिवी, जल, वायु और प्रकाश का समन्वय शरीर की पुष्टि के लिए है। प्रकृति के साथ सम्पर्क में आने ही से मस्तिष्क और हृदय का विकास होता है। परन्तु जीवन के विकास को रोकने के लिए हम अपने आपको मकान कहलानेवाले पिंजरों में बंद कर लेते हैं।

मक़बरों के अंदर तो मृतक शरीर ही को रखते हैं, पर इन मकान कहे जानेवाले मक़बरों के अंदर जीवित शरीर को मृत्यु के नज़दीक पहुँचाने के लिए रखा जाता है।

ये मक़बरे बनाये भी बड़ी मेहनत से जाते हैं। इनको हासिल करने के लिए झूठ, फरेब, बेईमानी, हिंसा सभी की शरण ली जाती है।

धूप, वर्षा, सर्दी और आँधी से बचने के लिए ही तो घर की ज़रूरत है, पर इस डर को इतना बढ़ा लिया गया है कि सारा जीवन इसी डर से पूरे तौर पर बचने के लिए इंतजाम करने में लग जाता है।

एक अजीब भाव मनुष्य में घुस बैठा है कि बड़ा कहलाने के लिए बड़ा 'मक़बरा' होना ज़रूरी है। इस 'बड़ा कहलाने' ने संसार में बहुत उपद्रव मचा रक्खा है। 'बड़ा बनना' तो शुभ बात है पर केवल 'बड़ा कहलाना' और बड़ा समझा जाना दूसरी बात है। मनुष्यत्व को न बढ़ाकर हम केवल बड़े 'मकबरे' की सहायता से बड़ा कहलाना चाहते हैं। जिस तरह हम मुर्दे को बड़ी भारी कब्र में दबाकर उसका गौरव बढ़ाना चाहते हैं उसी तरह बड़े मकान में रहकर हम अपने को बड़ा बनाना चाहते हैं।

मकान धन - सम्पत्ति का विज्ञापन करने के लिए भी बनाया जाता है और धन-सम्पत्ति की रक्षा करने के लिए भी। पहले विज्ञापन करके चोरों को उकसाया जाता है और फिर उनके यत्न को विफल करने के लिए इंतज़ाम किया जाता है।

धर्म को भी 'मकबरों' में रहने की आदत हो गयी है। जितना बड़ा मंदिर या मस्जिद या धर्मस्थान, उतना ही अधिक वह पवित्र और दर्शनीय! जितना बड़ा धर्मस्थान होता है, जितना अधिक पत्थर, ईंट, चूना और लोहा इसमें लगा होता है अक्सर उतना ही यह पाप का पुंज होता है। यदि परमात्मा 'दरिद्रनारायण' है, यदि राम निर्बलों का है, तो वह ऐसे 'धर्मस्थान' में कब आने लगा?

शिक्षा को भी बड़े-बड़े 'मक़बरों' में कैद कर दिया गया है। जितनी बड़ी इमारत, उतनी ही बड़ी यूनिवर्सिटी। जितना अधिक पत्थर, चूना और लोहा इकट्ठा किया गया हो उतना ही बड़ा कालिज, विश्वविद्यालय, विद्यापीठ।

इन 'मक़बरों' ने हमारे जीवन के सभी अंगों पर अधिकार जमा लिया है। ईंट-पत्थर के पीछे पड़कर हमने जीवन के तत्त्व को नष्ट कर दिया है, जीवन के उद्देश्य को भुला दिया है और अंधाधुंध भागे चले जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत प्रश्न

जीवन-साहित्य में समालोचना का स्थान

यदि हम साहित्य को जीवन का छायानुवाद कहें, तो समालोचना को जीवन से साहित्य को संलग्न करने का साधन कह सकते हैं। साहित्यकार अपने जीवन के अनुभव को, जीवन के आदर्शों को कलात्मक रूप देकर साहित्य द्वारा प्रदर्शित करता है, तो समालोचक रचनाओं के गूढ़ रहस्यों का उद्‌घाटन कर रचयिता के जाग्रत जीवन से पाठकों का निकट सम्बन्ध स्थापित करता है और बतलाता है कि लेखक नैसर्गिक नियमों और जीवन-सिद्धान्तों को समझने में कहाँ तक सफल हुआ है, वह निरूपण करता है और पाठकों के सामने जीवन का एक भावमय चित्र खींचता है; अतः समालोचना पूर्णतया जीवन-साहित्य कहलाने की अधिकारिणी है।

समालोचना अब भी हिंदी-संसार में साहित्य का एक दूषित अंग ही समझी जाती है। कुछ हद तक ठीक भी है, जब अधिकांश समालोचकों ने साहित्यकारों व उनकी रचनाओं पर अनावश्यक दोषारोपण या उनकी अत्यधिक प्रशंसा करना ही अपना काम बना लिया है तो वह समझी भी क्या जाय? हो सकता है कि कुछ लेखकों के उपेक्षा का पात्र होने पर या कुछ लेखकों के प्रति अपनी मित्रता निभाने के लिए वे ऐसी समालोचना करने लिए प्रेरित हों किन्तु वे भूलते हैं कि लेखकों को प्रोत्साहित या निरुत्साह करना ही उनका कर्त्तव्य नहीं है। पाठकों के प्रति भी उनके कुछ कर्त्तव्य हैं। रचनाओं के गुण-दोष-निदान व उनको साहित्यिक कसौटी पर कसकर उनके संबन्ध में अपना निर्णय देने के साथ-साथ उनकी बारीकियों को प्रत्यक्ष व स्पष्ट रूप में पाठकों के सामने रखना भी समालोचक का कर्त्तव्य है। यदि वह अपने ज्ञान व विशेष अध्ययन द्वारा रचनाओं के तत्त्वों को समझने में समर्थ हुआ है, तो यह कदापि अनुचित है कि वह उनके आनन्द से पाठकों को वंचित रखे। साहित्यकारों को उसे इधर-उधर न भटकने देकर ठीक रास्ते पर लाना चाहिए और पाठकों का ध्यान उस मार्ग की मनोरंजक व शिक्षाप्रद वस्तुओं की ओर आकर्षित करना चाहिए। साहित्यकारों के प्रति उसका कर्त्तव्य पथप्रदर्शक का है और पाठकों के प्रति परिदर्शक का।

पथप्रदर्शक के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि समालोचक का ज्ञान-भांडार परिपूर्ण हो जो गम्भीर परिशीलन व मनन द्वारा ही सम्भव हो सकता है। यह बिल्कुल भ्रांत धारणा है कि केवल प्रतिभाशाली पुरुष ही आलोचना करने में समर्थ हो सकता है। एक तो यह जानना कठिन है कि कौन प्रतिभाशाली है और कौन नहीं, फिर यदि किसी में आलोचना की प्रतिभा वर्तमान भी हो तो उसको इतना स्वाभिमानी न होना चाहिए कि वह किसी भी लेखक पर और किसी भी विषय पर बिना उनके सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त किये टीका-टिप्पणी करने बैठ जाये।

इस प्रकार की आलोचनाओं में प्रायः यह देखा जाता है कि समालोचक ऐसे विचारों का प्रतिपादन करता है जिनका मुख्य विषय से कोई सम्बन्ध नहीं होता और कभी-कभी रचनाओं के आधार पर ही लेखक के आचरण के सम्बन्ध में अपनी सम्मति निर्धारित कर जाती है और उसपर व्यक्तिगति आक्षेप होने लगता है, इससे बड़ा अनर्थ हो जाता है। अँग्रेज़ी साहित्य के भावुक कवि कीट्स की तो समालोचकों ने जान ही ले डाली। समालोचक को कम-से-कम समकालीन साहित्य-का दिल दुखाकर उनको निरुत्साह नहीं करना चाहिए। यदि वह उनकी रचनाओं में कुछ दोष पाये, तो अच्छे साहित्य से उनकी तुलना करके यह दिखाये कि वे किस प्रकार जीवन-सिद्धान्तों के प्रतिकूल हैं और उच्च आदर्शों से कितनी नीचे गिर गयी हैं। यह हो सकता है कि किसी साहित्यकार की रचना कला की दृष्टि से उच्च-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोटि की हो, पर उसमें उच्च आदर्शों का अभाव होने के कारण वह पाठकों को वासनामय जीवन की ओर प्रवृत्त करे। समालोचक को इन गुण–दोषों पर पूर्ण प्रकाश डाना चाहिए और यदि वह पाठकों का ध्यान रचनाओं की उच्च कला की ओर आकर्षित करे, तो साहित्यकारों द्वारा निर्धारित नियमों पर अनावश्यक जोर देकर किसी प्रगतशील रचयिता को जकड़ लेना भी उचित नहीं है। बस यह देखना पर्याप्त है कि साहित्यकार अपने भावों व सिद्धान्तों को प्रकट करने में कितना सफल हुआ है और उसकी शैली भाव-व्यञ्जना में किसी प्रकार बाधक ता नहीं है।

हिन्दी-साहित्य में समालोचना के एक अंग की ओर उचित ध्यान नहीं दिया गया है, वह है उत्कृष्ट रचनाओं के प्रति पाठकों के हृदय में अनुराग उत्पन्न करना। कुछ हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के आलोचना-स्तभों में रचनायें कसौटी पर तो कसकर बिठायी जाती हैं और उनके गुण-दोषों को अच्छी तरह तोल दिया जाता है, पर यदि गुणों का पलड़ा भारी हो तो उनकी तरफ़ पाठकों की दिलचस्पी पैदा करने के लिए बहुत कम प्रयत्न किया जाता है। किसी पुस्तक की आलोचना पढ़कर पाठक के हृदय में रह-रहकर यह विचार उत्पन्न होना चाहिए कि उस पुस्तक का पढ़ना उसके लिए अनिवार्य है और वह उसके जीवन में नयी ज्योति ला सकती है। समालोचक को यह दिखाना चाहिए कि लेखक ने किस खूबी से उसकी आशाओं, निराशाओं, उद्देश्यों व सिद्धान्तों पर नया प्रकाश डाला है ताकि बिना पुस्तक को पढ़े हुए उसको चैन न पड़े। इस प्रकार पुस्तकों की बिक्री ही न बढ़ेगी बल्कि जनसाधारण में शिक्षा का प्रसार भी होगा और साहित्यकार भी उचित पारिश्रमिक पाकर अधिक साहित्य-सेवा करने में समर्थ हो सकेंगे।

मोहनचन्द्र जोशी

उलझन

मैं अपनी एक उलझन 'जीवन - साहित्य' परिवार के सामने रखना चाहता हूँ, और चूँकि उस उलझन का अनुभव और उसे सुलझाने का प्रयत्न हममें से बहुत से करते रहे होंगे, मैं उनसे प्रकाश की आशा रखता हूँ।

वैसे तो हमारे मुल्क में 'पढ़े-लिखों' की कमी है—शायद सौ में .दस हों, ऐसा कुछ शास्त्री कहते हैं—और उन थोड़े से 'पढ़े-लिखों' में से भी ऐसे बहुत कम हैं जो अपनी स्कूली और कॉलेजी शिक्षा खत्म कर लेने के बाद भी किताबों से, या जिसे साहित्य कहते हैं उससे, प्रेम रखते हों। पर शायद मेरे जैसे अभागों की भी कमी नहीं है जिन्हें **"जितना कुछ छापे की स्याही से रँगा जाता है वह सब, बँधा हुआ या न बँधा हुआ काग़ज़** अपनी **नजरों से गुज़ारने"** का मर्ज़ आ गया है। इतनी ग़नीमत है कि यह शौक़, जहाँ तक शौक़ का ताल्लुक है, मेरे लिए ज्यादातर हिन्दी भाषा के साहित्य तक ही सीमित है। पर कभी-कभी तो मैं स्वयं घबड़ा जाता हूँ मेरी इस 'किताबियत' से। यह मर्ज़ अब यहाँ तक बढ़ गया है कि मैं अपने जगने के समय के एक क्षण में भी, जब मैं और कोई काम में न लगा हूँ—'चुपचाप' नहीं बैठ सकता। एक बार मेरे एक मित्र ने मेरी यह आदत देखकर कहा था कि यह भी आजकल के 'सभ्य समाज' के लोगों का एक मर्ज़ है कि वे एक मिनिट भी ख़ाली हुए कि छपी हुई कोई चीज़—किताब हो या सिनेमा मेगेज़ीन या और कोई पत्र-पत्रिका— उठा लेते हैं और बिना किसी मतलब या मक़सद के पढ़ते चले जाते हैं; पर यदि उनसे कहा जाय कि आप घंटा आध घंटा खुले आकाश के नीचे लेटकर और कुछ न कीजिए सिर्फ़ तारों को और उनकी गति को देखा कीजिए, तो यह उनसे न हो सकेगा।

पर इसमें मेरा दोष भी क्या है? ईश्वर की देन से अव्वल तो मेरा आजीविका सम्बन्धी काम भी ऐसा है कि मुझे रात-दिन लिखते-पढ़ते ही बीतता है। छोटी-बड़ी सब सरकारी रिपोर्टों और कमिटी-कमीशनों की रिपोर्टों से लेकर व्यापारिक सभी पत्र-पत्रिकाएँ और साहित्य—भारतीय और विदेशी—पढ़ना मेरे काम का एक अंग है। इसके बाद अपने जीवनादर्श और रुचि के अनुकूल कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य पढ़ना भी तो ज़रूरी है। महात्मा गांधी के 'हरिजन'--और जबसे उन्होंने ज्यादातर लेख मूल गुजराती में लिखने की घोषणा की, तबसे गुजराती 'हरिजनबन्धु'—पढ़ना तो लाज़मी है ही। फिर इसी विचार-धारा की पुष्टि में 'सर्वोदय' को पढ़े बिना भी जी नहीं मानता। गांधीजी की अन्य प्रवृत्तियों के परिचायक 'नई तालीम', 'खादी-पत्रिका,' 'ग्रामोद्योग पत्रिका' और "सब की बोली" भी पढ़ना ही होता है। फिर हिन्दी 'साहित्य' से भी थोड़ा सम्पर्क बनाये रखने को 'विशाल-भारत' और 'हंस' भी मँगाता हूँ, और अब इस सारी लिस्ट में "जीवन-साहित्य" और बढ़ गया! अंग्रेज़ी में और तो नहीं, पर सुप्रसिद्ध अमेरिकन संकलन-मासिक "Reader's Digest" पढ़ने की इच्छा तो रहती ही है।

अब आपमें से कोई भी बतावे कि मैं इनमें से कौनसी चीज़ बिना पढ़े छोड़ दूँ? और सभी पढ़ने के लालच में मुझे अब एक क्षण भी बिना पढ़े रहने की फ़ुरसत नहीं मिलती और श्री प्रभाकर माचवे ने जैसा अपने लेख "श्रम-पूजा" में लिखा है—"दृष्टि इतना अधिक परिश्रम करती है कि उसने दूसरे अवयवों से शक्ति छीन ली है," हालाँकि दैवकृपा से अभी "सहायक उप-नेत्रों" की आवश्यकता नहीं हुई है। और यह तो मैंने सिर्फ़ सामयिक पत्र-पत्रिकाओं की बात कही। इसके अलावा पुस्तकों के रूप में स्थायी साहित्य पढ़ने की इच्छा भी लगी ही रहती है। पर यहाँ भी पढ़ने की सामग्री इतनी है कि न पूछिए! जब मैं कॉलेज में था तब दिन के दिन बल्कि यों कहना चाहिए कि मेरा सारा समय ही—इस उधेड़बुन में बीत गया कि पढ़ना आख़िर शुरू किस लेखक की कौनसी पुस्तक से किया जाय? मुझे अच्छी तरह याद है कितने ही ऐसे दिनों की जब मैं लखनऊ और इलाहाबाद विश्व-विद्यालय के पुस्तकालयों में किताबों की कतार के सामने खड़ा होकर घंटे-के-घंटे इसी पसोपेश में बिता देता था कि रस्किन की कृतियाँ पहले पढ़ना शुरू करूँ या टॉल्स्टॉय की? और समय पूरा होने पर बिना दोनों में से कुछ पढ़े वापस लौट आता था। जो आगे इस तरह चुनाव की ज़रूरत न समझते हों और "'ह्वीलर-स्टॉल' से लगाकर शहर की पब्लिक लाइब्रेरी तक में जितना कुछ छापे की स्याही से रँगा हुआ" कागज़ मिले उसे ही पढ़ने लगे, उनके लिए समस्या शायद इतनी मुश्किल नहीं है!

छपाई के आविष्कार से संसार का बहुत बड़ा उपकार हुआ है इसमें सन्देह नहीं, पर जब मैं ऊपर लिखी बातों पर सोचता हूँ तो कभी-कभी मुझे यह भी ख़याल आता है कि अगर छापेखाने की ईजाद न हुई होती, तो ही क्या बुरा था? सितम्बर के 'जीवन-साहित्य' में श्री हरि रामचन्द्र दिवेकर ने अपने लेख में प्राचीन काल के वैदिक आर्यों के एक सूक्त का उल्लेख किया है। श्रावणी पूर्णिमा को इस सत्र का उपाकर्म, आरम्भ होता था और पौषी पूर्णिमा के लगभग उत्सर्जन! **"सालभर में जो नया साहित्य निर्मित होता था उसकी छानबीन इस पंचमासिक सत्र में बड़े-बड़े आचार्यों द्वारा होती थी... ग्राह्य का स्वीकार करके त्याज्य का उत्सर्ग किया जाता था।"** आज तो ऐसे सत्रों की अत्यधिक आवश्यकता है—पर छापेखाने के युग में यह बात लगभग असम्भव-सी लगती है। और किसी रूप में इस तरह का उपाकर्म और उत्सर्ग करने के बाद भी आज इतनी विपुल मात्रा में हमारे पढ़ने की सामग्री बच जाती है कि उससे किस तरह पेश आवें, यह एक बड़ी समस्या है। "जीवन-साहित्य" में प्रकाशित आचार्य विनोबा का 'सिर्फ़-शिक्षण', श्री माचवे का 'श्रम-पूजा', श्री वियोगी हरि का 'लेखक से—' श्री वासुदेवशरण अग्रवाल का 'पृथिवी-पुत्र' आदि सभी लेख इसी विचारधारा की पुष्टि करते हैं कि कोरे पढ़ने-लिखने से हम हमारा या दूसरों का कोई उपकार नहीं कर सकते। हमें कुछ करना चाहिए। और कौन विचारशील व्यक्ति इससे इनकार करेगा? पर जैसा मैंने शुरू में कहा था, मेरे जैसों की उलझन कैसे दूर हो? थोड़ा बहुत चुना हुआ साहित्य पढ़ना भी चरित्र-गठन और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन को बल देने को ज़रूरी है—पर यह 'थोड़ा-सा' पढ़ने की लालच में ही जागने के सारे क्षण चले जाते हैं !

आपने भी तो ऐसी उलझन का सामना किया ही होगा ! क्या कोई उपाय बतायेंगे ?

सिद्धराज ढड्ढा

नामोपार्जन की लालसा

नामोपार्जन की लालसा कितनी प्रबल है, यह जमाना ही बतला रहा है तथा इसका किंचित आभास 'जीवन-साहित्य' के गत अक्टूबर के **"क्या और कैसे ?"** स्तम्भ के **'सस्ती ख्याति'** से मिलता है ।

नामोपार्जन की इच्छा को हम बुरा नहीं कह सकते और कार्यकर्त्ता या सच्चे कर्मवीर के पीछे नाम तो स्वतः ही परछाँई की नाँई दौड़ता चला जाता है, परन्तु व्यर्थ की यशोलिप्सा से नाम का झण्डा फहराने की कोशिश करना अपनी उन्नति के मार्ग में काँटों का जाल बिछाना है ।

नामोपार्जन में भी एक रहस्य भरा पड़ा है और इसे नामेच्छुक ही जानते हैं । यह नामोपार्जन की सनक जहाँ बुद्धिमता दर्शाने का जरिया है, वहाँ नासमझी का द्योतक भी । जो विद्वान हैं उनके नाम के आगे उपाधियाँ लगाना तो ठीक है, परन्तु जो लोग नाम को ही अलंकृत करने मात्र की गर्ज से खरीदी हुई उपाधियों को सिर पर बैठाये रहते हैं, उनकी मौके पर बड़ी छीछालेदर होती है । साहित्य-क्षेत्र में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो केवल नामोपार्जन की गर्ज से ही अपने आपको उपाधियों से जबरन् विभूषित किया चाहते हैं ।

आप यह सुनकर आश्चर्य करेंगे कि परीक्षा-केन्द्र के व्यवस्थापकों और परीक्षकों तक को इन नामोपार्जन के इच्छुकों ने अपने पाश में बाँध लिया है । मेरे कुछ मित्रों से पता चला कि उन्होंने किस तरह से परीक्षा पास की । केन्द्र-व्यवस्थापक के दबाव से परीक्षा में बैठ गये और उनकी सहायता से प्रश्नों को हल करके अच्छे नम्बरों में पास हो गये !

इस काम में पत्रकारों का भी कम हाथ नहीं है ! इस रोग के कीटाणु कई सम्पादकों के भी रोम-रोम में घर कर गये हैं । कई पत्र तो ऐसे हैं जिनका उद्देश्य ही सिर्फ नामोपार्जन की पिपासा शान्त करनेवालों से रुपया ऐंठना उनके चित्र-सहित उनके नाम से कविता और लेखादि छापना है—क्या ऐसे लोगों से भी पत्रकार-कला की प्रगति की आशा की जा सकती है ?

स्वयं निरक्षर-भट्टाचार्य रहते हुए बड़े-बड़े अक्षरों में अपने नाम से प्रकाशनार्थ निबन्ध भेजना, कवि-सम्मेलनों में लम्बी-लम्बी कवितायें पेश करना, खिताब के लिए न जाने कितना पैसा बहाना ये तो मामूली बातें हैं । हम सच्चे साहित्यक बनने की इच्छा रखें, साहित्य हमारा स्वागत करेगा; परन्तु हम नामोपार्जन की कुत्सित भावना को त्यागकर साहित्योन्नति की सद्भावना से काम करें । हमारा नाम अवश्य होगा । परिश्रम का फल अवश्यम्भावी है । काम करनेवालों को इश्तिहारबाजी की आवश्यकता नहीं, परिश्रमी का प्रकाश तो सूर्य-रश्मियों की भाँति स्वतः ही घर-घर फैल जायगा । फल तो ईश्वराधीन है ।

"कर्मण्येवाधिकारस्ते माफलेषु कदाचन"

कन्हैयालाल भिण्डा, 'शान्तेश'

समालोचनार्थ प्राप्त

अग्निगान (कविता-संग्रह): लेखक—हरिकृष्ण 'प्रेमी'; प्रकाशक—वाणी-मन्दिर, अस्पताल रोड, लाहौर; पृ० सं० ९६ + ११; मूल्य १)

निर्झर (कविता-संग्रह) : लेखक—श्री रामकृष्ण भारती; मूल्य ।।) प्रकाशक—हिन्दी-भवन, लाहौर पृ० सं० ७५

मुगल बादशाहों की हिन्दी : लेखक—चन्द्रबली पाण्डे; एम० ए०; प्रकाशक—नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी; पृ० सं० १०४; मूल्य ।।)

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का २८वाँ वार्षिक विवरण (संवत् १९९६-९७)

प्रकाशक—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रयाग

(शेष पृष्ठ ३५३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कसौटी पर

लड़खड़ाती दुनिया : ले०—पं० जवाहरलाल नेहरू : प्रकाशक—सस्ता साहित्य मण्डल; नयी दिल्ली; पृ० सं० १७१; मूल्य ।।)

इसमें सन्देह नहीं कि अन्तर्राष्ट्रीय विषयों में साधारण भारतीय जनता की रुचि पैदा करने में पं० जवाहरलाल अग्रणी हैं। उन्होंने सबसे ज्यादा यह आवाज़ उठायी थी कि भारतीय समस्या अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का ही एक अंग है। वह भारत के सम्बन्ध में जो कुछ सोचते हैं, दुनिया की परिस्थिति को सामने रखकर सोचते हैं। उनके इस व्यापक राजनीतिक दृष्टिकोण से भले ही किसी को मतभेद हो, लेकिन उनका अगाध अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन, संसार के विविध देशों में उनका अनेक बार भ्रमण और महान् राजनीतिज्ञों से वार्तालाप व परिचय और सबसे अधिक भारतीय राजनीति में उनका प्रभुत्व—ये सब बातें शायद ही किसी दूसरे भारतीय नेता में एक साथ मिलेंगी।

प्रस्तुत पुस्तक पं० जवाहरलाल के पिछले दो-तीन सालों में लिखे गये महत्त्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक लेखों का संग्रह है। किस तरह आज की दुनिया तेज़ी के साथ महाविनाश की ओर बढ़ती गयी, और लड़खड़ाती हुई नष्ट होने जा रही है, यह विभिन्न घटनाओं के विषय में लिखे इन लेखों से बहुत स्पष्ट हो जाता है।

लेखक का विश्वास है और उन्होंने विस्तार से इसे प्रतिपादित किया है कि वर्तमान महायुद्ध का मुख्य कारण ब्रिटेन की अदूरदर्शितापूर्ण विदेशी राजनीति रही है। बहुत समय तक लन्दन के राजनीतिज्ञ इस पसोपेश में पड़े रहे कि वे "तानाशाहियों को रोककर बर्बाद करके अपने साम्राज्य की रक्षा करें या थोड़ी और रियायतें देकर थोड़े और नरम होकर लड़ाई को हर हालत में टालने और मनाने की नीति अख्तयार करके अपनी समाज-व्यवस्था की हिफ़ाजत करते रहें।" किस तरह ब्रिटिश राजनीतिज्ञ तानाशाहों के आगे झुककर इन्हें प्रबल बनाते रहे, किस तरह फ्रांस व ब्रिटेन में परस्पर अन्दर-ही-अन्दर इस नीति के परिणाम-स्वरूप कुछ मनोमालिन्य हुआ और किस तरह स्पेन, अबीसीनिया, आस्ट्रिया, अलबानिया और जैकोस्लावेकिया खतम होने दिये गये, स्पेन में प्रजातंत्रवाद का जनाज़ा निकल जाने दिया गया, इसका सजीव वर्णन करते हुए लेखक ने बताया है कि इनकी वजह से युद्ध टला तो जरूर "लेकिन अब ऐसा वक्त आ गया था कि अपने जिस्म में से गोश्त-काट-काट कर देना पड़े।" यह खतरा भी टल सकता था, यदि ब्रिटेन व फ्रांस के राजनीतिज्ञ रूस के साथ हार्दिक सधि करके जर्मनी की प्रगति को रोकने की चेष्टा करते, परन्तु लेखक की सम्मति में मि० चैम्बरलेन आदि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ पूँजीवादी समाज-व्यवस्था को बचाने की खातिर ही सब खतरे उठाने के लिए तैयार हो गये, साम्यवादी रूस से सधि करने के लिए नहीं। सचमुच यह आश्चर्यजनक पहेली है कि ऐसे आड़े समय में भी रूस और मित्रराष्ट्र क्यों नहीं मिल पाये? पं० जवाहरलाल के उत्तर के सिवा कोई दूसरा कारण यद्यपि इसे भी पुष्ट करने के लिए हमारी नम्र सम्मति में कुछ और प्रबल कारणों की अपेक्षा है। शायद मित्रराष्ट्रों को विश्वास था कि रूस और जर्मनी तो कभी मिल ही नहीं सकते, रूस झख मारकर हमारे साथ मिलेगा, हम उससे क्यों मिलने जावें? फलतः दिल खोलकर प्रस्ताव रखे नहीं गये। रूस ने भी अपना भौतिक स्वार्थ जर्मनी के साथ मिलने में देखा। ब्रिटेन भी सिर्फ़ वहीं तक बढ़ने को तैयार हुआ, जहाँ तक वह रूस से दूर-दूर रहे जा सकता था। फलतः जर्मनी और रूस, जिन्हें परस्पर लड़ाने के ब्रिटिश राजनीतिज्ञ बरसों से कोशिश कर रहे थे, मिल गये और ब्रिटेन की राजनीतिज्ञता का दिवाला संसार के सामने स्पष्ट रूप से आ गया। पोलैण्ड, रूस व जर्मनी की संधि और पोलैण्ड के बटवारे पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी लेख का न होना पुस्तक में काफ़ी खटकता है।

पं० जवाहरलाल साम्यवादी हैं, रूस के भक्त हैं, लेकिन वे भारत के हजारों साम्यवादियों की तरह आज रूस की प्रत्येक उसकी बुरी कार्रवाई के समर्थक नहीं रहे। उन्होंने खुले शब्दों में रूस की अवसरवादी नीति का विरोध किया है। आप कहते हैं कि अवसरवादी नीति से रूस की राजनैतिक सत्ता बढ गयी, लेकिन "उसके उद्देश्य को नुकसान ही हुआ। रूस की शक्ति तो उन सिद्धान्तों और आदर्शवादों में थी, जिनका वह समर्थन करता था।" रूस के पतन से पण्डितजी को जो हार्दिक वेदना हुई है, वह उनके लेखों में स्पष्ट झलकती है। वे लिखते हैं:—अपनी परम्पराओं का उल्लंघन करने की भारी गलती के लिए उसे बड़ी भारी कीमत ऐसे सिक्के में चुकानी पड़ी कि जिसका अन्दाज नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह सिक्का है असंख्य मानव प्राणियों की इच्छाओं और आदर्शों का।" दूसरी जगह वे लिखते हैं—रूस के शासकों ने "अपने सिद्धान्तों पर इतनी गहरी चोट की है जितनी एक या बहुत से दुश्मन मिलकर भी नहीं कर सकते थे।"

लोग पं० जवाहरलाल के आदर्शवाद का मज़ाक उड़ाते हैं और कहते हैं कि वे यथार्थवादी नहीं हैं। जिससे वे सहानुभूति दिखाते हैं, वही हार जाता है। भारत की राजनीति तो स्वार्थ की—बली को बलवान के साथ मेल करने की होनी चाहिए। रूस ने ठीक किया। पण्डित जी अपने बारे में की गयी इन आलोचनाओं से नावाकिफ़ नहीं हैं, परन्तु वे बहुत ऊँचे उठ जाते हैं, जब वे आदर्शों की दृढ़ चट्टान पर बैठे हुए इन आलोचनाओं का जवाब देते हुए कहते हैं—"यथार्थवाद या वास्तविकता है क्या? क्या उसके मानी मौक़े से थोड़ी देर का फ़ायदा उठा लेना है या कोई दूरंदेशी का दृष्टिकोण हमें सामने रखना चाहिए? क्या सिद्धान्तों और आदर्शों की और कसौटी है या हम सिर्फ़ बाजारू परिभाषा में ही उनकी बात सोचें?"

पं० जवाहरलाल नेहरू फासिज्म या नाजीवाद के भी उतने ही कट्टर दुश्मन हैं, जितने साम्राज्यवाद के, फिर रूस के ऊँचे भक्त भी नहीं रहे, इसलिए उनका निरीक्षण मानवता की वेदना से विकल एक तटस्थ का निरीक्षण है। उनकी लेखनशैली प्रभावोत्पादक है, भाषा सजीव है, यद्यपि कहीं-कहीं अनुवादक के दोष से अनुपयुक्त उर्दू शब्द आ गये हैं। पण्डितजी अपने विचारों और भावों को दृढ़ता से प्रकाशित करते हैं, इसलिए भाषा में उक्त न्यूनता होते हुए भी प्रवाह की कमी नहीं आयी।

पुस्तक के उत्तरार्द्ध में चीन और स्पेन की दुःसाहसपूर्ण यात्राओं का सरस सजीव वर्णन राजनीति में रुचि न रखनेवाले साधारण पाठकों के लिए भी मनोरञ्जक व उपयोगी भी रहेगा।

कृष्णचन्द्र

बुलबुल : लेखक — श्री जोतिनप्रसाद; प्रकाशक—ग्रंथमाला-कार्य्यालय, बाँकीपुर; मूल्य ।|=)

पुस्तक के आरम्भ में श्री हंसकुमार तिवारी की लिखी एक प्रस्तावना है जिससे जान पड़ता है कि यह सोलह कहानियोंवाली पुस्तक किशोरों या बालकों के हाथ में देने के लिए लिखी गयी है। "प्रकृति की विभिन्न शोभाओं, पशु-पक्षी और दृश्य—प्रयोग, जीवन और जीवन की भिन्न भिन्न समस्यायें भी उनके (बालकों के) सामने रखनी हैं। साथ ही धीरे-धीरे उन विषयों को प्रकाशित करनेवाले शब्दों के प्रयोग में भी संयम से काम लेना है, उन्हें कुछ-कुछ नये शब्दों का भी परिचय देना है।······प्रस्तुत कहानियाँ इस दृष्टि से मनोरंजक और उपयोगी हैं।"—यह प्रस्तावना के लेखक का दावा है। परन्तु यह दावा आंशिक रूप में ही सत्य कहा जा सकता है। कहानियों में दो बातों की कमी है, एक तो उद्देश्य का केन्द्रीकरण नहीं है और दूसरे, अनावश्यक विस्तार है। पहली कमी बुरी तरह से खटकती है। कहानी पढ़ते-पढ़ते जबतक अन्त में न पहुँचा जाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तबतक समझ में नहीं आता कि इसका उद्देश्य क्या है; अन्त में आकर ज़रूर जीवन और उसकी किसी-किसी समस्या की ओर लेखक अंगुलि-निर्देश करता है, परन्तु इस समस्या के प्रति शुरू से ही उत्सुकता बढ़ी हुई नहीं होती, इसलिए कहानी की सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु प्रभाव या effect की एकता तीव्रता के साथ अनुभूत नहीं होती। अधिक विस्तार से शायद बालक को फुसलाने का काम लिया गया है जो निश्चित रूप से ग़लत तरीका है। परन्तु प्रस्तावना-लेखक का दूसरा दावा बिल्कुल ठीक है। जीवन की समस्याओं के सम्मुखी न होने के लिए जिन सुकुमार भावों की जानकारी बालक के लिए आवश्यक है उनका परिचय संयम के साथ कराया गया है और नये-नये शब्दों को भी परिचित कराने में कौशल से काम लिया गया है। भाषा में भी एक मिठास और प्रवाह है। —**हजारीप्रसाद द्विवेदी**

सेवापथ — लेखक — सेठ गोविंददास; प्रकाशक — हिन्दी भवन, लाहौर; मूल्य ।॥)

गोविन्ददासजी ने कई अनेकांकी और एकांकी नाटक लिखे हैं। वास्तव में उन्होंने वर्त्तमान नाटक-कारों में एक ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया है। नाट्यशास्त्र पर भी उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये हैं। नाट्य-कला की उनकी अच्छी जानकारी है।

'सेठजी' की सबसे बड़ी विशेषता भाषा की सरलता और विचार-मौलिकता है। उलझी विचारधारा, दुरूह कल्पना और लाक्षणिक भाषा उनमें न मिलेगी। वे अग्राह्यता के स्थान पर स्पष्टता पर विश्वास करते हैं। उन्होने कुछ पौराणिक कथाओं पर भी नाटक लिखे हैं जो अच्छे बन पड़े हैं। समय की साहित्यिक रुचि ने उनका स्वरूप-निरूपण किया है। समाज की रुचि-समीचीनता ने उनको निखार दिया है।

परन्तु उनके अधिकांश नाटक समसामयिक परिस्थियों के दर्पण हैं। अधिकांश नाटकों का विषय राजनैतिक है। 'सेवापथ' का भी विषय राजनैतिक है। यह न भूलना चाहिए कि जहाँ वस्तुओं में सेठजी यथार्थवादी हैं, वहाँ प्रेरणा में वे आदर्श-वादी ही कहे जायँगे। नाटकों का अंत इस धारणा को पुष्ट करता है।

'सेवापथ' में रईसों का वातावरण-निर्माण बहुत अच्छा बन पड़ा है। इतने शीघ्र लिखे जाने पर भी भाषा स्पष्ट है। उसमें उक्ति-वैचित्र्य अथवा ध्वन्यात्मकता का अभाव भले ही हो, परन्तु यथार्थता और वैयक्तिकता पर्याप्त है। अंग्रेज़ी, उर्दू, हिंदुस्तानी शुद्ध हिन्दी, बंगाली, मारवाड़ी अनेक भाषाओं की खिचड़ी सभी देखने में आती है। जैसा पात्र है वैसी ही बोली है। पात्रों के अनुकूल भाषा होने से अभिनय-सौन्दर्य अवश्य होता है, परन्तु अभिव्यञ्जना की चातुरी, सूक्तियों का विस्तार, रसात्मक संकेत, संवादों का फुर्तीलापन अनेक भाषाओं के सहारे एक ही लेखक के लिए सम्भव नहीं। और फिर अनेक भाषाओं का ज्ञाता होकर भी कोई लेखक एक नाटक में सब भाषाओं को प्रश्रय देकर उसे अजायबघर ही बना देगा। सेठजी का ध्यान इसी लिए केवल कथोपकथन की यथार्थता की ही ओर रह सका, उक्ति - चमत्कार की ओर नहीं। यह अच्छा ही हुआ।

इस नाटक में वर्तमान युग के राजनैतिक वादों का संघर्ष कराया गया है; विशेषकर समाजवाद का उभयपक्षीय चित्रण किया गया है। पात्रों में यथार्थता और सजीवता है। कथानक में सादगी और आकर्षण है। हास्यरस का आलम्बन एक मारवाड़ी सेठ को बनाया गया है। परन्तु ऐसा कौन सेठ होगा, जो 'नियाज' को 'पियाज' समझे व चुनाव में खड़े होने की प्रार्थना पर यह कहे—'कुर्सी पर जिनावर-इनावर तो कोनी है कि ? 'शुक्रगुज़ार' को 'गँवार' समझे। इस दिशा में कुछ अतिरञ्जना से काम लिया गया है। **सद्गुरुशरण अवस्थी**

प्राणदान—लेखक श्री 'व्यथितहृदय'; प्रकाशक-बाल-शिक्षा समिति बाँकीपुर, मूल्य ॥)

प्रस्तुत पुस्तक 'व्यथितहृदय'जी के १४ एकांकी नाटकों का संग्रह है। इस समय एकांकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटक लिखने का एक फैशन चल गया है और अच्छे-अच्छे साहित्यिक अब इधर अग्रसर हुए हैं। 'प्राणदान' के सभी एकांकी नाटक करीब-करीब एक ही प्रकार के हैं। सबमें लगभग चार अथवा पाँच दृश्य हैं। वीर रस और मेवाड़ के वीरों का गुणगान उनकी विशेषता है। कुछ पौराणिक और अर्ध-ऐतिहासिक हैं। अन्तिम एकांकी नाटक में करुणा की विजय है और इसके पहलेवाले में गौतम बुद्ध के अलौकिक प्रभाव का निदर्शन है। नाटक बच्चों के लिए कदाचित् लिखे गये हैं। सातवीं और आठवीं कक्षा के विद्यार्थी को वे अच्छे भी लगेंगे और इनका अभिनय भी वह पसन्द करेगा और स्वयं भी कर सकेगा। भाषा भी सरल है। कथोपकथन सादे हैं। अलौकिक घटनाओं को भी बच्चों की सरलता के साथ अपनाया गया है। यह निश्चय है कि इसके पढ़ने से बच्चों में वीर रस का संचार होगा। इससे अधिक कला का ऊँचा रूप अभिव्यञ्जना की मौलिकता कथानकों की ऊँची निबंधना, वाह्य स्थिति के भरोसे यथार्थता की सार्वभौमिकता, गहरी भावनाओं और सहगामिनी और विरोधगामिनी कृतियों का घात-प्रतिघात, जिसका हल मानवता की बुद्धि को परास्त करनेवाला है—न मिलेगा। वास्तव में यह पुस्तक पाठ्यक्रम में त्वरा-पाठन वाली पुस्तकों की सूची में स्कूल की छोटी कक्षाओं के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

सद्गुरुशरण अवस्थी

मानव : लेखक श्री श्यामबिहारी शुक्ल 'तरल'; प्रकाशक-साहित्य निकेतन कानपुर; पृ० सं० ८०; मूल्य ।।)

एक व्यथित हृदय का चित्र 'मानव' में है। गिने हुए ६६ सवैया छन्दों का यह संकलन मानव की निराशा और दीनता को एक हद तक व्यक्त करने में समर्थ हुआ है। इसमें कहीं कहीं अत्यधिक निराशा भी मिलेगी।

"जायगा जीवन बीत ये शान्ति की
कामना ही करता रह जायगा।"

कुछ ऐसा ही है। नवयुग को कर्मण्यता विशेष अपेक्षित है। 'ज्वाल', 'आश' 'वो' प्रभृति कुछ प्रयोग चिन्त्य हैं। फिर भी निःसन्देह 'मानव' कवि के भविष्य की ओर एक शुभ संकेत है।

साहित्य-सदन अबोहर (पंजाब) के बालोपयोगी प्रकाशन

१. **ईसपनीति निकुंज**—(प्रथम भाग) **लेखक-अध्यापक रामेश्वर "करुण"; पृ० सं० ९६; मूल्य ।।)**

२. **बालगीत—लेखक रामावतार विद्या-भास्कर पृ० सं० १०४ मूल्य ।।)**

३. **बालगोपाल—लेखक अध्यापक रामेश्वर "करुण" पृ० सं० ४० मूल्य =)।।**

उपर्युक्त तीनों पुस्तकें जिनके लिए लिखी गयी हैं उनको लाभकारी ही सिद्ध होंगी क्योंकि इनकी भाषा सीधी और सरल है—यद्यपि सर्वत्र विशुद्ध नहीं। इसकी ओर लेखकों को ध्यान देना चाहिए। पुस्तकें मनोरंजक होने के साथ ही साथ शिक्षाप्रद भी हैं।

'अनिरुद्ध'

(पृष्ठ ३४९ का शेष)

गुप्ता ब्रदर्स, मंडी धनौरा (मुरादाबाद) के प्रकाशन

कताई-बुनाई : चंद्रसिंह पुंडीर, पृ० सं० १२५; मूल्य ।।।)

बेसिक गीत-संग्रह : पृ० सं० ३२; मूल्य =)

बेसिक तारीखी कहानियाँ (१) : लेखक—गोविन्ददास विनीत; पृ० सं० ९६; मूल्य ।=)

सैर-सपाटे की कहानियाँ (१) : गोविन्ददास 'विनीत' और रामकुमार अग्रवाल; पृ० सं० ६३; मूल्य ।)

हिन्दुस्तानी बातचीत (१) : रामकुमार अग्रवाल; पृ० सं० ३२; मूल्य =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-समस्याएँ

[कुछ मित्रों ने ऐसे प्रश्न पूछे हैं जो दीखने में व्यक्तिगत हैं, मगर वास्तव में सार्वजनिक महत्त्व रखते हैं, इसलिए उनका उत्तर यहाँ दे रहा हूँ। ह० उ०]

प्रश्न—आपने कई लोगों की तरह-तरह से सहायता की, कई साथियों व मित्रों को आगे बढ़ाया, लेकिन जब आपकी सहायता व सहयोग का प्रश्न आता है तब वे क्यों किनारा कर जाते हैं ? मुझे उनके इस व्यवहार से बड़ा दुःख होता है। आप इसपर कुछ रोशनी डालेंगे ?

उत्तर—मुझमें ही कोई कमी होगी जिससे ऐसा होता है, हालाँकि मुझे उनसे इसकी कोई खास शिकायत नहीं होती है। जब कभी मेरी बुद्धि ऐसा हिसाब लगाने लग जाती है तब मेरे मन में भी अनुदार विचार आने लगते हैं, किन्तु मुझे अपने लिए वे अस्वाभाविक मालूम होते हैं और मैं जल्दी ही उनसे पिण्ड छुड़ा लेने का प्रयत्न करता हूँ। फिर मैं जब किसी के लिए कुछ करता हूँ तो इस खयाल से नहीं कि इसका कोई मावजा मुझे मिले। इसलिए उस बदले का ध्यान भी मुझे प्रायः नहीं रहता। तुम्हें या तुम जैसे मित्रों को दुःख शायद इसलिए होता है कि तुम सहायतादि के लिए आदान-प्रदान के भावों से प्रभावित होते रहते होगे और इसी दृष्टि से देखते रहते होगे।

मुझे यह अनुभव तो अवश्य हो रहा है कि हमारे सेवा-क्षेत्रों में भी निरपेक्षता की नहीं, आदान-प्रदान व हिसाब-किताब के भावों की प्रबलता है। मित्रता या स्नेह या साथीपन में यह हिसाब लगाया जाता है कि आखिर मुझे इससे लाभ क्या हुआ ? लाभ का अर्थ होता है, धन, पद, मान, कीर्ति, शुद्ध व स्वच्छ प्रेरणायें; सद्भावनायें, सत्परामर्श कितना मिलता है, सत्पथ-दर्शन कितना होता है, इसकी ओर कम ध्यान रहता है, इसकी कीमत जीवन में व व्यवहार में कम आँकी जाती है। इसीसे हमारा मापदण्ड भी छोटा या साधारण ही रहता है। लेकिन साथ ही मेरा यह विश्वास है कि हमारा समाज क्षुद्रता से उच्चता की ओर अग्रसर हो रहा है, लेन-देन की अपेक्षा नैतिक भावों, बलों व लाभों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है और ऐसा समय आ जायगा कि जब तुम या तुम जैसे मित्रों की मेरे प्रति इस दया के लिए स्थान न रह जायगा।

प्रश्न—तुम्हारी मधुरता में कई मित्र बनावट की व तुम्हारी सहानुभूति में खोखलेपन की शंका करते देखते जाते हैं। बाज-बाज लोग यह भी कहते हैं कि तुम एक क़िस्म के अवसरवादी हो। तुम्हारे प्रति आदर में उनकी हार्दिकता की अपेक्षा सौजन्य ही अधिक दीखता है। ऐसा क्यों होता है ?

उत्तर—मेरा यह मत है कि मनुष्य की अपनी ही त्रुटियाँ व कमजोरियाँ उसके आसपास के वातावरण में प्रतिबिम्बित होती रहती हैं। इसलिए यदि अधिकांश मित्रों का ऐसा ही अनुभव होता है, यदि मेरे घनिष्ठ व निकटवर्ती मित्रों का भी ऐसा ही अनुभव है तो अवश्य मुझमें कोई बड़ी खोट होनी चाहिए, जो अबतक मेरी दृष्टि में नहीं आयी है। सौजन्य छोड़कर यदि मित्र लोग वह मेरी निगाह में लावेंगे, तो मेरे प्रति अपने मित्र-धर्म का पालन करेंगे।

मेरी मधुरता, मेरे अपने अवलोकन में तो मुझे मेरे हृदय की कोमलता व मधुरता का ही अंग प्रतीत हुई है। मेरी सहानुभूति की मर्यादायें हो सकती हैं, मगर खोखलेपन का अनुभव मुझे नहीं हुआ। मर्यादायें मेरी अशक्ति, अविकास की सूचक हैं, कृत्रिमता या निःसारता की नहीं। फिर देखनेवाले की दृष्टि का भी हिसाब लगाने की जरूरत होती है। हमारी वृत्ति या दृष्टि में यदि सापेक्षता है, तो अपनी आशा-निराशाओं, लाभ-हानियों के हिसाब से हम उस सहानुभूति का मूल्य देखेंगे व जाँचेंगे। जब मैं यह देखता हूँ कि मैं किसी मित्र या साथी के लिए उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपेक्षा के अनुसार उपयोगी नहीं साबित हो रहा हूँ, तो कई बार खुद मुझे अपनी बेबसी पर बड़ी बेचैनी होती है। एक बार तो मेरे मन पर अपनी इस असहाय अवस्था की बहुत ही बुरी प्रतिक्रिया हो गयी थी। लेकिन इसमें मुझे हेतु या भावना का दोष नहीं दिखायी देता, मित्रों की अपेक्षा की तुलना में साधन-सम्पन्नता की कमी ही इसका मूल व असली कारण दिखायी देता है। जो हो; मित्र लोग मुझे अधिक आत्मनिरीक्षण की सामग्री देंगे तो मैं उनका कृतज्ञ हूँगा।

अवसरवादी के पास कोई निश्चित सिद्धान्त या मार्ग नहीं होता। निश्चित मार्ग पर चलते हुए भी मनुष्य को दूसरों के साथ अपना व्यवहार सुगम बनाने के लिए, दायें-बायें होना पड़ता है, इसे अवसरवाद नहीं कह सकते। व्यक्ति अपने जीवन में बहुत ऊँचा उठा हुआ, आगे बढ़ा हुआ हो सकता है, लेकिन सामाजिक जीवन में उसे समझौते की वृत्ति से काम लेना पड़ता है। इसमें आदर्श की ओर खींचती हुई उसकी व्यवहार-बुद्धि को निर्णय करना पड़ता है। ऐसे निर्णयों में मतभेद की व ग़लतियों की भी काफी गुंजाइश रहती है। समाज की स्थिति व गति-विधि का तथा अपनी शक्ति-अशक्तियों का जितना यथार्थ ज्ञान व्यक्ति को होगा, आदर्श की ओर लेजाने वाली प्रेरणा जितनी प्रबल या निर्बल होगी, उसीके अनुसार उसका निर्णय व उस निर्णय का फल निकलेगा और उसीकी जाँच-पड़ताल पर उस व्यक्ति की सफलता-असफलता आँकी जायगी। यदि निर्णय या समझौता आदर्श की ओर झुकता हुआ अधिक है, तो तात्कालिक फल से उसके सही या ग़लत होने का फतवा नहीं दिया जा सकता। जब निर्णय लोक-स्थिति व लोक-व्यवहार को स्वीकार करता हुआ अधिक होगा, तो उसकी परीक्षा तात्कालिक फल से ही की जा सकती है। जहाँ तक मुझसे संबंध है, मेरे आदर्श की ओर झुकते हुए निर्णय करना अच्छा लगता है। लोक-स्थिति व लोक-व्यवहार का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करते हुए भी मुझे उसे अधिक महत्त्व देने की प्रवृत्ति स्वभावतः व संस्कारतः नहीं होती। अतएव 'अवसरवादी' होने की अपेक्षा तो 'व्यावहारिक' होने का आक्षेप मुझपर अधिक किया जाता है। लेकिन इस आक्षे ने अबतक मेरे मन में कोई गहरी उथल-पुथल नहीं मचायी है।

ह० उ०

सहयोगियों में से

लालित्य का स्वामी—कालिदास

[मुंबई में कविकुल-कमल-दिवाकर कालिदास की जयन्ती के अवसर पर गुर्जर कवि-वरेण्य नान्हालाल दलपतराम द्वारा दिये गये भाषण से]

मधुर निर्झरों की सौन्दर्य भूमि काश्मीर देश से, आज से दो सहस्र वर्ष पूर्व एक ब्राह्मण भारत यात्रा के लिए निकला। "ललाटे काश्मीरम्"—इसके भाल-देश पर, रविकिरणों से निर्मित चन्द्रक-सा, केसर तिलक विराजमान था। इसके उत्तरीय (दुपट्टा) के नीचे भाग्य की पोथी थी। इसके लोचनों में जगद्विजय का तेज था। यह था सौन्दर्य देश का सौन्दर्यकुमार। यह सौन्दर्य जगत् को जीतने जा रहा था। यह था तक्षशिला का उछलता-कूदता, स्फूर्तिमान्, वत्स! काम्बोज और गांधार इसने देखे थे। कुरुक्षेत्र और हरिद्वार का भ्रमण कर, पूर्व सागर के तीर पर मोती चुनता हुआ, रामसेतु पर राम की वंदना कर, मलयानिल की लहरियों का आनन्द लेता हुआ, पम्पा-सरोवर में स्नान करके, सह्याद्रि की बन-छाया को पार करता हुआ यह नर्मदा के तीर पर आया। वहाँ उसने अवंन्तीनाथ की कीर्तिगाथा सुनी!!

सम्राट् विक्रमादित्य की अवन्तिका उसने निहारी! सौन्दर्य देश का यह सुन्दर कुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरसुंदरियों के नयनों के साथ क्रीड़ा करता हुआ, उज्जयिनी नगरी में प्रविष्ट हुआ ! यह नगर-प्रवेश वापिस लौटने के लिए नहीं था। यह प्रवेश तो अपने को तथा नगरी को अमरत्व के शिखर पर स्थापित करने के लिए किया गया था। विश्व समस्त के कविता प्रदेश में दिग्विजय की दुन्दुभि बजाने के लिए था यह प्रवेश !!

इसनें महाकालेश्वर की अर्चना की ! क्षिप्रानदी का घाट जीत लिया ! अट्टालिकाओं पर झूलती हुई पुरसुंदियों को इसने जीत लिया। राजमार्ग पर चमचमाती हुई दूकानों के रत्न-स्वामियों को इसने जीता। परदुःखभंजक शक-प्रवर्तक विक्रम महाराज की विद्वत् सभा में यह प्रविष्ट हुआ। वहाँ नवरत्नों को जीत लिया। "सहोदराः कुंकुम केसराणां भवन्ति नूनं कविता विलासाः"—इस प्रकार के सौन्दर्य-देश का यह सौन्दर्यकुमार था—कविकुल–कुमुद–कलानिधि कालिदास !!

शकुन्तला अर्थात् जगत के नाटकों की महारानी ! मेघदूत अर्थात् जगत् के गीतिकाव्यों (लिरिक) का महाराजा ! इस महारानी और महाराजा को बनानेवाला कौन ? वह था सौन्दर्य-देश का सौन्दर्यकुमार ! विद्वजनों में यह बात तो अब लगभग सर्वमान्य-सी हो चुकी है कि कल्हण और विल्हण, केसर और कुंकुम, निर्झर और सरोवर, पर्वत और हिमराजि की लीला-स्थली काश्मीर भूमि ही कालिदास की जन्मभूमि है तथा सांदीपनि, श्रीकृष्ण, सुदामा, भर्तृहरि, विक्रम, भोज की मालवभूमि ही कालिदास की कर्मभूमि है। इसका रघुदिग्विजय और मेघमार्ग कहता है कि इसने भारत-यात्रा की थी। इसका इन्दुमति-स्वयंवर बताता है कि यह महावैभव-शाली राज-दरबारों से परिचित था। कुमार-संभव में, शाकुन्तल में, मेघदूत में वारम्बार आने-वाले, हिमाचल के अद्भुत और चमत्कारी वर्णन हमें सूचित करते हैं यह हिमाद्रि का सौभाग्य-शाली संतान था। इसके अजविलाप और रति-विलाप बताते हैं कि वह शृंगार जितना ही करुण रस का स्वामी था। विक्रमोर्वशी नाटक बताता है कि यह विक्रम की राजसभा के नवरत्नों का कोहनूर था। इसे ग्राम्यरमणी और पुरसुंदरी दोनों का सन्मान प्राप्त था। "कालिदास" इस नाम के चारों ओर उगी हुई दन्तकथाओं की हरियाली कहती है यह गिरिराज सदृश मानवराज था। महाकालेश्वर का यह भक्त था। दो सहस्र वर्षों के विश्व-परिवर्तन को लाँघकर आयी हुई और आज बहुत प्रशंसित बनी हुई, विनाश के पथ पर अग्रसर होती हुई बीसवीं शताब्दी में यह हमारी पूजा का चाहनेवाला काव्यर्षि था। इसकी आँखों में विलास था। इसके भाग्य में उल्लास था। इसके हृदय में ऋषिभाव था। गिरिराज ऐसे होते हैं। काल को पी जानेवाला, उस महा-कालेश्वर का यह कुमार था !!!

दो महाकाव्य—रघुवंश और कुमारसंभव, तीन नाटक—शाकुन्तल, विक्रमोर्वशी और माल-विकाग्निमित्र, दो लघुकाव्य मेघदूत और ऋतु-संहार—ये सात ग्रन्थ कालिदास के नाम से प्रख्यात हुए हैं। मल्लीनाथ ने कालिदास पर संजीवनी छिड़की है या कालिदास ने मल्लीनाथ पर संजीवनी छिड़की है ? यह तो भगवान् जाने !!

भिन्न-भिन्न भावनाओं की परिवर्तित होती हुई ऋतुएँ, काव्य-रसिकों की काव्य रुचि के चित्र-विचित्र विप्लव, इतिहास के अस्त और उदय, तत्त्वज्ञान का प्रभात और संध्या, कला तथा सौन्दर्यरस के उत्तरायन और दक्षिणायन, दो-दो हजार वर्षों के विविध प्रकाश और अन्धकार से पूर्ण रंगबिरंगे युगांतर, काल-समुद्र के ज्वार भाटे की तरह आये, गरजे और चले गये ! परन्तु अविरत दोलायमान सागर के मध्य में चट्टान की चोटी पर पुण्यमंदिर बनाकर विराजनेवाली महादेवी की तरह शकुन्तला का रसमंदिर, महाकाल के तूफानी झंझावात और उथलपुथल के अन्दर भी अक्षुण्ण रहा है—सदा अडोल और अखंड रहकर अपनी विजय-वैजयन्ती फहराता रहा है। रस-सागर के बीचों-बीच रस के दीप-स्तंभ की तरह शकुन्तला युग-यगान्तर से खड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अनेक नौकाओं और यात्री जहाजों को यह रसार्णव रसमार्ग दिखा रहा है !!!

माघ की उपमाएँ गगनविहारिणी हैं। बाण की उपमाएँ गरजते हुए मेघाडम्बर में चमकती हुई बिजलियों जैसी हैं। भवभूति की उपमाएँ पुष्प के परिमल सी हैं। कालिदास की उपमाएँ पूर्णिमा की चाँदनी जैसी हैं। कालिदास अर्थात् कान्त कमनीयता ! कालिदास अर्थात् पृथिवी से गगन मंडल की ओर उड़ता हुआ इन्द्र धनुष का फव्वारा !!!

गुजराती से]

अनुवादक
शंकरदेव विद्यालंकार

हिन्दी की हलचलें

भारतीय राष्ट्र का इतिहास

भारतीय इतिहास परिषद् या अंजुमन तारीख ए हिन्द की ओर से प्रकाशित होनेवाले **भारतीय राष्ट्र के इतिहास की योजना** प्रकाशित हो गयी है। यह सर्वांगपूर्ण इतिहास २० जिल्दों मे समाप्त किया जायगा जिसकी आजमाइशी योजना दे दी गयी है। भारत-और सिंहल के विभिन्न भागों के करीब एक सौ हिन्दू मुस्लिम विद्वानों ने परिषद् को सहयोग देने का वचन दे दिया है। इनमें ८० से अधिक विद्वान् परिषद् के बाजाब्ता सहयोगी बन गये हैं। इतिहास के लिए सम्पादक-मण्डल का चुनाव इस प्रकार हुआ है :

१. सर यदुनाथ सरकार, डी०लि० अध्यक्ष।
२. रावबहादुर काशीनाथ नारायण दीक्षित डाइरेक्टर जनरल आफ आरक्योलॉजी।
३. प्रो० नीलकण्ठ शास्त्री।
४. डा० रमेशचन्द्र मजूमदार।
५. प्रो० मुहम्मद हबीब।
६. डा० प्रबोधचन्द्र बाग्ची।
७. प्रो० जयचन्द्र विद्यालंकार, मन्त्री।

बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन पटना

५ फरवरी को पटना में बिहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का १७ वाँ अधिवेशन प्रसिद्ध साहित्यसेवी प्रो० शिवपूजन सहाय के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। कवि-सम्मेलन के सभापति बिहार के प्रसिद्ध कवि श्री केसरी थे।

हिन्दी-परिषद्-मेरठ

२३, २४ फरवरी को हिन्दी-साहित्य-परिषद् मेरठ का दूसरा वार्षिक अधिवेशन मेरठ में सम्पन्न हुआ, जिसमें इस प्रकार भाषण पढ़े गये :

पहला दिन

साहित्य और मनोविज्ञान : श्री जे०एल० मेहता,
संस्कृत, प्रगति और साहित्य : श्री नेमिचन्द जैन,
भारतीय परिषद् की एक योजना: श्री जैनेन्द्रकुमार,
प्रगति : श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त,
कला-समीक्षा की कुछ समस्यायें:श्रीप्रभाकर माचवे,
साहित्य और मनोविज्ञान : श्री गुलाबराय

दूसरा दिन

आधुनिक हिन्दी कविता : श्री रामविलास शर्मा,
आधुनिक हिन्दी कविता और संस्कृति : श्री सुधीन्द्र,
हमारी दो समस्यायें : श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार,
एकांकी नाटक : श्री सत्येन्द्र,
आज का नाट्य-साहित्य : श्री नगेन्द्र

एक प्रस्ताव द्वारा साहित्य-सम्मेलन से यह प्रार्थना की गयी कि वह परिषद् को अपनी स्वीकृत संस्था मानकर उसके प्रतिनिधि ग्रहण करे और परिषद् को भी निर्वाचनात्मक पद्धति पर संगठन करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

हिन्दी कवि-सम्मेलन, हापुड़

१६ फरवरी १९४१ ई० को हिन्दी-साहित्य समिति की ओर से एक विराट हिन्दी कवि-सम्मेलन का आयोजन किया। जिसमें सर्वश्री 'श्याम' 'कमलेश' गोपालप्रसाद व्यास, 'करुणेश', 'पीयूष', 'सेवक', 'दीश', 'शेष', ब्रजमोहन गुप्त, 'अविकसित' 'हर्षित' सुधीन्द्र आदि अनेक कवि पधारे। कवि-सम्मेलन बहुत सफल रहा। इसके आयोजन का बहुत-कुछ श्रेय श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' को है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैर-सपाटा

फरवरी की 'वीणा' में श्री नगेन्द्र का एक अध्ययनपूर्ण लेख है—**'साहित्य में कल्पना का उपयोग'** जिसमें उन्होंने 'कल्पना' की अच्छी विवेचना की है। श्री वल्लभदास सुगन्धी ने अपने लेख **'भारतीय आर्यों का गणित ज्ञान'** में अपने विषय को प्रमाणों के साथ पुष्ट किया है, जो पढ़ने योग्य है।

श्रावण १९९७ की नागरी प्रचारिणी पत्रिका में महामहोपाध्याय डॉ० गौरीशंकर ओझा ने एक लम्बे लेख में **'बीसलदेव रासो का निर्माणकाल'** पर विचार किया है। उन्होंने पृथ्वीराज रासो के संबंध में भी महत्त्वपूर्ण खोज की है, जिन्हें विद्वानों ने माना है। इधर भी विद्वानों का ध्यान जाना स्वाभाविक है।

फरवरी की 'सबकी बोली' में किशोरलाल घ० मश्रुवाला का लेख **'परिभाषा की रचना'** बड़ा महत्त्वपूर्ण और पठनीय है। हिन्दी में परिभाषीय (Technical) शब्दों के निर्माण की आवश्यकता कितनी है, यह कहने की आवश्यकता नहीं। इस विषय में डॉ० सत्यप्रकाश का सम्मेलन का भाषण तथा यह लेख विचारणीय हैं। फरवरी के 'बालहित' में मनोवैज्ञानिक शब्दों के कुछ अनुवाद प्रस्ताव रूप में रखे गये हैं, उन्हें भी पाठकों को अवश्य देखना चाहिए।

विद्यामन्दिर लिमिटेड नयी दिल्ली से 'हिन्दी-पत्रिका' नाम की जो पत्रिका निकलने लगी है, उसका पहला अंक पत्रिका के कार्य-क्षेत्र का स्वरूप बनाने में समर्थ है, यद्यपि उसमें अभी पाठकों के सहयोग की कमी दिखायी देती है। फिर भी श्री ब्रजमोहन गुप्त, श्री वासुदेव शर्मा, और श्री रामचन्द्र तिवारी के **'हमारे साहित्य का एक नवीन अंग'**, **'भारतवर्ष की प्रमुख प्रान्तीय भाषाएँ और हिंदी'**, तथा **'राष्ट्र भाषा प्रचार का प्रश्न'** लेख पढ़ने योग्य हैं, अन्तिम लेख में अच्छे सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं।

'फरवरी' के कर्मयोगी में श्री लक्ष्मीनारायण भारतीय **'प्रान्त रचना की विषम समस्या'** लेख में एक राष्ट्रीय समस्या पर विचार किया है। इसी अंक में 'जनगणना' पर श्री गिरिजेश का लेख भी सामयिक और महत्त्वपूर्ण है।

फरवरी के 'साहित्य-सन्देश' से श्री नेमिचन्द्र का **'हिन्दी में प्रगतिशील साहित्य'** और श्री रामगूर्ति मेहरोत्रा का **'भाषाओं का रचनात्मक वर्गीकरण'** लेख बहुत अच्छे हैं। दूसरा लेख तो भाषा विज्ञान के विद्यार्थियों को पढ़ना ही चाहिए।

साधना में जो **ये और ए का बखेड़ा** निकला है, वह सुलझना चाहिए; इसके अलावा कई शब्दों और उनके प्रयोगों का निर्णय भी होना चाहिए, इस सम्बन्ध में त्रि० भा० में पहले श्री रणजित वेदालंकार का लेख भी अच्छा था।

'हिन्दी शिक्षण पत्रिका' हिन्दी में बालकों के अभिभावकों के योग्य पत्रों में अन्यतम है। उसमें स्व० गिजुभाई ताराबहन की साधना लगी है, जो बालकों के लिए वरदान है। फरवरी के अंक में श्री काशीनाथजी त्रिवेदी का 'बालक की माँग' लेख अभिभावकों को पढ़ने की वस्तु है। गिजुभाई के लेखों के विषय में तो कहा ही क्या जाये?

कृष्ण-मन्दिर में

जमनालालजी बजाज : हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति, राष्ट्रभाषा प्रचार के एक प्रधान स्तम्भ, हिन्दी व हिन्दी-भक्तों के बड़े प्रेमी व सहायक, सस्ता साहित्य मण्डल के प्रधान संस्थापक।

महावीरप्रसादजी पोद्दार : 'टॉम काका की कुटिया' के नाम से Uncle Tom's cabin के अनुवादकर्त्ता। मराठी और गुजराती के अच्छे ज्ञाता। सस्ता साहित्य मण्डल की संचालक-समिति के सक्रिय सदस्य।

बैजनाथजी केडिया : हिन्दी पुस्तक एजेन्सी के मालिक, हिन्दी के परम भक्त व लेखक।

श्री जयंत : 'वीर अर्जुन' के सम्पादक; श्री इन्द्रजी विद्यावाचस्पति के सुपुत्र।

श्री विद्यावती 'कोकिल' : हिन्दी की नयी पीढ़ी की प्रसिद्ध स्त्री-कवि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या और कैसे ?

लेखक व 'मण्डल'

लेखकों व प्रकाशकों के लिए उचित व न्याय-युक्त संबंध क्या हों, इसके विषय में हिन्दी जगत् में ठीक-ठीक चर्चा चल रही है। 'सस्ता साहित्य मण्डल' ने इस विषय में काफी ध्यान दिया है व गण्य-मान्य हितैषियों तथा मित्रों की सलाह-सूचनाओं से लेखक व प्रकाशक के बीच होनेवाले इकरारनामे के दो मसविदे तैयार किये हैं जो 'जी० सा०' के अगले अंक में दिये जावेंगे। उनमें नीचे लिखे सिद्धान्तों का अनुसरण या पालन किया गया है —

(१) लेखक के अधिकार व गौरव की पूरी रक्षा हो व उसे अपने पारिश्रमिक का उचित व पूरा बदला पुस्तकों या रुपयों के रूप में मिल जाय।

(२) यह लेखक की इच्छा पर रहे कि वह 'मण्डल' को स्वत्वाधिकार (Copy Right) पर पुस्तकें देता है या केवल प्रकाशनाधिकार (Royalty) पर। मण्डल को स्वामित्वाधिकार लेने में कोई खास दिलचस्पी नहीं है।

मण्डल के इकरारनामों के मसविदे पाठकों के सामने आजाने पर लेखक व प्रकाशकगण उन-पर अपने सुझाव हमें भेजने की कृपा करें।

हमारी प्राचीन राष्ट्रभाषा

हमारी आधुनिक राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर कई विवाद खड़े हो गये हैं। ऐसे अवसर पर आचार्य श्री हजारीप्रसादजी ने हमारी प्राचीन राष्ट्रभाषा पर अच्छा प्रकाश डाला है। वे बम्बई-वाले अपने प्रवचन में कहते हैं—

हिमालय से सेतुबन्ध तक, सारे भारतवर्ष के धर्म, दर्शन, विज्ञान, चिकित्सा आदि विषयों की भाषा कुछ सौ वर्ष पहले तक एक ही रही है। यह भाषा संस्कृत थी। भारतवर्ष का जो कुछ श्रेष्ठ है, जो कुछ उत्तम है, जो कुछ रक्षणीय है वह इस भाषा के भाण्डार में संचित किया गया है। जितनी दूर तक इतिहास हमें ठेलकर पीछे ले जा सकता है उतनी दूर तक इस भाषा के सिवा हमारा और कोई सहारा नहीं है। इस भाषा में साहित्य की रचना कम-से-कम छः हजार वर्षों से निरन्तर होती आ रही है। इसके लक्षाधिक ग्रन्थों के पठन-पाठन और चिन्तन में भारतवर्ष के हजारों पुश्त तक के करोड़ों सर्वोत्तम मस्तिष्क दिन-रात लगे रहे हैं और आज भी लगे हुए हैं। मैं नहीं जानता कि संसार के किसी देश में इतने काल तक, इतनी दूरी तक व्याप्त, इतने उत्तम मस्तिष्कों में विचरण करनेवाली कोई भाषा है या नहीं। शायद नहीं है।

फिर भी भाषा की समस्या इस देश में कभी उठी ही नहीं हो सो बात नहीं है। भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीर ने संस्कृत के एकाधिपत्य को अस्वीकार किया था, उन्होंने लोकभाषा को आश्रय करके अपने उपदेश प्रचारित किये थे।

सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री हुएन्त्सांग जब इस देश में आये थे तब वे स्थविरवादी, महासांघिक, महीशास्त्रक, काश्यपीय, धर्मगुप्त, सर्वास्तिवादी आदि सम्प्रदायों के ५९३ ग्रन्थ अपने साथ ले गये थे। ये अधिकांश संस्कृत में थे।

भगवान महावीर के द्वारा पुनरुज्जीवित जैनधर्म के विषय में भी यह एक ही बात कही जा सकती है। सन् ईसवी के बाद सिद्धान्तोत्तर साहित्य में धीरे-धीरे संस्कृत का प्रवेश होने लगा और जैन आचार्यों ने नाना काव्य और नाटकों से भाषा को समृद्ध ही नहीं बनाया, उसमें नवीन प्राण भी संचारित किये। मैंने जैन-प्रबन्धों की प्राकृतगंधी संस्कृत देखी है और मैं साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि संस्कृत को इतना सरल और प्रांजल बनाना एकदम नवीन और स्फूर्तिदायक प्रयास था। जैन मुनियों ने इसमें प्रांजुलता ले आने में कमाल का काम किया है। जैन-धर्म की श्रेष्ठ चिन्ता तो उनके दर्शन-शास्त्र हैं, जो अधिकांश में संस्कृत ही हैं। इस साहित्यांग ने संस्कृत के दर्शन-साहित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को नये सिरे से उत्तेजना दी है। जिन दिनों भारतवर्ष की सांस्कृतिक अवस्था अत्यन्त उतार पर थी उन दिनों भी जैन-दर्शन और न्यायदर्शन की बहसों ने भारतीय मस्तिष्क में थोड़ी बहुत गर्मी बनाये रखने का आश्चर्यजनक कार्य किया था।

मेरे कहने का तात्पर्य इतना ही है कि यद्यपि कभी इस भाषा में और कभी उस भाषा में धर्मोपदेश और काव्य आदि की रचना के प्रमाण पाये जाते हैं; परन्तु सब मिलाकर पिछले कई सहस्राब्दकों तक भारतवर्ष के सर्वोत्तम को—उसके ज्ञान और विज्ञान को, उसके दर्शन और अध्यात्म को, उसके ज्योतिष और चिकित्सा को उसकी राजनीति और व्यवहार को, उसके कोष और व्याकरण को और उसकी समस्त चिन्त को—इस भाषा का ही सहारा मिला है।

विदेशियों के झुण्ड बराबर इस देश में आते रहे हैं और आकर इन्होंने बड़ी जल्दी सीख लिया है कि संस्कृत ही इस देश में उनके काम की भाषा हो सकती है। यह आश्चर्य की बात कही जाती है कि संस्कृत भाषा का सबसे पुराना शिलालेख जो अबतक पाया गया है वह गिरनार वाला शक महाक्षत्र रुद्रदामा का शिलालेख है जो सन् ईसवी के लगभग डेढ़-सौ वर्ष बाद खुदवाया गया था। इस शिलालेख ने उस भ्रम का निराकरण कर दिया है कि जो ऐतिहासिक पण्डितों द्वारा प्रचारित किया गया था कि संस्कृत का अभ्युत्थान बहुत शताब्दियों बाद गुप्त सम्राटों के हाथों हुआ है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गुप्त सम्राटों के युग से संस्कृत भाषा ज्यादा वेग से चल पड़ी थी, परन्तु यह नितान्त गलत बात है कि उससे पहले उसकी (संस्कृत भाषा) धारा एकदम रुद्ध हो गयी थी।

शुरू-शुरू में मुसलमान बादशाह भी इस भाषा की महिमा हृदयंगम कर सकते थे। पठानों के सिक्कों से नागरी अक्षरों का ही नहीं संस्कृत भाषा का भी अस्तित्व सिद्ध किया जा सकता है। इस समय भी भारतवर्ष की श्रेष्ठ चिन्ता का स्रोत संस्कृत के ही रास्ते बह रहा था। नाना शास्त्र-ग्रंथों की अतुलनीय टीकाएँ, धर्मशास्त्रीय व्यवस्था के निबन्ध-ग्रंथ, दर्शन और अध्यात्म विषयक अनुवाद और टीका-ग्रंथ, और सब से अधिक नव्य-न्याय और न्यायानुप्राणित-व्याकरण-शास्त्र इसी काल में लिखे जाते रहे।

संक्षेप में कहूँ तो—

(१) भारतवर्ष के दर्शन-विज्ञान आदि की भाषा सदा संस्कृत रही है।

(२) उसके धर्म-प्रचार की भाषा अधिकांश में संस्कृत रही है, यद्यपि बीच-बीच में साहित्य के रूप में और सदैव बोल-चाल के रूप में देशी भाषाएँ भी इस प्रयोजन के लिए काम में लायी जाती रही हैं।

(३) आज से चार पाँच-सौ वर्ष पहले तक व्यवहार, न्याय और राजनीति की भाषा भी संस्कृत ही रही है। पिछले चार पाँच-सौ वर्षों से विदेशी भाषा ने इस क्षेत्र को दखल किया है।

(४) काव्य के लिए सदा से ही कथ्य देशी भाषाएँ काम में लायी गयी हैं और संस्कृत भी सदा इस कार्य के उपयुक्त मानी गयी है।

अब अगर आप ध्यानपूर्वक देखें तो हमारे हजारों वर्ष के इतिहास ने हमारी भाषा-समस्या को इस प्रकार सुलझाया है कि हमारे उच्चतर विचार, तर्क, दर्शन, विज्ञान, राजनीति, व्यवहार और हमारे न्याय की भाषा का सदा एक सामान्य स्टैण्डर्ड रहा है।

इस विशाल देश की भाषा-समस्या का हल आज से सहस्रों वर्ष पूर्व से लेकर अबतक जिस भाषा के ज़रिये हुआ है, उसके सामने कोई भी भाषा न्यायपूर्वक अपना दावा लेकर उपस्थित नहीं रह सकती—फिर वह स्वदेशी हो या विदेशी, इस धर्म के माननेवालों की हो या उस धर्म के, इतिहास साक्षी है कि संस्कृत इस देश की अद्वितीय महिमाशालिनी भाषा है—अविजित, अनाहत और दुर्द्धर्ष।

आज से डेढ़ दो-सौ वर्ष पहले तक संस्कृत भाषा ने हमारे भीतर विचारगत एकता बना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखने का प्रयत्न किया था। बंगाल के रघुनन्दन भट्ट अपनी व्यवस्थाएँ इसी भाषा के बल पर कन्याकुमारी से काश्मीर तक पहुँचा सके थे, काशी के नागेश भट्ट को व्याकरणशास्त्रीय-विचार सारे देश में फैला देने में कोई बाधा नहीं पड़ी थी, महाराष्ट्र के गणेश दैवज्ञ को अपनी ज्योतिषिक-शोध इस विशाल देश के इस कोने से उस कोने तक फैला देने में कोई कठिनाई नहीं पड़ी।

इस तरह हमारा पुराना अनुभव बताता है कि हम आसेतु-हिमाचल एक भाषा से एक संस्कार, एक विचार, एक मनोवृत्ति तैयार कर सकते हैं। और वह एक भाषा संस्कृत है।

यह प्रकाश चाहे हमारी राष्ट्रभाषा की समस्या को हल न कर सके; परन्तु भारतीय जीवन में संस्कृत की महत्ता व प्रभाव इससे अच्छी तरह स्पष्ट हो जाता है।

'नवीन हिन्दू धर्म'

अन्तस्थ आत्मा के एक होते हुए भी उसके बाह्य विविध व परिवर्तनशील हैं। इसी प्रकार धर्म का आन्तरिक तत्व त्रिकालाबाधित होते हुए भी उसकी बाह्य मान्यता व आचार-व्यवहार बहुरंगी व विकासशील होते हैं, एवं देशकाल के आवश्यकतानुसार बदले जाते व बदलते रहते हैं। यह निर्विवाद है कि 'हिन्दू-धर्म' की कई मान्यताओं व आचार-विचारों का देशकालानुसार नये सिरे से मन्थन व निर्णय होने की आवश्यकता है। जागतिक परिस्थिति व समागम अहिन्दू सत्ताओं का प्राबल्य आदि कारणों से धार्मिक व सामाजिक क्षेत्र में बड़ी उथलपुथल मच रही है। राज्यक्रान्ति के पहले धर्म-क्रान्ति व सामाजिक क्रान्ति आवश्यक होती है। उसके चिन्ह प्रत्यक्ष दिखायी देने लगे हैं। प्राचीन आचार-विचार, रीति-रिवाज की इमारत धड़ाधड़ गिरती हुई दिखायी देती है। प्रायः नित्य ऐसे प्रश्न उपस्थित होते हैं जिनका विचार व निर्णय करने में प्राचीन धर्मशास्त्र असमर्थ सिद्ध होते हैं। ऐसी दशा में डाक्टर भगवान्दासजी का 'मानव धर्म सार' इसी दिशा में एक प्रयत्न है। उधर महाराष्ट्र में, धर्मनिर्णय मंडल ने इस काम को अपने हाथ में लिया है। उसकी तरफ़ से हिन्दुत्व-दीपक श्री महादेव शास्त्री दिवेकर ने एक बृहत् प्रश्नावलि प्रकाशित की है जिसके अवलोकन मात्र से यह पता चल जाता है कि सचमुच प्रचलित हिन्दू धर्म' को नवीन प्रकाश में देखकर 'नवीन हिन्दू धर्म'. स्थापित करने की कितनी आवश्यकता है उनके प्रश्नों के कुछ नमूने देखिए—

(१) धर्म-निर्णय की प्राचीन मीमांसा-पद्धति ग्राह्य या नवीन ऐतिहासिक वा तात्विक मीमांसा-पद्धति स्वीकार्य ?

(२) धर्म क्या सचमुच अपूर्व अदृष्ट, पुरुष-बुद्धि के लिए अगम्य, अभ्युदय-निरपेक्ष है ?

(३) नवीन हिन्दू धर्म का अधिष्ठान क्या हो ? वचन या विचार (प्राचीन हिन्दू धर्म का अधिष्ठान है—वचनात् प्रवृत्तिः वचनात् निवृत्तिः।)

(४) हिन्दू शब्द की व्याख्या क्या है ? हिन्दुत्व व राष्ट्रीयत्व में समव्याप्ति है क्या ?

(५) वर्तमान हिन्दू समाज जातिबद्ध है, भविष्यकाल उच्चतर समाज-रचना का है। अतः क्या हिन्दू समाज का भावी स्वरूप अखंड व एक-रस होगा क्या ?

(६) आहार, व्यवसाय व जन्मादि कारणों से व्यक्तियों में परस्पर उच्च-नीचता मानना उचित है क्या ?

(७) कलिवाद, दैववाद, देववाद, ग्रहवाद क्या हिन्दू समाज को निर्बल नहीं बना रहे हैं ?

(८) कुटुम्ब, विवाह - संस्थायें मिटा दी जायें ? सन्तति-नियमन के प्रश्न का हल क्या ?

(९) विवाह-पद्धति रखनी हो तो बधूवर की उम्र, मुहूर्त, गोत्रप्रवर विचार, उपजाति विवाह, तिलाक, एकपत्नीत्व, एकपतित्व—इन विषयों का विचार नवीन हिन्दू धर्म में करना आवश्यक नहीं क्या ?

इसी तरह, छुआछूत, व्यवसाय, आश्रम-व्यवस्था, संस्कार-विधि, सूतक-श्राद्ध-तर्पण, उत्सव-दान-व्रत-तीर्थ, पाप-पुण्य, दत्तक, दाय विभाग, पति की सम्पत्ति पर पत्नी का हक आदि विषयक प्रश्न पूछे गये हैं। नवीन हिन्दू धर्म के जयिष्णु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्वज्ञान के रूप में गीता अधिकृत ग्रन्थ हो सकता है या नहीं ? आचार धर्म की तरह नीति धर्म व तत्वज्ञान भी परिवर्तनशील व परिस्थिति-सापेक्ष्य हो सकता है क्या ? अवतार, मूर्तिपूजा, नवविधाभक्ति, नाममाहात्म्य, उपासना माहात्म्य आदि संबंधी अर्थवादात्मक व भ्रमात्मक कल्पनाओं का निराकरण कैसे किया जाय ? आत्मा, ईश्वर, पुनर्जन्म, कर्मविपाक, अध्यात्म शास्त्र, आत्म-साक्षात्कार, मोक्ष इन औपनिषदिक सिद्धांतों का तर्कशुद्ध पद्धति से समर्थन कैसे किया जाय ? स्वराज्य व स्वातंत्र्य-प्राप्ति में धर्म व समाज-सुधार कितने सहायक होंगे ? धार्मिक, सामाजिक दोषों के दूर होते ही हिन्दू राष्ट्र वीर कैसे हो जायगा ? जाज्वल देशाभिमान, भौतिक शासन-संपन्नता, अनुशासन व संगठन और अखिल हिन्दू समाज का समष्टि-धर्म, ये क्या स्वातंत्र्य-प्राप्ति के साधन बन सकते हैं ? ऐसे प्रश्नों का भी उसमें समावेश किया गया है । ये प्रश्न केवल दिशा-दर्शक हैं । इनके उत्तर देश के भिन्न-भिन्न विद्वानों व समाज-शास्त्रियों से माँगे गये हैं। इनके उत्तरों के आधार पर श्रीमहादेव शास्त्री एक ग्रंथ लिखना चाहते हैं । प्रत्येक विचारशील हिन्दू इस ग्रन्थ की उत्सुकता से राह देखेगा ।

अभी देर है

भारत की राष्ट्रीय समस्या के जल्दी सुलझने के लक्षण नहीं दिखायी देते । मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की अवांछनीय व असम्भव माँग दृढ़ता से पेश कर रखी है, ब्रिटिश सरकार के प्रति-निधि समय समय पर ऐसे वक्तव्य देते हैं जिससे मुस्लिम लीग के दुराग्रह को बढ़ावा मिलता है और कांग्रेस के साथ उसकी तथा सरकार की सुलह होना कठिन होता जा रहा है । अँगरेज जीवन-मरण की लड़ाई में लग रहे हैं, फिर भी सरकार कांग्रेस की उपेक्षा जिस आसानी से कर रही है उसपर आश्चर्य व दुख होता है। अब तो अमेरी साहब ने उसपर झूठे आरोप व लांछन लगाना भी शुरू कर दिया है यह 'शेषं कोपेन पूरयेत्' की मनः स्थिति दिखलाता है । उन्हें हम विदेशी, बेगाने कहकर एक बार अपने मन को समझाने की कोशिश कर सकते हैं; किन्तु मुस्लिम लीग को क्या कहें ?

हृदय-परिवर्तन दो ही तरह से हो सकता है—युक्तियों के द्वारा, या तप और कष्टसहन के द्वारा । मुस्लिम लीग को युक्तियों से नहीं समझाया जा सकता—ऐसा दीखता है । इधर सरकार भी जानबूझकर, मजबूरी से या विपत्ति काल की मनोवृत्ति से, युक्तियों की पहुँच के परे होती जा रही है । ऐसी दशा में दोनों के हृदय-परिवर्तन के लिए कांग्रेस के पास अब 'तप' ही एक-मात्र साधन रह गया है और महात्माजी के नेतृत्व में कांग्रेस इस समय यही कर रही है। भले ही डा० नायडू इस पहेली को जल्दी सुलझाने की आशा दिलावें, मुझे तो महात्माजी के ये वचन ही सत्य दिखायी देते हैं कि युद्ध-समाप्त होने तक कांग्रेस का सरकार से समझौता या सुलह नहीं हो सकती । 'हनोज दिल्ली दूरस्त' । यह स्थिति निराशा की ओर नहीं अधिक दृढ़ संकल्प व धैर्य से काम करने की ओर संकेत करती है ।

'विश्ववाणी'

हिन्दी में पं० सुन्दरलालजी के संरक्षकत्व में एक प्रभावशाली पत्रिका प्रकाशित होने लगी है–'विश्ववाणी' । इसके दो अंक अभीतक निकले हैं। मानव-जाति के उत्थान व कल्याण के लिए राष्ट्रीयता से अधिक गहरा व पुख्ता आधार है संस्कारिता का । इस सांस्कृतिक नींव पर 'विश्व-वाणी' भारतीय एकता के संदेश को लेकर आयी है, जो धार्मिक व सामाजिक संकुचित स्वार्थों से छिन्न-भिन्न हो रहे इस अभागे देश के लिए इस समय भूखे को भोजन व मरते को संजीवनी बूटी पिलाने के समान आवश्यक व सामायिक है। जिस कोटि के लेखकों का सहयोग इसे अबतक प्राप्त हुआ है वह एक हिन्दी पत्रिका के लिए वास्तव में गौरवपूर्ण है । जिन विषयों पर अबतक लेख आये हैं वे पत्रिका के उद्देश के पूरक व पाठकों की बुद्धि व अंतःकरण को अच्छा भोजन देनेवाले हैं । मैं इसका स्वागत करता हूँ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व० आचार्य शुक्ल जी !

आचार्य श्री रामचन्द्र शुक्ल के अचानक निधन पर समस्त हिन्दी-जगत् को खेद व शोक हुआ है। 'प्रसाद' व 'प्रेमचन्द' के चिरवियोग के बाद आचार्यश्री के महाप्रयाण से हिन्दी-साहित्य की जो अनेकविध क्षति हुई है उसकी पूर्ति सहसा कठिन है। उनकी मृत्यु ने विद्यमान् साहित्य-सेवियों का भार गुरुतर कर दिया है। आचार्यजी की योग्यतापूर्ण सेवायें हिन्दी-लेखकों को सदैव अनुप्राणित करती रहेंगी—इसमें सन्देह नहीं। सस्ता साहित्य मण्डल-परिवार की ओर से हम उनके प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं और संतप्त परिवार के लिए हार्दिक सहानुभूति।

ह० उ०

मण्डल की ओर से

एक शुभ-सूचना : १००० जी० सा० आधे मूल्य में

यह एक शुभ समाचार है कि 'मंडल' के बहुत से ग्राहक जी० सा० के ग्राहक बन गये हैं। जो अबतक नहीं बने हैं, उनसे प्रार्थना है कि वे अभी ही इसके ग्राहक बन जावें, क्योंकि मंडल की पुस्तकों सम्बन्धी सूचनायें समय-समय पर इसमें निकलती रहती हैं सो उनको सारी सूचनायें मिल जाती हैं। परन्तु यहाँ तो इसकी ही शुभ सूचना देनी है।

इस अंक के शुरू में पाठक एक सूचना पढ़ेंगे कि 'मंडल' ने १००० सज्जनों को जी० सा० आधे मूल्य में देने का तय किया है। पर वह उन्हीं सज्जनों को दिया जायगा जिनकी 'मंडल' के स्थायी ग्राहक या जी० सा० के ग्राहक सिफारिश करेंगे। इस आशय का एक पत्र भी शुरू में दिया गया है। उसे भरकर भेज दें तथा इसमें उत्साह लेकर अधिक से अधिक ग्राहक बनाने की कृपा करें।

नवीन प्रकाशन

(१) स्वाधीनता दिवस (२६ जनवरी) पर पंडित जवाहरलाल नेहरू की 'लड़खड़ाती दुनिया' का प्रकाशन हो गया। और हमें यह सूचित करके प्रसन्नता होती है कि १ महीने के ज़रा से समय में इसकी १००० प्रतियाँ हाथों हाथ निकल गयीं। इसमें पंडितजी के अंतर्राष्ट्रीय तथा यूरोपीय युद्ध-समस्या पर लिखे लेखों का संग्रह है। दाम ।।) है।

(२) मालवीयजी के साथ तीस दिन, (रामनरेश त्रिपाठी), युद्ध और अहिंसा (महात्मा गांधी), दुनिया की शासन प्रणालियाँ और वर्तमान यूरोपीय युद्ध (रामचंद्र वर्मा) आदि पुस्तकें छप रही हैं और शीघ्र ही पाठकों की सेवा में जावेंगी।

पुनर्मुद्रण

और इसी आज़ादी के दिवस पर 'गांधी-अभिनंदन-ग्रंथ' का सस्ता-संस्करण भी १।) में निकल गया। पहले का सजिल्द और मोटे काग़ज पर छपा संस्करण २) में भारी पड़ता था। जो लोग इतना नहीं दे सकते थे उनके लिए यह १।) वाला संस्करण तैयार है।

श्री घनश्यामदासजी बिड़ला के ख्यातिप्राप्त 'बापू' का नवीन संस्करण भी इसी समय तैयार हो गया और बाज़ार में आ गया है। अबकी इसका दाम और कम कर दिया गया है। पहले साधारण संस्करण का दाम ।।।) था; अब ।।=) है।

महर्षि टॉल्स्टाय का **'स्त्री और पुरुष'** का भी नया संस्करण तैयार हो गया है। अबकी बार वह टाल्स्टाय ग्रंथावलि में छपा है और सुन्दर आवरण पृष्ठ दिया गया है।

गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य स्वामी अभयदेवजी का **'तरंगित हृदय'** भी नये संस्करण में तैयार है।

क्या करें ?, मेरी कहानी, और द० अ० का,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्याग्रह (प्रथम खण्ड) प्रेस में दे रखे हैं। तैयार होने पर सूचित किया जायगा।

डायरी के पन्ने

श्री घनश्यामदास बिड़ला की दूसरी महत्व-पूर्ण और रोचक पुस्तक 'डायरी के पन्ने' अभी प्रकाशित हुई है। सोल एजेंसी 'मण्डल' के ही पास है। इसमें श्री बिड़लाजी ने दूसरी गोलमेज परिषद् में गांधीजी के साथ के अपने रोचक और महत्त्वपूर्ण संस्मरण लिखे हैं। पुस्तक मण्डल तथा जी० सा० के ग्राहकों को पौने मूल्य में दी जाती है। इसका दाम १।।) है। पुस्तक सजिल्द है।

हाथ-काग़ज-स्टेशनरी

पिछले अंक में हमने सूचना दी थी कि मंडल के प्रधान कार्यालय नई दिल्ली तथा दिल्ली, लखनऊ और इन्दौर की शाखाओं पर हाथ के बने चिट्ठी लिखने के काग़ज और लिफाफे विक्रयार्थ रखने का प्रबंध किया है। प्रधान कार्यालय, नई दिल्ली में तो लेटर-हेड और लिफाफे छपाने आदि का भी प्रबन्ध है। जो सज्जन हाथ के लेटर-हेड तथा उसी के रंग के लिफाफे चाहें वे मण्डल से तथा उसकी शाखाओं से मँगा सकते हैं। नमूने के लिए ।) के डाक के टिकिट भेजने चाहिएँ।

'बापू' : ५० प्रतियाँ मुफ्त में

गांधी विचार-धारा से मतभेद रखनेवाले व्यक्तियों को श्री बिड़लाजी लिखित 'बापू' की ५० प्रतियाँ बिना मूल्य देने के बारे में पिछले अंक में एक सूचना छपी थी। 'मण्डल' के एक विनम्र प्रेमी की ओर से यह स्वल्प पर सुन्दर भेंट है। इसके अनुसार माँग तो बहुत आयी पर सूचना के अनुसार बहुतों ने अपने विचार विस्तार से नहीं लिखे। पत्र में अपने विचारों की स्पष्टता दलीलों से समझायी जानी चाहिए। अस्पष्ट और संक्षिप्त रूप से जो विचार लिखे होंगे उनको पुस्तक नहीं दी जायगी। आशा है पुस्तक मँगानेवाले सज्जन इसका ख़याल रखेंगे।

दन्तामृत (रजिस्टर्ड)

दाँतों की बीमारियों के लिए अपूर्व स्वदेशी मञ्जन

दाँतों और मसूढ़ों की सब बीमारियों यहाँ तक कि पायोरिया तक के लिए यह मञ्जन इतना गुणकारी सिद्ध हुआ है कि भारत के साधारण श्रेणी से लेकर श्रीमन्त एवम् राजा-महाराजाओं और कौंसिलों के सदस्य तो इसका व्यवहार करते ही हैं, कई अंग्रेज़, जो कि अपने देश की चीज़ों के सिवा बाहर की बहुत कम चीज़ें इस्तेमाल करते हैं, वे भी अपने देश के टूथ-पाउडर एवम् पेस्टों से इससे अधिक लाभ पाकर इसके भक्त बन गये हैं।

जिसने एक बार इस मञ्जन का इस्तेमाल किया, वही सदा के लिए इसका भक्त बन गया। मूल्य टीन की डिबिया ।=), बड़ी शीशी ।-), छोटी शीशी ।)

श्रीयुत. एम. के. आचार्य, एम. एल. ए. (मद्रास)—"आपका दंत-मंजन तो **मैंने अपनी दंत-पीड़ा के लिए गत पाँच वर्षों में व्यवहृत देशी-विदेशी सब मंजनों से श्रेष्ठतर पाया।** मंजन दाँतों, मसूडों और तालु के घावों पर जादू का-सा असर दिखलाता है।"

श्री. एम० एस० बरदाचार्य एडवोकेट (मद्रास हाईकोर्ट)—"दो वर्ष पूर्व मुझे दंत-पीड़ा हुई थी जो बढ़ती ही गयी और मसूडों में घाव हो गये; **परन्तु आपके मंजन से अब मेरे मसूडे स्वस्थ हैं और दाँत में पीड़ा नहीं होती।** मैं तो कहूँगा कि मेरे व्यवहृत दंत-मंजनों में सर्व-श्रेष्ठ आपका दंतामृत ही है।"

मिलने का पता—**मैनेजर, 'राजस्थान आयुर्वेदिक औषधालय,' अजमेर**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संग्रह करने योग्य ग्रन्थ

कुलीनता

[ले० सेठ गोविन्ददासजी]

त्रिपुरी के कलचुरि नरेश विजयसिंह देव और राजगोंड़ वंश स्थापक यदुराय के ऐतिहासिक कथानक को लेकर इस नाटक की रचना की गयी है। स्टेज पर खूब सफलता के साथ खेला जा सकता है। हिन्दी के मौलिक नाटकों में इसे प्रधान स्थान दिया जायगा। मूल्य १)

सुनीता

श्री जैनेन्द्रकुमार का यह बहुविख्यात उपन्यास अबकी बार सुलभ साहित्य माला में प्रकाशित किया गया है। मूल्य तीन रुपया की जगह अब सिर्फ दस आने है। बढ़िया छपाई और काग़ज़। पृ० सं० २००; सस्तेपन की हद है।

उर्दू हिन्दी कोश

(संशोधित-परिवर्द्धित संस्करण)

इस अत्यन्त उपयोगी कोश में उर्दू और उर्दू में काम आनेवाले अरबी, फारसी, तुर्की, इब्रानी, पोर्तुगीज आदि भाषाओं के लगभग साढ़े ग्यारह हज़ार शब्दों का सरल हिन्दी में अनेक पर्यायवाची शब्द देकर अर्थ किया गया है और यह भी बतलाया गया है कि प्रत्येक शब्द किस भाषा का है, साथ ही लिंग, विशेषण, अव्यय आदि भी बतलाये हैं। मुहाविरों और क़ानूनी शब्दों का भी संग्रह किया गया है। अब की बार पहले से एक हज़ार शब्द अधिक दिये गये हैं। मूल्य वही २॥) ढाई रुपया।

नीति-विज्ञान

[ले० श्रीगोवर्द्धनलाल एम० ए० बी० एल०]

नीति, सदाचार या धर्म की वैज्ञानिक आलोचना। हिन्दी में अपने विषय का सबसे पहला ग्रंथ। सदाचार की उत्पत्ति, उसका विकास, धर्म और ईश्वर से उसका सम्बन्ध, धर्मों के द्वारा किये गये अत्याचारों का इतिहास, धर्म और मज़हब आदि बातों पर अपूर्व प्रकाश। लेखक की बरसों की समस्या का फल। विद्वानों द्वारा अतिशय प्रशंसित। मूल्य २) रुपया, राजसंस्करण का ३) रु०

अरबी काव्य-दर्शन

[ले० प्रो० महेशप्रसाद आलिम-फ़ाज़िल]

अरबी भाषा के काव्य-साहित्य में से नीति, युद्ध, शृंगार, वैराग्य आदि की सूक्तियों को चुनकर इस ग्रंथ में संग्रह किया गया है। एक-एक सूक्ति पढ़कर आप फड़क उठेंगे। मू० १)

नोट—अपने नज़दीक की दूकान से खरीदिए, नहीं तो फिर हम से मँगाइए। हमारा सूचीपत्र मँगा लीजिए।

संचालक—हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय, हीराबाग, बम्बई ४

उपरोक्त पुस्तक सस्ता साहित्य मण्डल की सब शाखाओं पर मिलती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबी जनरल इंश्योरेंस कंपनी लि०

चेयरमेन--सेठ व्रजमोहन बिड़ला

आयोजित पूँजी—४५,००,०००) रुपये

भुगतान पूँजी--१४,४०,०००) रुपये

ज़िन्दगी, आग, जहाज़ और (मोटर आदि सब) दुर्घटनाओं का बीमा कराने में

सबसे सुरक्षित बीमा कम्पनी

इसमें बीमा कराइए या एजेंसी लीजिए

जहाँ हमारे प्रतिनिधि नहीं हैं, उन शहरों में जीवन-बीमा-विभाग के लिए एजेएटों की आवश्यकता है

प्रार्थनापत्र भेजिए

↓

जनरल मैनेजर:—

८, रॉयल एक्सचेन्ज प्लेस, कलकत्ता

या

बम्बई, कराची, रामपुर, लाहौर, मद्रास, नई दिल्ली, कानपुर, पटना शाखाओं को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल्ली में

सब प्रकार की उत्तम छपाई

और ख़ास करके

हिन्दी पुस्तकों की छपाई

का काम

फेडरल ट्रेड प्रेस

नया बाज़ार : दिल्ली : : फ़ोन नं० ५३७७

में

बहुत अच्छा और सावधानी से

किया जाता है

एक बार परीक्षा कर देखें

यही एक प्रमाणपत्र काफी है कि हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ प्रकाशन-संस्था

'सस्ता साहित्य मण्डल' की पुस्तकें

हमारे यहाँ छपती हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिरला जूट मेनुफैक्चरिंग

कम्पनी लिमिटेड के

जूट कारपेट

अति सुन्दर और आकर्षक होने पर भी
मज़बूत तथा क़ीमत में भी बहुत सस्ते हैं।

इसलिए
किसी भी प्रकार की सजावट के लिए
सब लोग जूट कारपेट को ही पसन्द करते हैं।

मिलने का पताः—
सभी जूट कारपेट की दुकानों में
तथा

खन्ना इन्डस्ट्रीज, बनारस सिटी
नेशनल नॉवेल्टी स्टोर, कानपुर
जेठमल भोजराज, दार्जिलिंग
और
बङ्गाल स्टोर्स, लिमिटेड

टेलीफोन नं० कलकत्ता ३१३२, नं० ८ए चौरंगी प्लेस, कलकत्ता में भिन्न-भिन्न प्रकार के मनोहर डिज़ाइन, आपकी इच्छानुसार आपकी आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं।

एजेंसी के लिए निम्न पते पर लिखें:—

टेलीफोन नं० कलकत्ता ५६५ टेलीग्राम—जूट वीवर

बिरला जूट मेनुफ़ैक्चरिंग कम्पनी लिमिटेड
नं० ८ रायल एक्सचेञ्ज प्लेस, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका व्यापार

केवल सुन्दर और चित्ताकर्षक

- ब्लाक
- छपाई
- कलेन्डर
- कार्ड बोर्ड बक्स
- लेबिल आदि

पर ही निर्भर है

इसलिये उपरोक्त सामग्री के लिये—

फोन नं० ६३२७

मुरारी फ़ाइन आर्ट वर्क्स,

४, दरियागंज देहली

ब्रांच- कटराबड़ियान देहली

को हमेशा याद रखिये

ब्रांच- कसेरट बाजार आगरा

और हमारे

२० वर्ष के अनुभव

से लाभ उठाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी'

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।
(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।
(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है कि 'कहानी' सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं...यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिये।

श्री जैनेन्द्र—

'...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...'

श्री सुदर्शन—

'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम क़ीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—

'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब—सब विचार से अंक सर्वांग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा—

'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है—अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय—

'कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई...'

श्री पहाडी—

'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी-पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेंगी।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना। कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २॥) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको

रुपया चाहिए

और हमको

आपका समय चाहिए

रुपये तथा समय की तुलना नहीं हो सकती, क्योंकि रुपया तो वापस भी मिल सकता है, परन्तु बीता समय फिर कभी हाथ नहीं आ सकता।

प्रति दिन नियमित रूप से आप केवल २ घण्टे का समय देकर

न्यू एशियाटिक

की जीवन-बीमा पालिसी

बेचकर हजारों रुपये कमा सकते हैं

आप प्रगतिशील कम्पनी के साथ प्रगतिशील बनें

जिसने—

१९३४ ई० में	१५,३८,५०० रु०
१९३५ ई० में	२५,०१,००० ,,
१९३६ ई० में	३०,६६,७५० ,,
१९३७ ई० में	३५,५९,५०० ,,
१९३८ ई० में	४१,७४,७५० ,,
१९३९ ई० में	५०,११,७६८ ,,
१९४० ई० में	६०,१३,२५० ,,

के बीमे किये हैं

आज ही पत्र भेजकर विवरण मँगाकर देखें

न्यू एशियाटिक लाइफ़ इन्शुरेन्स कम्पनी लिमिटेड

कनाट सर्कस, नयी दिल्ली

शाखायें—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, नागपूर, हैदराबाद दक्षिण, अर्नाकुलम (कोचीन), लाहोर तथा पटना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हँस-परिवार' की अनुपम योजना के सदस्य बनिए

[१] भारतीय-पुस्तक-माला
(क) कायाकल्प (३ भाग)
(ख) स्नेह-यज्ञ [१-२]

[२] 'हंस' पुस्तकें
(क) मा [भाग १-२]
(ख) गाड़ीवानों का कटरा [भाग ३]
(ग) सात इनक़लाबी इतवार [भाग १-२-३]

[३] गल्प-संसार-माला
१० प्रमुख प्रान्तीय भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ कहानी-संग्रह।

[४] प्रगतिशील पुस्तकें
(क) नया हिन्दी-साहित्य : एक दृष्टि और पाँच अन्य पुस्तकें

[५] नवसृजन ग्रंथावली
(क) शोभा : ले० इन्द्र वसावड़ा
(ख) संजीवनी : ले० 'सोपान'
(ग) प्रायश्चित्त [भाग १-२] : ले० सोपान

[६] जाग्रत-महिला-साहित्य
(क) पिकनिक : लेखिका—कमलादेवी चौधरी
(ख) पिया : लेखिका—उषादेवी मित्रा
(ग) कौमुदी : लेखिका—शिवरानी देवी

[७] आज की किताब
(क) कँटीले तार [भाग १-२]
(ख) जाई-जुई और ९ अन्य पुस्तकें

[८] 'हंस' मासिक १२ अंक

[९] 'कहानी' मासिक के १२ अंक और १।) मूल्य की 'कोकिला' नामक पुस्तक भेंट।

इसके साथ हम जिन प्रवृत्तियों का संक्षिप्त विवरण दे रहे हैं उनका कुल मूल्य रु० ३३-१४-० होता है। पर हम अपने बहुत-से कृपालु ग्राहकों तथा विशेषतया सार्वजनिक संस्थाओं की सुविधा के लिए यह चाहते हैं कि इन प्रवत्तियों की मात्रा २५ रु० में दें। इसमें हमें आज की मँहगी के ज़माने में कितनी हानि उठानी पड़ेगी, यह हमारे दयालु सहायकगण समझ ही सकते हैं : यह संस्था तो सेवा के लिये ही खड़ी है। इन नौ प्रवृत्तियों के ग्राहक बननेवालों को हम 'हंस-परिवार' का एक सदस्य मान लेंगे और उनकी सूची आदि भी समय-समय पर प्रकाशित करेंगे।

इस मूल्य में निःशुल्क बारह महीने तक दो मासिक हर महीने मिलते रहेंगे और एक वर्ष में छोटी-बड़ी कुल मिलाकर ४७ पुस्तकें मिलेंगी जिनकी पृष्ठ संख्या कुल जोड़कर १०,००० के लगभग होती है; अर्थात् पत्रिका के पृष्ठों और सामग्री को छोड़कर २।।) रु० में १००० पृष्ठ मिलते हैं। इससे सस्ती योजना भारत की किसी प्रान्तीय भाषा में तो क्या, अंग्रेज़ी में भी नहीं है। यह योजना बेजोड़ है। निस्सन्देह।

इन पुस्तकों में विविधता कितनी है, इसका परिचय नीचे लिखे परिचय से मिल जायगा।

[१] १२०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रमुख भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद। [२] १२०० पृष्ठों में संसार के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद। [३] २४०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रान्तीय भाषाओं से सुन्दरतम कहानियों का अनुवाद, जिसमें आप भारतीय साहित्य की सम्पूर्ण गतिविधि से परिचित हो जाते हैं। [४] प्रगतिशील दृष्टिकोण से लिखे निबन्धों, कहानियों और कविताओं के ६ संग्रह। १००० पृष्ठ की उत्तम पाठ्य-सामग्री आपको देंगे। [५] गुजराती साहित्य के सर्वश्रेष्ठ तीन उपन्यासों का अनुवाद, ९०० पृष्ठों में उचित किया गया है। [६] महिलाओं के लिए उन्हीं के दृष्टिकोण से लिखे उपन्यासों और कहानियों के तीन ग्रन्थ-रत्न। ये आपके परिवार में पत्नी तथा माँ-बहन के लिए स्वास्थ्यकर मानसिक भोजन प्रदान करेंगे। [७] 'आज की किताब' के अन्तर्गत एक वर्ष में आपको १२ किताबें मिलेंगी जिनमें आज की समस्याओं का सुझाव रहेगा। अधिकांश तो ये छोटे-छोटे उपन्यास होंगे जो आपको अपने यथार्थवाद से चौंका देंगे।

सरस्वती-प्रेस, बनारस : इन्दौर : लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युवकोपयोगी तीन अनुपम पुस्तकें

आत्म संयम—लेखक—पं० जगपति चतुर्वेदी। यह पुस्तक कई प्रसिद्ध अंग्रेजी, संस्कृत, पाली तथा हिन्दी पुस्तकों के आधार पर लिखी गई है। संसार में अपने शत्रु पर विजय पाना उतना कठिन नहीं, जितना काम, क्रोध आदि षट्विकारों, मन तथा वासनाओं पर विजय पाना कठिन है। इस पुस्तक में अपने मन, वाणी आदि इन्द्रियों तथा वासनाओं पर अधिकार करने के सहज सरल उपाय बताये गये हैं। हिन्दी में अपने ढंग की यह एक ही पुस्तक है। मूल्य १)

देश की आन पर—लेखक—गणेश पांडेय। इस पुस्तक में देश-प्रेम और देश-भक्ति के लिए अपने सर्वस्व निछावर करनेवाले वीर-वीरांगनाओं की कहानियों का संग्रह है। प्रत्येक कहानी बहुत ही आकर्षक शैली में लिखी गई है, ओजस्वी और ज़ोरदार भाषा में लिखीहुई कहानियाँ प्रत्येक युवक को देश-प्रेम में मतवाला बनानेवाली हैं। सुन्दर कवर से युक्त पुस्तक का मूल्य ।।।)

चरित्र-निर्माण की कहानियाँ—लेखक—श्री व्यथितहृदय। इस पुस्तक में उन कहानियों का संग्रह है, जो विद्यार्थियों और नवयुवकों के चरित्र पर अद्‌भुत प्रभाव डाल सकती हैं। चरित्र-निर्माण के लिए इससे बढ़कर उपयोगी पुस्तक नहीं मिल सकती। मूल्य ।।।)

मैनेजर—**छात्र-हितकारी पुस्तकमाला, दारागंज, प्रयाग**

कानपुर के सोल एजेंट-साहित्य निकेतन, कानपुर

आरोग्य शास्त्र का प्रतिनिधि पत्र

'जीवन सखा' वास्तव में जीवन-सखा है

यह एक नहीं अनेकों को राय है : आप भी निर्णय कीजिए

आज, काशी—'जीवन-सखा' ने ५ वर्ष के भीतर ही अपना एक विशेष स्थान बना लिया है। विशेषांक में···कही गई बातों के अनुसार जीवन व्यतीत कर हम अपार लाभ उठा सकते हैं।"

सरस्वती, प्रयाग—"प्रत्येक साध्य तथा असाध्य मर्ज़ का निवारण प्रकृति द्वारा हो सकता है, यही इस पत्र का सन्देश है।"

जीवन-साहित्य, नई दिल्ली—जीवन-सखा आरोग्य शास्त्र का सुन्दर मासिक होने से यह वास्तव में जीवन-सखा ही है। एक-एक लेख इसका पठनीय और आचरणीय है।"

हिंदुस्तान, दिल्ली—"जीवन-सखा के लेख पढ़ने, मनन करने और आचरण करने योग्य हैं।"

नवशक्ति, पटना—"यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य-सम्बन्धी पत्रिकाओं में······जीवन-सखा का सर्वोच्च स्थान है। छपाई सफ़ाई तो आदर्श है।"

विशाल-भारत, कलकत्ता—"जीवन-सखा का विशेषांक सब तरह से उपयोगी है।"

हंस, बनारस—"······हिन्दी में जीवन-सखा अपने ढंग का विशेष पत्र है।······"

"Leader", Allahabad

"The Special number contains a number of useful informative and thought-provoking articles....well written and require a carefal perusal. Needless to say, the highly educative value of the monthly is obvious and commendabele, and we have no doubt about its success in the world of journalism."

विशेषांक का मूल्य १) : वार्षिक चन्दा ३), आज ही भेजकर इसे प्राप्त कीजिए।

बहुत थोड़ी प्रतियाँ रह गई हैं।

मैनेजर—**जीवन सखा कार्यालय, इलाहाबाद**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-सन्देश का साहस

अक्टूबर के महीने में अपना वृहद् उपन्यास-अङ्क निकालने के पश्चात्

[छः महीनों में चार विशेषांक]

पहला—परीक्षांक ! यह एक मार्च को पाठकों के हाथ में होगा। इस अंक का प्रकाशन विद्यार्थियों के लाभार्थ किया जा रहा है। इन्टर, बी० ए० और एम० ए० के विद्यार्थी इससे विशेष रूप में लाभ उठा सकेंगे और आगे चलकर सम्मेलन की परीक्षाओं में भी इस अंक का उपयोग हो सकेगा।

दूसरा—शुक्ल-अंक ! यह एक अप्रैल सन् १९४१ को तैयार होगा। इस अंक में शुक्लजी का प्रारम्भिक जीवन, उनकी समस्त कृतियों की आलोचना, आपकी शैली का विश्लेषण, हिन्दी के प्रति की गयी आपकी सेवाओं का विवेचन और आचार्य के जीवन के कुछ महत्वपूर्ण संस्मरण इस अंक में छापे जायेंगे। हिन्दी के पाठकों को संदेश के 'प्रसाद-अंक' और 'द्विवेदी अंक' की याद न भूली होगी। कोशिश यह की जा रही है कि यह अंक भी अपनी पिछली परम्परा का आदर्श उपस्थित कर सके।

तीसरा—उपन्यास-अंक ! (दूसरा खण्ड) यह अंक १ जून सन् १९४१ को प्रकाशित होगा। हम उपन्यास-अंक का प्रथम खण्ड अक्टूबर सन् १९४० में निकाल चुके हैं। उक्त अंक में हिंदी उपन्यासों का मार्मिक विवेचन किया गया था। अब इस अंक में भारत की प्रान्तीय भाषाओं के उपन्यासों एवं विश्व के उपन्यासों की मूल धाराओं पर प्रकाश डाला जायगा। हिन्दी के कुछ श्रेष्ठ उपन्यासों पर इस अंक में अधिकारी व्यक्तियों के अध्ययन प्रस्तुत किये जाएँगे। और हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार अपनी उपन्यास-कला के विस्तृत अनुभव स्वयं अपनी कलम से हिन्दी पाठकों को देंगे।

चौथा—आलोचनांक ! यह चतुर्थ वर्ष की समाप्ति के बाद नववर्षांक के रूप में सितम्बर सन् १९४१ को तैयार होगा। यह अंक एक प्रकार से हिन्दी जगत् में अभूतपूर्व होगा। यह हिन्दी समालोचना का इतिहास, उसके विभिन्न पहलू, आधुनिक समालोचना के मान और हिन्दी के सभी समालोचकों की शैलियों पर अपना पूर्ण अध्ययन प्रस्तुत करेगा। यह अंक उपन्यास-अंक से भी अधिक महत्वपूर्ण होगा।

इन सभी अंकों के दाम लागत के अनुसार फुटकर लेनेवालों को अधिक देने पड़ेंगे। इससे अच्छा यह है कि स्थायी ग्राहक बना जाय और ३) पेशगी भेज दिये जायँ। विद्यार्थी समाज तो २) में ही वर्ष भर ग्राहक रह सकता है।

साधारण अंक का नमूना मुफ्त मँगाकर देख लीजिए।

पत्र-व्यवहार का पता

साहित्य सन्देश कार्यालय, आगरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री घनश्यामदास बिड़ला के ग्रन्थ

बापू

[जिसके २ संस्करण हो चुके हैं और कई भाषाओं में अनुवाद हो रहा है]

'बापू' में बिड़लाजी एक उच्चकोटि के साहित्यकार के रूप में प्रकट हुए हैं। × × मनन और चिन्तन के अतिरिक्त आपने सूक्ष्म-दर्शिता और विषय-प्रतिपादन में कारीगरी से काम लिया है। भाषा प्रांजल, सरल हृदयहारी है × × आगे चलकर 'बापू' पर अनेक किताबें लिखी जायँगी, लेकिन बिड़लाजी की रचना का स्थान सुरक्षित रहेगा। —हंस (हिन्दी)

''......लखनारनी शैली, दृष्टि, प्रसंगनी पसंदगी, अमुक बाजू पर वधु ओछा भार मूकवानी वृत्ति वगेरे मां लखनारनो पोतानो प्राण प्रकट थई जाय छे। अेटले आ पुस्तक मां आलेख्य करतां आलेखकनूं व्यक्तित्व सुंदर रीते गुंजी उठेल छे। शैली तो सारी पेठे प्रवाही अने स्वस्थ छे।'' —जन्मभूमि, (गुजराती)

"His book gives us, accordingly, not only an insight into the oceanic mind of his hero, but also into his own in its struggles to understand him, for if to love is to understand, to understand is to love, too. His language is a language both of the head and the heart." —माडर्न रिव्यू (अंग्रेजी)

'विवेचक बुद्धि आणि भक्ति यांचा सुंदर मिलाप या ग्रंथांत झाला आहे। ग्रंथांत अनेक संस्कृत वचनें व महाभारतांतील सुंदर दाखले ठिकठिकाणी दिले आहेत।' —भारत (मराठी)

''एक-एक अक्षर पढ़ा। बहुत रोचक जान पड़ी। छोड़ने को जी नहीं चाहता था। × × आपमें जैसा स्वाभाविक विख्यात व्यवहार का कौशल है वैसी ही स्वाभाविक उत्तम साहित्य के निर्माण की शक्ति भी है, यह इस ग्रंथ की रचना से प्रमाणित हुआ...।'' —डा० भगवानदास:

आपने सचमुच एक अच्छी और अनोखी चीज हिन्दुस्तान को दी है। मैंने तो, आपकी इस पुस्तक का एक घरू नाम रख दिया है—'बापू-मनन'। संस्कृत में एक ग्रंथ है—'वासुदेव-मनन'। उसी से मुझे यह नाम सूझा है। —काका कालेलकर:

''......चित्र सजीव और सहज है, यह पुस्तक की साहित्यिक सफलता है। मैं मानता हूँ कि हिन्दी का आज का लेखक खरेपन और स्वच्छता के लिए उसे अपने आगे नमूने के तौर पर रख सकता है।'' —जैनेन्द्रकुमार:

''बापू' का दर्शन कराने में, सत्य-अहिंसा के हार्द तक पहुँचाने में 'बापू' अवश्य सफल होगा, इसमें मुझे सन्देह नहीं है।'' —हरिभाऊ उपाध्याय:

मूल्य। ।=) १) १।)

डायरी के कुछ पन्ने

[दूसरी गोलमेज परिषद् में गांधीजी के साथ]

डायरी के ये पन्ने क़ीमती ऐतिहासिक दस्तावेज हैं। इसमें गोलमेज के नाटक का नेपथ्य अपनी यथार्थता में सामने दीख आता है। यह पुरानी होते हुए भी ताजी लगती है। दाम १।)

—छप रही है—

बिखरे विचार

[जिसमें उनके विविध लेख संकलित हैं]

सस्ता साहित्य मण्डल तथा जी० मा० के ग्राहकों को पौने मूल्य में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Regd No L4671

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मंडल का साहित्य

दामों में सस्ता किन्तु मूल्य में बहुमूल्य है !

गांधी साहित्य : टॉल्स्टाय साहित्य : जवाहर साहित्य

मण्डल की विशेषतायें हैं

आत्मकथा, मेरी कहानी, विश्वइतिहास की झलक, गांधी अभिनन्दन ग्रन्थ, हमारे राष्ट्र-निर्माता, जीवनसन्देश, बुद्धवाणी, सन्तवाणी, समन्वय, लोकजीवन, गीता मन्थन, खादी मीमांसा, मेरी मुक्ति की कहानी, बापू, विनोबा के विचार, लड़खड़ाती दुनिया, आदि आदि जीवन निर्माणकारी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। सूचीपत्र तथा नियमावली मुफ्त मँगाकर देखिए।

नवजीवन माला तथा सामयिक साहित्य माला

सम्मतियाँ

×पुस्तकें बहुत सस्ती और बड़े अच्छे आकार प्रकार की हैं×× में कुल खादी भंडारों से इन्हें बिक्री के लिए रखने की सिफारिश करता हूँ।
गांधीजी

××मुझे ये बहुत पसन्द आईं। अच्छी और सस्ती हैं। इनको तो हज़ारों और लाखों घरों में पहुँचाना चाहिए।
जवाहरलाल नेहरू

'जीवन साहित्य'

नामक जीवन और साहित्य विषयक नया मासिक पत्र

आपको अपने दैनिक जीवन में एक सच्चे मित्र का काम देता है, इसको हमेशा अपने पास रखें।

सब बातों का विवरण इस पते से मँगायें—

सस्ता साहित्य मंडल, कनाट सर्कस नई, दिल्ली

शाखायें

दिल्ली :: लखनऊ :: इन्दौर

कानपुर के एजेण्टः साहित्य-निकेतन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मार्तण्ड उपाध्याय द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नई दिल्ली, में छपकर वहींसे मार्तण्डउपाध्याय

तमसो मा ज्योतिर्गमय

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन साहित्य

वर्ष १ : अंक ९ | सम्पादक हरिभाऊ उपाध्याय | अप्रैल : १९४१

हिन्दी भाषा और उसका साहित्य

हिन्दी प्राचीन और अर्वाचीन संस्कृति की जड़ है। यह भाषा सबसे प्राचीन है। उसका साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। हिन्दी-साहित्य के अन्दर इतनी गहरी चीज़ है जैसी संसार के ऊँचे-से-ऊँचे साहित्य में नहीं मिलेगी। अंग्रेजी भाषा का तो मैंने ऊँचे-से-ऊँचा साहित्य पढ़ा है। होमर, शेक्सपियर और मिल्टन का साहित्य प्राचीन सांस्कृतिक माना जाता है, परन्तु यदि आप सूर, तुलसी और केशव को पढ़ेंगे, तो आप देखेंगे कि इनमें सब कुछ मौजूद है। उनका साहित्य प्राचीन संस्कृति से भरपूर है।

साहित्य का मूल्य व्हीलर की दुकान से नहीं आंका जा सकता। साहित्य का माप-तोल उसके लम्बे-चौड़े होने से नहीं होता, बल्कि भीतरी शक्ति से होता है। हिन्दी का साहित्य एक अतुल भण्डार है, वह प्रत्येक भारतीय के लिए जानने योग्य है। राष्ट्रभाषा बने या न बने, हिन्दी के भीतर शक्ति अवश्य है। वैसे तो वह राष्ट्र-भाषा बहुत प्राचीन समय से ही बनी हुई है और वह समय अब भी आ गया है। अंग्रेजी साहित्य की रोशनी पड़ जाने से हमने अपने साहित्य को नहीं पहिचाना। हिन्दी ने तो वह काम कर दिया है जो अंग्रेजी ने आजतक करके नहीं दिखाया। अंग्रेजी एक अप्राकृतिक भाषा है। वह हमारी उन्नति करनेवाली नहीं हो सकती। हिन्दी हमारी शक्ति को बढ़ाती है। हिन्दी भाषा को जितना ही अधिक हम पढ़ते हैं उतना ही अधिक अमृत हमें उसके अन्दर से मिलता है। आज उसको छोड़कर ही हमारा ह्रास हो रहा है।

पुरुषोत्तमदास टंडन

प्रकाशक

सस्ता साहित्य मण्डल

कनाट सर्कस, नई दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

१. पूजागीत (कविता)— ३६५
[श्रीसोहनलाल द्विवेदी एम. ए. एल-एल.बी.]
२. लेखक बनाम प्रकाशक— ३६६
[श्री हरिभाऊ उपाध्याय]
३. टूटी कुटिया— ३६८
[श्री विष्णु अम्बालाल जोशी, एम. ए.]
४. जीवन-विद्या-[आचार्य श्रीनानाभाई भट्ट] ३६९
५. आचार्यश्री का अन्तरंग-दर्शन— ३७२
[श्री विष्णुदत्त शर्मा, एम. ए. एल-एल. बी.]
६. आधुनिक हिन्दी कविता की कुछ प्रवृत्तियाँ [श्रीसुधीन्द्र एम. ए., साहित्यरत्न] ३७४
७. सौष्ठव पूजा— ३७७
[श्री प्रभाकर माचवे एम. ए., साहित्यरत्न]
८. तेरा उपहार— ३७९
[श्री डॉ० 'मृत्युञ्जय', एम. ए., डी. फ़िल.]
९. जीवन, साहित्य और जीवन— ३८०
[श्री छगनलाल परमार, बी. ए.]
१०. निजी पुस्तकालय बनाइए— ३८१
[श्री कालिदास कपूर, एम. ए., एल. टी.]
११. जीवन का उषाकाल— ३८४
[श्री प्रभुदास गांधी]
१२. अहिंसा—[श्री विद्यानन्द] ३८६
१३. प्रस्तुत प्रश्न— ३८७
प्राकृतिक किसे कहें ? [हरिभाऊ उपाध्याय]
रेडियो की बोली कैसी हो ? [श्री दुलारेलाल तथा सावित्री देवी भार्गव एम. ए.]
अनुवाद और अनुवादक [श्रीप्रवीणचंद्र पांडेय]
बाल-साहित्य का अभाव [श्री दयाशंकर मिश्र]
१४. समालोचनार्थ प्राप्त— ३९२
१५. कसौटी पर— ३९३
हिंदुस्तान बनाम पाकिस्तान; 'तरुण जैन' का अहिंसा-अंक; भारतीय सभ्यता का विकास; साम्राज्य और उनका वतन; स्टालिन; महापुरुषों की जीवत-झाँकी; चर्खाशाला; अर्थशास्त्र की रूपरेखा।
१६. सहयोगियों में से— ३९८
१७. सैर-सपाटा— ४००
१८. हिन्दी की हलचलें— ४०१
१९. कृष्ण-मन्दिर में— ४०१
२०. क्या और कैसे ?— ४०२
तीन मुख्य घटनायें; बलिवीर गणेशजी; श्रद्धांजलि !; चेतावनी; दो शोक-संवाद;
२१. मण्डल की ओर से— ४०५

कुछ अनमोल अंग्रेज़ी पुस्तकें

My Experiments with Truth	(Gandhiji)	4	0	0
Hind Swaraj	,,	0	4	0
Self restraint *Vs.* Self-Indulgence	,,	2	0	0
To the Students	,,	2	0	0
Cent per cent Swadeshi	,,	1	8	0
Satyagraba in South Africa	,,	4	8	0
From Yervada Mandir	,,	0	2	0
Bleeding wound	,,	0	12	0
Bhagavad-Gita	(C. R.)	0	6	0
Upanishad	,,	0	6	0
The Power of Non violence	(R. B. Gregg)	2	0	0
An Autobiography	(Jawaharlal Nehru)	5	4	0
Glimpses of World History	,,	6	0	0
Letters from a father to his daughter	,,	0	8	0
History of the Congress	P. Sitaramayya	2	8	0
Home and Village Doctor	Satish C. Dass Gupta	5	0	0

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली
शाखायें : दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१००० सज्जनों को 'जीवन-साहित्य'

एक रुपये में

'जीवन-साहित्य' तथा 'मण्डल' के वर्तमान ग्राहकों की सिफारिश पर

प्रिय ग्राहक बन्धु,

'जीवन-साहित्य' की महत्ता एवं उपयोगिता को समझकर आपमें से अनेक बन्धुओं ने कई बार अपने मित्रों, साथियों या परिचित संस्थाओं के लिए चाहा कि हम 'जीवन-साहित्य' उनको आधे मूल्य में दें। अतः हमने तय किया है कि आगामी २ महीने के अन्दर आप जिन-जिन लोगों की सिफ़ारिश करेंगे उनको 'जीवन साहित्य' १) वार्षिक में दिया जायगा। उसके लिए निम्न नियमों को ध्यान रखना आवश्यक होगा।

१—इस पत्र के दूसरी ओर छपा फार्म भरकर भेजना होगा।

२—ग्राहकों का मूल्य इस आर्डर फार्म के साथ ही पोस्टल सार्टिफिकेट या डाक के टिकटों के रूप में आना चाहिए।

३—प्रत्येक ग्राहक चार सज्जनों से अधिक की सिफारिश नहीं कर सकेंगे।

४—इन ग्राहकों के रुपये हर हालत में पेशगी आनी चाहिएँ। वी. पी. से अंक नहीं भेजा जायगा।

५—ऐसे ग्राहकों को मण्डल के स्थायी ग्राहकों अथवा 'जीवन-साहित्य' के साधारण ग्राहकों को मिलनेवाली पुस्तकों पर कमीशन-संबंधी रियायत नहीं मिल सकेगी।

६—अप्रैल के अन्त तक यह संख्या पूरी हो जानी चाहिए। पर अगर इससे पहले यह पूरी हो गयी तो १००० से ज्यादा ग्राहक १) में नहीं बनाये जावेंगे। अतः हर हालत में दो महीने तक ठहरना नहीं चाहिए। शीघ्रता करें।

भवदीय

मार्तण्ड उपाध्याय

मन्त्री

सस्ता साहित्य मण्डल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पत्र भरकर शीघ्र भेजिए

स्थान ______________

ता० ______________

आपकी सूचना पढ़ी। ठीक है। मैं अपने निम्न ४ मित्रों के नाम और पते लिखता हूँ और इनके ४) पोस्टल सार्टिफिकेट / डाक के टिकिटों या मनीआर्डर से भिजवा रहा हूँ। आप इनको...... अंक से १ वर्ष के लिए जी० सा० का ग्राहक बना लें। मेरा ग्राहक नं० मंडल का......... जी० सा० का............... है।

भवदीय

नाम ______________

पूरा पता ______________

____

____

मित्रों के नाम

(१) ______________

(२) ______________

(३) ______________

(४) ______________

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

संक्षिप्त परिचय

१—सस्ता साहित्य मण्डल 'सोसाइटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट' के अनुसार यह एक सार्वजनिक रजिस्टर्ड संस्था है।

२—हिन्दी में ऊँचे दरजे का राष्ट्रीय, सामाजिक एवं नैतिक साहित्य सस्ते से सस्ते मूल्य में प्रकाशित करना और इसी प्रकार की पुस्तकों का प्रचार करना इसका उद्देश्य है।

३—उपरोक्त उद्देश्य से सन् १९२५ में अजमेर में सर्वश्री जमनालाल बजाज, घनश्यामदास बिड़ला, हरिभाऊ उपाध्याय, महावीरप्रसाद पोद्दार, जीतमल लूणिया आदि सज्जनों ने इसकी स्थापना की।

४—१९३४ में 'मण्डल' का कार्यालय अजमेर से दिल्ली आगया और अब मण्डल का प्रधान कार्यालय कनाट सर्कस, नई दिल्ली में है। लखनऊ, इन्दौर तथा दिल्ली में उसकी शाखायें हैं। आदर्श साहित्य मन्दिर ब्रह्मपुरी अजमेर, साहित्यनिकेतन कानपुर, और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मदरास अपने स्थानों के लिए सोल एजेण्ट हैं।

५—'मण्डल' से निम्नलिखित मालाओं में पुस्तकें प्रकाशित होती रहती हैं—

(१) **सर्वोदय साहित्य माला**—इस माला में नीचे की नं० २, ३, ४ मालाओं की तथा राष्ट्रीय उत्थान में सहायक ख़ास-ख़ास पुस्तकें निकलती हैं।

(२) **लोक साहित्य माला**—इसमें साधारण जनता के काम की सब विषयों पर ज्ञानवर्द्धक और विचारोत्तेजक पुस्तकें निकलती हैं।

(३) **गाँधी साहित्य माला**—इसमें गाँधीजी की पुस्तकें निकलती हैं।

(४) **टाल्स्टाय ग्रंथावलि**—इसमें टाल्स्टाय के चुने हुए ग्रंथ प्रकाशित होते हैं।

(५) **नवजीवन माला**—लोकोपयोगी छोटी-छोटी नवजीवनदायी पुस्तकें इस माला में निकलती हैं।

(६) **सामयिक साहित्य माला**—इसमें संसार तथा हिन्दुस्तान के सामयिक प्रश्नों तथा समस्याओं पर पुस्तकें निकलती हैं।

(७) **बाल साहित्य माला**—इसमें बालोपयोगी पुस्तकें निकलती हैं।

(८) **विविध प्रकाशन**—इसमें वे पुस्तकें निकलती हैं जो उपरोक्त मालाओं में न आती हों।

(९) इसके अलावा 'मण्डल' दूसरों की अपने उद्देश्यों के अनुकूल पुस्तकों की सोल एजेन्सी भी लेता है।

६—ऊपर लिखी सब मालाओं तथा सोल एजेंसी के अन्तर्गत मण्डल से अबतक लगभग १४० पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं; जिसमें अधिकांश के दो से लगाकर सात-सात संस्करण तक हो चुके हैं। यह मण्डल की पुस्तकों के सर्वप्रिय होने का जबर्दस्त प्रमाण है।

७—'मंडल' से 'जीवन साहित्य' नामक एक मासिक पत्र भी निकलना शुरू हुआ है। हिन्दी में साहित्य का जीवन के साथ मेल करने तथा सद्विचार और सद्ग्रन्थों के प्रचार के उद्देश्य से यह निकाला गया है। इसका मूल्य २) है; पर मण्डल के ग्राहकों से १) लिया जाता है। मण्डल के ग्राहकों के लिए इसे खरीदना जरूरी हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८—मण्डल से महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य तथा डॉ० पट्टाभि सीतारामैया-जैसे महान् नेता, टाल्सटाय, ह्यू गो, मोटले, क्रोपाटकिन, केम्पिस, मार्डेन, मैक्स्विनी, खलील जिब्रान जैसे दुनिया के विचारकों तथा डा० भगवान्दास, विनोबा, काका कालेलकर, किशोरलाल मशरूवाला, स्व० रामदास गौड़, हरिभाऊ उपाध्याय, वियोगी हरि, वामन मल्हार जोशी जैसे भारतीय साहित्य के प्रसिद्ध लेखकों की रचनायें प्रकाशित हुई हैं।

९—मण्डल के संचालकों में भारतवर्ष के निम्नलिखित सुप्रसिद्ध लोकनेता, व्यवसायी, साहित्यसेवी और कार्यकर्त्ता हैं :—

सर्वश्री घनश्यामदास बिड़ला नई दिल्ली, अध्यक्ष बाबू राजेन्द्रप्रसाद पटना, जमनालाल बजाज वर्धा, काका कालेलकर वर्धा, वियोगी हरि दिल्ली, हरिभाऊ उपाध्याय अजमेर, पारसनाथसिंह कलकत्ता, देवदास गांधी नई दिल्ली, महावीरप्रसाद पोद्दार गोरखपुर; जीतमल लूणिया अजमेर, मार्तण्ड उपाध्याय नई दिल्ली।

१०—'मण्डल' की सब शाखाओं की दुकानों में हिन्दी-साहित्य की सभी विषयों की उच्च कोटि की पुस्तकें हमेशा मिलती हैं।

११—संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, बिहार, राजस्थान तथा पंजाब के खादी-भण्डारों पर भी मण्डल की पुस्तकें मण्डल के स्थायी ग्राहकों को पौने मूल्य में मिल सकती है।

पुस्तकें मँगाने के नियम

१. स्थायी ग्राहकों के लिए—

१—एक रुपया प्रवेश-फीस देने से मण्डल के स्थायी ग्राहक हमेशा के लिए बन सकते हैं। स्थायी ग्राहकों को मण्डल से अबतक के प्रकाशित तथा आगे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ **पौने मूल्य में** मिलते हैं। प्रवेश-फीस का रुपया वापस नहीं लौटाया जाता है और न किसी हिसाब में मुजरा दिया जाता है।

२—स्थायी ग्राहकों को मण्डल के प्रकाशनों की **एक-एक प्रति ही** पौने मूल्य में मिलेगी। एक से ज्यादा लेने पर चौथाई कमीशन के बजाय दो आना रुपया कमीशन दिया जायगा।

३—'मंडल' के स्थायी ग्राहकों को **प्रतिवर्ष कमीशन काटकर पाँच रुपये की मण्डल से प्रकाशित पुस्तकें** अवश्य खरीदनी होंगी। एक साल न खरीदने पर दूसरे साल उनका नाम ग्राहक-श्रेणी से अलग किया जा सकेगा; पर खास हालतों में रियायत करने का अधिकार मंत्री को रहेगा।

४—जब नयी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं तो पहले उनका विवरण और मूल्य आदि का सूचना-पत्र स्थायी ग्राहकों के पास भेज दिया जाता है। (अब चूँकि 'जीवन-साहित्य' मण्डल का मुखपत्र निकल रहा है अतः यह सूचना इसी के द्वारा दी जाया करेगी। अतः अच्छा हो कि 'मण्डल' के सब ग्राहक उसके ग्राहक बन जायँ। ऐसा हो जाने से स्थायी ग्राहकों को मण्डल की पुस्तकों की सूचना जल्दी मिल जाया करेगी।)

ग्राहकों को चाहिए कि सूचना मिलते ही यदि उन्हें पुस्तकें मँगाना हो तो **पुस्तकें पसन्द करके विवरण-पत्र के साथ जानेवाले कार्ड पर अपना आर्डर लिखकर भेज दें। यदि पुस्तकें न लेना चाहें तो भी तुरन्त ही उसी कार्ड पर अपनी इनकारी भेज दें। उसे अधिक दिन रोकें नहीं।**

५—स्थायी ग्राहक जब कभी पत्र-व्यवहार करें तो उन्हें चाहिए कि वे अपना **ग्राहक-नम्बर अवश्य लिख दिया करें,** जिससे उनके आर्डर पर कमीशन काटने में तथा दूसरी कार्रवाई करने में हमें सुविधा हो।

६—दूसरे प्रकाशकों की पुस्तकें जो मण्डल की दिल्ली, लखनऊ तथा इन्दौर की दुकानों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिक्री के लिए रहती हैं, उनपर साधारणतः मण्डल के स्थायी ग्राहकों को ६¼%, १२½% और १५% तक कमीशन दिया जायगा।

२. साधारण ग्राहकों के लिए—

७—साधारण ग्राहकों को मण्डल की १) से ५) तक की पुस्तकों पर एक आना रुपया और ५) से १०) तक की पुस्तकों पर दो आना रुपया और १०) से ऊपर तीन आना रुपया कमीशन दिया जायगा। बाहरी पुस्तकों पर एक आना रुपया और दो आना रुपया तक कमीशन दिया जायगा। ज्यादा कमीशन पाने के लिए स्थायी ग्राहक बन जाना ही अच्छा उपाय है।

३. अन्य नियम

८—१०) से अधिक या रेल से माल मँगाने पर जितने का आर्डर हो उसका **एक-चौथाई दाम** पेशगी भेजना चाहिए। बिना पेशगी रुपया आये माल नहीं भेजा जायगा।

९—पत्र-व्यवहार हिन्दी में ही करना चाहिए और साफ़ लिखा होना चाहिए। रेलसे माल मँगाना हो तो **रेलवे स्टेशन का नाम अंग्रेज़ी के ब्लॉक अक्षरों में** (A. B. C.) साफ़ लिखना चाहिए।

१०—२) रु० से कम की वी० पी० नहीं भेजी जायगी।

११—ग्राहकों के पास वी० पी० पहुँचने पर, उनको हमारे हिसाब में अगर कोई भूल मालूम हो तो वी० पी० छुड़ाकर भूल की सूचना हमें दे दें। उनका पत्र आते ही भल सुधार दी जायगी। थोड़ी-सी भूल के लिए वी० पी० लौटा देना ठीक नहीं है। इससे आपकी ही हानि होती है; क्योंकि 'मण्डल' आपकी संस्था है।

१२—पहले आर्डर देकर फिर उसे वापस कर देना ठीक नहीं है। यदि भूल से या किसी कारणवश ऐसा हो जाय तो ग्राहक को चाहिए कि 'मण्डल' की जो पोस्टेज-हानि हुई हो, उसे भेज दें और पुस्तकें फिर भेजने को लिखें।

१३—आर्डर भेजते समय इस बात का भी खुलासा कर देना चाहिए कि जो पुस्तकें स्टॉक में न हों, उन्हें न भेजें या तैयार होने पर भेजें या जो हों वे ही भेजदें, आदि।

४. 'जीवन-साहित्य' के नियम—

१४—'जीवन-साहित्य' का वार्षिक मूल्य २) है पर 'मण्डल' के ग्राहकों से आधा मूल्य यानी १) लिया जाता है। जो सज्जन २) देकर जीवन साहित्य के ग्राहक बनते हैं उनको मण्डल की पुस्तकें जबतक वह जी० सा० का ग्राहक है तब तक पौने मूल्य में मिला करेंगी।

१५. जी० सा० के विस्तृत नियम पृष्ठ १६ में दिये गये हैं।

१६—इससे पूर्व प्रकाशित सभी नियम रद्द किये जाते हैं। इनमें भी समय-समय पर रद्दोबदल करने का अधिकार मंत्री को है।

—मंत्री

हाथ-काग़ज की स्टेशनरी

पाठकों को यह जानकर ख़ुशी होगी कि 'मण्डल' के प्रधान कार्यालय तथा उसकी तीनों शाखाओं में हाथ के काग़ज के लेटर हेड, लिफाफे, कार्ड आदि बिकरी के लिए रखे गये हैं। कई साइज़ों में तथा कई तरह के मेल खाने वाले रंगों में लिफाफे और चिट्ठी लिखने के काग़ज मिलते हैं। ।) के टिकट भेजकर नमूना मँगाइए।

प्रधान कार्यालय में 'लेटर हेड' छपाने का भी प्रबंध है। लिखें—

व्यवस्थापक,
सस्ता साहित्य-मंडल,
कनाट सर्कस, नई दिल्ली.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल : 'सर्वोदय साहित्यमाला' के प्रकाशन

[×चिन्हवाली पुस्तकें अप्राप्य हैं। अप्राप्य पुस्तकें मँगाने का कष्ट न करें।]

१. दिव्य जीवन : स्वेट मार्डेन की 'The Miracles of Right Thought' नामक पुस्तक का अनुवाद। जीवन की कठिन समस्याओं से निराश युवकों के लिए, यह पुस्तक संजीवनी विद्या के समान है। उत्साह-वर्द्धक और ओजपूर्ण। ।=)

२. जीवन-साहित्य : काका कालेलकर के शिक्षा, संस्कृति, सभ्यता, राजनीति आदि महत्त्व-पूर्ण विषयों पर लिखे निबन्ध। १।)

३. तामिल वेद : दक्षिण के अछूत महात्मा तिरुवल्लुवर का उच्च कोटि की नैतिक, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक शिक्षाओं से भरा हुआ ग्रन्थ। भूमिका-लेखक श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य। ।।।)

४. भारत में व्यसन और व्यभिचार : (ले० बैजनाथ महोदय) इसमें तथ्यों तथा आँकड़ों से यह बताया है कि भारतवर्ष में शराब, भाँग, गाँजा, अफीम आदि दुर्व्यसन कैसे फैले तथा उनसे भारतवर्ष की जनता को क्या हानियाँ हुईं और हो रही हैं; व्यभिचार के पाप से भारतवासी किस प्रकार ग्रसित हो रहे हैं और किस प्रकार हम इन दुर्गुणों के पंजों से निकल सकते हैं। ।।।=)

×५. सामाजिक कुरीतियाँ : (टाल्स्टाय) [जब्त : अप्राप्य] ।।।)

६. भारत के स्त्री-रत्न : इस पुस्तक में भारतवर्ष की लगभग सभी प्रसिद्ध एवं पूजनीय देवियों की मनोहर तथा पवित्र जीवन-कथायें लिखी गयी हैं। बहनें इन्हें पढ़ें तथा अपने पवित्र और गौरवशाली भूतकाल की झाँकी देखकर स्वयं को आदर्श स्त्री-रत्न बनावें। तीन भागों में। चौथा भाग तैयार हो रहा है। ३)

[तीसरा भाग अप्राप्य है]

×७. अनोखा : (विक्टर ह्यूगो) [अ०] १।=)

८. ब्रह्मचर्य-विज्ञान : (जगन्नारायणदेव शर्मा) इस पुस्तक में ब्रह्मचर्य की महिमा, उसके पालन की विधि, उसके लाभ आदि बातें बहुत अच्छे ढंग से बतायी गयी हैं। पुस्तक में वेद, उपनिषद्, पुराण आदि सद्ग्रन्थों के शुभ वचनों का बहुत अच्छा संग्रह है। ।।।=)

९. यूरोप का इतिहास : (रामकिशोर शर्मा) यह राष्ट्रीयता, आत्मबलिदान तथा आज़ादी का इतिहास है। हम भारतीयों को यह इतिहास ज़रूर पढ़ना चाहिए। २)

१०. समाज-विज्ञान : (संक्षिप्त संस्करण ले० चन्द्रराज भंडारी) समाज-रचना, उसके विकास तथा निर्माण पर इसमें बहुत अच्छी तरह विचार किया गया है। समाजशास्त्र पर हिन्दी की मौलिक पुस्तक ।।।)

×११. खद्दर का संपत्ति-शास्त्र : (ग्रेग) [अप्राप्य] ।।।≡)

×१२. गोरों का प्रभुत्व : [अप्राप्य] ।।।=)

×१३. चीन की आवाज़ : [अप्राप्य] ।-)

×१४. दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह : (महात्मा गांधी) सत्याग्रह की उत्पत्ति तथा उसके प्रयोग का खुद गांधीजी द्वारा लिखा इतिहास पढ़ें कि किस प्रकार बहादुरी से इस शस्त्र द्वारा अफ्रीकावासियों ने अपने अधिकारों की बिना दूसरों को तकलीफ़ पहुँचाते हुए रक्षा की। १।)

१५. विजयी बारडोली : [अप्राप्य] २)

१६. अनीति की राह पर : संयम, इंद्रिय-निग्रह तथा ब्रह्मचर्य पर गांधीजी की यह कृति अनुपम और सर्वश्रेष्ठ है। ।।=)

१७. सीता की अग्नि-परीक्षा : (कालीप्रसन्न घोष) लंका-विजय के बाद सीताजी की अग्नि-शुद्धि का यह वैज्ञानिक विश्लेषण है। विज्ञान का हवाला देकर यह बताया गया है कि सीता की अग्नि-परीक्षा की घटना सच्ची है। ।-)

१८. कन्या-शिक्षा : स्व० चन्द्रशेखर शास्त्री ने इसमें बिल्कुल सरल ढंग से, शुरू से लेकर विवाह के बाद तक के कन्याओं के जीवन तथा उनके कर्तव्यों की चर्चा प्रश्नोत्तर के रूप में बड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन्दर ढंग से की है। कन्याओं के सीखने योग्य सभी बातें इसमें आ गयी हैं। ।)

१६. **कर्मयोग**। अश्विनीकुमार दत्त की यह पुस्तक पढ़ने से पाठक 'कर्मयोग' के संसार में प्रवेश पा जाते हैं और उनको पारमार्थिक सुख का अनुभव होने लगता है। ।=)

२०. **कलवार की करतूत** : टॉल्स्टॉय की सरल भाषा में शराब के आविष्कार की मनोरंजक और शिक्षाप्रद कहानी। =)

२१. **व्यावहारिक सभ्यता** : बच्चों, युवकों तथा अवस्थाप्राप्त लोगों के लिए रोज़ के व्यवहार में आनेवाली शिक्षाओं की पोथी। बोधप्रद, शिक्षाप्रद तथा ज्ञानप्रद। ।)

२२. **अँधेरे में उजाला** : टॉल्स्टॉय के 'Light Shines in the Darkness' नामक नाटक का अनुवाद। इस नाटक में टॉल्स्टॉय ने अपने जीवन की छाया अंकित की है। यह उनके हृद्गत मनोभावों और हृदय-मंथन की अनुपम कहानी है। ।)

×२३. **स्वामीजी का बलिदान** : (ह०उ०) [अप्राप्य] ।-)

×२४. **हमारे ज़माने की गुलामी** : (टॉल्स्टॉय) [जब्त : अप्राप्य] ।)

२५. **स्त्री और पुरुष**। संयम तथा ब्रह्मचर्य पर टॉल्स्टॉय की यह पुस्तक बहुत महत्वपूर्ण है। स्त्रियों को अपनी इच्छा-पूर्ति का साधन समझनेवाले इसे पढ़ें और समझें कि स्त्री-पुरुषों का सम्बन्ध भोग-विलास का नहीं; बल्कि एक पवित्र उद्देश्य के लिए किया गया एक पवित्र सम्बन्ध है। ।)

२६. **सफ़ाई** : घर, गाँव तथा शरीर की सफ़ाई रखने आदि के बारे में उत्तम पुस्तक। ।=)

२७. **क्या करें?** टॉल्स्टॉय की सुप्रसिद्ध पुस्तक 'What to do ?' का अनुवाद। गरीबों एवं पीड़ितों की समस्यायें और उनका हल। यह पुस्तक नहीं, बल्कि समभावी हृदय का मंथन है २)

×२८. **हाथ की कताई-बुनाई** : [अप्राप्य] ॥=)

×२६. **आत्मोपदेश** : [अप्राप्य] ।)

×३०. **यथार्थ आदर्श जीवन** : [अप्राप्य] ॥-)

३१. **जब अंग्रेज़ नहीं आये थे**। (देखिए नवजीवन माला) ≡)

×३२. **गंगा गोविन्दसिंह** : [अप्राप्य] ॥=)

३३. **श्रीरामचरित्र** : श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य लिखित रामायण की कहानी। करुण और मधुर। मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी का जीवन-चरित्र। १)

×३४. **आश्रम-हरिणी** : (वामन मल्हार जोशी) [अप्राप्य] ।)

३५. **हिन्दी-मराठी-कोष** : २)

×३६. **स्वाधीनता के सिद्धान्त** : [अप्राप्य] ।)

३७. **महान् मातृत्व की ओर** : (नाथूराम शुक्ल) इस पुस्तक में मातृत्व की ज़िम्मेदारी, उसकी गुरुता और आदर्श का दिग्दर्शन है। स्त्री-उपयोगी उत्तम और दिलचस्प पुस्तक। ॥=)

३८. **शिवाजी की योग्यता** : (तामस्कर) छत्रपति शिवाजी का चरित्र-विश्लेषण। उनकी शासन-प्रणाली का तर्कपूर्ण अध्ययन। ।=)

३६. **तरंगित हृदय** : आचार्य श्री अभयदेवजी के विचार-तरंगों का सुन्दर संग्रह। स्व० स्वामी श्रद्धानन्द के आशीर्वाद सहित। ।)

४०–**हालैण्ड की राज्यक्रान्ति [नरमेध]** अंग्रेज़ी लेखक मोटले की 'Rise of the Dutch Republic' के आधार पर श्री चन्द्रभाल जौहरी का लिखा हुआ डच-प्रजा के आत्मयज्ञ का और रोमांचकारी इतिहास। १।)

४१. **दुखी दुनिया** : ग़रीब और पीड़ित मानवी दुनिया के करुण चित्र। श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की सच्ची घटनाओं पर लिखी-कहानियाँ। मधुर, करुण और सुन्दर। ।=)

४२. **जिन्दा लाश** : टॉल्स्टॉय के 'The

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Living Corpse' नामक नाटक का अनुवाद। टॉल्स्टॉय के सब नाटकों में यह बड़ा ही करुण और मर्मस्पर्शी है। ॥)

४३. आत्म-कथा : (महात्मा गांधी) संसार के साहित्य का यह एक उज्ज्वल रत्न है। उपनिषदों की भाँति पवित्र और उपन्यासों की भाँति रोचक। चरित्र को निर्मल और मन को ऊँचा उठानेवाला। हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा किया गया प्रामाणिक अनुवाद। नवीन और सस्ता संस्करण। साधारण १) विशेष संस्करण १॥)

×**४४. जब अंग्रेज़ आये :** [ज़ब्त : अप्राप्य] १।≈)

४५. जीवन-विकास : डार्विन के विकासवाद के सिद्धान्त को विशद रूप से समझानेवाली हिन्दी में यह एक ही पुस्तक है। १)

४६. किसानों का बिगुल : [ज़ब्त : अप्राप्य] ≈)

४७. फाँसी : विक्टर ह्यूगो लिखित 'Sentence to Death' नामक उपन्यास का अनुवाद। फाँसी की सजा पाये हुए एक युवक के मनोभावों का चित्रण। बेबस और करुण हृदय की झाँकी। ।≈)

४८. अनासक्तियोग : गीता-बोध। (देखिए नवजीवन माला) ।-)

×**४९. स्वर्ण-विहान :** (हरिकृष्ण प्रेमी) [ज़ब्त : अप्राप्य] ।≈)

५०. मराठों का उत्थान और पतन : (गोपाल दामोदर तामस्कर) मराठा साम्राज्य का विस्तृत और सच्चा इतिहास। मराठी भाषा में भी मराठों का ऐसा सच्चा और बड़ा इतिहास नहीं है, ऐसा महाराष्ट्र के अनेक विद्वान् और नेता मानते हैं। २॥)

५१. भाई के पत्र : (रामनाथ 'सुमन') स्त्री-जीवन पर प्रकाश डालनेवाली; उनकी घरेलू एवं रोजमर्रा की कठिनाई में पथ-प्रदर्शक; बहनों के हाथों में दिये जाने योग्य एक ही पुस्तक। नवीन और सस्ता संस्करण। १)

×**५२. स्वगत :** (हरिभाऊ उपाध्याय) [अप्राप्य] ।≈)

×**५३. युगधर्म :** (हरिभाऊ उपाध्याय) [ज़ब्त : अप्राप्य] १≈)

५४. स्त्री-समस्या : (मुकुटबिहारी वर्मा) नारी-जीवन की जटिल समस्याओं का गम्भीर अध्ययन। स्त्री-आन्दोलनके इतिहास सहित स्त्रियों की समस्या पर यह अच्छी और संग्रह करने योग्य 'रेफ़रेन्स बुक' है। सुन्दर जिल्द। १॥।)

×**५५. विदेशी कपड़े का मुक़ाबिला :** [अप्राप्य] ॥≈)

५६. चित्रपट : प्रो० शान्तिप्रसाद वर्मा, एम० ए० के गद्य-गीतों का संग्रह। भावनामय, करुण और मधुर। ।≈)

×**५७. राष्ट्रवाणी :** (गांधीजी) [अप्राप्य] ॥≈)

५८. इंग्लैण्ड में महात्माजी : (महादेव देसाई) महात्माजी की दूसरी गोलमेज़ परिषद् के समय की इंग्लैण्ड की यात्रा का सुन्दर, सरस और मज़ेदार वर्णन। हिन्दी में अपने ढंग का सर्वोत्तम यात्रा-वृत्तान्त। सस्ता और नवीन संस्करण। ।॥)

५९. रोटी का सवाल अथवा **भावी क्रान्ति का संगठन :** रूस के मशहूर क्रांतिकारी लेखक प्रिंस क्रोपाटकिन की अमर कृति 'Conquest of Bread' का सरल अनुवाद। अराजक समाजवाद का सुन्दर, सरल और सुबोध विवेचन। सस्ता नया संस्करण। ।॥)

६०. दैवी-सम्पद् : उत्तम नैतिक एवं धार्मिक पुस्तक। 'दैवी-सम्पद् से मनुष्य को मोक्ष होता है।' गीता की इस उक्ति का सुन्दर विवेचन। मनुष्य को मोक्ष का रास्ता बतानेवाली पुस्तक। ।≈)

६१. जीवन-सूत्र : अंग्रेजी में थॉमस केम्पिस लिखित सर्व-प्रसिद्ध पुस्तक 'Imitation of Christ' का अनुवाद। जीवन को उन्नत और विचारों को सात्विक बनानेवाली पोथी। अंग्रेजी में इसको बाइबिल के समान माना जाता है। ।॥)

६२. हमारा कलंक : अस्पृश्यता-निवारण पर महात्माजी के विचारों एवं लेखों का संग्रह,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके महान् उपवास की कहानी। महात्मा गांधी के आशीर्वाद सहित। ॥=)

नोट—इस पुस्तक का अंग्रेज़ी संस्करण भी 'Bleeding Wound' के नाम से मण्डल से निकला है। मूल्य १॥), यह 'मण्डल' के ग्राहकों को ॥) में मिलेगा।

६३. **बुद्बुद् :** (हरिभाऊ उपाध्याय) अपने आदर्शों से जीवन का मेल मिलानेवाले युवकों के लिए मननीय पुस्तक। ॥)

६४. **संघर्ष या सहयोग ? :** क्रोपाटकिन की 'Mutual Aid' नामक पुस्तक का अनुवाद। इसमें बतलाया है कि पशु-पक्षियों से लेकर मनुष्य तक सबके जीवन का आधार सहयोग है, एकता है, संघर्ष नहीं। १।‌‌)

६५. **गांधी-विचार दोहन :** (किशोरलाल मशुवाला) इसमें महात्माजी के समस्त राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक एवं नैतिक विचारों का बड़ा सुंदर संकलन और दोहन किया गया है। महात्माजी की सम्मति सहित नवीन संस्करण ॥।)

×६६. **एशिया की क्रांति :** (सत्यनारायण) [ज़ब्त : अप्राप्य] १॥)

६७. **हमारे राष्ट्र-निर्माता :** (रामनाथ 'सुमन') इस सुन्दर पुस्तक में राष्ट्रनिर्माताओं के जीवन-परिचय और उनके जीवन की झलक दी हुई है। १॥)

×६८. **स्वतंत्रता की ओर :** (हरिभाऊ उपाध्याय) [अप्राप्य] १॥)

६९. **आगे बढ़ो :** स्वेट् मार्डेन के 'Pushing to the Front' का संक्षिप्त अनुवाद। कठिनाई में पड़े युवकों को सच्चे साथी के समान रास्ता बतानेवाली पुस्तक। ॥)

७०. **बुद्ध-वाणी :** (वियोगी हरि) भगवान् बुद्ध के चुने हुए वचनों का विषयानुक्रम से किया गया संकलन। बौद्ध-धर्म के विषय में हिन्दी में मिलनेवाले सब ग्रन्थों का सार-तत्त्व। ॥=)

७१. **कांग्रेस का इतिहास :** डॉ० पट्टाभि सीतारामैया की लिखी तथा कांग्रेस की स्वर्ण-जयन्ती पर प्रकाशित अंग्रेज़ी पुस्तक 'History of the Congress' का हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा संपादित प्रामाणिक अनुवाद। २॥)

नोट—सन् १९३५ से अप्रैल १९३९ तक की घटनाओं का परिशिष्ट। ।=)

७२. **हमारे राष्ट्रपति :** (सत्यदेव विद्यालंकार) कांग्रेस के पहले अधिवेशन से अबतक के तमाम सभापतियों के जीवन-परिचय। भूमिका राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रबाबू ने लिखी है। सभापतियों के चित्रों के साथ। १)

७३. **मेरी कहानी :** पं० जवाहरलाल नेहरू की आत्म-कथा। हिन्दी अनुवाद और संपादन हरिभाऊ उपाध्याय ने किया है। वर्तमान समय की अद्वितीय पुस्तक। नवीन संस्करण। ३)

७४. **विश्व-इतिहास की झलक :** पण्डित जवाहरलालजी के अपनी पुत्री के नाम लिखे पत्रों का संग्रह। इसमें उन्होंने सारी दुनिया के इतिहास की झाँकी बड़ी सरलता से करायी है। ८)

नोट—**दुनिया का रंगमंच** १९३३ से १९३८तक का झलक का परिशिष्ट। =)

७५. **हमारी पुत्रियाँ कैसी हों ?** इसमें यह बताया गया है कि हम अपनी पुत्रियों को कैसी बनावें कि जिससे वे समाज और राष्ट्र का निर्माण कर सकें। लड़कियों तथा माता-पिता दोनों के पढ़ने योग्य। ॥)

७६. **नया शासन-विधान** [प्रान्तीय स्वराज्य]—(हरिश्चंद्र गोयल) इसमें बताया गया है कि किस प्रकार इस नये शासन-विधान में हमें कुछ भी अधिकार नहीं दिये गये हैं। इस विषय की ऐसी पुस्तक अभीतक हिन्दी में नहीं लिखी गई है। ॥।)

७७. **(१) हमारे गाँवों की कहानी :** (स्व० रामदास गौड़) इसे पढ़कर तो आप सिहर उठेंगे कि हमारे अन्नदाताओं ने जिनको मेहमान समझा और उनका इतना आदर-सत्कार किया, वे कितने कृतघ्न निकले और उनको कितना नीचे गिरा दिया ! ॥)

७८. **(२-६) महाभारत के पात्र :** (दो भाग) (आचार्य नानाभाई) महाभारत के प्रधान-प्रधान पात्रों का सरस, परिचय। प्रत्येक भाग का ॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७६. गाँवों का सुधार और **संगठन** (स्व० रामदास गौड़) हमारे गाँवों के सुधार और संगठन की समस्या पर हिन्दी में यह बहुत महत्त्वपूर्ण और प्रामाणिक पुस्तक है। १)

८०. (३) सन्तवाणी (वियोगी हरि) सुप्रसिद्ध संतों—कबीर, नानक, सूर, तुलसी, रैदास, दादू आदि की मुख्य-मुख्य वाणियाँ टीका सहित। ।)

८१. विनाश या इलाज ? (म्यूरियल लेस्टर) लेखिका ने अपने अनुभव और ज्ञान से यह साबित किया है कि दुनिया जो हत्या व युद्ध के संकट से आज त्रस्त हो रही है वह सत्य और अहिंसा से ही मुक्ति पा सकती है और दूसरा कोई रास्ता कारगर नहीं हो सकता। ।।।)

८२. (४) अंग्रेज़ी राज में हमारी दशा : (ज़ेड० ए० अहमद) इसमें बताया गया है कि अंग्रेज़ों ने अपनी आर्थिक नीति से किस प्रकार भारतवासियों को चूसा और उन्हें निःसत्व बना दिया। पुस्तक बड़ी रोचक है। ।।)

८३. (५) लोक-जीवन : काका कालेलकर के ग्राम-जीवन तथा ग्रामीण लोगों को रास्ता दिखानेवाले और उनके अज्ञान को दूर करनेवाले सरल और सुबोध निबन्धों का संग्रह। ।।)

८४. गीता-मंथन : (किशोरलाल मश्रुवाला) गीता का सरल सुबोध और सरस भावानुवाद। अबोध पाठक भी गीता के तत्त्व को आसानी से समझ सकते हैं। उपन्यासों की भाँति रोचक और सरल। १।।)

८५. (६) राजनीति-प्रवेशिका : प्रसिद्ध अंग्रेज विद्वान् हेरल्ड लास्की की 'Introduction to Politics' का अनुवाद मूल्य ।।)

८६. (७) हमारे अधिकार और कर्तव्य : (कृष्णचन्द्र विद्यालंकार) इस पुस्तक में लेखक ने बड़ी सरल भाषा में बताया है कि नागरिकों के क्या अधिकार होते हैं और देश, समाज और राष्ट्र के प्रति उनके क्या कर्तव्य हैं ? ।।)

८७. गांधीवाद : समाजवाद ; इसमें इन दोनों विचार-धाराओं के प्रधान विचारकों, जैसे श्री किशोरलालभाई, डॉ० पट्टाभि सीतारामैया, कृपालानीजी, हरिभाऊजी, सम्पूर्णानंदजी, जयप्रकाशनारायण, एम० एन० रॉय आदि ने अपने विचार बताये हैं। दोनों वादों का तुलनात्मक अध्ययन है। काका कालेलकर के समन्वयात्मक निबंध सहित— ।।।)

८८. स्वदेशी और **ग्रामोद्योग :** इसमें महात्माजी के आजतक के इस विषय के चुने हुए लेखों का संग्रह है। इसमें महात्माजी की स्वदेशी की नयी व्याख्या पढ़िए। ।।)

८९. (८) सुगम चिकित्सा : श्री चतुरसेन शास्त्री ने इसमें सरल भाषा में देहात के लोगों के लिए सफ़ाई और चिकित्सा सम्बन्धी बातें बड़ी सरलता से बताई हैं। ।।)

९०. प्रेम में भगवान् : टॉल्स्टॉय की सत्रह चुनी हुई शिक्षाप्रद कहानियाँ, पृष्ठ २५०। टाल्स्टाय ग्रन्थावलि की तीसरी पुस्तक। ।।)

९१. महात्मा गांधी—(रामनाथ 'सुमन') : इसमें लेखक ने बड़े मार्मिक और कलापूर्ण ढंग से महात्माजी के जीवन के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला है और उनके जीवन की झाँकियाँ दिखायी हैं। ।=)

९२. ब्रह्मचर्य : महात्माजी के ब्रह्मचर्य तथा संयम पर लिखे ताज़े लेखों का संग्रह है। पहले 'अनीति की राह पर' नामक इस विषय की पुस्तक निकल चुकी है। यह उसका दूसरा भाग ही समझिए। ।।)

९३. (१०) हमारे गाँव और **किसान :** चौधरी श्री मुख्तयारसिंह ने इस पुस्तक में हमारे गाँवों और किसानों की हद दर्जे की ग़रीबी का वर्णन किया है और बताया है कि गाँवों और किसानों की यह दशा कैसे सुधर सकती है। ।।)

९४. गांधी-अभिनन्दन-ग्रन्थ : महात्मा गांधी की ७१वीं वर्षगाँठ पर समर्पित विश्व-प्रसिद्ध ग्रन्थ। सम्पादक सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, सस्ता संस्करण १।) सजिल्द २)

९५. हिन्दुस्तान की समस्यायें : पं० जवाहरलाल नेहरू के भारत की समस्याओं पर विचारपूर्ण निबन्ध। १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९६. जीवन-सन्देश : सुप्रसिद्ध सीरियन कवि ख़लील जिब्रान की मशहूर पुस्तक 'The Prophet' का अनुवाद। ।।)

९७. समन्वय : हिन्दी के सुप्रसिद्ध विचारक और दार्शनिक विद्वान् श्री डॉ॰ भगवानदास के मौलिक लेखों और व्याख्यानों का उत्तम संग्रह। २)

९८. समाजवाद : पूँजीवाद : प्रसिद्ध अंग्रेज़ी लेखक बर्नार्ड शॉ की प्रसिद्ध पुस्तक के आधार पर लिखी। ।।।)

९९. मेरी मुक्ति की कहानी : महर्षि टॉल्स्टॉय की आत्म-कहानी तथा उनके बचपन के संस्मरण। ।।)

१००. खादी-मीमांसा : खादी-विचारधारा को तर्क तथा आँकड़ों और उद्धरणों से समझानेवाली अद्वितीय पुस्तक। १।।)

१०१. बापू : (घनश्यामदास बिड़ला) महात्मा गांधी का अत्यन्त निकट से किया हुआ विश्लेषण, अनेक निजी रोचक तथा स्मरणीय प्रसंगों से पूर्ण–१३ सुन्दर चित्रों सहित; ।।=), सजिल्द १।), हाथ कागज़ की २)

१०२. विनोबा और उनके विचार : प्रथम सत्याग्रही विनोबा के विचारों को पढ़कर आप जीवन जीना जान जायेंगे। यह समझेंगे कि सफल जीवन उसीका है जिसने जीवन जीना सीखा। ।।)

१०३. लड़खड़ाती दुनिया : (जवाहरलाल नेहरू) आज की दुनिया की तस्वीर। देश-विदेश पर लिखे गये महत्त्वपूर्ण लेखों का सुन्दर संग्रह। भूमिका लेखक—आचार्य नरेन्द्रदेव। ।।)

१०४. सेवाधर्म-सेवामार्ग : प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता श्री कृष्णदत्त पालीवाल की सेवाधर्म पर लिखी सुन्दर पुस्तक। इसमें सेवा के क्षेत्र, सेवा के प्रकार और सेवा के तरीक़े पर बड़ा अच्छा प्रकाश डाला गया है। हमारे कर्मक्षेत्र के लिए उपयोगी पुस्तक है। १)

१०५. संसार की शासन प्रणालियाँ तथा यूरोप का वर्तमान युद्ध : दुनिया की प्रचलित शासन प्रणालियाँ उनके संगठन तथा कार्य के साथ वर्तमान युद्ध की पृष्ठभूमि, उसकी वर्तमान गतिविधि तथा उसके होनेवाले असरों का रोचक वर्णन हैं। पुस्तक सामयिक तथा स्थायी महत्व की है। १।।)

१०६. तीस दिन : मालवीयजी के साथ

१०७. युद्ध और अहिंसा : (म॰ गांधी)

१०८ महावीर-वाणी (पं॰ बेचरदास दोशी)

'नवजीवनमाला' की पुस्तकें

१. गीताबोध—महात्मा गांधी द्वारा लिखा गीता का सरल तात्पर्य =)

२. मंगल प्रभात—महात्मा गांधी के जेल से लिखे सत्य, अहिंसा ब्रह्मचर्य आदि व्रतों पर प्रवचन। =)

३. अनासक्तियोग—गांधीजी द्वारा लिखी गीता की टीका—=), श्लोक सहित ≡), सजिल्द ।)

४. सर्वोदय—रस्किन के 'Unto This Last' का गांधीजी द्वारा किया गया रूपान्तर। =)

५. नवयुवकों से दो बातें—प्रिंस क्रोपाटकिन के 'A word to Youngmen' का अनुवाद। =)

६. हिन्द-स्वराज—महात्माजी की भारत की मौजूदा समस्या पर लिखी प्राचीन पुस्तक जो आज भी ताज़ी है। ≡)

७. छूतछात की माया– (अप्राप्य) =)

८. किसानों का सवाल–डॉ॰ ज़ेड॰ ए॰ अहमद की इस छोटी-सी पुस्तिका में भारत के ग़रीब प्रतिनिधियों–किसानों–के सवाल पर बड़ी सुन्दरता से विचार किया गया है। =)

९. ग्राम-सेवा—ग्राम-सेवा किस प्रकार हो—इसपर गांधीजी ने इसमें विशद प्रकाश डाला है। =)

×**१०. खादी और गादी की लड़ाई**— (अप्राप्य) =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. **मधुमक्खी-पालन**— (अप्राप्य) =)

१२. **गांवों का आर्थिक सवाल**—गाँवों के आर्थिक प्रश्न तथा उनको हल करने की योजनाओं का इस पुस्तक में ग्राम-सेवक विद्यालय के अध्यापक श्री झवेरभाई पटेल ने संग्रह किया है =)

१३. **राष्ट्रीय गायन**-देशभक्ति-पूर्ण राष्ट्रीय गायनों और कविताओं का अपूर्व संग्रह। =)

१४. **खादी का महत्व**—श्री गुलजारीलाल नन्दा द्वारा लिखा खादी-विषयक प्रामाणिक और खादी की महत्ता और उपयोगिता बताने वाला निबन्ध। -)॥

१५. **जब अँग्रेज़ नहीं आये थे**—अँग्रेज़ों के आने के पहले की भारत की दशा का वर्णन। =)

१६. **सोने की माया**—श्री. किशोरलाल मशरूवाला का लिखा विनिमय और मुद्रा पर रोचक रूपक। दाम -)

सामयिक साहित्य माला

१. **कांग्रेस-इतिहास** (१९३५–३९)— 'कांग्रेस स्वर्ण-जयंती' से अबतक देश का राजनैतिक इतिहास इसमें दिया गया है। ।-)

२. **दुनिया का रंगमंच** (जवाहरलाल नेहरू) सन् १९३३ के बाद दुनिया में जो घटनायें हुई हैं उन पर पण्डित जवाहरलालजी ने अपनी विश्व-इतिहास की झलक का यह अंतिम अध्याय लिखा है। =)

३. **हम कहाँ हैं?** कांग्रेस की वर्तमान हालत और देश की मौजूदा समस्याओं पर पं० जवाहरलालजी के लेख। =)

४. **युद्ध-संकट और भारत**। वर्तमान यूरोपीय युद्ध और भारत की स्थिति पर कांग्रेस की ओर से तथा म० गांधी, राष्ट्रपति आदि द्वारा निकाले गये वक्तव्यों का संग्रह। ।)

५. **सत्याग्रह : क्यों, कब और कैसे?** (म. गांधी) सत्याग्रह कब, क्यों और कैसे शुरू किया जावे, इस पर महात्माजी के लेख। =)

६. **राष्ट्रीय-पंचायत**। भारत के अपना शासन-विधान बनाने की माँग तथा विधान-सभा 'Constituent Assembly' पर महात्माजी, पं० जवाहरलाल नेहरू, राजाजी आदि के लेख ।)

बाल साहित्य माला

१. **कथा कहानी**—बालोपयोगी रोचक कहानियाँ =)

२. **सीख की कहानियाँ**—(२ भाग) बालोपयोगी शिक्षाप्रद कहानियाँ =) =)

३. **शिवाजी चरित्र**—छत्रपति शिवाजी का बालोपयोगी जीवन चरित्र =)

४. **देश प्रेम की कहानियाँ**—इतिहास में से चुनी हुई देश प्रेम की ५ कहानियाँ =)

विविध प्रकाशन

१. **पंडित मोतीलाल नेहरू**—जीवन-झाँकी तथा चरित्र-परिचय। लेखक श्री रामनाथ सुमन ।)

२. **पंडित जवाहरलाल नेहरू**—जीवन-झाँकी तथा चरित्र-परिचय। लेखक श्री सुमनजी =)

३. **सप्तसरिता**—भारत की सात लोक-माताओं का भक्तिपूर्वक किया हुआ उपस्थान लेखक आचार्य काका कालेलकर =)

४. **चारा दाना और उसके खिलाने के उपाय**—पशुपालन विषय की रोचक और वैज्ञानिक पुस्तक (परमेश्वरी प्रसाद गुप्त) =)

५. **पशुओं का इलाज**—पशुओं के इलाज पर अनुभूत और वैज्ञानिक पुस्तक ॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सोल एजेन्सी' की पुस्तकें

१. लोपामुद्रा—(श्री कन्हैयालाल मुन्शी) श्री मुन्शी का यह ऋग्वेद कालीन उपन्यास बहुत मनोहर और रोचक है। महान अगस्त्य ऋषि की पत्नि लोपामुद्रा की यह जीवन कथा है १)

२. रोटी का राग—(श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल एम० ए०) यह रोटी का राग नये युग का राग है। महात्माजी के शब्दों में रचयिता का "हेतु स्पष्ट और निर्मल है।" और काका कालेलकर के शब्दों में सरल संस्कारी और सहृदय इन्हीं शब्दों में श्रीमन्नारायणजी की कविता का वर्णन हो सकता है। ।।)

३. फ्रांस की राज्य-क्रांति—(डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार) डॉ० सत्यकेतु यूरोप का आधुनिक इतिहास लिख रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक उसका पहला भाग है। इसमें नैपोलियन तक का इतिहास आया है। १।।)

४. गांधीवाद की रूपरेखा—(श्री रामनाथ सुमन) इस पुस्तक में सुमनजी ने सभी पहलुओं से गांधीवाद का विवेचन किया है और सभी दृष्टियों से गांधीजी के विचारों को देखा परखा है। १)

५. पिता के पत्र पुत्री के नाम—(पंडित जवाहरलाल नेहरू) पंडितजी ने इस पुस्तक में अपनी पुत्री कुमारी इंदिरा नेहरू के नाम दुनिया के शुरू की कहानी पत्रों में लिखी है। ।।)

६. डायरी के पन्ने—(श्री घनश्यामदास बिड़ला) श्री० बिड़लाजी की डायरी के पन्ने उस समय के हैं जब वे सन् १९३१ ई० में दूसरी गोलमेज परिषद् में गांधीजी के साथ गये थे। रोचक और ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ यह इतिहास का शोध करनेवाले तथा राजनीति के विद्यार्थियों के लिए भी खास तौर से उपयोगी होंगी। अनेक चित्रों सहित १।।)

७. बिखरे विचार—(ले० श्री घनश्यामदास बिड़ला) श्री बिड़लाजी के लेखों का यह संग्रह है। पुराने होते हुए भी विचारों की दृष्टि से ये लेख नये हैं और विचारणीय, मननीय और अनुकरणीय हैं। १।।) २)

८. प्रलय-वीणा—(श्री सुधीन्द्र, एम. ए.) इसमें कवि की बिलकुल नये दृष्टिकोणवाली नयी कवितायें संग्रहीत हैं। भूमिका-लेखक श्री सोहनलाल द्विवेदी के शब्दों में 'वे अतीत की काव्य-धारा के विरुद्ध एक प्रतिशोध हैं।' १)

'मण्डल' से आगे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ

१. अहिंसा की शक्ति (रिचर्ड बी. ग्रेग)
२. उद्देश्य और साधन (आल्डस हक्सले)
३. हिन्दूधर्म की आख्यायिकायें (आचार्य नानाभाई भट्ट)
४. रूमी की कहानियाँ (चौ० शिवनाथसिंह शांडिल्य)
५. हमारी आज़ादी की लड़ाई (हरिभाऊ उपाध्याय)
६. जीवन के बारे में— (टॉल्स्टॉय)
७. मालिक और मज़दूर "
८. विद्यार्थी धर्म (महात्मा गांधी)
९. यंत्र की मर्यादा (नरहरि परीख)
१०. हिन्दुस्तान की ग़रीबी (दादाभाई नौरोजी)
११. हमारे आर्थिक प्रश्न (छगनलाल जोशी)

प्रचारित पुस्तकें

१. मेरा देश—इसमें भगवत्प्रसाद सनातन की लिखी बालोपयोगी सुन्दर और मनोहर कवितायें हैं। पुस्तक बहुत दिलचस्प है। ।)

२. आर्थिक संगठन—दुनिया के मौजूदा पूंजीवादी संगठन की जगह किस प्रकार का संगठन हो जिससे गरीब जनता को आराम मिले और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाभ पहुँचे, यही इस पुस्तक का विषय है ।।।)

३. रूपान्तर—श्री जगन्नाथ प्रसाद की लिखी सरल और हृदयग्राही कविताओं का संग्रह । ।।)

४. पौराणिक कथायें—इस ग्रन्थ में भिन्न-भिन्न पुराणों से संकलित प्राचीन भारत के महान् पुरुषों तथा सती-देवियों के जीवन की विशेष-विशेष घटनाओं का वर्णन है । १।।)

५. आश्रम-भजनावलि—महात्मा गांधी के आश्रम में प्रार्थना के समय गाये जानेवाले भजनों का सुन्दर संग्रह =)।।

७. पाक चन्द्रिका—भोजन बनाने आदि की शिक्षा देनेवाली उपादेय पुस्तक— ४)

८. तुलसीदास और उनकी कविता—पं० रामनरेशजी त्रिपाठी का लिखा खोजपूर्ण मौलिक ग्रंथ—दो भाग-— ४।।)

९. रेलसे माल भेजने का कायदा (वाया गुड्स) इसमें भारतवर्ष की समस्त रेलवे लाइनों के नियम दिये हुए हैं । व्यापारियों के बड़े काम की चीज है । पुस्तकालयों व संस्थाओं के संग्रह-योग्य पुस्तक है । मू० ३)

१०. हुगली का इमामबाडा (ले० स्वर्ण-कुमारी देवी) ऐतिहासिक, शिक्षाप्रद उपन्यास । सचित्र मूल्य १।।।)

११. भगवान महावीर (सचित्र व सजिल्द) अहिंसा धर्म के प्रचारक एवं जैनधर्म के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर का प्रमाणिक जीवन । मूल्य ४।।) आर्टपेपर पर स्पेशल राजसंस्करण ६)

१२. हिन्दू विधवा या सती गौरव (मौलिक उपन्यास) एक विधवा स्त्री संसार के प्रलोभनों में न फँसकर अपने जीवन को किस तरह सेवामय बनाती है इसका सुन्दर वर्णन मू० १)

१३. गोरा (रवीन्द्र बाबू का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास) मूल्य २।।) सजिल्द ३)

१४. ग्राम-आन्दोलन की आवश्यकता ।=)

१५. सचित्र कृषि-शास्त्र १।)

१६. शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति (महात्मा गांधी के शिक्षा विषयक लेख-संग्रह) ।।)

१७. कविता-कौमुदी भाग (१-२) संपादक (रामनरेश त्रिपाठी) प्रत्येक का ३)
१८. बीस कहानियाँ २)
१९. हिन्दुओं के व्रत और त्योहार १।।)
२०. हिन्दुस्तानी कोष २)
२१. यूरोप की कहानियाँ २।।)
२२. योग के आसन (सचित्र) १)
२३. जादू की कहानियाँ (बालोपयोगी) ।=)
२४. स्वप्न (काव्य : रामनरेशजी त्रिपाठी) ।।)
२५. मोतीचूर के लड्डू (बालोपयोगी) ।)
२६. बानर-संगीत ,, ।)
२७. मिलन (काव्य) ।।)
२८. किसानों की कहावतें ।)
२९. जयन्त (नाटक) ।।।)
३०. पेखन (बालोपयोगी एकांकी नाटक) ।)
३१. इतिहास की कहानियाँ ।)
३२. शिवा-बावनी ।)
३३. हमारा ग्राम-साहित्य (ग्राम साहित्य की सुन्दर पुस्तक) १।)
३४. सोहर ।)
३५. मुस्लिम सन्तों के चरित्र २)
३६. हिन्दी पद्य-रचना ।।)
३७. मारवाड़ के मनोहर गीत ।)
३८. वफाती चाचा ।।)
३९. राक्षसों की कहानियाँ (बालपयोगी) ।=)
४०. तरकस ।।)
४१. प्रेमलोक ।।।)
४२. मानसी (कविता-संग्रह) ।।)
४३. गुपचुप कहानियाँ (बालोपयोगी) ≡)
४४. पाकेट डिक्शनरी १।।)
४५. पथिक (काव्य) ।।)
४६. तूणीर ।।)
४७. बालकथा-कहानी भाग १-१७ बालोपयोगी उत्तम कहानी संग्रह (सम्पादक रामनरेश त्रिपाठी) दाम प्रत्येक ।=)
४८. मोहन-माला (बालोपयोगी) ।।।)
४९. हंसू की हिम्मत ,, ≤)
५०. [illegible] ,, ।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५१. घर का वैद्य ,, १२)
५२. परियों की कहानियाँ ,, ।=)
५३. खोजो, खोज निकालो ,, ।)
५४. उर्दू-हिन्दी कोष १)
५५. हिन्दी मुहावरा कोष १।।)
५६. हिन्दी कहावत ।)
५७. बहादुर सुन्दरी ≡)
५८. हिन्दी शिक्षण-विधान ≡)
५९. अनोखा बलिदान ।।)

हिन्दुस्तान में 'मण्डल' की पुस्तकें मिलने के स्थान

निम्न स्थानों पर 'मण्डल' की पुस्तकें स्थायी ग्राहकों को पौने मूल्य में मिला करेंगी

संयुक्तप्रान्त—सस्ता साहित्य मण्डल, लखनऊ साहित्यनिकेतन, कानपुर, श्री गांधी आश्रम खादी भण्डार मुरादाबाद, इलाहाबाद, मेरठ मुजफ्फरनगर, काशी, मथुरा, बरेली, देहरादून, फैजाबाद, गोरखपुर, सहारनपुर, डिबाई, फर्रुखाबाद, कानपुर, लखनऊ, आगरा, अकबरपुर, शामली, हरदोई, जौनपुर, सीतापुर, झांसी।

बिहार—चर्खासंघ खादी भंडार हाजीपुर, रांची, मधुवनी, बेतिया, हजारीबाग, लहेरियासराय, मुजफ्फरपुर, गया, सीतामढ़ी, पटना, डाल्टनगंज, बेगूसराय, मोतीहारी, भागलपुर, छपरा, समस्तीपुर।

मध्यप्रान्त—महाराष्ट्र चर्खासंघ खादी भंडार नागपुर (सीताबर्डी), गोंदिया, जबलपुर रायपुर, खण्डवा।

राजपूताना-मध्यभारत—सस्ता साहित्य मंडल इन्दौर, आदर्श पुस्तक भण्डार अजमेर, राजस्थान चर्खा संघ खादी भंडार अजमेर, जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, मन्दसौर, ग्वालियर, इन्दौर, मुकुन्दगढ़, नवलगढ़, भेलसा

पंजाब—गांधी खादी-भंडार लाहौर, भिवानी, आदमपुर, गांधी सेवा आश्रम, शहादरा (लाहौर)

दिल्ली—सस्ता साहित्य मण्डल कनाट सर्कस नई दिल्ली, तथा दरीबा कलाँ, श्री गांधी आश्रम।

कलकत्ता—शुद्ध खादी भंडार, हरिसन रोड।

बम्बई-प्रान्त—'नवजीवन' कार्यालय, अहमदाबाद, और बम्बई, खादी भंडार भुसावल, खादी भंडार जलगाँव।

सिंध—खादी भंडार हैदराबाद, करांची, सक्खर।

खादी-भण्डारों के अलावा 'मण्डल' की पुस्तकें निम्न स्थानों पर भी मिलती हैं

अजमेर राजपूताना बुकहाउस आदर्श साहित्य भण्डार

इलाहाबाद हिन्दी मंदिर; साहित्य भवन लि०; छात्रहितकारी पुस्तकमाला; किताबिस्तान सरस्वती प्रेस; रामनारायण लाल

आगरा साहित्य रत्न भण्डार

कानपुर साहित्य निकेतन; प्रकाश पुस्तकालय;

भिवानी हिन्दी साहित्य भंडार

इन्दौर सस्ता साहित्य मण्डल खजूरी बाजार, सरस्वती प्रेस, सरूप ब्रदर्स

बीकानेर नवयुग ग्रंथ कुटीर

लखनऊ सस्ता साहित्य मण्डल; गंगा ग्रंथागार; सरस्वती प्रेस

बनारस सरस्वती प्रेस; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी; ज्ञानमण्डल पुस्तक-भंडार; लहरी बुकडिपो; पुस्तक भवन, भार्गव पुस्तकालय; इण्डिन बुक शॉप, विद्या भास्कर बुकडिपो

पटना नवशक्ति प्रकाशन मंदिर; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी; हिंदी साहित्य एजेन्सी; मोतीलाल बनारसीदास; एज्युकेशनल बुक डिपो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छपरा वाणी-मंदिर
लहेरियासराय पुस्तक भण्डार;
कलकत्ता बंगाल स्टोअर्स, चौरंगी; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी; विशालभारत बुकडिपो; लहरी बुकडिपो, पुस्तक मंदिर, बंबई पुस्तक भंडार कलकत्ता पुस्तक भंडार, पुस्तक मंदिर
वर्धा राष्ट्रभाषा प्रचारसमिति; प्रभुदयाल विद्यार्थी; महिलाश्रम, ग्रामसेवा मण्डल (नालवाड़ी)
बंबई हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर; भारतीय पुस्तक भण्डार; हिन्दी पुस्तक भण्डार; नवजीवन कार्यालय (प्रिंसेसस्ट्रीट)
ग्वालियर लायल बुक डिपो
मद्रास दक्षिण-भारत हिन्दी प्रचार सभा
अहमदाबाद नवजीवन कार्यालय
मछलीपट्टम लोकमान्य हिन्दी मंदिर
हैदराबाद (दक्षिण) हिन्दी पुस्तक भण्डार
जबलपुर तेजमल सौभाग्यमल; महाकोशल साहित्य मंदिर
लाहौर हिन्दी भवन; मोतीलाल बनारसीदास; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
कराची एस. एस. वागड़िया एण्ड सन्स
कोटा मोहन न्यूज़ एजेन्सी
बरेली वैश्य बुकडिपो
भोपाल हिन्दुस्तान स्टोअर्स
अमृतसर भारत पुस्तक भण्डार
जम्मु तावी (काश्मीर) स्टूडेण्ट स्टोअर्स
उदयपुर हितैषी पुस्तक भंडार

'मण्डल' की दुकानों पर संसार के निम्न महापुरुषों, लेखकों और विचारकों की रचनायें मिलती हैं—

भारतीय

स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, लो० तिलक, ऋषि तिरुवल्लुवर, महात्मा गांधी, रवीन्द्र नाथ ठाकुर, जवाहरलाल नेहरू, सर राधा कृष्णन्, अरविन्द घोष, लाला लाजपतराय, आदि

विदेशी

टाल्स्टॉय, मेक्सिम गोर्की, अलेक्ज़ेण्डर ड्यूमा विक्टर ह्यूगो, तुर्गनेव, ख़लील जिब्रान, क्रोपाटकिन, जेम्स एलेन, स्वेट्मॉर्डेन, सेम्युअल स्मायल्स बुकर टी वाशिंगटन, मेरे कॉरेली, रोमाँरोलाँ, हेरल्ड लास्की, रिचर्ड ग्रेग, आदि

हिन्दी

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, स्व० महावीरप्रसाद द्विवेदी, स्व० प्रेमचन्द, स्व० गणेशशंकर विद्यार्थी, स्व० जयशंकरप्रसाद, स्व० रामचन्द्र शुक्ल, स्व० कृष्णकांत मालवीय, मैथिलीशरण गुप्त, जैनेन्द्रकुमार, राहुल सांकृत्यायन, अयोध्यासिंह उपाध्याय, डॉ० त्रिलोकीनाथ वर्मा, श्यामसुन्दर दास, राय कृष्णदास, जयचन्द्र विद्यालंकार, घनश्यामदास बिड़ला, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पंत, सोहनलाल द्विवेदी भगवतीचरण वर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, हजारीप्रसाद द्विवेदी, हरिभाऊ उपाध्याय, वियोगी हरि, सुभद्राकुमारी चौहान, उषादेवी मित्रा, कमलादेवी चौधरी आदि

मराठी

हरि नारायण आपटे, वामन मल्हार जोशी, डॉ० हरि रामचन्द्र दिवेकर, सदाशिव नारायण दातार, विनोबा, गोविंद सखाराम सरदेसाई आदि

बंगला

बंकिमचन्द्र चटर्जी, द्विजेन्द्रलाल राय, शरत् चन्द्र चटर्जी, जदुनाथ सरकार, रमेशचन्द्रदत्त, निरुपमा देवी आदि

गुजराती

किशोरलाल मशरूवाला, काका कालेलकर, कन्हैयालाल मुन्शी, गिजूभाई, हरभाई त्रिवेदी, नानाभाई भट्ट आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ अंग्रेजी पुस्तकें

	Rs.	as.	ps.
Home & village Leather Doctor Leather bound	6	0	0
cloth ,,	5	0	0
The Story of My Experiments with Truth (2 Vols.) (By Gandhiji)	4	0	0
Satyagraha in South Africa ,,	4	8	0
Self-Restraint Vs Self-Indulgence (2 Vols) ,,	2	0	0
My Soul's Agony ,,	0	8	0
From Yervada Mandir ,,	0	2	0
Hind Swaraj ,,	4	0	0
Cent per Cent Swadeshi ,,	1	8	0
To the Students ,,	2	0	0
The Story of Bardoli (M. D.)	2	s	0
The Epic of Travancore ,,	1	8	0
With Gandhiji in Ceylon ,,	1	0	0
Gandhiji in indian Villages ,,	2	0	0
Satyagraha in Champaran (Rajendra Prasad)	2	0	0
Public Finance and Our poverty (J. C. Kumarppa)	0	12	0
Seven Months with Mahatma Gandhi	3	8	0
Preparation for Science	0	12	0
The Epic Fast (Pyarelal)	1	4	0
Education for Life (J. C.)	0	3	0
A Survey of Matar Taluka ,,	2	0	0
The Heart of a Gopi (Miss R. Tyabji)	1	8	0
Indian Prohibition Manual	0	4	0
Plighted Word (C. R.)	0	2	0
Upanishad ,,	0	6	0
Bhagwad-Gita ,,	0	6	0
The Shastras on Untouchability	0	1	3
Cow Proteciton	0	13	0
The Power of Non-Violence (R. B. Gregg)	2	0	0
Through Congress Eyes (Subhas Bose)	2	8	0
Secret of Japan (Chaman Lal)	2	8	0
Bleedingwound (Gandhiji)	0	12	0
An Autobiography (JawaharLal)	5	4	0
Letters from a father to his Daughter	0	8	0
Hindu America (Chamanlal)	7	0	0

A. I. C. C. PUBLICATIONS

Congress and War Crisis.	1	0	0
Congress and War	0	2	0
The Indian Federation.	0	8	0
Excluded Areas Under The New Constitution.	0	3	0
Public revenue and expenditure in India.	1	0	0
Survey of South India Village.	0	2	0
Salaries of public Servants.	0	4	0
Indian Foreign Policy.	0	4	0
India on China.	0	8	0
Resolutions passed by the Congress during the period (January 1930 September 1634)	1	4	0
—do—1934-36	0	10	0
—do—April 1936-Jan.1937	0	10	0
—do—1938-39.	0	8	0
History of the Congress	2	8	0
History of the (Congress (in Urdu)	2	8	0
The Gandhian Way.	2	0	0
Non-violent Revolution.	0	4	0
The Latest Fad.-Basic Education.	1	0	0
Our Countrymen Abroad.	0	8	0
India's Challenge to Christians	2	0	0
India's Stand.	0	2	0
Indian National Congress (1939-40.)	0	8	0

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मण्डल' की दिल्ली, लखनऊ और इन्दौर शाखाओं की दुकानों पर

निम्न प्रकाशकों की चुनी हुई उत्तम तथा सुरुचिपूर्ण पुस्तकें मिला करती हैं—

१. हिन्दी ग्रंथरत्नाकर, २. छात्रहितकारी पुस्तकमाला, ३. भारतीय-भण्डार, ४. हिन्दुस्तानी एकेडेमी, ५. नागरी प्रचारिणी सभा, ६. इंडियन प्रेस लि०, ७. गंगा पुस्तक माला, ८. हिंदी पुस्तक एजेन्सी, ९. साहित्य भवन लि० १०. हिन्दी मन्दिर, ११. किताबिस्तान १२. तरुण-भारत ग्रंथावलि, १३. आर्य साहित्य मंडल, १४. नवयुग साहित्य मन्दिर, १५. भारती साहित्य संघ, १६. साहित्य सदन, १७. सरस्वती प्रेस, १८. हिन्दी भवन, १९. वाणी मन्दिर, २०. प्रकाश पुस्तकालय, २१. नवयुग पुस्तक भंडार, २२. नवशक्ति प्रकाशन मन्दिर, २३. भूगोल कार्यालय, २४. पुस्तक भण्डार, २५. काशी विद्यापीठ, २६. ज्ञानमण्डल, २७. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, २८. हिन्दी पुस्तक भण्डार, २९. ३०. विशालभारत बुकडिपो ३१. रामनारायणलाल बुकसेलर्स, ३२. रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग, ३३. भार्गव पुस्तकालय, ३४. नवलकिशोर प्रेस, ३५. आदर्श ग्रंथमाला, ३६. मोतीलाल बनारसीदास, ३७. मेहरचन्द लक्ष्मणदास, ३८. खेमराज श्रीकृष्णदास, ३९. गीता-प्रेस, ४०. गीता-विज्ञान कार्यालय, ४१. नवजीवन कार्यालय, ४२. तिलक ब्रदर्स, ४३. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, ४४. परमश्रुत श्रावक मण्डल, ४५, देवीदत्त शर्मा के किंडर गार्टन वर्क्स, ४६. निर्णयसागर प्रेस ४७. भारतीय ग्रंथ माला, ४८. भार्गव पुस्तकालय, ४९. मिश्रबन्धु कार्यालय, ५१. हिन्दी विश्व भारती ५१ साधना मन्दिर, ५२. हिन्दी साहित्य मण्डल, ५३. सरस्वती प्रकाशन मन्दिर, ५४. चौधरी मुख्तार सिंह।

'जीवन-साहित्य' के नियम

१. हर महीने की पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

२. किसी भी महीने से ग्राहक बन सकते हैं, पर साल से कम के लिए नहीं।

३. 'मण्डल' की दिल्ली, लखनऊ और इंदौर शाखाओं तथा संयुक्तप्रांत, बिहार, मध्य प्रांत, राजपूताना-मध्य भारत, व पंजाब के चर्खा-संघ के खादी-भंडारों तथा 'हरिजन कार्यालय' पूना नं० ४ से 'जीवन-साहित्य' के ग्राहक बन सकते हैं।

४. हर मास के पहले हफ्ते में पत्र न मिले तो अपने यहां के डाकखाने से पूछताछ करके **अपनी ग्राहक-संख्या के साथ** पत्र लिखना चाहिए। उचित कार्रवाई की जायगी।

५. अपने पते में कोई परिवर्तन कराना हो तो तुरन्त सूचना दिया करें—**ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।**

६. पत्र का चंदा इस प्रकार है—

भारत में	बर्मा में	विदेश में	एक प्रति
२)	२।।)	५ शिलिंग	)

नोट—नमूने के अंक के लिए ।) के टिकट भेजें। वार्षिक मूल्य डाक के टिकटों में भी भेजा जा सकता है।

७. पत्रव्यवहार करते समय **अपनी ग्राहक-संख्या अवश्य लिखें।**

८. 'जीवन-साहित्य' में शिष्ट साहित्य तथा उपयोगी सुरुचिपूर्ण और देशी वस्तुओं के विज्ञापन लेने की गुंजायश रक्खी है।

दर इस प्रकार हैं—

कवर का दूसरा पृष्ठ		प्रतिमास	४०)
,,	तीसरा ,,	,,	४०)
,,	चौथा दोरंगा	,,	६०)
,,	,, एकरंगा	,,	५०)
पाठ्य विषय के सामने		,,	४०)
साधारण पृष्ठ—		,,	३०)

९. विज्ञापन-एजेण्टों को कमीशन आदि के लिए पत्रव्यवहार करना चाहिए।

पता—

व्यवस्थापक, 'जीवन-साहित्य',
कनाट सर्कस, नई दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-साहित्य

असतो मा सद्गमय; तमसो मा ज्योतिर्गमय; मृत्योर्माऽमृतंगमय।

अप्रैल १९४१	सम्पादक	वर्ष पहला
नई दिल्ली	हरिभाऊ उपाध्याय	अंक नौवाँ

पूजा-गीत

डिग न रे मन !
आज आर्त, विषण्ण, दीना,
मातृ-मुख-श्री, कान्ति क्षीणा,
अन्न - धन - सर्वस्व - हीना,
पूत आज सपूत बन तू, पोंछ रे मा के विलोचन
डिग न रे मन !

सजल - नयन निहारती है,
विकल-व्यथित पुकारती है,
बुझ रही अब आरती है,
प्राण का घृत दे अमृत हे, बने ज्योतित मंद जीवन
डिग न रे मन !

कसकती हैं क्रूर कड़ियाँ,
सिसकती हैं प्रहर-घड़ियाँ,
तोड़ दे रे लौह-लड़ियाँ,
पुरुष ! तव पुरुषत्व पर यह, बज रही ज़ंजीर झनझन !
डिग न रे मन !

सोहनलाल द्विवेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक बनाम प्रकाशक

इधर हिन्दी के लेखकों में ये भाव फैलते जा रहे हैं कि प्रकाशक उनकी मेहनत से और खास-कर उनकी बेबसी से बेजा फ़ायदा उठा सकते हैं। जब यह सुनते हैं कि बाज़-बाज़ प्रकाशक दो आना फी पेज तक अनुवाद का मेहनताना देते हैं, तो यह आक्षेप सही मालूम होने लगता है। सस्ता-साहित्य-मण्डल उन प्रकाशकों में से नहीं है, जो मुनाफे के लिए पुस्तकों का कारोबार करते हैं। इसलिए उसके मंत्री ने इस आवश्यक विषय की ओर मण्डल के हितैषियों का ध्यान दिलाया कि लेखकों से मण्डल के लेन-देन का सम्बन्ध किस आधार पर हो? लेखक व प्रकाशक के बीच प्रकाशनाधिकार का जो इक़रारनामा हुआ करता है, वह कैसा हो?

मंत्रीजी ने चर्चा व विचार की सुविधा के लिए काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के इक़रार-नामे को नमूना या आधार मानकर उसे अपने गश्ती पत्र के साथ कई मित्रों को सम्मति व सुझाव के लिए भेजा। कुछ सज्जनों ने विचार करके अपनी आलोचना व सुझाव भेजने की कृपा भी की है। काका सा० कालेलकर ने अपनी सम्मतियाँ पेश करके सुझाया है कि एक ऐसा इक़रारनामा जिसमें ग्रन्थकार व प्रकाशक दोनों का हित हो, बनाकर 'जी० सा०' में प्रकाशित किया जाय जिससे हिन्दी प्रकाशन-जगत् का वायुमण्डल शुद्ध हो। उससे लेखकों को पता लगेगा कि वे कहाँ तक अपेक्षा रख सकते हैं?

देशरत्न राजेन्द्रबाबू सूचित करते हैं—'मैं आशा करता हूँ कि लेखक के पुरस्कार की रकम ऐसी हुआ करेगी जिससे लेखकों को प्रोत्साहन मिले। बहुतेरे योग्य व होनहार लेखक निर्धन होने के कारण अपनी कृतियों को स्वयं प्रकाशित नहीं कर सकते हैं और बहुतेरे प्रकाशक उनकी ग़रीबी से नाजायज फायदा उठाते हैं। मण्डल को ऐसे ऐब से हमेशा बचना चाहिए। इसलिए एककालिक पुरस्कार के अलावा कुछ रायल्टी का भी प्रबन्ध रहे। इसकी भी गुंजायश रखनी चाहिए कि विशेष लेखक के साथ इन शर्तों में हेर-फेर भी हो सकता है।'

श्री किशोरलालभाई लिखते हैं—'लेखक व प्रकाशक के बीच इकरारनामे का मसविदा जो मेरे अभिप्राय के लिए आया है, यों मुझे ठीक मालूम होता है। पुरस्कार की कलमें तो तरह-तरह की हो सकती हैं। अगर किसी लेखक के साथ प्रति मुद्रण के समय कुछ पुरस्कार या मुनाफे में हिस्सा देने की शर्त की जाय तो वह कलम उस तरह बदलनी होगी।'

श्री रामनाथ 'सुमन' ने लिखा है कि इस मसविदे को पढ़कर प्रत्येक निष्पक्ष व विचारवान आदमी पर यही प्रभाव पड़ेगा कि स० सा० मण्डल एक स्वार्थी संस्था है और लेखकों का शोषण करके लाभ उठाना उसका उद्देश्य है। उन्होंने प्राय: प्रत्येक धारा पर अपनी विस्तृत सम्मति दी है और अपनी धाराओं के अनुसार इकरारनामे का एक नया मसविदा ही बनाकर भेजने की कृपा की है।

इन तथा अन्य सूचनाओं पर विचार करने के बाद मण्डल के मंत्रीजी ने अब जो मसविदा विचारार्थ बनाया है, वह इस लेख में दिया जाता है। यह तो दोहराना ही नहीं है कि मण्डल का उद्देश नफा कमाना नहीं, विशुद्ध साहित्य-सेवा करना ही है और यही कारण है कि मण्डल से ग्रन्थकर्त्ताओं का संबंध मीठा ही रहता है। अतएव लेखकों का शोषण करने की उसके मन में कल्पना भी नहीं आ सकती। जो मसविदा पेश किया गया है उसकी बुनियाद में यह नीति रखी गयी है—

(१) लेखक के अधिकार व गौरव की पूरी रक्षा हो व उसे अपने पारिश्रमिक का उचित व पूरा बदला पुस्तकों या रुपयों के रूप में मिल जाये।

(२) यह लेखक की इच्छा पर रहे कि वह मण्डल को स्वत्वाधिकार देता है या केवल प्रकाशनाधिकार। मण्डल को स्वामित्वाधिकार लेने में कोई खास दिलचस्पी नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठक जानकर खुश होंगे कि मण्डल ने बहुत पहले से यह तय कर रखा है कि किसी भी लेखक को जिसकी रचना का स्वत्वाधिकार मण्डल को दिया जाये, मौलिक के लिए १) व अनुवाद के लिए ।।) प्रति पृष्ठ से कम पुरस्कार हरगिज़ न दिया जाये जहाँ कि अन्य प्रकाशक मौलिक के ।।।) ।।=) व अनुवाद के ।) ।=) प्रति पृष्ठ तक देते हैं। १) प्रति पृष्ठ तो इने-गिने प्रकाशक देते हैं।

लेखकों की जानकारी के लिए यहाँ यह साफ़ कर देना ज़रूरी है कि स्वत्वाधिकार में व प्रकाशनाधिकार में क्या फ़र्क़ है? स्वत्वाधिकार में ग्रन्थ का अनुवाद करने, संक्षेप व विस्तार करने का अधिकार शामिल रहता है, प्रकाशनाधिकार में नहीं। स्वत्वाधिकार में स्वामित्व के 'हक़ को बेच देने' का भाव है, तहाँ प्रकाशनाधिकार में 'मुनाफ़े में हिस्सा लेने' भर का भाव आता है। लेखक मंडल को या दूसरे प्रकाशक को अपनी स्थिति व रुचि के अनुसार इसमें से कोई भी अधिकार देने में स्वतंत्र है।

लेखक और प्रकाशक के बीच इकरारनामा

"मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली (प्रकाशक) और.......................... (लेखक) के बीच ता०.........सन् १९४...को यह इकरारनामा हुआ कि—

१—श्री......................(आगे से लेखक) द्वारा लिखित-अनुवादित-संग्रहीत ....नामक पुस्तक लेखक द्वारा सस्ता साहित्य मण्डल (आगे से मण्डल या प्रकाशक) को प्रकाशित करने के लिए मिली है जिसे मण्डल ने अपने यहाँ से प्रकाशित करने का निश्चय किया है।

२—इस पुस्तक में जो उद्धरण आदि दिये गये हैं, उनका कापी राइट नहीं है अथवा उनके देने (यदि पुस्तक अनुवाद है तो उसके अनुवाद करने) की अनुमति मूल-लेखक अथवा संग्राहक से प्राप्त कर ली गयी है। इस सम्बन्ध में आगे कोई आपत्ति उठे तो लेखक उसकी ज़िम्मेदारी लेते हैं।

३ (अ) मण्डल, पुस्तक छपजाने के बाद लेखक को............(अंके............) रुपये और पुस्तक की २५ प्रतियाँ पुरस्कार-स्वरूप देगा। मण्डल को अधिकार होगा कि वह इस पुस्तक के चाहे जितने संस्करण करे। बाद के संस्करणों पर लेखक को किसी प्रकार का पुरस्कार पाने का अधिकार न होगा। यदि मण्डल आगे इसका कोई संस्करण न निकालना चाहे तो लेखक उसे अलग से छपवाने की व्यवस्था कर सकेगा। पर उस हालत में लेखक को जो पुरस्कार मिला है उसका एक तिहाई मण्डल को देना होगा।

३ (ब)—मण्डल, लेखक को पहले संस्करण पर.........प्रतिशत और दूसरे संस्करण पर.........प्रतिशत छपे मूल्य पर रॉयल्टी देगा। संस्करण समाप्त हो जाने पर एक वर्ष के अन्दर यदि मण्डल इसका कोई संस्करण प्रकाशित करने की व्यवस्था देकर इसे अलग से छपाने की व्यवस्था न करे तो लेखक प्रकाशक को ६ महीने का नोटिस देकर इसे अलग से छपाने की व्यवस्था कर सकेगा।

[नोट—उपरोक्त ३ (अ) और ३ (ब) में से लेखक जो बात स्वीकार करें वह रहने दें और दूसरी काट दें।]

४—नये संस्करण छपाने पर मण्डल इस पुस्तक में कुछ संशोधन-सम्पादन कराना चाहे तो वह लेखक से करा सकेगा और उसका अलग से पारिश्रमिक दिया जायगा। अगर मण्डल चाहे तो किसी अन्य सज्जन से इसका संपादन भी करा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और आवश्यक समझे तो इसका कोई अंश छापने से रोक भी सकता है बशर्ते कि उसके न छापने से मूल पुस्तक के भावों या निष्कर्षों में कोई अन्तर न आता हो।

५—पुस्तक के मूल्य-निर्धारण, गेट-अप वगैरा का अन्तिम निर्णयकर्ता मण्डल होगा। पर लेखक के सुझावों पर भी मण्डल सहानुभूतिपूर्वक विचार करेगा।

६—लेखक इसी विषय पर कोई दूसरी ऐसी पुस्तक किसी अन्य प्रकाशक के यहाँ से प्रकाशित न करेगा जिसमें इस पुस्तक के अंशों का बहुलता के साथ उपयोग किया गया हो या जिसमें रद्दोबदल के साथ इसी पुस्तक के अंश दे दिये गये हों।"

यदि लेखक और प्रकाशकगण इसपर अपने सुझाव भेजने की कृपा करेंगे तो उनकी रोशनी में इन मसविदों पर दुबारा विचार होकर वे अंतिम फैसले के लिए मण्डल के सामने रखे जायेंगे।

हमें यह न भूलना चाहिए कि लेखक उत्पादक और प्रकाशक विस्तारक है। उत्पादक उच्च-कोटि के जीवन का नहीं तो साधारण जीवन बिताने योग्य पारिश्रमिक पाने का अधिकारी तो अवश्य ही है। सबको जीवन-वेतन दे चुकने के बाद ही चीज़ के दाम लगाने चाहिएँ और उन्हीं दामों पर चीज़ खरीदना न्यायोचित कहा जा सकता है। मौजूदा हालत में हम किस तरह इस न्याय की सीमा तक पहुँच सकें, इसपर भी विचार करने की आवश्यकता है। इस मसविदे के मज़मून से बढ़कर महत्त्व रखता है यह प्रश्न कि पारिश्रमिक का आधार क्या हो? आशा है, लेखक और प्रकाशक इसमें पूरी-पूरी दिलचस्पी लेंगे।

हरिभाऊ उपाध्याय

टूटी कुटिया

[विष्णु अम्बालाल जोशी]

मेरी टूटी कुटिया रेतीले नदी के तट पर स्थित एक सूखे टीले पर अकाल की भीषण घड़ियाँ गिन रही है। अब प्रातः-सांध्यकाल की लालिमा में गोधूलि के पुनीत धूलिकण उसके आँगन में पराग से नहीं छा जाते; अब कुटिया के उस एक-मात्र साथी वृक्ष की हरियाली के संग उसका मधुर कलरव भी अनन्त में माधुरी नहीं भर जाता।

इस नैराश्य-अचलता में गाँव मुझे छोड़कर धीरे-धीरे अन्यत्र चला गया, पर मैं अपनी सुखद घड़ियों की स्मृति कुटिया को छोड़कर न जा सका। सम्पूर्ण ग्राम शून्य है, मेरी कुटिया शून्य है और वह गगरी भी, जो सदा प्रत्येक अतिथि के लिए रसभरी पूर्णता से छलकती रहती थी।

जब दुर्वासा ऋषि के समान नक्षत्राधिपति मार्तण्ड अन्धकार में स्नानकर मेरे द्वार पर पदाघात करेंगे, मैं कंपित कुटिया के द्वार खोल प्रतिध्वनित गगरी के अवगुंठन को हटा, हृदय की समस्त दीनता को बिछा उनका स्वागत करूँगा। उस समय उनकी कोप-ज्वाला को शान्त करने के लिए एक अंजलि भर जल मैं कहाँ से पाऊँगा, देव? मेरी गगरी तो खाली है।

पर देव, जब तुम निस्तब्ध रात्रि के मंद पवन के साथ चारु-चंचल किरणों पर बैठकर मेरे द्वार पर आओगे, मेरी टूटी कुटिया के रंध्रों से झाँककर मुस्कराओगे तब निर्निमेष नेत्रों से, मैं कुटिया के द्वार खोल गगरी के अवगुंठन को हटा पुलकित हृदय की समस्त भावनाओं को बिछा तुम्हारा स्वागत करूँगा, और मुझे द्रोपदी के समान यह कहते तनिक भी लज्जा न आयेगी कि मेरी गगरी खाली है देव!

मेरी कुटिया अकाल की घड़ियाँ गिन रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-विद्या

[आचार्य नानाभाई भट्ट]

प्राचीनशाल, सत्ययज्ञ, इन्द्रद्युम्न, जड़ और बुड़िल, ये पाँचों पंडित सहस्र-सहस्र शिष्यों की शालायें चलाते थे और अपनी संस्कारिता एवं ज्ञान के प्रभाव से बहुत प्रसिद्ध हो चुके थे। एक बार ये सब एकत्र होकर अपने-अपने गुरुकुलों का और अपने निजी जीवन का विचार करने बैठे।

विचार-विमर्श का आरंभ करते हुए प्राचीनशाल ने कहा : "हमने इन शिष्यों को एकत्र तो किया है, किन्तु जिस उच्च जीवन की बड़ी-बड़ी बातें हम इनके सामने करते हैं, उस उच्च जीवन को हमने स्वयं किस हद तक अनुभव किया है?"

बुड़िल बोला : "भाई, मैं तो समझता ही नहीं कि उच्च जीवन किस चिड़िया का नाम है! जब-जब हम अपने आश्रमों में आत्मा, आत्म-बल, उच्च जीवन, आदि-आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं, तभी तब मैं तो यही सोचा करता हूँ कि यह हमारा निरा ढोंग नहीं तो और क्या है?"

जड़ ने कहा : 'इसे ढोंग कहना हो, ढोंग कह लो; दुहेरा जीवन कहना हो, दुहेरा जीवन कह लो; और आत्मवंचना कहना हो, तो आत्म-वंचना कहलो। मैं स्वयं तो वर्षों से उच्च जीवन और जीवन की आध्यात्मिकता की बातें करता आया हूँ। लेकिन यह आत्मा क्या चीज़ है, और यह अध्यात्मवाद कौन बला है, मैं बिल्कुल नहीं जानता।"

सत्ययज्ञ ने समर्थन करते हुए कहा : "बस, मेरी भी यही दशा है। अपने जीवन-ध्येय को हम स्वयं नहीं जानते। इसमें संदेह नहीं कि हमारी हालत ठीक उस अन्धे-सी है, जो दूसरे अन्धे के पीछे चल रहा था! फिर भी मैं तो उस अन्धे-की-सी धृष्टता के साथ ही सबको राह दिखाता हूँ और दिखाता रहूँगा।"

इन्द्रद्युम्न ने सबकी बातें शान्ति से सुनीं और अन्त में कहा : "लेकिन इसमें निराशा होने की क्या बात है? आइए, हम सब ऐसे किसी महाशय के पास चलें, जिन्हें जीवन का और आत्मा का यथार्थ ज्ञान हो चुका है। हम उनसे प्रार्थना करेंगे कि वे हमें अपनी विद्या भली-भाँति सिखा दें। बस, हमारे जीवन की यह त्रुटि भी पूरी हो जायगी।"

बुड़िल ने कहा : "बिल्कुल ठीक है। जबतक हम इस विषय का यथार्थ ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते और अपने दैनिक जीवन में उसे ओत-प्रोत नहीं बना लेते, तबतक और सब व्यर्थ है। हमें इसके लिए किसी ज्ञानी के पास अवश्य जाना चाहिए।"

जड़ बोला : "ज्ञानी के पास चलने से मैं इन्कार नहीं करता; लेकिन ज्ञानी-ज्ञानी में भी तो अन्तर होता है। कुछ ज्ञानी ऐसे पुराण-प्रिय और वृद्ध होते हैं कि वस्तु को जानते हुए भी उसे अपने युग की भाषा में व्यक्त नहीं कर पाते। चूँकि ये ज्ञानी युगधर्म को नहीं पहचान पाते, अतः ये हमारे लिए निकम्मे हैं। दूसरे कुछ ऐसे भी ज्ञानी होते हैं, जो अपने युग को पहचानने का दावा तो करते हैं; पर उनके ज्ञान की जड़ें बहुत गहरी नहीं होतीं। हमें तो किसी ऐसे समर्थ पुरुष के पास जाना चाहिए, जिसने इस विषय का सूक्ष्म बुद्धि से विचार किया हो और इस चीज़ को अपने जीवन में ताने-बाने की तरह बुन लिया हो!"

यह सुनकर प्राचीनशाल बोल उठा : "तब तो हमें उद्दालक ऋषि के पास ही जाना चाहिए। उन्हें छोड़ दूसरा कोई ऐसा नज़र नहीं आता। वैसे तो कई वृद्ध ज्ञानी भी हैं, पर उद्दालक ऋषि युवकों से भी काम लेना जानते हैं, इसलिए वही हमारे ज्यादा काम के होंगे। इन वयोवृद्ध ज्ञानियों का एक ही दुःख है। इनका सबसे बड़ा दोष यह है कि इनके पास नये जमाने की-सी तड़क-भड़क नहीं!"

बुड़िल ने कहा : "सच है। उद्दालक इस युग के आदमी हैं। अपने काम में निपुण हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके पास इस युग की भाषा भी है। चलो, हम सब उन्हींके पास चलें।"

फिर तो पाँचों पंडित उद्दालक ऋषि के पास पहुँचे। इन समर्थ ब्राह्मणों को अपने पास आते देखकर उद्दालक सोच में पड़ गये : "ये समर्थ कुलगुरु मुझसे जीवन के और गुरुकुलवास के अनेक अटपटे प्रश्न पूछेंगे। इनके प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर देने की शक्ति मुझमें कहाँ ? यदि कहता हूँ : 'मुझे पता है, मैं जानता हूँ; किन्तु आप लोगों से क्या कहूँ ?' तो वह भी ठीक न होगा। अतएव क्यों न चर्चा शुरू होने से पहले ही मैं इनको कोई दूसरा मार्ग सुझा दूं ?"

यह सोचकर उद्दालक उठे और पाँचों पंडितों की अगवानी के लिए बढ़े। स्वागत-सत्कार के बाद बातों ही बातों में ऋषि ने पंडितों से कह दिया : "महाशयो ! केकय राजा के पुत्र अश्वपति इस जीवन-विद्या को भलीभाँति जानते हैं, अतएव आइए हम सब उन्हीं के पास चलें। अच्छा हुआ जो आप आज इस प्रश्न को लेकर चले आये ! मेरे मनमें भी कई दिनों से आश्रम की संस्कारिता और ज्ञान के बारे में अनेक प्रश्न उठते रहे हैं।" यह कहकर उद्दालक ऋषि उन सबको अश्वपति के पास ले गये।

अश्वपति गादीपति भी थे। उन्होंने ज्ञान और विद्या में प्रख्यात अपने इन अतिथियों की पूजा की। फिर दूसरे दिन सबेरे नित्यकर्म से निपटकर धन की एक बड़ी राशि के साथ राजा इनके डेरे पर गये और बोले : "महाशयो ! यह निधि मैं आप ही के लिए लाया हूँ। इसे आप स्वीकारिए और मुझे उपकृत कीजिए।"

किन्तु पंडितों ने उस धनराशि की ओर आँख उठाकर भी न देखा। उन्हें तो जीवन-विद्या की जरूरत थी। घर आये हुए अतिथि धन का स्पर्श भी नहीं करते, यह देखकर अश्वपति सोच में पड़ गये और कहने लगे : "महाशयो ! आप सब बड़े-बड़े कुलपति हैं। मैंने आपके चरणों में अपना यह धन चढ़ाया है; किन्तु आप तो इसका स्पर्श भी नहीं कर रहे ! क्या आप मानते हैं कि मेरा धन भी दूसरे राजाओं की भाँति अत्याचार और पाप द्वारा कमाया हुआ है ? महाशयो ! मैं आपकी सेवा में यह निवेदन किया चाहता हूँ कि मेरे राज्य में न कोई चोर है, न कोई कंजूस है, न शराबी, न नास्तिक, न निरक्षर, और न कोई व्यभिचारी ही है। अतएव मेरा यह धन शुद्ध है। आप कृपापूर्वक इसका प्रतिग्रह कीजिए।"

राजा के ऐसे वचन सुनकर ये विद्वान् बोले : "राजन् ! आज हम आपके पास धन की इच्छा से नहीं आये। आजतक हम सब कई बार आपके पास आये हैं और आपसे अपनी आवश्यकतानुसार धन ले गये हैं। लेकिन आज हमारे आने का हेतु कुछ और ही है।"

अश्वपति ने पूछा : "आपका वह हेतु क्या है ?"

उद्दालक ऋषि बोले : "राजन् ! आज हम आपसे जीवन-विद्या सीखने आये हैं। आप इतने बड़े राज्य के स्वामी होते हुए भी इस जीवन-विद्या के सच्चे ज्ञाता हैं।"

अश्वपति ने कहा : "महाराज ! जीवन-विद्या आपके आश्रमों और गुरुकुलों में होगी या मेरे जैसे राजा के राजमहल में ?"

उत्तर में जड़ ने कहा : "महाराज ! जीवन-विद्या तो हमारे आश्रमों में ही होनी चाहिए। लेकिन आज हमारे आश्रम, आश्रम नहीं रहे हैं। हमारे समान क्षुद्र लोगों ने आश्रम-जीवन के बाहरी रूप को तो बनाये रखा है; पर उसकी आन्तरिक सामग्री को हम आज खो बैठे हैं। हाँ, हम जीवन-विद्या की भाषा में बोलते हैं; पर उसका प्रभाव हमारी जीभ तक ही रहा है, उसके आगे नहीं। महाराज अश्वपति ! हम सह अनेक शास्त्रों के ज्ञाता हैं; कई कलायें जानते हैं; बहुतेरी युक्ति-प्रयुक्तियों के प्रयोगकर्ता हैं; किन्तु जो सबसे बड़ा जीवन-शास्त्र है, जो सबसे महान् जीवन-कला है और जो सबसे श्रेष्ठ जीवन-युक्ति है, वह हमारे पास नहीं। अतएव विशालदेह होते हुए भी हमारे आश्रम हीनप्राण हैं; हमारे गुरुकुल चेतनाहीन है, हमारी विद्या निस्तेज है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और हमारा जीवन शुष्क है। महाराज ! हम इसी हेतु से आपकी सेवा में आये हैं !"

महाराज अश्वपति ने इन विद्वान् ब्राह्मणों की बात शान्तिपूर्वक सुनी। फिर बोले : "महाशयो ! आपके इस प्रश्न का उत्तर में कल दूँगा।" इतना कहकर अश्वपति अपने स्थान को गये। इधर ये छहों विद्वान् जब अकेले रह गये तो इस प्रकार चर्चा करने लगे—

एक ने पूछा : "अश्वपति ने हमें जीवन-विद्या सिखाना स्वीकार क्यों न किया ?"

दूसरे ने कहा : "हमने उनका धन नहीं लिया, कदाचित् इसका उन्हें बुरा लगा होगा।"

तीसरा बोला : "नहीं जी, बुरा उन्हें लग नहीं सकता। अगर अश्वपति इस तरह बुरा मानने बैठेंगे, तो हमें जीवन-विद्या क्या खाक सिखायेंगे ?"

अन्त में उद्दालक बोले : "मेरे मनमें एक शंका उठी है। आप लोग बुरा न मानें तो कहूँ ?"

सत्ययज्ञ ने कहा : "बुरा क्यों मानेंगे ?"

बुड़िल बोले : "इसमें बुरे का कोई प्रश्न ही नहीं।"

जड़ ने कहा : "जो है, सो साफ़-साफ़ कह डालिएगा ?"

उद्दालक ने सहज भाव से कहा : "मैं सोचता हूँ कि अश्वपति से जीवन-विद्या सीखने का हमारा यह तरीक़ा ही ठीक नहीं ! हम सब एक-एक गुरुकुल के अधिपति हैं; अपने आश्रमों में जब हम शिष्यों को विद्या दान देते हैं, तो उनसे एक निश्चित प्रकार की नम्रता और विवेक की अपेक्षा रखते हैं। मेरे विचार में जब लौकिक विद्या के आचार्य के नाते हम इतनी आशा रखे हैं, तो महाराज अश्वपति हमसे कितने विनय की आशा रखते होंगे ? हम तो एक साहूकार की भाँति यहाँ चले आये हैं, और राजा से जीवन-विद्या की वसूली करना चाहते हैं। इस अलौकिक विद्या के इच्छुक में जैसी उग्रता और विनय होना चाहिए, उसका शतांश भी हममें नहीं। इसीलिए मैं सोचता हूँ कि शायद अश्वपति हमें जीवन-विद्या सिखायेंगे हीं नहीं। यदि सचमुच हमें यह विद्या सीखनी ही हो, तो हमको विशेष नम्रता धारण करनी चाहिए।"

जड़ ने कहा : मुझे भी आपकी बात जँचती है। मानव-जीवन की बहुमूल्य वस्तु प्राप्त करने के लिए हमें वैसी योग्यता भी दिखानी ही चाहिए। हमको महाराज अश्वपति के पास हाथ में समिध् लेकर जाना चाहिए, और उन्हें इस बात का विश्वास करा देना चाहिए कि हम जीवन-विद्या को प्राप्त करने के वास्तविक अधिकारी हैं।"

बुड़िल ने कहा : "तब तो आज महाराज हमें ढूँढते हुए इधर आवें, उससे पहले ही हमें उनकी शोध में निकल पड़ना चाहिए।"

सत्ययज्ञ बोला : "बस, चलो यह रही समिध्।"

इस तरह की बातें हो ही रही थीं कि इतने में राजा अश्वपति स्वयं वहाँ आ पहुँचे और बोले : "महाशयो ! आप कहाँ जाने को तैयार हुए हैं ?"

ब्राह्मण बोले : "आप ही की सेवा में।"

अश्वपति ने कहा : "मैं तो स्वयं आपके पास आया हूँ।"

सबने निवेदन किया : "महाराज ! आप इस उच्चासन पर विराजिए और हमें कृपापूर्वक जीवन-विद्या का दान कीजिए, आप ही हमारे गुरु हैं।"

अश्वपति बोले : "महाशयो ! अब आप जीवन-विद्या के अधिकारी हुए हैं। जो बात मेरे मन में थी, वही आपके मन में भी उठी, यह हमारा सौभाग्य है। अब मैं आपको जीवन-विद्या सिखाता हूँ।" यह कहकर अश्वपति ने छःहों विद्वानों को जीवन-विद्या सिखायी, और फिर सब अपने-अपने स्थान को चले गये।

[मूल गुजराती से]

अनु०— काशिनाथ त्रिवेदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचार्यश्री का अन्तरंग-दर्शन

[विष्णुदत्त शर्मा]

तम ने धोया नभपंथ सुवासित हिमजल से
सूने आँगन में दीप जला दिये झिलमिल से
आ प्रात बुझा गया कौन अपरिचित जानी नहीं !
—महादेवी

पूज्य आचार्यश्री पण्डित रामचन्द्र शुक्ल के देहावसान पर आज लोकमान्य के निधन पर कवि की लिखी हुई ये पंक्तियाँ याद आ रही हैं—

'जनाजा क़ौम का दर से तेरे निकलता है
सुहाग क़ौम का तेरी चिता में जलता है'

अभी कल ही तो हिन्दी-मा को बिलखता छोड़कर 'प्रेमचन्द' और 'प्रसाद' महाप्रयाण कर गये। उनके वियोग के आँसू सूख न पाये थे कि यह वज्रपात हुआ ! आचार्य शुक्ल के निधन ने हिन्दी-संसार को कितना ग़रीब कर दिया है ! उदार-हृदयता, सदाशयता और महानता का यह हिमाचल दुर्भाग्य के प्रलय-कम्प ने भूमिशायी कर दिया। युगों की अश्रान्त साधना भी क्या इस कमी को पूरा कर देगी ?

सन् १९३४ के प्रायः मार्च मास की बात है। परीक्षा के लिए जाने के पहले हम हिन्दी-विभाग के विद्यार्थियों का एक स्नेह-सम्मेलन हुआ था जिसमें हमारे आचार्यगण भी सम्मिलित थे और विद्यार्थियों ने अपने आचार्यों के प्रति नेह-प्रदर्शन के लिए उनके नाम रखे थे जिनको उस हास-परिहासपूर्ण समारोह में आचार्य श्यामसुन्दरदास सम्बन्धित व्यक्तियों को देते चलते थे। आचार्य श्यामसुन्दरदास का नाम रखा गया था **"नागरी नायक"** और हरि औधजी का कवि-केशव की प्रसिद्ध उक्ति के आधार पर **"बाबा कहि-कहि जाहिं"** और शुक्ल जी का नाम रखा गया था **"बम-शंकर"**। शुक्लजी कम हँसते थे पर स्वतः निर्लिप्त रहकर इस प्रकार की बातें प्रायः कहा करते थे कि दूसरे बिना कहक़हा लगाये न रह सकें। उनकी मुख-मुद्रा प्रकृत गंभीर थी। मार्मिक और प्रायः भाराक्रान्त आँखें झुकाये हुए वे अपनी ज्ञान-गंगा बहाते चलते थे और इस बात की चेतना प्रायः उनको नहीं रहती थी कि इस समय में कौन आता-जाता है। उनके व्यक्तित्व के इस विशेष गुण के लिए ही हम लोगों ने चुनकर उनका उपरोक्त नाम रक्खा था। इस नाम के पढ़े जाने पर हास्य और तालियों का अविरल प्रवाह-सा वह निकला और इधर आचार्य की सौम्य मुखमुद्रा बोल उठी, **"बम-शंकर के साथी होकर आप लोगों को ताण्डव करना और गाल बजाना चाहिए न कि तालियाँ"** सात्त्विक परिहास से दूसरों को हँसाने में उनकी-सी संयत और गहन प्रवीणता कहीं देखने में नहीं आती। उनके विद्यार्थियों का आये दिन का अनुभव है कि शुक्लजी कोई बड़ी परिहास-पूर्ण और सुन्दर व्यंग से भरी हुई बात कह देंगे, उनके श्रोता उस परिहास के आनन्द में मग्न होकर ज़ोर से क़हक़हे लगायेंगे, परन्तु शुक्लजी की भूरी-भूरी मूछों के नीचे विद्युत् की भाँति एक हास्य-रेखा चमककर घने बादलों-सी फिर एकाकार हो जावेगी। किस सहृदय को यह जानकर धक्का न लगेगा कि वह निर्लिप्त गुरुता, संयत परिहास और सूक्ष्म मर्म-विवेचन अब स्वप्न होगये ? तुलसी की लोक-मंगल कामना जायसी की प्रेम-पियास और सूर की अन्तर्दृष्टि को समुद्र से चौदह रत्नों की तरह मथकर निकालनेवाला देव-नायक इस नश्वर संसार से मुहँ मोड़ गया। यों तो संसार विस्तृत है। **"समालोचना का क्षेत्र सूना होगया"** **"हिन्दी का एक जगमगाता विद्वान उठ गया"** ये सब तो ऐसी बातें हैं जिनको समय कभी-न-कभी पूरा कर देगा परन्तु एक बात है जिसके लिए मैं समझता हूँ, शुक्लजी का स्थान युगों तक खाली रहेगा।

वह बात है शुक्लजी के हृदय की महानता और औदार्य्य। प्रायः नित्यप्रति का अनुभव है कि दूर रहनेवाली दुनिया की दृष्टि में किसी कविता महापुरुष के चारों ओर लौकिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख्याति का एक आलोक-व्यूह सा बना रहता है और प्रकाश की उस दमक से आकर्षित होकर जब हम एक बड़ा आत्म-त्याग या बलिदान करके उसका सामीप्य प्राप्त कर लेते हैं तो मालूम होता है कि जिसको अबतक हीरा समझे बैठे थे वह एक चिकना कंकर मात्र है, जिसपर सूर्य की चमकीली किरणों ने भ्रांति का जाल बिछा रखा है। परन्तु मैं पूर्ण साहस और आत्म-विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि आचार्य शुक्ल उन थोड़े से महापुरुषों में थे, जिनको आप जितना देखते और परखते जाइए उतने ही उनकी सदाशयता, महानता और उदार-हृदयता के क़ायल होते जाइएगा। सरस्वती के उस भक्त, भारती के उस पुजारी और साहित्य के उस दधीचि के चरणों में आँखें झुकती ही जावेंगी। यह जग-जानी बात है कि हिन्दी-काव्य की नवीन-धारा को वह अधिक पसन्द नहीं करते थे, परन्तु उसकी आलोचना में आज तक कोई हल्की बात उनके मुहँ से नहीं सुनी गयी। आधुनिक कवियों के काव्य से अधिक प्रेम न होते हुए भी उसको पढ़ाते समय कितने मनोयोग, परिश्रम और रुचि से वे उसकी गुत्थियाँ सुलझाया करते थे!

आज शुक्लजी के विषय में सोचते हुए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, इन्दौर के अधिवेशन की साहित्य-परिषद् का दृश्य सामने आता है जबकि सभापति के पद से शुक्लजी की गुरुगम्भीर मूर्ति अपनी समस्त नम्रता में झुकी हुई कह रही थी:

"इस जगमगाती विद्वन्मंडली के बीच मेरा काम मुहँ खोलने का न था, अपने दोनों कान खुले रखने का था, परन्तु मूर्ख हास्य रस के बहुत पुराने आलम्बन हैं। लोग बना-बनाया मूर्ख पाकर हँसते भी हैं और हँसनें के लिए मूर्ख बनाते भी हैं। अस्तु मुझसे यदि आप लोगों का इतना भी मनोरंजन हुआ तो व्यर्थ समझूँगा।" जरा इस सादगी और निरभिमानता की कल्पना कीजिए। अखिल-भारतीय साहित्य-परिषद् ने जिसे अपना शिरोमणि बनाया हो, सारे हिन्दी-संसार ने एक स्वर से जिसे आचार्य-पद पर प्रतिष्ठित किया हो, जिसकी अपार विद्वत्ता का लोहा साहित्य-जगत का कोना-कोना मानता हो, उसके मुहँ से ये शब्द ऐसे लगते हैं मानो गौरव-गुरु हिमगिरि से विश्व-मोहन धरती पर मधुर जल का एक स्रोत प्रवाहित हुआ हो। मानो असंख्य बड़े और रस भरे आमों से लदा हुआ विशाल रसाल अपनी गरिमा के भार से कृतज्ञ होकर अनगिनती अवनत शाखाओं से धरती चूम रहा हो।

आचार्य का शिष्यत्व मेरे जीवन का एक गौरव-युग है। उनकी स्मृति-रक्षा और उनके प्रति आभार-प्रदर्शन के लिए हिन्दी-संसार शीघ्र ही कोई ठोस और उपयुक्त योजना उपस्थित करेगा। मैं आचार्य के दिवंगत श्रीचरणों में प्रणाम करता हूँ। यदि सरल-महानता को अपनाने की स्वर्ग में चाल है तो आचार्य विश्वात्मा के बहुत अपने होंगे, ऐसी आशा है।

स्वातन्त्र्य की प्रतिज्ञा

'व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये' इस वेद-वचन में स्वातन्त्र्य की प्रतिज्ञा व्यक्त की गयी है। व्यचिष्ठ का अर्थ है—अत्यन्त व्यापक, जिसमें सबको मत-दान का अधिकार है; और बहुपाय्य से मतलब है—जिसकी बहु संख्या अल्प संख्या की रक्षा के लिए सावधान है, ऐसे स्वराज्य के लिए हम कोशिश कर रहे हैं—यह उस प्रतिज्ञा का अर्थ है। मतलब यह कि अत्रि ऋषि के उस ज़माने से पंडित जवाहरलाल के इस जमाने तक वही स्वातन्त्र्य की प्रतिज्ञा विद्यमान है। वेद की प्रतिज्ञा जैसी आप चाहते हैं ठीक वैसी ही है। उसमें भी बहुवचन का प्रयोग है।

—विनोबा और उनके विचार से—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक हिन्दी कविता की कुछ प्रवृत्तियाँ

[सुधीन्द्र]

यह युग संक्रमण का, संक्रान्ति का, परिवर्तन का, प्रलय का, सर्वांगीण पुनर्जागरण का, नव-निर्माण का युग है। इस युगारंभ के साथ ही हमारी शिराओं में भी एक नवीन लहर-सी आयी है और हमारी मानसिक वृत्तियों और जीवन की प्रवृत्तियों में विचार-प्रलय आया है। नूतन की ओर बढ़ने की इस अदम्य प्रेरणा ने हमारी अबतक की जड़ता को छिन्न-विच्छिन्न कर दिया है; हमारे कण्ठ अतीत के गौरवमय स्वर से मुखरित हो उठे हैं और आँखें भावी के उज्ज्वल प्रकाश से आलोकित हो उठी हैं। हमारे जीवन में पीढ़ियों से गहरी घुली-मिली निराशा, पीड़ा, व्यथा, वेदना अब आशा, उत्साह, ओज और उल्लास के आलोक में धूमिल हो चली है और उनसे अठखेलियाँ करते रहना कविता को अब नहीं सुहाता। युग को वह नवीन आलोक और आभा देना चाहती है।

क्रान्ति हम चाहते हैं और वह क्रियान्वित हो भी रही है, पर वस्तुतः उस क्रान्ति का श्रीगणेश तो मानसिक क्रान्ति के उपक्रम से ही होता है। कविता यदि व्यावहारिक जगत् में क्रांति का आवाहन नहीं कर सकती, तो कम-से-कम वह क्रांति के अनुकूल वातावरण की रचना तो कर ही सकती है, विचार को, क्रिया को एक दिशा तो दे ही सकती है, युग की समस्याओं की घुली हुई गाँठों को खोलने के लिए उदीयमती पीढ़ी को प्रोत्साहित तो कर ही सकती है, जिस जीवन में से कविता खिली है, उसकी कठोरताओं को कोमल करने की प्रेरणा तो दे ही सकती है।

विपक्ष में कहा जाता है कि कवि तो कल्पना-जगत का प्राणी है, उसे भौतिक वास्तविकता से क्या सरोकार? हाँ, कवि अवश्य कल्पना-विहंगिनी के साथ भावों के 'अनन्त' में उड़नेवाला मुक्तपंख विहंग है जो पृथिवी की व्यथा-वेदना से ऊपर उठकर अपनी रागिनी छेड़ सकता है, परन्तु यह बात भी तो है कि उसका नीड़ तो इसी धरतीपर है और उसे बहिर्जगत को छोड़कर अपनी कल्पनाओं के साथ अपने नीड़ में आना है। जब अपने पार्थिव नीड़ में उसकी कल्पना उन्मुक्त नहीं हुई होती है, तो यहाँ की वास्तविकता उसे ऐसी जकड़ लेती है कि उसके मन पर कुप्रभाव पड़ता है, उसमें जो उत्पीड़न और उससे जो विद्रोह घनीभूत होता है, वह कवि-हृदय से वाणी द्वारा फूट पड़ना चाहता है, या फिर अपनी परिणति या लय चाहता है। विश्ववेदना में व्यथित कवि की रहस्यवादी आध्यात्मिक-प्रेमगर्भित भावना ऐसी ही दुर्भर स्थिति से ऊबकर क्षण-दो-क्षण को अवर्णनीय सन्तोष में आत्मसात् हो जाने की छटपटाहट का सीधा परिणाम है। दुरूह न होने के लिए मुझे कहना चाहिए कि हम वास्तविकता की ओर से आँख मूँदकर ही उससे मुक्ति पाने की खोज में अध्यात्मवाद की ओर बढ़े हैं; पर कवि क्योंकि एक मानव प्राणी है, इसलिए ऐसी अवस्था चिरस्थायी नहीं हो सकती बल्कि दूसरी स्थिति ही अधिक चिरस्थायी है क्योंकि कम या अधिक अंशों में पार्थिव वास्तविकता की प्रतिक्रिया निरंतर उसपर होती रहती है, और इसलिए वह उससे कहाँतक बच सकता है? (पर इससे जब वह अपने दिल के दर्द को राहत देने का मार्ग खोजता है तो वह कविता मानव आत्मा की वेदना को व्यक्त करने में समर्थ भी हो सकती है) तो उसकी कल्पनाओं का प्रासाद केवल निस्सीम गगन में आध्यात्मिक धरातल पर ही खड़ा न हो 'मृत्तिका की धरणी' पर ही खड़ा होता है—भले ही वह उसकी ऊपरी गगनचुम्बी मंजिलों में ही विहार करता रहे—इसीको हम युगवाणी का स्पन्दन कहते हैं।

जहाँ तक इस विश्लेषण पर हम निर्भर हैं वहाँ तक तो हमें यह मानना होगा कि युग की कविता युग-युग की कविता की विरोधिनी नहीं बल्कि भित्तिरूप है। मनुष्य जहाँ संसार के युगनिर्माणकारी विराट आयोजनों में अपने जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अमृत बहाता है, वहाँ वह घर की छोटी-छोटी उलझनों को भी तो सुलझाता है।

मानव-जीवन के चिरन्तन तत्त्वों पर लेखनी और कल्पना को गतिशील करके समसामयिक समस्याओं पर आना अधोगति है, परन्तु हमारा युग तो गढ़ा जा रहा है धरती पर बसनेवाले भौतिक बन्धनों में पड़े हुए प्राणी द्वारा। उनको कविता की हुंकार से दिशानिर्देश मिले और इस पार्थिव जगत् की उलझी हुई समस्याओं का हल कविता में व्यक्त हो, तो उसे हम भावजगत् की क्रान्ति कहेंगे।

हमारे काव्य का समस्त इतिहास इसी मानसिक क्रान्ति का आलेखन है। भक्तिमयी कविता से शृंगारिक और छायावादी, रहस्यवादी तथा अध्यात्मवादी कविताओं तक यह क्रांति बरबस आयी है। यह कवितागत क्रांति युग और उसके साथ बँधी हुई परिस्थियों के द्वारा लायी हुई मानसिक जगत् की क्रान्ति की प्रतिच्छाया ही तो है और जब क्रान्ति हमारे आचार-व्यवहार में, आदर्श में, वेषभूषा में, वाङ्मय-भाषा सबमें आ रही है और हमारी विचारधाराओं में भी, तो वही कविता में—वाणी में—न उतर आये यह किसी भी दशा में अस्वाभाविक नहीं है। वस्तु-जगत् के कठोर सत्यों से कोई आँख मूँदे नहीं रह सकता और कविता इससे अछूती नहीं रह सकती। तो कवि पहले युग के प्रति उत्तरदाता है, फिर युग-युग के प्रति। जो कवि अपने परिजनों के प्रति अनुराग नहीं रख सकता उसका विश्वबन्धुत्व या मानवता का निर्वाह करना निरा दम्भ है।

साहित्य जहाँ राष्ट्रीय संस्कृति की पुंजीभूत निधि है, वहाँ वह संस्कृति का दर्पण भी है। साहित्य का अध्ययन करने से उसके राष्ट्र की सभ्यता, संस्कृति और सुरुचि के क्रमागत विकास का अध्ययन हो जाता है और काव्य-साहित्य के अध्ययन से तो और भी यथार्थ रूप में, क्योंकि काव्य में हमारे संस्कृत और सुरुचिपूर्ण हृदयों की भावना निखरकर आती है। कविता गेय है, इसलिए कविता लोकवाणी के अधिक निकट जाती है और लोकवाणी का स्पन्दन बनने की अधिक क्षमता रखती है। और किसी भी भाषा की कविता पर इससे बढ़कर दूसरा कोई लांछन नहीं कि वह भाषा में प्रतिष्ठित मूल-संस्कृति से बहुत दूर जा रही है। यह ठीक है कि संस्कृति की रूपरेखा एकदम निर्धारित और अंकित नहीं की जा सकती, क्योंकि संस्कृति एक लचीली (flexible) वस्तु है, जिसकी व्याख्या बहुत तोड़ी-मरोड़ी जा सकती है और फिर एक संस्कृति की दूसरी सस्कृति पर छाप पड़ती है, जो कई अंशों में स्वास्थ्यकर भी होती है, परन्तु इससे देश-विशेष की अपनी संस्कृति का मूल्य या महत्त्व कम नहीं हो जाता। जो संस्कृति हमारे पंचप्राणों द्वारा हमारे रक्त में घुल-मिल गयी है उसका कविता में प्रतिनिधित्व होना अनिवार्य है।

आज की अधिकांश हिन्दी-कविता में हाला-प्याला के अविरल प्रवाह को देखकर हमारी संस्कृति सिहर उठी है। एक नितान्त अपरिचित विदेशी भावधारा को यहाँ लाने का श्रेय (या अपराध!) मैं समझता हूँ हिन्दी-कविता ही को है। यह कोई तर्क नहीं है कि पाठकों को यह भावधारा बहुत प्रिय हुई है और ऐसी कवितायें बहुत सुनने में आ रही हैं। जहाँ तक जनरुचि का प्रश्न है, इनको पसन्द करने के पीछे कारण हैं—ठीक वे ही जिनसे जनरुचि कामोत्तेजक गीतों, दृश्यों (सिनेमा आदि में) तथा प्रसंगों में लुभा जाती है। वस्तुत: ऐसी कविताओं में जो आकर्षण है वह शराब-साक़ी के बल पर नहीं, बल्कि इसलिए कि इस आवरण में एक तो कवि अनर्गल होकर अपनी वासनाओं को उँड़ेल सकता है. दूसरे इसलिए कि इसके उपकरण पाठकों और श्रोताओं के लिए भी एक ऐसा वातावरण रच देते हैं, जो औसत दर्जे की मानसिक वृत्तियों के छिछले, अनुदात्त, ऊपर-ऊपर तैर रहे तत्त्वों को उत्तेजन देता है। जो भावनायें हल्की होती हैं वे ऊपर सतह पर ही तैरा करती हैं; कवि को तो उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचाकर गहरे तल में पैठकर मोती लाना है।

जीवन-रस, अमृत-रस आदि हमारी राष्ट्रीय संस्कृति में प्रतिष्ठित होते हुए भी 'हाला' के प्रवाह में हम बह जायें, यह धर्म नहीं हो सकता। पतन का पथ ढालू और रपटीला होता है और मानवीय प्रवृत्ति के पाँव गहरे जमे नहीं होते। कवि को उसे पाँव देना है, इस प्रवृत्ति को उत्तेजन देना नहीं, रोकना है, उसका उदात्तीकरण——मांगलीकरण (Sublimation) करना है। उसमें बह जाना और दूसरों को भी बहा ले जाना पौरुष नहीं है। कोई कह दे कि जीवन की निराशा और वेदनामयी परिस्थिति की प्रतिक्रिया के रूप में कवि-हृदय तो हाला की मस्ती में अपनी राहत खोजता है। परन्तु श्रेय की ओर जीवन का अमृत ही ले जा सकता है।

प्रेम के गीत गाते हुए जब कवि 'प्रेम' की महत्ता और उदात्तता के पाँवों में 'वासना' की जंजीरें डाल देता है तो वह कविता को भी कम कलंकित नहीं करता। प्रेम को मैं काव्य की आत्मा मानता हूँ। प्रेम ही कविता का प्राणवायु है, यह भी कह सकते हैं; परन्तु प्राणवायु को जब दुर्गन्ध स्पर्श कर लेती है, तो वह विष से भी घातक बन जाती है।

प्रेम और शृंगाररस साहित्य में पर्याय से हो गये हैं। शृंगाररस की सच्ची कसौटी मैं यह मानता हूँ कि उससे जो आनन्द प्राप्त हो, वह उदात्त वृत्तियों को ही उत्तेजन दे—असत् से सत् की ओर ही ले जाये। सत्-असत्, उदात्त-अनुदात्त का निर्णय करके मैं विज्ञ पाठकों की मेधा अवगणित नहीं करना चाहता।

प्रेम का जो वासनाजनित रूप है, वही प्रेम को उच्चासन से नीचे गिरा देनेवाला है। हमारा वह प्रेम प्रेम नहीं है, जो 'काम' में परिणति चाहता है। जहाँ शारीरिक आनन्द (या रस ?) की प्राप्ति की कामना है वहीं काम है। जहाँ आत्मिक या आध्यात्मिक आनन्द की प्रेरणा है वहाँ प्रेम है। इसी कसौटी ने कई हिन्दी कविताओं की मूल धारा को कामुकतापूर्ण ठहरा दिया है।

सभ्य-संस्कृत समाज में प्रेम को व्यक्त करनेवाली शारीरिक क्रियाओं का नग्न और खुला प्रदर्शन कोई कलापूर्ण बात नहीं समझी जाती और कविता तो वाङ्मय का अत्यन्त कलात्मक निखरा हुआ रूप है। यह वह सोना है जो स्वर्णकार के कलात्मक हाथ लगने से आभरण बन गया है। कविता हमारे साहित्य की वह देवता है, जिसके मन्दिर में कोई अशुचि वस्तु नहीं आनी चाहिए। प्रेम आरती का वह दीपक है, जिसके विषय में विश्वकवि ने कहा है:

वासना मोर जारेइ परश करे से,
आलोटि तार निबेये फेले निमेषे।
ओरे सेइ अशुचि, दुइ हाते तार,
जा एनेछे चाइने से आर,
तोमार प्रेम बाजबे ना जा
से आर आमि सइब ना

प्रेम में जो शारीरिक आसक्ति या वैषयिकता है, वह व्यवहार-जगत् में जितनी पतनकारी और विघातिनी होती है उतनी ही कविता में भी, बल्कि उससे भी अधिक; क्योंकि साहित्य तो एक ऐसा साँचा है, जिसमें हमारे मनोभाव ढलकर जनता के बन जाते हैं। जबतक कविता कवि के कण्ठ में है, तबतक वह शिव-अशिव, सुन्दर-असुन्दर जैसी है है, पर जब वह जनता के सामने आ जाती है तब उसे शिव-सुन्दर की कसौटी पर खरा उतरना ही चाहिए। अपेक्षा है कि हम कविता में अपनी मेधा और प्रतिभा का यह जानबूझकर व्यभिचार न होने दें, अपने प्रेम के चित्रण में भी सर्वथा, सर्वदा, सर्वत्र उदात्त और मंगल भावनाओं की ही सृष्टि करना सीखें।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौष्ठव-पूजा

[प्रभाकर माचवे]

क्रमागत

मोचीराम

[इतने में कलाकांतजी जो आगे बढ़े, तो उनके पैरों की चप्पलें टूट गयीं।

और आप जानते हैं कि एक सूट डाटे हुए शहरवासी के लिए टूटी हुई चप्पल हाथ मे लेकर चलने से अफसर की गालियाँ कम अपमानजनक लगती हैं। खैर, यह तो था गाँव। किसी तरह कलाकान्तजी अपनी रेशमी रूमाल में वे चप्पले उठाकर चलते हैं, क्योंकि यहाँ उनका कोई परिचित नहीं है, जो इस क्रिया को हेय या हास्यास्पद समझे। और मोचीराम के यहां आ धमकते हैं।]

मोचीराम–(उसने उस फैशन की चप्पलनुमा जूती अपनी ज़िन्दगी में पहिली बार देखी थी। अत: अचरज से दो-चार-बार उसे उलट-पुलटकर देखकर।) तो ईको कहा करिब्रो है ?

कला० (बिगड़कर) यह भी नहीं समझता! अरे, उसका एक पैबन्द टूट गया है, उसे जोड़ देना है, बस।

मो०—जे किधर से जुड़ैगो बाबू साब ? और जे तो ओहो, नये ही तरज की जूती में देखत हों।

क०—अच्छा, तेरी तरज-वरज रहने दे। इसे पहिले सी दे। यहाँ से, इस तरह।

[मोचीराम गांव की गति से, धीरे-धीरे और बहुत धीरे अपना काम आरम्भ करता है—पहिले उसे टीन के डिब्बे में रखे हुए गंदे काले पानी में डुबोकर, फिर उसे ठोक पीटकर, उलटे-सीधे मोटे सूजे से छेदकर, टेढ़ी-मेढ़ी डोरियों से सीकर। कलाकान्त इसे देख-देखकर उकता जाते हैं।]

क०—जल्दी क्यों नहीं करता ?

मो०—अजी, महाराज। एक तो काम मिलो है दिनन से। और तिसपर आप तो जैसे घोड़े पै सवार हौ। जे हमने सुनी है महाराज कि आजकल लड़ाई जो चल रही है—

क०—(झल्लाकर) लड़ाई से तुझे क्या करना है ? लड़ाई के लिए मोचियों का कोई काम नहीं है।

मो०—क्यों घुड़सवारन की पलटन नाहीं ~~का~~ होगी ? और तिनकी रिकाब, ज़ीन, लगाम, ऐराब सीने को काम नहीं पड़त होगो—

क०—कहाँ के घुड़सवार लेकर बैठे हो ? आल्हा-ऊदल की लड़ाई थोड़े ही है। लड़ाई अब होती है हवाई-जहाजों के बीच में—

मो०—ओ हो ओ, चीलगाड़ी! (आश्चर्य से स्तम्भित कुछ देर के लिए काम डाल देता है) चीलगाड़ी ? हमने सुनी तो हती। तो लड़ाई उनसे होति है ? ओहो, ओहो!

(चप्पल सिलकर पूरी हो जाती है। इतने में एक देहाती अपना टूटा हुआ छाता वहाँ ले आता है और मोचीराम से पूछता है—छाता नहीं सुधार दोगे क्या ?)

मो०—हम क्या छाता सुधारनवारे हैं ? (हँसकर) अजी, हम तो जूते ही को काम करत हैं। ज्यादह-से-ज्यादह चमड़े को और काम। पर छाता-वाता यहाँ नाहीं सुधारो जात।

वह आदमी—बड़ी दूर से आये हैं। सुधार दो ना।

मो०—अरे, जात काहे नाहीं। अब देखो बाबू साहब, ऐसे गँवार भरे पड़े हैं। हम कहीं छाता सुधारनवारे हैं भला ?

क०—और तुम छाता सुधारने का काम कर दो तो—

मो०—कैसी बात करत हौ ? हमारो पेशा छोड़ दें :

क०—(जेब से चमड़े की मनी बैग निकालकर) यह लो एक आना।

मो०—छुट्टे पैसे तो हईं नहीं सरकार !

क०—छुट्टे पैसे ? अरे पूरे आने की मजदूरी की, और विलायत में तो इतनी सी बात के चार आने ले लेते !

मो०—कहाँ है जे विलायत, महाराज ! मोको वहीं पठाय देओ। (इकन्नी उठाली बजाकर माथे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से लगाकर) बोहनी हुई सरकार। इहाँ तो डब्बलन से काम परत है। इकन्नी-दुअन्नी तो तेहवारन के रोज़ जिमींदार साहब से मिल जाति है। सोऊ सालभर सब काम हुइ जाय तब !

क०—तो तुम्हारी आमदनी क्या हो जाती होगी महीने की ?

मो०—गये क्वार दशहरे में कई जूते बनाये हते गाँववारन के। सो पाँच-दस रुपया मिलि गये हते। बाकी कबहूँ दुई-तीन रुपैया से ज्यादा मिलत नाहीं जा गाँव में। दलिद्दर गाँव है आप जैसे दाता बिरले ही होत।···

क०—और तुम्हारे घर आदमी कितने हैं ?

मो०—राम किरपा से चार बच्चे हैं, उनकी माँ, हमारी माँ, मौसी···

क०—तो और चीज़ें चमड़े की क्यों नहीं बनाते ?—मनीबेग, पोर्टमैंटो, स्ट्रैप्स, ये, वो, वगैरह-वगैरह···

मो०—क्या कही आपने ? जे नाम मैंने तो आज हो सुनै। गाँवन में तो लगाम, धानीवाले, बैलों के चमड़े की चश्मे पेटी जूती-वूती के सिवा और चमड़े को काम होत है ?

क०—तो तुम ये फैंसी चीज़ें खाली वक्त में बैठे बनाओ। ओर शहरों में बेचो।

मो०—(संशयग्रस्त सूखी हँसी हँसकर) शहरन में ? कौन लीहै ? जपानी माल इतनो सस्तो मिलत है कि हमारी लागतौ नाहीं निकरै, इहाँ से शहर में जाओ, आओ, और एक-दो चीज़ बनाओ। और हमारो काम भला वाकी बराबरी कर सकत ?

क०—और चमड़ा कौनसा काम में लाते हो ?

मो०—जौन मिल जाय। मरी खाल ज्यादा तर हमारे यहाँ होति है, बूचड़खानेवारे तो शहरन में ही ले जायँ, अपनो चमड़ा—

क०—(खुद से ही) यह तो ठीक है। मरी खाल मारी हुई खाल से ज्यादह टिकाऊ होती है यह तो साइंस ने भी सिद्ध कर दिया है। मगर सवाल इतना ही है कि देशभर के लिए लगने वाला चमड़ा, हमारे यहाँ मरनेवाले जानवरों से मिल सकेगा ? जबतक आयात निर्यात पर प्रति-बन्ध न हो···

(कलाकान्त सोचते जाते हैं कि तीन रुपये माहवार में आठ मुहँ दोनों जून खाते होंगे ? होगा कि मोचीराम की बहू भी मजूरी करती हो, मौसी भी। मगर वृद्धा माँ, और छोटे-छोटे बच्चे ? सब मिलाकर, घर में (क्योंकि स्त्रियों की मजूरी पाँच पैसा रोज़ वर्धा के आस-पास के गाँव में मिलती है) सात-आठ रुपये बमुश्किल पड़ते होंगे। और मजूरी भी हर वक्त कहाँ मिलती ? उसमें शादी, मृतक-क्रिया, धर्मोत्सव ! कर्जा !! कलाकान्तजी ने इसी सोच-साच में अपने मुहँ में सुलगी हुई सिगरेट फेंक दी। उन्होंने एक रोज पहिले ही अखबार में पढ़ा—था विदेश से आनेवाली सिगरेटों की आयात में दो लाख रुपये सालाना बढ़े हैं। हमारे यहाँ के लाखों श्रमोपजीवी भूखें मरें—और लाखों, सिगरेट की राह विदेश जायँ ? यह कौनसी कला है ? और कौनसी सौन्दर्य-पूजा है ?···कलाकांतजी आगे बढ़े)

* * *

रंगीखाँ छीपा

(रंगीखाँ छीपे के घर पर लकड़ी के पाटों पर मोटा गाढ़ा बिछा है। पर्दे, गँवई साड़ियाँ, चादरें और लिहाफों के लिए रंगीन कपड़ों पर छपाई हो रही है। वही प्राचीन पद्धति। लकड़ी के, हाथ से दबाने के छापे। रंग बनाने के भी वही पुराने तरीक़े—रीठा, गेरू, हिंगुल, चूना।

रंगीखाँ रंगरेज भी है। मकान के बाहर रंगों से भरे बड़े-बड़े तसले हैं। कुछ पगड़ियाँ भयंकर लाल रंग में सनी सूख रही हैं। कुछ गाँठ बाँधकर भी कपड़ा रखा गया है। शायद उसपर लहरिया रंग होने को है।

कलाकान्त महाशय, जो रंगों से ज्यादा प्रेम रखते हैं, वहाँ पहुँचते हैं)

क०—ये पुराने ढंग के रंग तुम क्यों काम में लाते हो ?

रं०—विलायती रंग भी हम काम में लाते थे हजूर। मगर अब रंगों के भाव बढ़ गये हैं। एक पैसे का रंग अब एक आने में आने लगा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क०—मगर ये तुम्हारे फूलपत्ती, मोर के बूटे और साँचे बड़े गँवारू किस्म के हैं। इनमें कोई नये डिजाइन क्यों नहीं बनाते ?

रं०—नये डिजाइन बनें कैसे ? हमारे यहाँ के बढ़ई तो ये लकड़ी के साँचे खोदते नहीं। हमारे दादा जब मेरठ, बुलन्दशहर की तरफ एक बार गये थे, तब लाये थे ये साँचे। हम तो साँचे बनाने से रहे।

क०—क्यों तुम लोगों के घर तुम्हारी स्त्रियाँ खुदाई का काम नहीं कर सकतीं ? जापान में तो चार-पाँच बरस के बच्चे-बच्चियों से लगाकर…

रं०—आप कहाँ की बातें करते हैं ? एक तो यह बात नासमझदारी की है कि हम बढई बन जायें। ऐसा कहीं हो सकता है। हम ऐसे-वैसे नहीं हैं। खानदानी छीपे और रंगरेज हैं। समझे, मालिक !

क०—होगा, अगर जो काम प्राचीन परम्परा से करते आ रहे हो, उसमें जरा भी फर्क़ आ जाय तो तुम लोग इस कदर बौखला उठते हो—तो मुझे ऐसा लगता है कि इन गाँवों में अभी बीसवीं सदी का जन्म ही नहीं हुआ है। मशीन की छपाई जानते हो ?

रं०—हाँ, एक बार एक रंग का कारखाना देखा था। वहाँ तो हम भूखे मरने लग जायँ सरकार। यहाँ इतना तो है कि मैं छापता हूँ तो बहिन रँगती है, और बीबी कपड़ा कूटती है वग़ैरह। वहाँ तो इतने-सारों की ज़रूरत ही क्या है ? सब धान बाइस पसेरी। एक आदमी आया और काफी है। और वे तो बिजली से चलते हैं न ?

क०—हाँ, बिजली का भी प्रश्न है। पर तुम्हारे गाँव के पास जो यह बड़ी-सी नदी बहती जाती है उससे तो 'पावर' लायी जा सकती है।

रं०—बहुत कुछ हो सकता है साहब ! इनसान भी फरिश्ता बन सकता है। शैतान भी खुदा हो सकता है। मगर सकता-ही-सकता है। होता देखा तो नहीं गया—

क०—देखो हमारे यहाँ एक 'नेशनल प्लैनिंग कमिटी' बनायी गयी है, जो इन बातों को सोचेगी।

रं०—क्या कहा, कोई कमिटी ? अजी कमेटी-वमेटी से कुछ होनेवाला नहीं। हममें ही इत्तिफाक हो तो—

क०—तो वह कमिटी सब किस्म के कल-पुर्जे…

रं०—हाँ, हाँ, वो मन्सूर मियाँ होटलवाले अखबार पढ़ते हैं। उनने कही थी कि वो' कमेटी-वमेटी तो पेले मोटर बना रही है। क्यों सच्ची है न ? रंग कारखाने की पेले जरूरत थोड़े ही है मोटर की ज़रूरत है ?

क०—अरे, सब धीरे-धीरे एक साथ हो जायेगा। उम्मीद रखो। [क्रमशः]

तेरा उपहार

['मृत्युञ्जय']

मैंने तुझसे अपनेपन का अनमोल उपहार पाया। फिर तू और मैं दो हो गये।

मैं अपने से तुझको भिन्न समझने लगा। सन्तत तुझसे मिलकर एक होने का नित्य निष्फल उपाय करता रहा।

परन्तु ज्यों-ज्यों मैं तेरी ओर बढ़ने का प्रयत्न करता, त्यों-त्यों तू मुझसे अधिकाधिक दूर-दूर होता चला गया।

अततः मैंने निश्चय किया कि मैं तेरा उपहार तुझे लौटा दूँ। तू मेरे पास आया, परन्तु ज्योंही मैंने तेरी ओर हाथ बढ़ाये तू मुस्कराकर एक ओर निकल गया।

मैंने दृढ़ संकल्प के साथ मेरा अपनापन सहर्ष तुझे लौटा दिया। तू मन्त्रमुग्ध-सा मेरी ओर बढ़ा और तत्क्षण मेरापन तेरेपन में समा गया। फिर न तू रहा न मैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन, साहित्य और जीवन

[छगनलाल परमार]

जीवन और साहित्य का परस्पर घनिष्ठ और अटूट संबंध है। वह एक और अभेद्य द्वंद्व है। साहित्य जीवन का प्रतिबिम्ब है, पर निर्जीव प्रतिबिम्ब नहीं है। सिर्फ प्रतिबिम्ब ही नहीं है, परन्तु वह और भी कुछ है। जीवन में से पैदा होकर वह जीवन को गढ़ता भी है! वह प्रजा के जीवन और संस्कृति का इतिहास ही नहीं, बल्कि उस इतिहास का विधायक भी है, जीवन का यथार्थ दर्शन कराने के अलावा वह जीवन की मर्यादाओं एवं दोषों को निर्मूल करने की दृष्टि और प्रेरणा भी प्रदान करता है। उसका अर्थ यह है कि साहित्य और जीवन परस्परावलंबी और परस्परोपकारक हैं। वह ऐसा अटूट द्वंद्व है कि उनका गठबंधन छुड़ाने का विचार आत्मघातक, अशक्य और अनुचित है।

किसी भी देश या युग का साहित्य देखिए। उस देश या युग की वृत्तियों एवं प्रवृत्तियों का, महत्ताओं एवं मर्यादाओं का दर्शन आपको अच्छी तरह होगा। साहित्य एक ऐसी चीज़ है, जो हज़ारों वर्षों तक अमिट रह सकती है। पुराने कालों की संस्कृति और समाज-स्थिति का अविकृत और आनन्दप्रद दर्शन साहित्य ही करा सकता है। प्राणवान जीवनधर्मी साहित्यकारों की ज्ञानप्रसू और जीवनविधायिनी लेखनी से ही प्राणवान और प्रेरक साहित्य प्रकट हो सकता है। जैसा शील, वैसा साहित्य; अतएव साहित्य जीवन-दृष्टा और जीवन-सृष्टा साहित्यकारों के महान् आत्मा का सार होने के कारण उनके जमाने का सच्चा, अच्छा और सजीव चित्र रखता है। हज़ारों वर्षों से हिन्दू-धर्म के विराट काव्य रामायण, महाभारत और भागवत हिन्दू जीवन पर लगातार भारी असर करते आये हैं।

जबतक जीवन में महत्ता प्रकट नहीं होती, तब तक साहित्य में महत्ता प्रकट होना प्रायः असंभव है। जब भारतीय जीवन संस्कृति और समृद्धि के सर्वोच्च सिंहासन पर थी, तब उसका साहित्य भी उतना ही महान् था। जब से भारत पराधीनता और जड़ता में फँस गया, तबसे उसका साहित्य भी अल्पप्राण, अदूरदृष्टि, अपुरुषार्थी और भ्रान्त होने लगा। आज जब भारतीय जीवन में उन्नति और उत्कर्ष के आंदोलन बढ़ रहे हैं, तब सभी प्रांतीय और राष्ट्रीय साहित्य तेज़ी से विकसित हो रहा है इससे मालूम होता है कि साहित्य जीवन से कभी विमुख हो ही नहीं सकता, उसका नाता अटूट है। ये दोनों एक साथ ही आगे बढ़ते हैं और नीचे गिरते हैं।

साहित्य का मूलभूत ध्येय है रसनिष्पत्ति। जबतक साहित्यकार अपने हृदय के रसानन्द या संवेदन का पाठक के हृदय में संक्रमण नहीं कर सकता, तबतक उसकी साहित्य-कृति सफल नहीं होती, पर महान साहित्यकार मनोरंजन के एक ही उद्देश्य से संतुष्ट नहीं होते। 'कला के लिए कला' उसके साहित्य-सर्जन का प्रमुख ध्येय नहीं होता। जनता की मनोवृत्तियों में रससंचार करने के अलावा उसकी मनोवृत्तियों का शुद्धीकरण, संस्कृतीकरण और उच्चीकरण साधने का अरमान भी ऐसे साहित्यकारों के जनहित-चिंतक हृदय में उछलता रहता है। महान साहित्यकारों का साहित्य-सर्जन सदा और सर्वत्र जीवन-लक्षी ही जान पड़ा है।

साहित्य एक महान शक्ति है उसका सदुपयोग और दुरुपयोग दोनों हो सकते हैं। बम, तोप और तलवार से भी वह ज्यादा उथल-पुथल कर सकता है आधुनिक काल में योरप में जो क्रान्तियाँ हुई हैं, उनको जगाने में साहित्यकारों का बड़ा हिस्सा था। वे निरे साहित्यकार नहीं थे, समाज-विधायक भी थे। उन्होंने अपने साहित्य में जीवन-सम्मुख और नयी दृष्टि की प्रतिष्ठा करके लोक-जीवनमें बड़ा परिवर्तन कर डाला, नये प्राण का संचार किया।

मानव-कुल का उद्धार कभी होगा तो वह कलाकारों के ही द्वारा होगा, उपदेशकों, सुधारकों,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनीतिज्ञों और वैज्ञानिकों से प्रजा सुधर नहीं सकती, क्योंकि पाठक के हृदय में भावों का संचार करने का मूल आशय रखनेवाला साहित्य ही प्रजा के हृदय पर अपना स्वामित्व स्थापित कर सकता है। जनता के हृदय की शुद्धता व उच्चता तो कान्ता जैसे मधुभाषी एवं सत्यव्रती कलाकारों से ही सिद्ध हो सकेंगी। जितना महत्त्वपूर्ण स्थान पुरुष-जीवन में स्त्री का है, उतना ही महत्त्वपूर्ण स्थान मनुष्य-जीवन में साहित्य का है।

पाश्चात्य साहित्य के अध्ययन के कारण आजकल हमारे देश में बहुत-सी ऐसी चर्चायें चल रही हैं कि साहित्य यथार्थवादी होना चाहिए या आदर्शवादी ? सिर्फ कलालक्षी होना चाहिए या जीवनलक्षी ? दूसरे देशों का अनुकरण करने से हमें थोड़ा-सा लाभ हुआ है, पर लाभ की अपेक्षा हानि कहीं अधिक हुई है। हरेक देश की अपनी विशिष्ट संस्कृति होती है और भिन्न-भिन्न स्थिति होती है। जो प्रजा अपनी विशिष्ट संस्कृति और वर्तमान स्थिति का सोच-विचार करके जीवन-प्रवृत्तियाँ नहीं चलाती, वह अधिक पतनोन्मुख अवस्था में गिरती जाती है जैसे ज्वरग्रस्त आदमी को सभी प्रकार का भोजन पथ्य नहीं हो सकता, इसी तरह पराधीनता और दारिद्र्य के रोग में फँसे हुए भारत को जीवनविमुख खाद्य कैसे पथ्य हो सकेगा ? इसीलिए हमारे पीड़ित, परतन्त्र और दरिद्र देश को जो साहित्य पथ्य और पोषक हो, वही साहित्य हमारे साहित्यकारों को आज रचना चाहिए। भारत के युगधर्म, राष्ट्रीयता को और उसके सर्वोदयकारी अहिंसा के सनातन धर्म को जो साहित्य जीवनव्यापी और सफल करे, उसी साहित्य का सर्जन हमारे जीवन को स्वस्थ, समृद्ध, समर्थ और स्वाधीन बनायेगा। स्वराजवादी प्रजा को अपनी सभी प्रवृत्तियों में जीवनलक्षी गांभीर्य समझना पड़ेगा। अगर हमारे सभी प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकार अपने मनोवेगों को राष्ट्रोन्नति की ओर अग्रसर करें और साहित्य के द्वारा जनता-जनार्दन की आराधना करने के लिए लोकभोज्य, लोकोपयोगी एवं लोककल्याणकारी साहित्य रचें, तो थोड़े ही वर्षों में राष्ट्र में कोई अद्भुत व अभूतपूर्व प्राण प्रकट हो जायगा और स्वराज आप-ही-आप आकर राष्ट्र की सेवा में खड़ा हो जायगा।

निजी पुस्तकालय बनाइए

[कालिदास कपूर]

प्रिय पाठक,

कुछ समय पहले **'पठन-पाठन का प्रचार'** शीर्षक लेख 'जीवन-साहित्य' में प्रकाशित हुआ था, वह लेख प्रकाशकों तथा लेखकों के लिए था, उनसे निवेदन किया गया था कि यदि चाय का प्रचार करना समाज के लिए हितकर है और यदि चाय के कारखाने उसका प्रचार करने के लिए संगठन कर सकते हैं और उस संगठन को सरकारी प्रोत्साहन भी मिलता है, तो पठन-पाठन का प्रचार कोई ऐसी बला नहीं है जिसके लिए प्रकाशक और लेखक संगठित न किये जा सकें और जिसको सरकारी प्रोत्साहन न मिल सके। सच पूछिए तो सिनेमा और रेडियो के होते हुए भी पुस्तक तथा पत्र-पत्रिकाओं से बढ़कर घर बैठे ज्ञान और संस्कृति की उन्नति करने का कोई और साधन नहीं है।

लेख प्रकाशित हुआ, परंतु मैंने इस आशा से उसे नहीं लिखा था कि मेरा निवेदन भारतीय प्रकाशक स्वीकृत कर लेंगे और संगठन के लिए कुछ प्रयत्न करेंगे। संगठन की कमी हमारी जातीयता का लक्षण है और यदि कोई संगठन न हो सका, उसकी कुछ चर्चा भी पत्र-पत्रिकाओं में नहीं हुई तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। भारतीय विचार-समूह को हिन्द महासागर का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुरूप समझिए, जिसमें वह लेख कुछ क्षण तक लहरें पैदा करके विलीन हो गया। मुझे कोई खेद नहीं है, मुझे अपने कर्तव्य के पूरा करने का संतोष है।

यह लेख पत्र रूप में आपके लिए है, आप पढ़े-लिखे तो हैं ही, कदाचित् आप कभी-कभी वा संयम से किसी हिन्दी पत्र-पत्रिका को पढ़ते रहते हैं, इसलिए यदि यह पत्र आपकी दृष्टि में पड़ जाये, तो इसे आप अपने ही लिए समझिए।

मैं इस पत्र में अन्य देशों के पठन-पाठन की चर्चा नहीं करूँगा, करना उचित हो तो भी तुलना द्वारा अपनी हीनता का दुःख रोना न आपको रुचिकर होगा न मुझे। आपको पठन-पाठन में थोड़ी बहुत रुचि तो है ही। नहीं है, तो इस पत्र की पहुँच भी आपतक नहीं हो सकती।

क्षमा कीजिएगा। इस देश में आपका दल बहुत कमज़ोर है आपकी रुचि रखनेवाले लोग भारत में बहुत कम हैं। इस देश में सौ पीछे नव्वे तो निरक्षरभट्टाचार्य हैं, वे आपके दल में हैं ही नहीं। बचे दस, उनमें कई तो नव्वे के साथ हैं। आपकी रुचि लेकर वे नव्वे के नक्कू नहीं बनना चाहते, उनको आनंद मिलता है नाच-गाने में, सिनेमा थियेटर में। आपको थोड़ा-बहुत मिलता है पुस्तक-पत्रिका पढ़ने में। वे क्यों आपके शौक में शामिल हों?

मेरा पहला निवेदन है कि अपना दल बढ़ाइए। भारी काम है। निवेदन कर दूँ कि आपको नव्वे में से किसी को अपनी तरफ़ तोड़ने के लिए नहीं कहता। उनकी फ़िक्र भगवान करेगा, तभी उनका उद्धार होगा। आप केवल दस में उनको अपनी ओर ताड़िए जो पढ़-लिखकर भी पढ़ने का आनंद नहीं उठाते।

यह क्योंकर हो? आपकी पढ़ने के प्रति रुचि है; परंतु यह रुचि परिष्कृत नहीं हो सकती यदि आप पुस्तकों अथवा पत्र-पत्रिकाओं का अपना संग्रह न करें। इस संबंध में मैं अपने अनुभव की बात बताऊँ। पुस्तक से वही आनंद नहीं मिलता जो उसके विषय से संबंध रखता हो। हम अपने यौवन-काल में कोई पुस्तक अथवा पत्रिका पढ़ते हैं। जिस परिस्थिति में हम उसे पढ़ते हैं, उसका घनिष्ट संबंध पुस्तक के विषय से हो जाता है, अतीत हमेशा सुवर्ण-रंजित रहता है। हमारी अवस्था बढ़ती है, साथ ही अतीत की स्वर्ण-आभा भी बढ़ती है। इस आभा का आनंद हमें तभी मिलता है उस अतीत का हमारे हृदय में पुनर्जन्म उसी समय होता है, जब उससे संबंध रखनेवाली पुस्तक अथवा पत्रिका को हम दुबारा पढ़ते हैं। पुस्तक अपनी हो, उसके हाशियों पर आपके हाथ की लिखावट हो, जो उसमें आनंद है वह सार्वजनिक पुस्तकालय से उसी पुस्तक को लेकर पढ़ने में नहीं है।

निवेदन है कि यदि आपको पढ़ने का शौक है और यदि आपने अभी तक निजी पुस्तकालय नहीं बनाया है, जिसकी सब पुस्तकों पर आपके हस्ताक्षर हों, तो आज श्रीगणेश कीजिए।

मैं आपकी आर्थिक स्थिति का परिचय नहीं चाहता। आप धनी-मानी हों अथवा आपकी आय बहुत कम हो—कोई हर्ज नहीं—पुस्तकें, पत्र और पत्रिकायें भी आपकी जेब के अनुसार मिल जायँगी। अपनी अन्य जिम्मेदारियों का बहाना न कीजिए, लड़कों को पढ़ाना है, लड़कियों का ब्याह करना है; अथवा आप स्वयं विद्यार्थी हैं, पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त किसी और पुस्तक पर खर्च करने के लिए आपको आज्ञा नहीं मिल सकती। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि आप अपना निजी पुस्तकालय बनाना चाहते हैं तो उसके लिए खर्च निकल आवेगा। मैं नहीं कहता कि सौ-पचास पुस्तकों से शुरु कीजिए, शुरु करने के लिए पाँच काफी हैं। प्रति वर्ष जहाँ और आपके खर्च हैं, वहाँ कुछ रक़म पुस्तकों पर भी खर्च कीजिए, आपका पुस्तकालय बढ़ता जायेगा।

समाज में ठाट-बाट के बिना काम नहीं चलता। आपके पुस्तकालय के लिए मैं यह भी चाहूँगा कि उसमें अच्छी जिल्द की पुस्तकें हों, वे अल्मारी में सजी हों और आपका पुस्तकालय,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी जगह हो जहाँ आपके मित्र पहुँच सकें ।

बहुत से पढ़ने का शौक रखने का दम भरनेवाले बहुधा माँगकर ही अपना शौक पूरा करते हैं। आप अपने पुस्तकालय का यह कठोर नियम बना लीजिए कि आप किसी को पुस्तक उधार न देंगे, पुस्तकों को आपने उधार देना शुरू किया कि आपका पुस्तकालय बिगड़ा ।

आप यह शायद चाहेंगे कि जितना बढ़िया पुस्तकालय आपका हो, उतना आपके पड़ौसी का न हो। परन्तु विश्वास रखिए कि आपकी और आपके पुस्तकालय की कदर वही लोग करेंगे जो स्वयं पढ़ने के शौक़ीन हैं, अपना पुस्तकालय बनाये हुए हैं, इसलिए निवेदन है कि अपने मित्रों को भी प्रोत्साहित कीजिए। अपना पुस्तकालय दिखाइए। फिर जब किसी मित्र के घर जाइए तो उससे पुस्तकालय की चर्चा कीजिए और उसके हृदय में यह विश्वास पक्का होने दीजिए कि मोटर और मकान रखते हुए भी यदि उसका कोई निजी पुस्तकालय नहीं है तो वह सभ्य कहलाने योग्य नहीं है। विलायत में बहुतेरे रईस सिर्फ सजावट के लिए ही पुस्तकालय रखते हैं। पुस्तकालय उनके ड्राइंग-रूम-फर्निचर का एक अंग है।

आप कहेंगे कि पुस्तक-संग्रह करना तो हमने तय कर लिया, अब यह बताओ कि किन पुस्तकों का संग्रह करें। मेरा उत्तर है कि मैं आपकी रुचि का जानदार नहीं हूँ। साहित्य का आनन्द उसके वैचित्र्य में ही है और वह वैचित्र्य पाठक और लेखक की रुचि-वैचित्र्य का सम्मिलित परिणाम है। अपनी रुचि के अनुसार ही अपना पुस्तकालय बनाइए। हाँ, एक काम मैं कर सकता हूँ।

आप पचास ऐसी हिन्दी पुस्तकों के नाम लिखिए, जो आपकी राय में आपके पुस्तकालय में होनी चाहिए, जिन्हें पढ़ना आप पसन्द करेंगे। हिन्दी-साहित्य अभी अधूरा है। कुछ ऐसे रुचिकर विषय हो सकते हैं जिनपर आपको हिन्दी में कोई पुस्तक ही न मिलती हो, इसलिए एक सूची में तो मुझे अपनी पसन्द की ऐसी पुस्तकों के नाम दीजिए जो आपकी पढ़ी हुई हों, और दूसरी सूची में उन विषयों का उल्लेख कीजिए जिनपर आप पुस्तकें चाहते हों। पहली सूची में पचास से अधिक नाम न हों और दूसरी में ५ से अधिक विषय न हों। आपकी सूचियों के मिलने पर और उन्हीं के आधार पर मैं आपके विचारार्थ एक सूची आपके पुस्तकालय के लिए प्रकाशित करूँगा और दूसरी सूची लेखकों और प्रकाशकों के लिए, जिससे आपकी बतायी कमियों की पूर्ति हो सके।

यह पत्र पाठकों के लिए ही नहीं, पाठिकाओं के लिए भी है। हिन्दी-साहित्य को दोनों के सहयोग की आवश्यकता है। पाठिकायें ही गृह-स्वामिनी हैं, उन्हींसे साम्राज्य के भीतर मैं पुस्तकालय बनाने जा रहा हूँ। इसलिए पाठिकाओ, आपके सहयोग की विशेष आवश्यकता है। मैं जो सूची चाहता हूँ, उनके देने में यदि आप सहयोग दें, फिर यदि पुस्तकालय के बनाने में भी आप सहयोग दें सकें, तो हिन्दी-साहित्य और उससे पलनेवाले प्रकाशक और लेखक आपको निरन्तर आशीर्वाद देंगे कि आपके पतिदेव, पुत्र, और पौत्र संध्या के समय सिनेमा और क्लब न जाकर आपकी छत्र-छाया में ही आपके पुस्तकालय का कमखर्च बालानशीन आनन्द लूटें।

ग़लतफ़हमी का निराकरण

अगर हिन्दुस्तान कृषिप्रधान राष्ट्र न होता; यहाँ रुई पैदा न होती, कपड़े के लिए प्रति वर्ष ६५ करोड़ रुपये विदेश को न जाते होते, किसानों के वर्ष में कम-से-कम तीन चार महीने बेकारी और आलस्य में न बीतते होते…और शरीर-संरक्षण के लिए कपड़े की अनिवार्य आवश्यकता न होती, तो 'चरखे और खादी' पर महात्माजी ने इतना तूमार न बाँधा होता। देश की विशेष परिस्थिति का सब दृष्टियों से विचार करने के बाद ही महात्मा जी ने चरखे और खादी की हिमायत की है।

[सस्ता साहित्य मण्डल] बालूभाई मेहता ['खादी-मीमांसा'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन का उषाकाल

[प्रभुदास गांधी]

दूसरा प्रकरण

पूर्व-स्मरण

मौर्य्य साम्राज्य; गुप्त साम्राज्य और हर्ष-वर्धन के आंध्र राज्यों का जोर घटने पर सौराष्ट्र, आनर्त, लाट आदि पश्चिम भारत के प्रदेशों में दिग्विजयी राजाओं का प्रादुर्भाव हुआ। उस ज़माने से अंग्रेज़ों के आगमन तक खंभात की खाड़ी के सब बंदरगाह बहुत समृद्ध थे। यूरोप के यात्री इन नगरों को देख-देखकर चकाचौंध हो जाते थे। एक अंग्रेज़ मुसाफिर ने कुछ ऐसा लिखा है कि खंभात इतना समृद्ध और रौनक-वाला है कि लंदन पर फूले न समाने वाले हम लोगों का गर्व यहाँ चूर-चूर हो जाता है।

गुजरात-काठियावाड़ के इतिहास से जो अपरिचित हैं उन्हें इस सिलसिले में वल्लभीपुर राज्य, सिद्धराज के साम्राज्य और हेमाचार्य सूरि के सांस्कृतिक दिग्विजय के बारे में कुछ जानकारी पाने में दिलचस्पी आवेगी। गुजरात-काठियावाड़ की सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक रचना करने में शूरवीर क्षत्रियों का जितना हाथ रहा, उतना ही बनियों का भी रहा। प्राय: सभी बड़े-बड़े दिग्विजयी राजाओं के प्रधान अमात्य बनिये रहे। बनिये दो प्रकार के थे। एक जैनधर्मी दूसरे वैष्णव-पंथी। इन दोनों ने गुजरात की रग-रग में पीढ़ियों तक अहिंसा का प्रेम भर दिया। एक तरफ आबू गिरिनार की चोटियों पर ताजमहल से टक्कर लेनेवाले मीनाकारी मन्दिर खड़े किये और दूसरी ओर सामुद्रिक व्यापार बढ़ाकर तथा छोटे-छोटे व्यापारी और दस्तकारों तथा महाजनों के सुंगठित सामर्थ्य को राजकीय फौजी सामर्थ्य से अधिक ऊँचा ले जाकर गुजरात और सौराष्ट्र की जनता को पीढ़ी-दर-पीढ़ी समृद्ध और व्यवहारदक्ष बनाया। इन प्राचीन-काल के बनियों में पुण्यश्लोक हेमाचार्य सूरि का नाम भारत की बड़ी-बड़ी विभूतियों में गिना जायेगा। गुजरात का, गुजरात की भाषा का, गुजरात की सभ्यता का सर्जन करने में उनसे बढ़कर दूसरा कोई शायद ही हो। महात्मा गांधी से सर्वज्ञानसम्पन्न आचार्य हेमाचार्य-जी की तुलना की जा सकती है या हेमाचार्यजी से गांधीजी की। चार-छ: शतक के बाद का इतिहासकार ही इन दोनों में तुलना कर सकेगा। अभी हम महात्माजी के इतने निकट हैं कि हमें उनकी विशेषता अधिक प्रतीत होना स्वाभाविक है। यद्यपि ऐतिहासिक संशोधन मैं नहीं कर पाया हूँ, फिर भी जो कुछ हेमाचार्यजी के बारे में जब-जब मैं पढ़ पाया हूँ तब-तब मुझे वे बापू-जी की पूर्वावृत्ति से प्रतीत हुए हैं। और जब मुझे पता चला कि धंधूका के हेमाचार्यजी जन्मत: उसी मोढ़ बनिये की बिरादरी के थे, जिसमें गांधीजी का जन्म हुआ, तब गांधीजी में विकसित होनेवाले गुणों की जड़ वहीं से आरम्भ होने का विश्वास मेरे दिल में हठात् पैदा हो गया। गांधीजी के स्वभाव में जो बारीक-बारीक खूबियाँ हैं उनका छोटे-मोटे रूप से उन्हीं पूर्व पुरुष के जमाने से उत्तरोत्तर विकास होता चला।

गुजरात-काठियावाड़ में बनियों की कई उप-जातियाँ सदियों से रही हैं। इनमें से गांधी-खानदान मोढ़ वणिकों में से है। ईसवी सन् के ग्यारहवें शतक के बाद गुजरात अपनी उन्नति की चरम सीमा पर जा पहुँचा था। राजधानी की प्रसिद्ध नगरी पाटन के पास मोढेरा नाम का एक गाँव आज भी मौजूद है और वहाँ के 'मोढ़मंदिर' के स्थापत्य की आज भी काका साहब कालेलकर ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। हम लोगों के इतिहास का प्रारम्भ यहीं से समझना उचित होगा। मोढेरा गाँव, जो अहमदाबाद को ठीक उत्तर में तीन-चार मंजिल की दूरी पर आज भी स्थित है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनियों का मूल-स्थान है। असल में मथुरा, आगरा के वैश्य ही इस ओर आकर बसे होंगे—और अलग-अलग गाँव के नाम से उनकी अलग-अलग बिरादरी बन गयी होगी। जैसे झारोळा गाँव के 'झारोळे' अडालजे के 'अडालजे' और मोढेरा के 'मोढ'। यही मोढ अधिक दक्षिण में खिसककर कर्णावती (आधुनिक अहमदाबाद), धोळेरा, धन्धूका आदि व्यापारिक केन्द्रों में बसे, इसका पता हेमाचार्य के चरित से चलता है। जब उधर का व्यापार टूटा, तब ये लोग काठियावाड़ की भीतरी रियासतों में फैलते गये। इस तरह हमारे गांधी-कुटुम्ब का सिलसिला जूनागढ़[1] रियासत से प्राप्त होता है। चलती आयी प्रथा के मुताबिक ख़ानदान के कुछ लोग व्यापार का और कुछ राजकर्मचारी का पेशा करते रहे। राजकर्मचारी को नौकरी के सिलसिले में रियासत की तहसीलों में घूमना पड़ता है। इस तरह घूमते हुए लालजी गांधी या उनके किसी पूर्वज को जूनागढ़ के किसी पूर्वज को कुतियाणा कस्बे में नौकरी मिली। भादर का हरा-भरा किनारा, कुतियाणा का अच्छा व्यापार और मनोरम सृष्टि-सौन्दर्य के कारण नौकरी छूटने के बाद भी वे वहाँ बस गये।

कुटुम्ब का जो कुछ इतिहास मिलता है, इससे पता चलता है कि राजकीय खटपट सदा चलती रही। पिता की नौकरी यदि पुत्र को मिली है, तो, वह पुत्र के अपने बूते पर। विरासत में पिता पुत्र को नौकरी दिलवा सके हों, ऐसा वाक़या नहीं हुआ। जो बनिया तेजस्वी हो, विश्वासपात्र हो, चिट्ठी-पत्री लिख सके और खजाना सँभाल सके तथा अपने को शरीफ खानदान का तथा अपने पूर्वजों की वफ़ादारी का गहरा असर राजा पर डाल सके, उसको राजा अपनी नौकरी में रख लेता। राजा के ऊपर दूसरी ज्ञाति या कुटुंब की सिफारिश का ज्यादा असर पड़ने पर नौकरी करनेवाला कुटुंब स्तीफ़ा देकर अलग हो जाता और अपने वतन में शांति के साथ बैठे छोटे-मोटे व्यापार से अपनी गुजर करता।

इस परिपाटी से लालजी गांधी और उनके वंशजों ने जूनागढ़, पोरबन्दर और बाद में राजकोट, वाँकानेर इत्यादि रियासतों में, जहाँ उनका जोर बँधा वहाँ, नौकरियाँ की। कुतियाणा जूनागढ़ का कस्बा होने पर भी पोरबंदर के बहुत समीप में होने के कारण अंत में गांधीवंश की ज्यादातर नौकरियाँ पोरबन्दर में ही हुईं।

लालजी गांधी के पुत्र रामजी गांधी पोरबंदर राज्य में दफ्तरी थे। दफ्तरी का मतलब प्रधान मन्त्री का दायाँ हाथ।

रामजी गांधी के पुत्र रहीदास गाँधी ने भी पोरबंदर में नौकरी की थी, ऐसा सुना जाता है, परन्तु उन्हें कुतियाणा गाँव में जूनागढ़ के नवाब की ओर से इनामदारी की जमीन मिली है। आज भी वह जमीन सारे गांधी-कुटुम्ब की है। कुतियाणा पोरबंदर के मकान बिक गये, भाइयों में कुल मिल्कियत का बटवारा हो गया, परन्तु यह ज़मीन सारे कुटुम्ब की सदा बनी रही है। उसकी आमदनी कुल देवी के मन्दिर को जाती है। ज़मीन ज्यादा नहीं है, मुश्किल से एक एकड़ होगी।

रहीदास गांधी के दो पुत्र। हरजीवन गांधी और दमन गांधी। हरजीवन गांधी के सुपुत्र उत्तमचन्द गांधी, जिनसे हमारे ख़ानदान का असली इतिहास शुरु होता है। हरजीवन गांधी भी पोरबंदर में दफ्तरी थे और दमन गांधी भी उसी नौकरी में पहुँचे थे।

दमन गांधी के साथ रहकर उत्तमचन्द गांधी जब पोरबंदर में काम करते थे, तब राणासाहब की निगाह उनकी ओर आकर्षित हुई। उनकी प्रतिभा देखकर राणासाहब ने उन्हें अपना प्रधान मन्त्री नियुक्त किया। [क्रमशः

१. परम भक्त नरसिंह मेहता की जन्मभूमि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहिंसा

[विद्यानन्द]

प्रातःकाल का समय था। कुछ मित्रों के साथ सरयू-स्नान को चला। कुछ दूर राह सुगम थी, क्योंकि सड़क पक्की थी। परन्तु जब रेतीली ज़मीन आरम्भ हुई, चलना कठिन हो गया। आगे कुछ दलदल मिला। शरीर घुटने तक अन्दर। कठिनाई अधिक कठिन हो गयी। मित्रों के सहारे बाहर निकला। इसी तरह राह तय करता हुआ सरयू-तट पहुँचा और जल के अन्दर प्रवेश किया। इस यात्रा में ये विचार आये—

पक्की सड़क पर चलना अति सुगम होता है. उसको पैरों से कुचलना आसान है, क्योंकि वह कठोर है। हमारे कठोर आघातों का उत्तर वह कठोरता से ही देती है। बालू में कुछ नरमी आ जाती है, परन्तु वह नरमी बहुत गहराई तक नहीं रहती। जहाँ तक नरमी रहती है हमारा आक्रमण हमको ही कष्टप्रद होता है। दलदल की नरमी और अधिक गहराई तक है, अतः उसको अपने पदों से ठुकराना एक समस्या उपस्थित करना है। जल तो आदि से अन्त तक मुलायम, नरम है। किसी समय भी वह हमारे पद-प्रहार का उत्तर कठोरता से नहीं देता। उसपर आक्रमण करना मृत्यु का आवाहन है।

ठीक यही दशा मनुष्य के हृदय की है। हम जितना दूसरों को परेशान करने का यत्न करते हैं स्वयं परेशान होते हैं, यदि वह हमारी अनधिकार चेष्टा का उत्तर पूर्ण अहिंसा से देता है। हमारे हृदय का अहिंसात्मक भाव जितना गहरा होगा ठीक उसीके अनुसार दूसरे का प्रहार स्वयं लौटकर उसीपर प्रहार करेगा।

अहिंसा निर्बलता नहीं है। अहिंसा हिंसा के भावों का अभाव है। निर्बलता में हिंसा के भाव तो रहते हैं, परन्तु हिंसा के साधन नहीं रहते। इसके विपरीत अहिंसा में चाहे साधन हों या न हों, परन्तु भावों का पूर्ण अभाव रहता है। यह अहिंसा और निर्बलता के बीच की दीवाल है। आज असंख्य निर्बल मनुष्यों पर अत्याचार हो रहा है, परन्तु अत्याचारी मानो पक्की ज़मीन पर चल रहा है। कारण, अहिंसा का अभाव है। यदि एक बार भी वह अचानक गहरे पानी में पैर रख दे तो समाप्त। ठीक इसी प्रकार यदि एक पूर्ण अहिंसात्मक महात्मा पर कोई अत्याचार करे तो वह उसकी मृत्यु तक के लिए काफ़ी है।

अहिंसा में आत्मिक बल चाहिए। अहिंसा में शुद्ध हृदय चाहिए। अहिंसा में निर्मल मन चाहिए। यदि द्वेष का एक कण भी आ जाये तो अत्याचारी को पैर टिकाने का सहारा मिल जायेगा। अहिंसा आध्यात्मिक शास्त्र और शस्त्र दोनों हैं। यह व्यावहारिक ज्ञान है। यह पढ़ने और सुनने से नहीं आता, यह आक्रमणों के भय से नहीं आता। यह तो जलती हुई आग में कूदने से आता है। समस्याओं का ठण्डे दिमाग़ से सामना करने से यह बल प्राप्त होता है। अहिंसा के आचार्य के शब्दों में, जो उन्होंने श्री ताई ची ताऊ से Novel remedy की परिभाषा करते हुए कहा—'दो शब्दों में—वह है, बहादुर से बहादुर चीनी सैनिक की भाँति मरने को तैयार रहना, लेकिन विपक्षी को मारने की या उसे किंचिन्मात्र भी हानि, आक्रमण करके या अपना बचाव करके, पहुँचाने की कोशिश किये बिना।'

कुछ महीनों में अगर नाज़ियों की जीत न हुई तो शायद एक अर्से तक लड़ाई चलेगी, जिनमें दोनों पक्ष बुरी तरह थक जायेंगे और दोनों को भारी नुकसान बैठेगा। इंग्लैण्ड और यूरोप का आर्थिक ढाँचा बिखर जायगा और एक ही मुमकिन नतीजा उसका यह होगा कि राष्ट्रों का एक विराट संघ या विश्व-संघ कायम होगा—एक मुख्तलिफ आर्थिक प्रणाली की बुनियाद पर—और उत्पत्ति, निर्यात और वितरण पर संसार का कड़ा नियन्त्रण रहेगा। आजकी पूँजीवाद-प्रणाली मिट जायगी।···छोटे-छोटे राष्ट्र स्वतन्त्र इकाई बनकर नहीं सकेंगे।

सस्ता साहित्य मण्डल] —जवाहरलाल नेहरू— ['लड़खड़ाती दुनिया'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत प्रश्न

प्राकृतिक किसे कहें ?

'अश्लीलता का आरम्भस्थान' नामक लेख में श्री किशोरलालभाई ने साधारण कामाचार के लिए 'वीर्य-वमन' शब्द का प्रयोग किया है। इसपर मैंने उन्हें सुझाया कि वमन अस्वाभाविक है, साधारण कामाचार को अस्वाभाविक नहीं कह सकते। साधारण कामाचार को प्रकृति, संयम को संस्कृति और कामातिरेक को विकृति या वीर्य-वमन कहना ठीक होगा। इसपर उन्होंने नीचे लिखा खुलासा किया है जो बहुत समाधान-कारक है।

" 'स्वाभाविक' शब्द हम बहुत अस्पष्ट रूप में इस्तेमाल करते हैं। जो कुछ होता है, वह प्रकृति के नियमों से ही होता है, इस दृष्टि से हर घटना को हम प्राकृतिक या स्वाभाविक कह सकते हैं और इस तरह विकृति—विकार जैसी कोई बात ही नहीं रहती। पर अगर हम प्राकृतिक या स्वाभाविक शब्द का अर्थ-संकोच करें, तो कहेंगे कि नीरोग, तेजस्वी और दीर्घायु जीवन के अनुकूल शरीर-धर्म प्राकृतिक—स्वाभाविक हैं, तो उसके प्रतिकूल धर्मों को अस्वाभाविक और विकार कहना होगा। पित्त का स्राव ही लीजिए वह भी एक हद तक ज़रूरी है और उसी हद तक प्राकृतिक है। उस हद के लाँघने पर वह पित्त-ज्वर,-प्रकोप,-विकार आदि कहलायेगा और पित्त-प्रकोपक (पित्त-वमन की तलब पैदा करनेवाली) आदतों को बुरा मानना होगा। इसी न्याय से कामज्वर,-प्रकोप,-विकार का विचार करें। **'धर्मा विरुद्ध काम'** प्रकृति है। वह नीरोग, तेजस्वी और दीर्घायु जीवन के अनुकूल होना चाहिए उसमें 'तलब' पैदा करने का गुण नहीं होना चाहिए।"

अगर किसी पेड़ के पत्ते कुम्हलाने लगें, तो कहना होगा कि उसके जीवन में कुछ अस्वाभाविकता या विकार ज़रूर आ गया है। इसी तरह सजीव व लहलहाते हुए पत्ते और खिले हुए प्रसन्न फूलों को देखकर कहना होगा कि इनका विकास स्वाभाविक है। नियत काल से पहले ही जो पेड़-पौधे सूख जाते हैं, उनका जीवन भी अस्वाभाविक ही कहा जायगा। इन मिसालों से यही निचोड़ निकलता है कि वही वस्तु स्वाभाविक या प्राकृतिक मानी जानी चाहिए, जो नीरोग हो, तेजस्वी हो और परिपूर्ण अथवा दीर्घायु-प्राप्त हो। जहाँ इसके उलटे चिन्ह दिखायी दें, वहाँ विकार या अस्वाभाविक अवस्था ही माननी होगी।

ह० उ०

रेडियो की बोली कैसी हो ?

आज हमें यही सवाल हल करना है कि यह भाषा कैसी होनी चाहिए ? यू० पी०, सी० पी०, बिहार की आठ ख़ास बोलियों को **हिन्दी** नाम से पुकारा जाता है। इनमें से खड़ी बोली, बाँगरू, ब्रज, कनौजी तथा बुंदेली, इन पाँच को भाषा-सर्वे में **पश्चिमी हिन्दी** नाम दिया गया है। बाक़ी तीन अवधी, बघेली तथा छत्तीसगढ़ी को **पूर्वी हिन्दी** कहते हैं। इनमें से खड़ी बोली आजकल की हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी की जड़ है। खड़ी बोली अपने शुद्ध रूप में केवल एक बोली है, पर जब वह साहित्यिक रूप लेती है, तब कभी हिन्दी कही जाती है, और कभी उर्दू। जिस भाषा में संस्कृत के तत्सम और अर्द्ध-तत्सम शब्द अधिक आते हैं, वह हिन्दी कही जाती है, और जिसमें अरबी-फारसी के ज्यादा लफ्ज़ इस्तेमाल होते हैं, वह उर्दू। जब खड़ी बोली फ़ारसी और अरबी के तत्सम और अर्द्ध-तत्सम शब्दों को इतना अपना लेती है कि कभी-कभी उसकी वाक्य रचना पर भी कुछ विदेशी रंग चढ़ जाता है, तो उसे उर्दू कहते हैं। जब वह संस्कृत के तत्सम और अर्द्ध-तत्सम शब्दों को अपनाती है, और अपना ही व्याकरण रखती है, तो वह हिन्दी कहलाती है। इस प्रकार भाषा-विज्ञान की दृष्टि से हिन्दी और उर्दू खड़ी बोली के ही दो साहित्यिक रूप-मात्र हैं। इन दोनों ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का लिटरेचर धड़ल्ले से बढ़ रहा है, और बढ़ना भी चाहिए, पर बोलचाल के लिए ज्यादा-से-ज्यादा लोगों तक अपनी बात पहुँचाने के लिए—एक बोली की पहेलि अब भी बनी हुई है। इस कमी को हम हिन्दुस्तानी से पूरा करना चाहते हैं। यह हिन्दुस्तानी जैसा ऊपर कहा जा चुका है, खड़ी बोली का ही एक रूप है, जिसे न तो शुद्ध साहित्यिक भाषा ही कह सकते हैं, और न ठेठ बोलचाल की।

आखिर **हिन्दुस्तानी** है क्या ? हमारी राय में संस्कृत, प्राकृत, ब्रज-भाषा, खड़ी बोली, फ़ारसी, अरबी, अँग्रेज़ी, फ्रांसीसी, पुर्तगाली वग़ैरा के मेल से जो एक नयी जबान आप-से-आप बन गयी, वही हिन्दुस्तानी कहला रही है। जिस तरह उर्दू के रूप में खड़ी बोली ने मुसलमानों की माँग पूरी की है, उसी तरह अँग्रेज़ी हुकूमत और तालीम की ज़रूरत पूरी करने लिए हिन्दुस्तानी कोशिश कर रही है। असल में इसे हिन्दुस्तानी नाम देनेवाले भी अँग्रेज़ अफ़सर हैं। वे जिस बोली में यहाँ के लोगों से बातचीत करते थे, उसे हिन्दुस्तानी कहने लगे। और अब तो इसे इंगलिस्तानी बनाया जा रहा है, क्योंकि इसमें अंग्रेज़ी के शब्द ज्यादा इस्तेमाल होने लगे हैं।

हाँ, तो हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी के झगड़े में तीन बातें सामने आती हैं—(१) लिपि, (२) व्याकरण और (३) शब्द।

लिपि का सवाल रेडियो ने अपने आप हल कर लिया है, क्योंकि जहाँ हवा में बातें की जाती हैं, वहाँ लिखने की बात ही नहीं रहती। व्याकरण की दृष्टि से खड़ी बोली के व्याकरण को ही हिन्दुस्तानी को अपनाना चाहिए। क्योंकि एक तो वह खड़ी बोली ही से निकली है, दूसरे, खड़ी बोली का व्याकरण भारतवर्ष की और प्रधान भाषाओं—ब्रज-भाषा, बँगला, गुजराती, मराठी आदि—के व्याकरण से मिलता-जुलता है, जिससे इन भाषाओं के बोलनेवालों को भी उसे अपना लेने में आसानी होगी। अगर हिन्दुस्तानी को हमें राष्ट्र-भाषा का रूप देना है, तो राष्ट्रीय दृष्टि से यह ज़रूरी है कि उसका व्याकरण ऐसा सहज रखा जाय कि हमारे बंगाली, गुजराती, मराठी मदरासी, पंजाबी, नेपाली, बिहारी, मध्यप्रान्तीय, राजस्थानी भाई भी उसे आसानी से सीख सकें। अब रही शब्दों की बात। बहुत-सी भाषाओं के शब्द उसमें आ ही चुके हैं। हमारी राय में बँगला गुजराती, मराठी आदि के भी आने चाहिए, तभी हम इसे राष्ट्र-भाषा बना सकेंगे—ऐसी बोली बना सकेंगे, जो भारतवर्षभर में बोली और समझी जा सके।

बेसिक इँगलिश की तरह बेसिक हिन्दुस्तानी बनायी जाय। घुमा-फिराकर न कहकर सहज शब्दों में, सीधे तौर से, बातें कही जायँ। ऐसी भाषा बने, जो कम-से-कम समय में सीखी जा सके, जिससे सारे हिंदुस्तान का काम चल सके। पर बेसिक इँगलिश की तरह बेसिक हिंदुस्तानी ८५० शब्दों में नहीं बनायी जा सकती। बेसिक हिंदी की सबसे बड़ी कठिनाई प्रीपोज़ीशनों का अभाव है। एक ही क्रिया के साथ कई प्रीपोज़ीशन लगाकर, Get up, get in, get away, get out आदि की तरह, तरह-तरह के भावों के शब्द नहीं बनाये जा सकते। हाँ, संस्कृत और फ़ारसी में ऐसा हो सकता है। उनसे मदद ली जाय। अभी हमें कम-से-कम ४००० शब्दों की एक डिक्सनरी बना लेनी चाहिए। जनता में उसका प्रचार कर दिया जाय, और उसमें दिये हुए शब्दों का ही प्रयोग हमें अपनी रेडियो की टॉकों, ख़बरों और सूचनाओं में करना चाहिए। यह सूची सारे हिंदुस्तान को नज़र में रखकर तैयार की जाय, हिंदी-उर्दू का झगड़ा मिटाने के लिए नहीं। अभी हमें प्रेसिडेंट, सभापति और सदर, तीनों लफ्ज़ इस्तेमाल करने पड़ेंगे। बाद को जनता अपने आप इनमें से एक शब्द चुन लेगी, और उसी का प्रयोग होने लगेगा। बेसिक अँगरेज़ी की तरह अभी हम कई पर्यायवाची शब्दों की जगह एक ही शब्द नहीं रख सकते। पानी, जल और आब तीनों बेसिक हिंदुस्तानी के लिए ठीक हैं;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर महाराष्ट्र और बंगाल में 'जल' का ही प्रयोग होता है, इसलिए अभी हम चाहे आब, पानी और जल, तीनों का प्रयोग करें, पर आगे चलकर केवल जल ही रह जायगा। 'तालीम' शब्द का प्रयोग हिंदुस्तानी और मराठी में होता है, पर मराठी में 'तालीमबाज़' खिलाड़ी को करते हैं, और 'तालीमबाज़ी' का मतलब जमनास्टिक है। इसलिए यह शब्द या तो उस डिक्शनरी से हटा देना पड़ेगा, या मराठी में भी 'तालीम' को सही मतलब में चलाना होगा। 'तारीफ़' शब्द बँगला में नहीं बोला जाता। इसे न बोलना ही ठीक होगा, अगर बंगालियों को भी हमें अपनी बात बतानी है।

हमें संस्कृत, फ़ारसी और अरबी के उन्हीं आवश्यक शब्दों का प्रयोग करना चाहिए, जो भारत की सभी भाषाओं में प्रचलित हैं—खासकर बँगला, मराठी और गुजराती में। जो शब्द सब प्रांतों में समान रूप में न चल रहे हों, उन्हें बचाना चाहिए। बोलचाल के शब्द अंग्रेज़ी, संस्कृत, फ़ारसी, बँगला, गुजराती, मराठी, सभी से ले लेने चाहिएँ। अंतर्राष्ट्रीय प्रचलित शब्द जैसे रेडियो, कोरस, टॉकी, क्लब बिना संकोच इस्तेमाल होने चाहिए। मोटर, रेल, स्टेशन, सिगरेट वग़ैरा लफ्ज़ चल भी गये हैं। इन्हें इस्तेमाल करते रहना चाहिए। दियासलाई की जगह दीपशलाका लिखना-बोलना अब ठीक नहीं।

हमारी राय में जो भाषा पंजाबी, हिंदुस्तानी बंगाली, गुजराती, मराठी, मदरासी, राजस्थानी, नेपाली, मध्य-देशी आदि भाई अपने आप गढ़ रहे और गढ़ते जा रहे हैं, और जिसे अब एक प्रांत (संयुक्त प्रांत) के नाम से हिंदुस्तानी कहा जा रहा है, उसे भारत-देश के नाम पर 'भारती' कहना चाहिए। इस शब्द में प्रांतीयता की झलक नहीं; हाँ, राष्ट्रीयता कूट-कूटकर भरी है। हिंदी-उर्दू के झगड़े का भी इससे अंत हो जाता है, और ऐसी भाषा सामने आती है, जिसे सभी प्रांतों के भाई-बहन आपस में व्यवहार करते हैं, कर सकते हैं, या आगे करेंगे। भारती विद्या की देवी (Goddess of learning) सरस्वती का भी नाम है। हिंदू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, सिक्ख, जैन, बौद्ध, सभी भारत-निवासियों को विद्या की इसी देवी भारती का शृंगार, सेवा और पूजा करनी चाहिए।

'सुधा']

दुलारेलाल भार्गव
सावित्रीदेवी भार्गव

अनुवाद और अनुवादक

सबसे अच्छी बात तो यही है कि भाषा में मौलिक लेखक और मौलिक विचारक पैदा हों, जो अपने ज्ञान का उपयोग अपनी भाषा का भंडार भरने में करें, परन्तु यदि कोई ग्रन्थ दूसरी भाषा का रत्न होकर उसकी समृद्धि, शोभा व कीर्ति बढ़ा रहा हो, तो दूसरी भाषाओं को उसके ज्ञान का लाभ उठाना भी कम श्रेयस्कर नहीं है। इस दृष्टि से एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करना आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी है। इससे भाषाओं का पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित होगा और उन भाषाओं की समृद्धि भी होगी।

हिन्दी में गुजराती, मराठी, बँगला, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के ग्रंथों का अनुवाद करने की ओर लेखकों की विशेष रुचि बढ़ने लगी है। इससे हमारे हिन्दी-साहित्य-सेवियों की सजगता ही प्रकट होती है, जो अच्छा लक्षण है, परन्तु अगर अनुवाद और उसकी महत्त्वपूर्ण विशेषताओं पर हमने ध्यान न दिया, तो उससे लाभ होने के बदले हानि होने की अधिक सम्भावना है। मौलिक लेख लिखने की अपेक्षा एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करना कहीं कठिन काम है। मौलिक लेख लिखने में तो लेखक की क़लम उसकी अपनी विचार-धारा में बँधे होते हुए भी स्वतन्त्र है, लेकिन अनुवाद के विषय में तो अनुवादक की स्थिति ही दूसरी है। वहाँ तो अनुवादक की लेखनी लेखक के मूल भावों की चहारदीवारी में बन्द है; अधिक उपयुक्त शब्दों में कहें तो जंजीरों से जकड़ी हुई होती है—न तो मूल लेखक के भावों में वह परिवर्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सकती है न परिवर्धन। जहाँ एक इंच इधर या उधर हुए कि अनुवाद, अनुवाद नहीं रह जाता। अनुवादक का रास्ता तलवार की धार की तरह नुकीला, सँकड़ा और खतरनाक है। उसपर सफलतापूर्वक चलने में कुछ विशेष क्षमतायें होनी चाहिएँ।

सबसे पहली बात तो यह है कि अनुवादक को अनुवाद करने के पहले योग्यता की तराजू पर पूरी तरह तुल लेना चाहिए। यदि वह बिना अपनी योग्यता का विचार किये अनुवादक कहलाने के लोभ-मात्र से एकदम लेखनी उठा लेता है, तो वह स्वार्थ उसके परिश्रम को तो व्यर्थ करता ही है, साथ ही साथ मूल-लेखक के प्रति अन्याय भी, क्योंकि बुरे अनुवाद से लेखक की सच्ची प्रतिभा का पाठकों को अनुमान नहीं हो पाता। अतः अनुवादक होने के लिए विद्वान् और भाषा-मर्मज्ञ होना जितना जरूरी है, उतना ही उसके अध्ययन का गहरा और भाषा-शैली का उत्कृष्ट होना भी। शब्दों का अर्थ इधर-उधर से उलट-फेर कर देने और भाषा में जहाँ-तहाँ परिवर्तन कर देने से ही कोई अनुवाद अनुवाद नहीं बन जाता, क्योंकि मूल-शब्दों का अर्थ तथा भाषान्तर करना अन्य भाषा के अल्पज्ञ के लिए गौण बात है। श्रेष्ठ अनुवाद करना प्रत्येक व्यक्ति की शक्ति में नहीं है और न 'हर ऐरा गैरा नत्थूखैरा' अनुवादक बन सकता है।

यद्यपि अनुवादक और समालोचक दो भिन्न पथों के पथिक हैं, तो भी उनमें किन्हीं बातों की समानता पायी जाती है। समालोचक को किसी लेखक की समालोचना में एक-एक शब्द मनन और विचार के उपरान्त रखना पड़ता है। उसे भय रहता है कि कहीं लेखक के प्रति अधिक अन्यायी या अधिक न्यायी न बन जाऊँ। ऐसी ही बात अनुवादक पर घटित होती है। अनुवादक को भी भय रहता है कि कहीं ऐसा न हो जाय कि मूल-लेखक का कोई भाव ठीक-ठीक अंकित न हो सके या बिगड़ जाये। इसीलिए अनुवादक को चाहिए कि वह अपना अनुवाद उसी समय जनता के सामने जाने दे, जब उसको वह निश्चय हो जाये कि अब मेरी भाषा में मूल-लेखक से सामंजस्य, उचित प्रवाह, गठन की सदृशता शैली में सजीवता तथा शब्दों में सन्तुलन हो गया है। हो सके तो किसी विख्यात विद्वान तथा उत्कृष्ट अनुवादक से संशोधन भी कराया जा सकता है। जब इतनी बातें हों तभी वह अनुवाद त्रुटिरहित बन सकता है। ऐसी दशा में अनुवाद में भी मौलिक का-सा आनन्द आने लगता है। यही अच्छे अनुवाद की पहचान है।

अनुवादक को अनुवाद करते समय सबसे पहले मूल-लेखक का हार्द समझना चाहिए। हार्द समझने के लिए उस भाषा में पारंगत होना लाजिमी है। इसके बाद अनुवादक जिस भाषा में उसे व्यक्त करना चाहता है उस भाषा पर भी उसका असाधारण अधिकार होना चाहिए। यदि अनवादक मूल-लेखक के भावों को समझने में असमर्थ है तो वह अनुवाद ही क्या करेगा? और यदि उसको अपनी भाषा पर अधिकार नहीं तो मूल-लेखक के भाव समझकर भी उन्हें सम्यक् रूप से व्यक्त नहीं कर सकेगा। जिस अनुवादक में ये दोनों क्षमतायें नहीं हैं, उसके अनुवाद में कई भूलें रह जाना स्वाभाविक है। ऐसी दशा में कहीं उसकी शैली में सजीवता का अभाव होगा, कहीं वह दुरुह या शिथिल हो जायगी और कई उसमें अटपटापन आजायेगा।

मुहावरों के सम्बध में प्रोफेसर आज़ाद का तो कहना है कि एक ज़बान के मुहावरे का दूसरी ज़ुबान में तरजुमा करना जायज नहीं, क्योंकि एक भाषा के मुहावरे दूसरी भाषा में शब्दशः अनुवाद करने में बड़े कुरूप लगते हैं। यह कठिनाई तब अधिक हो जाती है, जब मूल ग्रंथ उसी देश की भाषा में न होकर विदेशी भाषा में होता है। अँग्रेज़ी भाषा से किसी भारतीय भाषा में अनुवाद करते वक्त कई अँग्रेज़ी मुहावरे ऐसे आते हैं जिनका शब्दशः अनुवाद किया जाय तो कोई अर्थ नहीं होगा, वहाँ भावानुवाद होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। उदाहरण के लिए अँग्रेज़ी का 'बम्ब शैल' हिन्दी में 'वज्रपात' से ही अच्छी तरह व्यक्त हो सकता है। 'टु टेक टु वन्स हील्स' का अर्थ सिर पर पैर रखकर भागने से बढ़कर अच्छा और नहीं हो सकता, 'अपनी एड़ियाँ ले लेना' तो मक्खी की जगह मक्खी मारना है। इसी प्रकार 'हवाई महल' 'एयरी कैंसिल' का अनुवाद होकर भी ठीक नहीं है। हमारे यहाँ इसे 'बालू की दीवार' या 'काल्पनिक चित्र' या 'मन के लड्डू' कहना ज्यादा ठीक है। इसी प्रकार मराठी के 'चेष्टा' 'शिक्षा' 'हरकत' और गुजराती के 'उपहार', 'राजीनामा' आदि शब्द हिन्दी में दूसरा ही अर्थ रखते हैं, यह अनुवादक अच्छी तरह जानता हो, ऐसी आशा रखनी चाहिए। अतः अनुवादक को दोनों भाषाओं के मुहावरों का ज्ञाता होना भी ज़रूरी है।

एक बात और ध्यान में रखनी चाहिए कि जिस ग्रंथ का अनुवाद किया जाये, वह ग्रंथ उसी भाषा का मूल ग्रंथ होना चाहिए, दूसरी भाषा से अनूदित नहीं।

अब कुछ बातें अनूदेय वस्तु के विषय में भी

(१) जिस प्रकार के साहित्य का हमारी भाषा में अभाव हो, उसको अनुवाद करने में पहला स्थान देना चाहिए।

(२) जो ग्रंथ किसी भाषा के साहित्य में सर्वोत्तम हो उसे पहले, और इसी क्रम से अन्यान्य ग्रंथों को लेना चाहिए।

(३) ऐसे ग्रंथों का अनुवाद न करना चाहिए, जो जनता में प्रचार होने से उस देश की संस्कृति, आचार-व्यवहार, और रीति-नीति पर कुप्रभाव डालें। जिस अनूदेय वस्तु के प्रतिपादित सिद्धान्त नीति-विरुद्ध हों, देश-भाषा में उन्हें अनुवाद करके कुप्रचार करना वांछनीय नहीं।

(४) यदि अनुवाद किये जानेवाले ग्रंथ के नामों, स्थानों आदि को अनुवादक अपनी भाषा के अनुकूल बना ले, तो वह मौलिक का-सा रूप धारण कर लेता है।

ऐसे अनुवादों से ही किसी साहित्य को वास्तविक लाभ पहुँच सकता है। अनुवादक का ध्येय साहित्य की श्रीवृद्धि करना होना चाहिए, कीर्ति-सम्पादन करना नहीं।

प्रवीणचन्द्र पाण्डेय

बाल-साहित्य का अभाव

'जीवन-साहित्य' के पिछले किन्हीं दो अंकों में 'बाल-साहित्य' सम्बन्धी दो लेख क्रमशः भाई रामकृष्ण खद्दरजी और सुमनेश-सुधीरजी द्वारा लिखे गये, पढ़े थे। उक्त दोनों लेखों में 'बाल-साहित्य'-सम्बन्धी बहुत-कुछ बातें कह दी गयी हैं फिर भी 'हिन्दी में बाल-साहित्य-निर्माण क्यों नहीं हो रहा है?' प्रश्न के जवाब में मुझे कहना है।

बाल-साहित्य-विकास में अवरोधक सिद्ध होनेवाला सबसे बड़ा कारण है शिक्षणालयों में दिया जानेवाला अवैज्ञानिक शिक्षण जिसका उद्देश्य हुआ करता है—**'बच्चे का मस्तिष्क यंत्र-वत् तैयार करके परीक्षा में उत्तीर्ण कराना'**। इस प्रकार के शिक्षण द्वारा बच्चे में साहित्यिक रुचि पैदा नहीं की जा सकती। परीक्षा पास करानेवाले डैस्क-स्कूल में तो थोड़ी-सी शिक्षण-विभाग द्वारा निर्धारित पाठ्य पुस्तकों के शब्दार्थ, भावार्थ रटा देना मात्र ही शिक्षक अपने कर्त्तव्य की सीमा मान बैठा है।

इस प्रकार की शाला में जो शिक्षक वैज्ञानिक शिक्षण द्वारा बच्चे में साहित्यिक रुचि पैदा करना भी चाहते हैं उनके सामने वही 'परीक्षा' पहाड़ बनकर सामने आ खड़ी होती है। परीक्षकों की आँखों पर चढ़ा ऐनक रटे हुए शब्दार्थ और भावार्थ चाहता है। इसके अभाव में उनकी कलम अंक देते हुए ठिठकती है। इसका कुपरिणाम यह होता है कि रटनेवाले लड़के से अपेक्षाकृत अधिक साहित्यिक रुचि एवं ज्ञान रखनेवाला विद्यार्थी कम अंक ही प्राप्त कर सकेगा। दुर्भाग्य से समाज में शिक्षक की क़ीमत वास्तविक ठोस कार्य के स्थान पर 'परीक्षा के परिणाम' पर आँकी जाती है। नतीजा यह होता है कि वह वैज्ञानिक शिक्षण देनेवाला शिक्षक भी मजबूर होकर 'सही' मार्ग छोड़ कर ग़लत रास्ते पर चल खड़ा होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस अवैज्ञानिक शिक्षण और परीक्षाके 'प्रकार' का परिणाम यह हो रहा है कि पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त शिक्षणालयों में 'बाल-साहित्य' की आवश्यकता ही महसूस नहीं की जाती। आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है। जब आवश्यकता ही न हो तब आविष्कार कैसा? बाल-साहित्य का जन्म ही कैसे हो जब शिक्षक पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य बाहरी पुस्तकें बच्चों के लिए 'अनिष्ट कारी' स्वीकारता हो? जब बाज़ार में माँग ही नहीं, तो लेखकों और प्रकाशकों ने भी इधर से अपनी आँखें फेर ली। आखिर आर्थिक सवाल भी यूँ ही दर-गुज़र नहीं किया जा सकता।

जब रूस में साइबेरिया के अन्तर्गत इर्कुटस्क नामक केवल एक नगर से वहाँ के बाल-साहित्य-लेखक 'मार्शे' की एक पद्य-पुस्तक की पाँच लाख प्रतियों की माँग आ सकती है, जब वहाँ के बाल-साहित्य-लेखकों—'चूकोवस्की' 'इलीन' 'मार्शे' की पुस्तकें प्रकाशित होते ही विक्रेताओं के हाथों से छीन ली जाती हैं, तब हमारे देश में ग़रीब लेखकों द्वारा लिखा गया बाल-साहित्य ज्यों का त्यों रखा रहता है। कोई प्रकाशक उसे एक बार पढ़ना भी नहीं चाहता। प्रकाशक को पैसा चाहिए। लेखक के पास प्रकाशन के लिए पैसा नहीं। बाल-जगत द्वारा उसकी माँग नहीं, फिर बाल-साहित्य-निर्माण हो भी क्यों? मैं समझता हूँ जबतक इस अवैज्ञानिक शिक्षण के तरीके में परिवर्तन नहीं होता, बाल-साहित्य का विकास होना कठिन है।

उपरोक्त कारण के अतिरिक्त अन्य कारण भी हो सकते हैं और हैं। दूसरा कारण जो मैं समझ रहा हूँ वह है हिन्दी के महारथियों की 'बाल-साहित्य' के प्रति उपेक्षा? रूस में मैक्सिम गोर्की दादा चिट्ठी-पत्री द्वारा तथा गाँव-गाँव जाकर बच्चों से पूछते थे, 'बच्चो! तुम्हें कैसी कहानियाँ—कवितायें पसन्द हैं?' तब जाकर कहीं बच्चों की रुचि एव मनोवृत्ति को ध्यान में रखकर वे लिखा करते थे। छोटे-छोटे लेखकों से लिखाया करते थे। किन्तु अपने देश के साहित्यिक महारथियों ने गोर्की दादा की भाँति इस बाल-साहित्य की तरफ कितना ध्यान दिया है? यह हम सब जानते हैं।

मैं 'जीवन-साहित्य' के उन पाठकों से जो बाल-साहित्य-निर्माण में दिलचस्पी रखते हैं, प्रार्थना एवं अनुरोध करना चाहता हूँ कि वे 'बाल-कहानी' कैसी हो इसपर कुछ प्रकाश डालें। अच्छा हो, लिखने से पूर्व लेखक महोदय अपने चारों तरफ रहनेवाले बच्चों से प्रश्नों, बातचीत द्वारा उनकी मनोवृत्ति को समझ लिया करें।

दयाशंकर मिश्र

समालोचनार्थ प्राप्त

अभिनव-भारती-ग्रंथमाला, कलकत्ता

भारतवर्ष में जाति-भेद : लेखक—आचार्य क्षितिमोहन सेन, एम० ए०; शान्तिनिकेतन, पृष्ठ संख्या ३६२; मूल्य २)

मन के भेद : लेखक—राजाराम शास्त्री, काशी विद्यापीठ, काशी; पृ० सं० १३७, मू० १।)

आधुनिक हिन्दी-साहित्य : संपादक—श्री सच्चिदानन्द ही० वात्स्यायन; पृ० १७८ मूल्य १।।)

पूर्णिमा (पाठसंग्रह) : संपादक—श्री पद्मसिंह शर्मा 'साहित्य-रत्न'; प्रकाशक—भानुकुमार जैन मन्त्री, हिन्दी-विद्यापीठ, बम्बई; पृ०सं० ३६; मूल्य ।)

सहोदरा (कवितायें) : लेखिका—श्री कृष्णा कुमारी, रत्नकुमारी माथुर; प्रकाशक—पूर्णिमा माथुर; पृ० संख्या ८०; मूल्य ।=)

निर्झर (कवितायें) : लेखक—श्री रामकृष्ण 'भारती' शास्त्री; प्रकाशक—भारतीय-प्रकाशन-मन्दिर, लाहौर; पृ० सं० १२८; मूल्य १)

प्राचीन भारत (मासिक पत्र) : संपादक—महामहोपाध्याय सकलनारायण शर्मा आदि; दि इंडियन रिसर्च इन्स्टीटयूट, मानिक तल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता; वा० मू० २); एक प्रति ।=)

तूफ़ान (मासिक पत्र) : संपादक—विश्वनाथ पाण्डेय; वार्षिक मूल्य २); एक प्रति ।); 'तूफ़ान' कार्यालय, ११८ कीट गंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कसौटी पर

हिन्दुस्तान बनाम **पाकिस्तान : लेखक—श्री रुद्रनारायण अग्रवाल; प्रकाशक—लाजपतराय पब्लिशिंग कम्पनी, कलकत्ता; पृ० १५७; मूल्य ।॥)**

हिन्दी में 'पाकिस्तान' पर यह पहली ही पुस्तक देखने में आयी । 'पाकिस्तान' की कल्पना व योजना ने हिन्दुस्तान की राजनीति में इतना महत्व पा लिया है कि उसपर एक किताब लिखी जाने की ज़रूरत थी, जिसमें 'पाकिस्तान' के सब पहलुओं पर अच्छा रोशनी डाली जाय । इसपर अंग्रेज़ी में डा० राजेन्द्रप्रसाद की पुस्तक पढ़ने लायक है । लेकिन उसके बाद तो 'पाकिस्तान' के नये-नये अर्थ होने लगे हैं और विरोधी पहलू भी और सामने आ रहे हैं । श्री रुद्रनारायणजी की इस पुस्तक में मसाला तो अच्छा है, लेकिन विषय का विवेचन सुव्यवस्थित व शास्त्रीय नहीं जान पड़ा । वह 'शिक्षादायक' की जगह 'प्रचारिका' ज्यादह हो गयी है । यदि दूसरे संस्करण में अग्रवालजी इस त्रुटि को दूर कर सकें तो अच्छा हो ।

तरुण जैन का **अहिंसा-अंक : संपादक—सर्वश्री विजयसिंह नाहर, सिद्धराज ढड्ढा, भँवरमल सिंघी; वार्षिक मूल्य ३॥) ; तरुण जैन-कार्यालय, ४८, इंडियन मिरर स्ट्रीट कलकत्ता ।**

इसमें जैनधर्मियों के अहिंसा-सम्बन्धी विचारों व व्याख्याओं का अच्छा संग्रह हुआ है । समाज व राष्ट्र के विग्रहों का व्यावहारिक अहिंसात्मक हल ढूंढने की गरज से सम्पादकों ने कई उपयोगी प्रश्न जैन-धर्म के आचार्यो व नेताओं से पूछे, उनके जवाबों का यह संकलन है । अन्त में महात्माजी, काका साहब, किशोरलाल भाई आदि अहिंसा के अ-जैन आचार्यों व विचारकों के विचारों का भी अच्छी तरह समावेश किया गया है । सम्पादकों को जैन-धर्मियों से निराशा हुई है । उन्हें वांछित पथदर्शन उनसे नहीं मिला । इसका कारण तो यह मालूम होता है कि अहिंसा बुद्धि से समझने की अपेक्षा जीवन में लाने की वस्तु अधिक है । व्यावहारिक व दैनिक कठिनाइयों व उलझनों को जब हम अहिंसात्मक भावना व स्पिरिट से हल करने का प्रयत्न करेंगे, तभी हमें उसमें से नया अनुभव व नया प्रकाश मिल सकता है । व्याख्याओं व मीमांसाओं से हमारा काम ज्यादा नहीं चल सकता । व्यक्ति के जीवन में अहिंसा लाने का उपाय तो यह है कि हम दूसरों को **अभय** व **क्षमा** का आश्वासन दें । **अभय** दोनों अर्थ में—हम उन्हें नुकसान न पहुँचावें, व दूसरे उनके नुकसान पहुँचाने से हम दबें व डरें नहीं । **क्षमा**—उनके नुकसान पहुँचाने पर उनसे बदला न लें ।

सामाजिक जीवन में अहिंसा लाने के लिए दण्ड प्रधान व शोषण-मूलक पद्धतियों व प्रथाओं को मिटाने का उद्योग करना चाहिए । शिक्षा व शासन-पद्धतियों व अर्थ-व्यवस्थाओं के दृष्टिबिन्दु में आमूल परिवर्तन करने की ज़रूरत है । अब जहाँ दूसरों को नुकसान पहुँचाकर भी अपना स्वार्थ साधना जायज समझा जाता है, तहाँ दूसरों के स्वार्थों की रक्षा करते हुए अपना स्वार्थ साधने की नीति व प्रवृत्ति चलानी होगी ।

अहिंसा अपने आप में एक बड़ा गुण है—जिसका बड़ा शुद्धिकारक असर अपने व दूसरे दोनों पर पड़ता है । पर यदि 'अहिंसा' को बल के रूप में इस्तेमाल करना है, तो इसके साथ असहयोग को जोड़ना ही पड़ेगा । यदि हमें यह मंजूर है कि समाज व दुनिया से शस्त्रास्त्र उठ जायँ, तो उनके प्रभाव व उपयोग का स्थान अहिंसात्मक संगठित असहयोग को दिये बग़ैर चारा नहीं है । यदि 'तरुण जैन' के उत्साही व अहिंसा-भक्त संपादक अपने समाज में असहयोग का संगठन करने में शक्ति लगावेंगे, तो वे जैन, अजैन सब शंकाशीलों को अहिंसा की अमली महत्ता बताने में सफल हो सकेंगे ।

एक और बात पर भी ध्यान जाना ज़रूरी है । 'अहिंसा' का जो शाब्दिक या रूढ़ अर्थ है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह गांधीजी के आशय को ठीक-ठीक व्यक्त नहीं करता। उनका अभिप्राय 'आत्मौपम्य' या 'समभाव' या अंगरेजी के charity शब्द से अधिक मिलता-जुलता है। समाज में सब दूसरों के सुख व हित को अपने समान ही समझें, सब एक-दूसरे के साथ स्नेह, सौजन्य, दया, समता का व्यवहार करें, कोई किसी का शोषण न करे, कोई किसी पर जबरदस्ती न करे, कोई किसी को दबावे-डराये नहीं, परस्पर सद्भाव व सहयोग से एक कुटुम्बी की तरह रहें, अच्छाई में सहयोग दें, बुराई में असहयोग रक्खें,—यह आशय उनकी अहिंसा का है। 'अहिंसा' शब्द के प्रचलित अर्थ में दुःख न देने का भाव प्रधान है। अतएव महात्मा जी की अहिंसा समझनी हो, तो उसके साथ इसके पर्याय के रूप में 'आत्मौपम्य' 'समभाव' या charity शब्दों का आशय हमारे सामने रहना चाहिए।

जैन-अजैन दोनों तत्त्ववेत्ताओं व विद्वानों के विचारों का संग्रह होने के कारण यह अंक वाचनीय व संग्रहणीय हुआ है—इसमें सन्देह नहीं।

ह० उ०

भारतीय सभ्यता का विकास : ले० श्री कालिदास कपूर; प्रकाशक—नवलकिशोर प्रेस हजरतगंज, लखनऊ; पृष्ठ-संख्या ८३; मूल्य ।।)

पुस्तक का विषय नाम से स्पष्ट है। भारतीय सभ्यता का पश्चिम और पूर्व के सुदूर देशों में किस तरह प्रचार हुआ, इसका संक्षिप्त परिचय लेखक ने दिया है। लेखक स्वयं हिन्दू है और बृहत्तर भारत का परिचय देते हुए उसका हृदय पुलकित हो जाता है। लेकिन इसके साथ ही उसे एक और भीषण बाधा का मुक़ाबला करना पड़ जाता है और वह है रेडियो की हिन्दू-विरोधिनी नीति। इस पुस्तक के अध्याय रेडियो पर सुनाये गये थे और वहाँ सुनाने की आज्ञा मिलने के लिए लेखकों को अपना जो 'टोन' और जो खिचड़ी भाषा रखनी पड़ती है, उसकी झलक इसमें स्पष्ट रूप से विद्यमान है। कपूरजी सरल हिन्दी के सिद्धहस्त लेखक हैं, लेकिन इसकी भाषा 'रेडियो' की भाषा है, जो कई जगह खटकती है।

रेडियो की नीति का दूसरा परिणाम हुआ ब्रिटिश राज की प्रशंसा कि उन्हींकी बदौलत भारत में विज्ञान का प्रचार हुआ है, मानों यदि अंग्रेज न आते, तो भारत में रेल-तार ही न आते! इस अध्याय में रवीन्द्र और गांधीजी के चित्र फबते नहीं। वस्तुतः लेखक को दो सीढ़ियों पर पैर रखकर चलना पड़ा है। एक तरफ़ भारतीयता से प्रेम, दूसरी ओर रेडियो की सरकारी नीति, इन दोनों के समन्वय से जो गुण-दोष हो सकते थे, वे इसमें आ गये हैं। पुस्तक में कई चित्र भी हैं। अपने विषय के परिचय की दृष्टि से पुस्तक उपयोगी है।

साम्राज्य और उनका पतन : ले० श्री भगवानदास केला; प्रकाशक—व्यवस्थापक, भारतीय ग्रन्थमाला वृन्दावन; पृष्ठ-संख्या २२८ मूल्य १)

इतिहास के विद्यार्थी के लिए यह एक मनोरंजक विषय है कि किस तरह बड़े-बड़े साम्राज्य जिनकी शक्ति और बल असीम थे, किस तरह एक के बाद एक खतम होते गये और कोई भी साम्राज्य एक डेढ़ सदी से आगे नहीं चल सका। सम्राट् अशोक और समुद्रगुप्त, अकबर और शाहजहाँ, सिकंदर के महान् साम्राज्य, चीन के मंगोल साम्राज्य, ईरानी, मिश्री, यूनानी और रोम साम्राज्य, कोई भी अधिक समय तक स्थायी नहीं रहे। जिस तरह प्राणी के शरीर का अन्त अवश्यंभावी है, उसी तरह राजनैतिक साम्राज्यों के संगठन भी छिन्न-भिन्न होनेवाले हैं।

परन्तु यह क्यों होता है, किस तरह साम्राज्य पैदा होते हैं, कालान्तर में उनमें क्या बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं और किस तरह उन्हें दुर्बल व शिथिल कर देती हैं, यही सब श्री केलाजी ने इस पुस्तक में दिखाया है। इतिहास के विद्यार्थियों के लिए यह उपयोगी सिद्ध होगी। लेखन-शैली सरल व मनोरंजक है। लेकिन यह सब पढ़ने के बाद पाठक के हृदय में यह एक स्वाभाविक निराशा पैदा होती है कि संसार-चक्र अपनी गति से चल रहा है, जवानी और बुढ़ापा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मृत्यु जैसे रोके नहीं जा सकते, उसी तरह साम्राज्यों का उत्थान और पतन भी हजारों कोशिशें करने के बावजूद रोके नहीं जा सकते। साम्राज्यों का पतन स्वाभाविक है, उसके लिए चिन्ता नहीं करनी चाहिए। लेकिन हम भारतीयों को पराधीनों को अभी तो आशा का संदेश मिलता है कि वर्तमान साम्राज्य भी विनाश की ओर जा रहे हैं और हमारे भी अच्छे दिन आनेवाले हैं।

पुस्तक की छपाई आदि ठीक है। लेकिन पुस्तक का मूल्य कुछ अधिक दीखता है।

स्टालिन : ले० श्री त्रिलोकीनाथ 'विशारद'; प्रकाशक—राष्ट्रीय प्रकाशन-मन्दिर, बाजार सीताराम, दिल्ली; पृष्ठ संख्या १०८ मूल्य १।)

स्टालिन रूस का सर्वेसर्वा, हिटलर व मुसोलिनी से भी निरंकुश, सत्ताशाली और स्वेच्छाचारी है। परन्तु इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आज के संसार के कूट राजनैतिक प्रपचों में वह एक आश्चर्यजनक भाग ले रहा है। इसलिए अत्यन्त उत्सुकता से इस पुस्तक को पढ़ना शुरू किया, लेकिन पढ़ने पर उतनी ही निराशा हुई। प्रस्तुत पुस्तक में स्टालिन की पुरानी जीवन-घटनाएँ पढ़ने को अवश्य मिल जावेंगी लेकिन उसके जीवन की समस्या, उसकी आकांक्षा, उसकी नीति, उसके वर्तमान राजनैतिक आदर्श और राजनैतिक चालों आदि पर यह पुस्तक पाठक को कुछ नहीं बताती। १९१७ की क्रान्ति अब पुरानी हो चुकी है और कम-से-कम उसके लिए स्टालिन की जीवनी कोई न पढ़ना चाहेगा। स्टालिन का जीवन तो आज का रूस समझने के लिए जरूरी है, लेकिन प्रस्तुत पुस्तक से इस बारे में कुछ सहायता नहीं मिलती। वर्तमान युद्ध और स्टालिन के उसमें लिये महत्त्वपूर्ण भाग पर एक पंक्ति भी लेखक ने नहीं लिखी। ट्राट्स्की से मतभेद का सैद्धान्तिक रूप क्या था, इसपर भी लेखक ने प्रकाश नहीं डाला। पंचवार्षिक योजनाओं के द्वारा स्टालिन ने रूस में क्या कायापलट कर दिया है, इसका भी पुस्तक में कोई संकेत नहीं है। स्टालिन ने पिछले वर्षों में जो नृशंस हत्यायें करायी हैं, उनका उल्लेख जरूर किया है। लेकिन उसे पढ़ने के बाद भी रूस की वह उलझन वैसी ही पेचीदी रहती है। सम्पादक और प्रकाशक प्रेस में देने से पूर्व इस पुस्तक को अपटूडेट करा देते, तो अच्छा था। छपाई भी खराब है। १०८ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य १।) रखना पाठकों की जेब के साथ भारी अन्याय है।

कृष्ण

महापुरुषों की जीवन-झाँकी : लेखक—प्रभुदयाल विद्यार्थी; प्रका०—छात्र-हितकारी पुस्तकमाला प्रयाग; मूल्य ।।=)

वर्धा और मगनवाड़ी में रहते हुए लेखक ने दस गाँधीनिष्ठ महापुरुषों—सरहद्दी गाँधी, राजेन्द्रबाबू, काका साहब, जवाहरलाल नेहरू, महादेवभाई, श्री कुमारप्पा, सेठ जमनालालजी, ठक्कर बापा, एण्ड्रूज और मीरा बहन की जीवन-झाँकियाँ ली हैं।

जीवनी-लेखक की खूबी यह हो कि किसी की भी जीवनी लिखते समय, और उस जीवनी को लिखने के लिए उपयुक्त मसाला एकत्र करते समय, अथवा तदुपयुक्त मसाले को अध्ययन करते समय पूरी तरह उसमें रम जाय—बह जाय।

प्रभुदयालजी शिक्षक हैं और अपने बाल-साथियों के लिए ही उन्होंने यह प्रयास किया है। जहाँतक इतनी बात है, वहाँतक तो मैं कहूँगा कि पुस्तक ठीक बनी है और लेखक में वह विकासशील सौन्दर्य है कि वे आगे जाकर सुन्दर जीवनियाँ पाठकों को भेंट दे सकें।

हम यह चाहते हैं कि प्रत्येक जीवनी-लेखक के दिल में प्रत्येक जीवनी-नायक की आर्द्रता ही आर्द्रता, सजीवता ही सजीवता और खूबी ही खूबी का असर न हो; बल्कि शुष्कता और चरित्र-लेखक की दृष्टि से जो खामियाँ भी मनुष्यता के नाते उसमें हों, उनका भी पूरी तरह मन पर असर हो। इस प्रकार की जीवनियों में चमत्कार और रस पैदा हो जाता है। जिससे पाठक के मन पर वे कुछ स्थायी असर छोड़ जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत जीवनी में ऐसे नायक सिर्फ १-२ ही हैं कि जिनके सम्बन्ध में जनता में दो मत हो सकते हैं। परन्तु आगे के लिए हमारा यह इशारा शुभ हो सकता है।

साधारण पढ़ी-लिखी बहिनों, बालकों और इनाम में देने तथा पाठ्य-ग्रंथों में रखने के लिए यह पुस्तक उपयोगी है। लेखक का प्रयास सराहनीय है। 'चन्द्रकांत'

चर्खाशाला : लेखक—श्री मन्नूलाल 'शील', प्रकाशक—डॉ० गिरवरसहाय सक्सेना, स्वल्प विश्राम, बाँदा; पृष्ठ संख्या; मूल्य ।।), गीता साइज।

अनुकरण करने में हम पक्के हैं। कभी-कभी तो हम अपनी निजस्वता को भी भुला बैठते हैं। जबसे 'मधुशाला' ईरान से यहाँ आयी है, तबसे इसके अनुकरण पर **ताड़ी-शाला, विजया-शाला, मद-शाला, टी-शाला** तो खुल ही चुकी हैं उस दिन जान पड़ा कि 'चर्खा-शाला' भी खुल गयी। शायद इसका कारण, जैसा कि कवि ने लिखा है, यह हो कि 'मेरे मित्र श्री······ने अनुरोध किया कि चर्खाशाला क्यों नहीं लिखते क्योंकि आजकल शालाओं की बड़ी चाह है।'

नाम से स्पष्ट है कि चर्खाशाला में वर्तमान भारतीय राष्ट्रीय प्रगति और गांधीवाद की एक झलक है। जहाँ तक भावों का सम्बन्ध है वे बहुत सुन्दर हैं और उनमें विकल मानवता के लिए एक सन्देश है—

उदय हुआ प्राची में सूरज,
मुखरित हो वाणी निकली
फैली लाली वसुन्धरा में
मानवता की खिली कली
जग ने पाया शान्ति-सँदेशा
वसुधा ने० नव-रस प्याला
जगी अहिंसा-सत्य-विधायक
गांधी की चर्खा-शाला

भाव कई जगह मौलिक हैं और भारतीय संस्कृति के अनुकूल हैं इससे इस अनुकृति-काव्य (Parody) में भी एक संतोष मिलता है।

सुरधुन सी टंकार रही है
शाला में धनु प्यारी
ब्रह्म-फाँस नित नयी बनाता
करघा लिये छटा न्यारी
बलिदानों का आमंत्रण ले
नाच रही तकली-बाला
युद्ध-भूमि सी बनी हुई है
गांधी की चर्खा-शाला

कवि ने संकेत किया है कि युग का स्पंदन कविता में होना चाहिए और युग को मंगल-संदेश भी मिलना चाहिए—

आज क्रान्ति के बादल छाये
रण-चण्डी हुंकार रही
मानवता कर मलकर रोती
दानवता ललकार रही
धँसी राजमहलों की नींवें
धरणी बनी रक्त-नाला
केवल शान्ति-सँदेश सुनाती
गांधी की चर्खाशाला

पुस्तक बापू को समर्पित की गयी है। कवि के कृतित्व से चीज़ अच्छी बन गयी है।

चर्खाशाला अन्य शालाओं का अनुकरण होते हुए भी उनका एक श्रेयस्कर जवाब है।
सु०

अर्थ-शास्त्र की रूपरेखा : लेखक—प्रोफेसर दयाशंकर दुबे एम० ए०; प्रकाशक—साहित्य निकेतन, दारागंज प्रयाग; पृष्ठ-संख्या ४९१; मूल्य ६)

हिन्दी में अर्थ शास्त्र-सम्बन्धी साहित्य की बहुत कमी है। इस दिशा में जिन-जिन विद्वानों ने प्रयत्नों किया है उनमें स्वर्गीय प्रोफेसर राधाकृष्ण झा, स्वर्गीय पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी, स्वर्गीय डाक्टर बालकृष्ण, ठाकुर शिवनन्दनसिंह, डाक्टर प्राणनाथ विद्यालंकार, श्री गदाधरप्रसाद जी अम्बष्ट, श्री शंकरसहाय सक्सेना, श्री भगवानदास केला और प्रोफेसर दयाशंकर दुबे मुख्य रहे हैं। केलाजी और दुबेजी तो जिस परिश्रम और साधना के साथ हिन्दी के अर्थ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्र-साहित्य की पूर्ति कर रहे हैं, वह केवल अनुकरणीय ही नहीं, बल्कि हमारे लिए गर्व की बात है। जिस समय हमारे बड़े-बड़े विद्वान विश्व-विद्यालयों आदि के अध्यापन या अन्य कार्यों में लग जाने के बाद, हिन्दी का क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से आकर्षक नहीं पाते, उस समय भी दुबेजी अपनी रचनाओं द्वारा हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। डाक्टर प्राणनाथ, डाक्टर वेणीप्रसाद, डाक्टर रामप्रसाद त्रिपाठी, श्री पारसनाथ सिंह आदि हिन्दी के पुराने और मँजे हुए लेखकों में हैं, पर अब वह हिंदी में नहीं लिखते। यह हमारी मुसीबत और बदकिस्मती है!

वर्तमान युग प्रधानतः आर्थिक युग है। "भूखे भक्ति न होहि गोपाला।" खाना-पीना, कपड़ा-लत्ता मनुष्य की प्रारम्भिक आवश्यकतायें हैं। पहिले मनुष्य को इन आवश्यक सामग्रियों को उपलब्ध करने में बहुत कम संघर्ष करना पड़ता था। पर ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास हो रहा है और मनुष्यों की आवश्यकतायें बढ़ रही हैं, त्यों-त्यों जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने में संघर्ष भी बढ़ रहा है। जाने-अनजाने हमारे जीवन में प्रायः सर्वत्र ही अर्थ-शास्त्र काम कर रहा है। और इसलिए हमारे लिए आवश्यक हो गया है कि हम सोचें और विचारें कि आज अर्थ-शास्त्र का महत्व क्यों इतना बढ़ गया है—क्यों उसने हमारे जीवन को भौतिक दृष्टि से संघर्षमय बना दिया है—और कैसे हम अर्थशास्त्र का जीवन के अन्य अंगों से समन्वय कर सकते हैं? दैनिक जीवन में अर्थशास्त्र का इतना महत्त्व होते हुए भी, अर्थशास्त्र का विषय बड़ा कठिन और जटिल बना दिया गया है। हमारे शिक्षा-क्रम में उसका अध्ययन कालेज-जीवन से प्रारम्भ होता है। जरूरत इस बात की थी कि ऐसे विषय को सरल और मुहावरेदार भाषा में लिखा जावे, जिससे औसत दर्जे का पढ़ा-लिखा आदमी भी पढ़कर अर्थशास्त्र के नियमों को समझ सके। और श्रीयुत दुबेजी ने "अर्थशास्त्र की रूपरेखा" द्वारा यही कार्य किया है। इसमें उन्होंने बड़े अच्छे ढंग से संवादों द्वारा सरल भाषा में, अर्थशास्त्र के सब नियमों को अच्छी तरह समझाया है।

पुस्तक में पाँच खंड हैं—पहिले खंड के पाँच अध्यायों में अर्थ-शास्त्र सम्बन्धी प्रारम्भिक बातें दी गयी हैं। शेष चार खंडों में अर्थशास्त्र के चार विभागों—उपभोग, उत्पत्ति, विनिमय और वितरण का विशद रूप से सरल भाषा में वर्णन है।

यह बड़े सन्तोष की बात है कि लेखक ने मनुष्य जीवन में अर्थशास्त्र की महत्ता के बारे में पुराने रूढ़िचुस्त अर्थशास्त्रियों के दृष्टिकोण से काम नहीं लिया है। लेखक मानता है कि रोटी के अलावा जीवन में अन्य चीज़ों का भी स्थान है और जबतक रोटी और धर्म का समन्वय नहीं होगा, तबतक मनुष्य जाति वास्तविक सुख और शान्ति से परे रहेगी—और न उसका कल्याण होगा।

पुस्तक के अन्त में पारिभाषिक शब्दों की सूची तथा शब्दानुक्रमणिका भी है जिससे पुस्तक की उपयोगिता बढ़ गयी है। और मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि अपने विषय पर यह हिंदी में सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। अंग्रेजी में भी शायद इस विषय पर इतनी विस्तृत पुस्तक, इतनी सरल ढंग से न लिखी गयी होगी। कम-से-कम मेरे देखने में नहीं आयी है। हाँ, छपाई-सम्बन्धी भूलें कहीं-कहीं अवश्य हैं। अन्त में हम लेखक को ऐसी सुन्दर पुस्तक लिखने के लिए बधाई देते हैं और प्रयाग-विश्वविद्यालय के कुलपति श्री अमरनाथ झा के शब्दों में—जिन्होंने इस पुस्तक की सुन्दर भूमिका लिखी है—आशा करते हैं कि **हिन्दी साहित्य में इस पुस्तक का सम्मान होगा और विद्यार्थियों का इससे उपकार होगा।"**

श्यामलाल (एम० ए०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहयोगियों में से

आस्तिकता की पहचान

एक बार मैंने श्री विनोबा से पूछा, 'बापू कहते हैं कि जिसका ईश्वर में विश्वास न हो, वह सत्याग्रही नहीं हो सकता; परन्तु अमुक बड़े नेता तो ईश्वर को नहीं मानते; फिर वे सत्याग्रही कैसे हो सकते हैं ?'

विनोबा की विचार व्यक्त करने की शैली सहज अलंकारात्मक और रुचिर होती है। उन्होंने उत्तर दिया—"प्रेम दो प्रकार का होता है—एक कौशल्या का प्रेम और दूसरा जानकी का। कौशल्या रामचन्द्रजी की माता थीं; इसलिए वे सारा दिन 'मेरा राम, मेरा लाल !' कह-कहकर अपना प्रेम प्रकट करती हुई पुत्र की सेवा करती थीं। जानकी रामजी की भार्या थीं। वे बिना रामजी का नाम लिये ही दिन-रात उनके ध्यान और सेवा-टहल में मग्न रहती थीं।

'इसी प्रकार ईश्वर-निष्ठा भी दो प्रकार की होती है—एक तो उन भक्तों की जो हर दम नाम-स्मरण करते हुए जन-सेवा में लीन रहते हैं और दूसरी उन कर्मयोगी महापुरुषों की जो ईश्वर का कार्य करने में निरन्तर निरत रहते हैं, लेकिन उसका नाम लेने से इन्कार करते हैं। परन्तु जो लोक-सेवा में तत्पर और तल्लीन है, उसे भला नास्तिक कैसे कह सकते हैं ? तुम जिन नेता का जिक्र कर रहे हो, वे दूसरी श्रेणी के भक्त हैं—परम आस्तिक हैं।"

विनोबा के इस उत्तर ने मुझे एक नयी दृष्टि दी। मानों मेरी आँखें ही बदल दीं। × × हाई स्कूल में पढ़ी हुई 'अबू-बेन आदम' वाली कविता का रहस्य नये रूप में और नये प्रकाश में स्पष्ट हुआ। जो केवल ईश्वर के नाम की माला जपता है, परन्तु मनुष्य से प्रेम नहीं करता, वह ईश्वर-'वादी' है; ईश्वर-'परायण' या 'आस्तिक' नहीं है। आस्तिक वह है, जो मनुष्य से प्रेम करता है; वही श्रेष्ठ भगवद्भक्त है।

'सबकी बोली'] बाबा धर्माधिकारी

ग्राम-साहित्य का संग्रह

आजकल ग्राम-गीतों को प्रकाशित करने की प्रथा-सी चल पड़ी है। हिन्दी के प्रायः सभी मासिक पत्रों में भारत के विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं के ग्राम-गीत प्रकाशित होते रहते हैं। ग्राम-गीतों के कुछ संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं। ग्राम-गीतों को हम साहित्यिक दृष्टि से ही देखते हैं। परन्तु इतिहास और पुरातत्त्व की सामग्री की भाँति वे हमारे लिए अध्ययन और मनन की वस्तु भी हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि ग्राम-गीतों में कभी-कभी ऐसे रत्न मिल जाते हैं जिनकी तुलना आधुनिक युग की श्रेष्ठ रचनाओं से की जा सकती है। इस प्रकार के गीत तो साहित्य की स्थायी सम्पत्ति हैं। परन्तु देहाती भाषा के ऐसे गीत जो देखने में अत्यन्त साधारण जान पड़ते हैं, अपना एक विशेष महत्त्व रखते हैं। जिन राछरों, पँवारों और गोठों को हम गँवारू गीत कहकर उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं, उनके अन्दर ग्रामीण जनता के विचारों, धार्मिक विश्वासों और रीति-रिवाजों का इतिहास छिपा पड़ा है। अतएव जहाँ हम देखने में सुन्दर एवं भावपूर्ण ग्रामगीतों का संग्रह करने में लगे हुए हैं, वहाँ इन रचनाओं के प्रति भी हमें उचित ध्यान देना चाहिए।

परन्तु ग्राम-गीत और कहानियाँ ही ग्राम-साहित्य में सम्मिलित नहीं हैं, बल्कि मनुष्य के विचारों, रीति-रिवाजों और धार्मिक विश्वासों से सम्बन्ध रखनेवाली उसकी सभी मानसिक कृतियाँ उसके अन्तर्गत हैं। साथ ही एक और रूप में भी इस शब्द का प्रयोग होने लगा है। अँग्रेज़ी में ग्राम-साहित्य को 'फॉक-लोर' कहते हैं। यद्यपि साहित्य का अर्थ लिटरेचर है, परन्तु किसी अन्य अच्छे शब्द के अभाव में हम ग्राम-साहित्य को ही फॉक-लोर का पर्याय मानते हैं। फॉक-लोर का मतलब अनपढ़ और अशिक्षित जनता के साहित्य से ही नहीं हैं, वह अब एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्र भी माना जाता है।

ग्राम-साहित्य की सामग्री को मोटे तौर पर हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं:—

१ ग्रामीण जनता में प्रचलित विश्वास और रीति-रिवाज,

२ लोकोक्तियाँ और दंत-कथायें, और

३ कला और साहित्य

इनके फिर और भी कई विभाग किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए पहले खंड में तरह-तरह के रीति-रिवाज, पूजा, पर्व-त्योहार, व्रत, कुल-देवताओं की पूजायें, खेलकूद और कौतुक तथा जादू-टोना, जन्म, तथा विवाह-सम्बन्धी विश्वास और कहावतें, पशु-पक्षियों तथा वृक्ष-सम्बन्धी शकुन और अंध-विश्वास तथा कृषि-सम्बन्धी अंध-विश्वास और भूत-प्रेत की पूजायें सम्मिलित हैं।

दूसरे में किस्से-कहानियाँ, देवी-देवताओं की कथायें, व्रत और पूजा के गीत और तुकबन्दियाँ (जिन्हें साहित्य में स्थान नहीं मिल सकता) वीर-गाथायें और किंवदंतियाँ, (राछरे और पवारे आदि) लोरियाँ, कहावतें, बुझौअल, पहेलियाँ इन सबकी गणना की जा सकती है।

तीसरे में ग्राम-कवितायें, ग्राम-काव्य जो साहित्यिक दृष्टि से पढ़ने और उपभोग करने के योग्य हों और नृत्य तथा नाटक आदि सम्मिलित हैं।

यदि हम ग्राम-साहित्य का संग्रह करना चाहते हैं, तो अव्वल तो यह कार्य वैज्ञानिक ढंग से होना चाहिए। फिर उसी तरह उसका अध्ययन होने की भी आवश्यकता है। अध्ययन के बिना संग्रह की उपयोगिता नहीं। परन्तु अभी तो हमने कहानियों का संग्रह भी विदेशियों के हाथ में छोड़ रखा है। तब उनका महत्त्व हम क्या समझेंगे? हमारे देश की शायद ही कोई ऐसी भाषा हो जिसकी दो-चार ग्राम-कहानियों के अनुवाद अँग्रेजी में मौजूद न हों। तेलगू और तामिल से लेकर गोंड और भीलों तक की भाषा की कहानियाँ आपको मिल जायेंगी। उत्तर भारत में प्रचलित देहाती कहानियों के तो विशेष रूप से कई बड़े संग्रह मौजूद हैं। इतना ही नहीं, संग्रह-कर्ताओं ने अनेक कहानियों को ऐतिहासिक दृष्टि से देखने का भी प्रयत्न किया है और पढ़ने योग्य निबन्ध भी लिखे हैं। कथा-सरित्सागर का सुन्दर अनुवाद अंग्रेज़ी में मौजूद है। उस दिन श्रीमान् ओरछेश की प्राइवेट लाइब्रेरी में उसके दर्शन करके मेरे मुहँ से सहसा निकल पड़ा, "यह चीज हिन्दी में कब आयेगी?" और तो और, हमारे यहाँ अभी पंचतंत्र-जैसे ग्रंथ का भी कोई सुन्दर और सुसम्पादित अनुवाद मौजूद नहीं है। हमारे देश के छोटे-छोटे गाँवों में भी कहानियों का अटूट भण्डार भरा पड़ा है। परन्तु फिर भी यह कितने दुख की बात है कि अनेक हिन्दी लेखक अँगरेज़ी कहानियों के आधार पर बालकों के लिये कथा-साहित्य निर्माण करने में लगे हैं!

'मधुकर'] कृष्णानन्द गुप्त

राष्ट्रीय इतिहास का मसला

भारत के राष्ट्रीय इतिहास का अभाव सभी को खटकता है। जबतक यह कमी पूरी न हो जायगी, तबतक बार-बार आवाज़ें उठती ही रहेंगी। श्री कन्हैयालाल मुंशी का इतिहास-प्रेम सभी जानते हैं। राष्ट्रीय इतिहास किस दृष्टि से लिखा हुआ कैसा होना चाहिए,इस विषय में श्रीमुंशी कहते हैं कि "वह 'भारत की आत्मकथा'—सा लिखा जाना चाहिए। एक और बात उन्होंने कही। वह यह कि भारत के इतिहास बहुत-से हैं। खास विषयों पर लिखी गयी पुस्तकें भी बहुत हैं, मगर उनमें बड़ा फ़र्क दृष्टि-भेद का है। वे कहते हैं कि वह साहित्य परदेशी की दृष्टि से लिखा गया है। भारत की दृष्टि से भारत का सम्पूर्ण इतिहास अभी तक नहीं लिखा जा रहा है।"

हम जब राष्ट्रीय इतिहास के अभाव के दुःख में आँसू बहा रहे हैं, तब पश्चिम राष्ट्रीयता और अराष्ट्रीयता के पार पहुँचकर विज्ञान और कला के सरहदी झगड़े में आ पहुँचा है। वहाँ के इतिहासकारों में चर्चा और विचार का विषय है कि इतिहास विज्ञान है या कला? ['फूलछाब'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैर-सपाटा

'आज' (साप्ताहिक) के पिछले कई अंकों में श्री भगवानदास हालना ने **'रामचरितमानस का शुद्ध पाठ'** लेखमाला में 'रामचरितमानस' के उन पाठान्तरों की ओर ध्यान दिलाया है, जो 'रामचरिमानस' जैसे ग्रन्थ में नहीं होने चाहिएँ।

'विशाल भारत' (मार्च) में श्री चेतराम शर्मा 'साहित्यरत्न' का **'संस्कृत भाषा का मूल प्राकृत नहीं'** शीर्षक लेख चौकानेवाला है। उपपत्ति के लिए उन्होंने भाषा-विज्ञान, व्याकरण आदि के पुष्ट प्रमाणों का आश्रय लिया है। भाषा का इतिहास लिखनेवालों को इधर ध्यान देना चाहिए। इन्हीका एक लेख—**'हिन्दी में प्रमत्त रचना'** फरवरी की **'सुधा'** में भी निकला है जिसमें उन्होंने बतलाया है कि हिन्दी-लेखक शब्दों के प्रयोग आदि करने में कितनी असावधानी और प्रमाद कर जाते हैं, जिससे कालांतर में वे गलतियाँ रूढ़ हो जाती है। अनेक उदाहरणों से लेख रोचक और मननीय हो गया है। यद्यपि उनकी सारी बातों से सहमत होना कठिन है, फिर भी उनका कहना कई अंशों में ठीक है।

'सुधा' के 'चयन' में बुद्धिसागर वर्म्मा की **'व्यापार की कुंजी'** हरेक व्यापारी को अपने व्यापार की उन्नति और सफलता के लिए प्राप्त करनी चाहिए। हिन्दी के इतिहास में **'पृथ्वीराज रासो** का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उसपर महामहोपाध्याय श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का लेख विद्वत्तापूर्ण है। ओझाजी ही ऐसे पुरातन साहित्य पर अधिकारपूर्वक कुछ लिख सकते हैं।

मौलाना अबुलकलाम आज़ाद का **'विश्ववाणी'** में प्रकाशित **'धर्म और विधान'** लेख हिन्दू-मुसलमानों के लिए इत्तहाद का संदेश है। श्री लक्ष्मीकान्त झा का **'मानव संस्कृति का वैज्ञानिक अध्ययन'** अच्छा विवेचनात्मक लेख है। श्रीमती महादेवी वर्म्मा का **'कसौटी पर'** लेख प्रत्येक सिद्धान्तवादी के लिए मननीय है।

मार्च की **'कमला'** में श्री राजबहादुर लमगोड़ा ने **'तुलसीदास का नाटकीय महाकाव्य रामायण'** लेख में कला, विज्ञान और धर्म का अच्छा समन्वय कराया है।

'वीणा' (मार्च) में प्रकाशित श्रीनिवास चतुर्वेदी, एम० ए० का लेख—**'साहित्य-कला'** अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण है उसमें प्रतिपादित विचार सुलझे हुए हैं। साहित्य व कलाकी विस्तृत विवेचना तथा समीक्षा करते हुए लेखक ने हिंदी-साहित्य की अनेकविध प्रगति पर भी दृष्टि डाली है।

मार्च के **'हंस'** में 'साहित्य-समस्या' स्तम्भ में श्री देवराज उपाध्याय का **'मार्क्स और साहित्य'** लेख है, जिसमें लेखक ने आधुनिक साहित्य में मार्क्स के सिद्धान्तों का प्रभाव दिखाया है, साथ ही कई भ्रान्त धारणाओं को भी स्पष्ट किया है। विचार मननीय है और विचारोत्तेजक भी। इसी अंक में श्री शिवदानसिंह चौहान ने **'भारत की जन-नाटयशाला'** लेख में जनता की मानसिक संस्कृति के आलेखन के साथ-साथ दृश्य और श्रव्य कलाओं की संक्षिप्त समीक्षा करते हुए 'नाटचकला' के विकास की रेखा अंकित की है। श्री रामइक़बाल सिंह 'राकेश' का **'लोक गीत : एक अध्ययन'** भी अपने विषय का अच्छा लेख है।

कविताओं में इस मास प्रेमीजी की **'वीणा'** में प्रकाशित कविता—**होकर भी हम एक पृथक् हैं**—बड़ी गहरी है। **'हंस'** में प्रकाशित 'अञ्चल' का **'महाप्रयाण'** ओजस्वी है और **'विशाल भारत'** में प्रकाशित श्री सोहनलाल द्विवेदी की **'गाँवों में'** अत्यन्त भावपूर्ण और सुन्दर है। सरल-से-सरल भाषा में हृदय को छूनेवाले गहरे-से-गहरे भाव भरने की प्रतिभा का वह एक सजीव नमूना है। **'बालक'** में प्रकाशित उनके **'वसन्त-गीत'** भी उत्कृष्ट हैं। प्रकृति-प्रेम और स्वर्गिक उल्लास को यदि कविता के घट में छलकता हुआ देखना हो तो इन्हें पढ़ा जाये। **'वीणा'** में श्री आरसी प्रसाद सिंह का **'मदनिका'** भावनाटच (कविता-त्मक) मनोरम है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी की हलचलें

हिन्दी पर निरन्तर बढ़ते हुए सब ओर के आघातों से हिन्दी को बचाने और उसके प्रचार-प्रसार आदि की हलचलों को प्रकाश में लाने के लिए 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति कौ मूल' (भारतेन्दु) को सिद्धान्त-वाक्य मानकर नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के तत्त्वावधान में 'हिन्दी' नाम की मासिक-पत्रिका प्रकाशित होने लगी है और वह बड़ी तेज़ी के साथ हिन्दी की रक्षा, प्रचार, प्रसार और प्रोत्साहन की ओर अग्रसर हुई है। पिछले दिनों जितने भी लेख निकले हैं, वे हिन्दी के सिद्धहस्त और कृतविद्य लेखकों के हैं और उपादेय हैं।

सरकारी रेडियो-विभाग की हिन्दी भाषा के प्रति उदासीनता को खुले शब्दों में साहस के साथ बतानेवाले लखनऊ के पत्र **'आकाशवाणी'** को भी भुलाया नहीं जा सकता।

मथुरा से **'ब्रजभारती'**, कलकत्ता से **'प्राचीन भारत'** और इलाहाबाद से **'तूफान'** नये मासिक निकलने लगे हैं।

पटना से शीघ्र ही देशरत्न राजेन्द्रबाबू के द्वारा उद्घाटन हो जाने पर **'राष्ट्रवाणी'** नाम का हिन्दी दैनिक श्री देवव्रत शास्त्री के सम्पादन में निकलनेवाला है।

'साधना' के **'परिचयांक'** की तैयारियाँ बड़े जोरों से हो रही हैं।

'आज' तथा **'हिन्दुस्तान'** के विशेषांक अप्रैल के प्रथम सप्ताह में निकलनेवाले हैं। 'आज' का **'युद्धांक'** और **'हिन्दुस्तान'** का **'वर्षांक'**। **'साहित्य-सन्देश'** का यह अंक **'परीक्षांक'** है, जिसमें परीक्षोपयोगी अनेक अच्छे-अच्छे लेख हैं। 'आगामी अंक **'शुक्ल अंक'** होगा, जिसमें स्व० आचार्य शुक्लजी पर सब लेख होंगे। इसके बाद, समाचार है कि, जून १९४१ में **'उपन्यास-अंक'** और सितम्बर १९४१ में **'नववर्षांक'** निकलेगा। 'किशोर' मासिक का अगला अंक **'उपकथांक'** होगा, जिसमें संसार में सभी देशों और सभी प्रांतों की लोक-कथायें होंगी।

प्रयाग के इंडियन प्रेस से **'सरस्वती सीरीज़'** (पुस्तकमाला) का प्रकाशन हिन्दी में एक खास घटना है। अबतक उसमें १४ पुस्तकें निकल चुकी हैं और आगे भी निकलनेवाली हैं। प्रत्येक पुस्तक में कम से कम २०० पृष्ठ और मूल्य ॥) रहता है। कई पुस्तकें बहुत अच्छी कोटि की हैं।

श्री घनश्यामदास बिड़ला की प्रसिद्ध पुस्तक **'बापू'** के अंग्रेज़ी तथा कई देश-भाषाओं में अनुवाद किये जा रहे हैं।

महात्मा गांधी के तीनों साप्ताहिक, सुना है, फिर निकलेंगे। तब हिन्दी **'हरिजन-सेवक'** भी पाठकों को शीघ्र ही मिलने लग जायेगा।

कानपुर में हाल ही में हुई हिन्दी-पत्रकार-संघ की बैठक के निर्णय से आशा होती है कि संघ का कार्य अब संगठित रूप से चलने लगेगा।

कृष्ण-मन्दिर में

श्री पट्टाभि सीतारामैया : विख्यात लेखक और भारतीय नेता, जिनकी 'हिस्ट्री ऑफ दि कांग्रेस' का अनुवाद हिन्दी में **'कांग्रेस का इतिहास'** है।

श्री प्यारेलाल : महात्मा गांधी के सेक्रेट्री और गांधीजी-सम्बन्धी अनेक ग्रंथों के प्रसिद्ध लेखक। दुबारा सत्याग्रह किया।

श्री श्रीकृष्णदत्त पालीवाल : एक बार छोड़े जाकर पुनः गिरफ्तार कर लिये गये।

श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक' साहित्य-रत्न : हिन्दी के अच्छे लेखक कवि, और समालोचक, मेरठ-साहित्य-परिषद के एक सदस्य।

श्री रमेशचन्द्र 'आर्य' : 'मण्डल' के परिवार के सदस्य; 'अर्जुन' (साप्ताहिक) के भूतपूर्व संपादक; **'सुभाषचन्द्र वसु'** आदि जीवनियों के लेखक।

श्री बाबूलाल जैन ['तरुण बन्धु']; कृष्णलाल शाह ['सन्देश'] : श्री ज्योतिराम नन्दी [**'नयी दुनिया'**] के सम्पादकगण भी गिरफ्तार हुए हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या और कैसे ?

तीन मुख्य घटनायें

पिछले दिनों हिन्दुस्तान में तीन घटनायें ऐसी हुईं, जिनकी काफी चर्चा रही व जिन्होंने यहाँ की राजनैतिक गतिविधि पर कुछ अनुकूल असर डाला है—(१) पत्र-सम्पादकों की परिषद् व 'हरिजन' आदि पत्रों को फिर से छापने का महात्माजी का निश्चय; (२) निष्पक्ष नेताओं की बंबई वाली परिषद्; (३) असेम्बली में कायदे आज़म साहब का पाकिस्तान की माँग के सम्बन्ध में खुलासा व सर सिकन्दर की अपनी विधान-योजना की घोषणा। पत्र-संपादक लोग अपनी परिषद् में कांग्रेस का साथ न दे सके, युद्ध के बारे में उन्हें सरकार को यह आश्वासन देना पड़ा कि हम युद्ध-प्रयत्नों में बाधा डालना नहीं चाहते; पर साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि दो बातों में उसने सरकार को झुकाया भी। एक तो सत्याग्रह-सम्बन्धी समाचारों को छापने की छूट व दूसरी महात्माजी के घोषणा-पत्रों, वक्तव्यों तथा अखबारों को छापने की स्वतन्त्रता। इनमें भी कुछ पखें लगी हुई हैं, लेकिन कुल मिलाकर इन दिशाओं में परिषद् ने काफी कामयाबी हासिल की है। इससे यह भी टपकता है कि सरकार महात्माजी को नाराज करना गवारा नहीं कर सकती। महात्माजी जिस शुद्धहृदयता से सत्याग्रह-आन्दोलन को चला रहे हैं, उसका लाजिमी असर इसी तरह का हो सकता था। पाठक महात्माजी के वचनामृत को पीने के लिए तरस रहे थे। अब फिर वे हर हफ्ते महात्माजी की आत्मा के सत्य-सन्देश सुनने लगेंगे।

निष्पक्ष नेताओं की परिषद् से एक फायदा जरूर दीखता है। उसकी माँगों से कांग्रेस तो सहमत नहीं हो सकती, लेकिन सरकार के लिए उसने दुविधा खड़ी कर दी है। माँग रखी भी ऐसे ढंग से गयी है कि अमेरी साहब अब यह नहीं कह सकते कि तुम कांग्रेस व मुस्लिम लीगवाले मिलकर आओ। उनकी माँग थोड़े में यह है— (१) यह ऐलान किया जाय कि लड़ाई खत्म होते ही जल्दी-से-जल्दी हिन्दुस्तान को औपनिवेशिक स्वराज्य दे दिया जायगा; (२) युद्धकाल में वाइसराय की कौंसिल के सब सदस्य हिन्दुस्तानी हों—युद्ध व अर्थ-मंत्री भी हिन्दुस्तानी हों और उनकी जिम्मेवरी सम्मिलित व सामूहिक रहे—भले ही वे उत्तरदायी धारासभा के प्रति न रहकर ताज (Crown) के प्रति रहें। वाइसराय की अगस्तवाली घोषणा से अवश्य ही यह बहुत आगे जाती है और ब्रिटिश सरकार की सचाई को फिर एक बार कसौटी पर रख देती है। यह कहकर कि कांग्रेस व मुस्लिम लीग न शरीक हों तो इन्हें छोड़कर दूसरे लोगों को कौन्सिल में ले लिया जाय, जब कांग्रेस आदि आजावें तो उनके लिए जगह खाली कर दी जाय, अमेरी साहब को मुहँतोड़ जवाब दे दिया गया है। अब जबतक सरकार इसपर कुछ बोलती नहीं है तबतक कांग्रेस के लिए उसपर कुछ कहना कठिन है। कांग्रेस की यह स्थिति साफ है कि उसकी माँग जनता के प्रतिनिधियों को वास्तविक सत्ता दिलाने की है, महज अपने लिए नहीं है, इसलिए वह इस बात पर ज्यादा ध्यान देगी कि वास्तविक सत्ता मिल कितनी रही है।

सरकार निष्पक्षों की बात मानेगी—यह जँचता नहीं है। उसका सारा ध्यान व शक्ति लड़ाई को कामयाब बनाने में लग रही है और इसी दृष्टि से वह इस समय हर चीज को देखेगी। इतनी सत्ता दे देने पर भी आज से अधिक धन-जन की सहायता हिन्दुस्तान की तरफ से मिलने की उसे आशा शायद ही हो। फिर महात्माजी व कांग्रेस के सत्याग्रह का सामना तो करना ही है। अगर युद्ध-विरोध की खुली छुट्टी दे दी जाय तो शायद यह उसे अपने पैरों कुल्हाड़ी मारना मालूम पड़े। यदि जहाँतक हिसाब लगा सकते हैं वहाँतक तो सरकार इस बार भी इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न पर झुकती नज़र नहीं आती। फिर भी जनता की दृष्टि से यह बात लाभ की है कि नरम दल के व सरकार से सम्बन्धित रह चुके नेताओं को भी उतने से कम में सन्तोष नहीं होगा, जिसकी माँग कुछ महीने पहले कांग्रेस के मुख से भी 'अधिक' व 'अतिशय' गिनी जा सकती थी।

'पाकिस्तान' शब्द व योजना ने एक अजीब गड़बड़घोटाला फैला रखा है। उसका सींग-पूंछ कुछ न तो दिखायी ही देता है, न समझ में ही आता है कि आखिर उसके प्रवर्तक चाहते क्या हैं? अच्छा हुआ कि सर सिकन्दर ने खुले आम उससे अपना मतभेद जाहिर कर दिया व कायदे आजम साहब ने भी यह स्पष्ट कर दिया कि युद्ध-काल की किसी तजवीज के लिए हम 'पाकिस्तान' पर अड़ेंगे नहीं। सर सिकन्दर ने अपनी नयी योजना भी पेश की है जो जरूर गौर करने लायक है। इन दो वक्तव्यों ने कांग्रेस-लीग के मतभेद को दूर करने के माफिक ही आबोहवा पैदा की है जिसको खेद है कि ढाके व आजमगढ़ के दंगों ने काफी ठेस पहुँचायी है। पाकिस्तान के नाम पर जो साम्प्रदायिक भावनायें उत्तेजित की जाती हैं उनका यह लाजिमी नतीजा है, जिससे अगर लीगी नेता सबक न लेंगे तो वे सारे देश के ही नहीं मुसलमानों के हितों का भी बहुत नाश कर डालेंगे। दुनिया अब छोटी-छोटी जातियों व फिरकों में बँधी नहीं रह सकती, न रहने में किसी का फायदा ही है।

बलिवीर गणेशजी

ढाके व आजमगढ़ के दंगों के बाद ही—२५मार्च को—शहीद गणेशशंकर की जयन्ति पड़ी। सद्भाग्य से २३ मार्च को हम हिन्दी के कुछ पत्र-संपादक अपने सम्मेलन की का० का० की मीटिंग के लिए कानपुर में ही एकत्र थे। हमने एक प्रस्ताव द्वारा स्व० विद्यार्थीजी के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। मैं तो जबतक कानपुर रहा ऐसा लगता रहा मानो गणेशजी की आत्मा दायें-बायें डोलती रहती थी। इन दंगों को देख-कर तो यही खयाल आया कि गणेशजी का बलि-दान इस अभागे देश को बुरी तरह हजम हो गया! हम हिन्दू-मुसलमान आज गणेशजी के जमाने से कहीं अधिक एक-दूसरे से दूर जा पड़े हैं। गणेशजी का बलिदान उसी दिन सार्थक होगा जिस दिन फिर सारा देश एक स्वर से बोलने लगेगा—'हिन्दू-मुसलमान की जय।' गणेशजी बलिवीर तो थे ही; पर वे हिन्दी के ज़बरदस्त प्राण-वान् व प्राणदायी लेखक और प्रभावशाली संपादक थे। उनका एक अनूठा व बाँका व्यक्तित्व था। उनके सारे व्यक्तित्व पर व उनकी खूबियों पर रोशनी पड़ने की बहुत आवश्यकता है। क्या ही अच्छा होता यदि पं० श्रीराम शर्मा को भगवान् इतनी फुरसत दे देता कि वे गणेशजी की जीवनी उनकी इस जयन्ति के अवसर पर ही पूरी कर देते!

श्रद्धांजलि!

स्वर्गीय दीनबन्धु के स्मारक बनाने के लिए महात्मा गांधी ने ५ लाख रुपये एकत्र करने की अपील प्रकाशित की है। ५ अप्रैल दीनबन्धु की निधन-तिथि है। हम दीनबन्धु के प्रति अपने शब्दों में श्रद्धांजलि अर्पित न करके कवि श्री सोहनलाल द्विवेदी के इन समर्थ और भावपूर्ण शब्दों में करते हुए—

सिंधु पार सुन पडी तुम्हें कैसे जननी की पीर ?
खिंच आये तुम इधर अचानक भरे नयन में नीर !
पूर्व जन्म का था क्या कोई यह आत्मिक संबंध ?
हिले प्राण के तार, बंधे तुम, सजा स्नेह-अनुबंध !
(बने मसीहा, स्नेहमूर्ति तुम, किये नित्य उपचार,
तन-मन-जीवन बना तुम्हारा दुर्बल का आधार।)
भरा तुम्हारे मानस में था, कितना करुणा-सिंधु,
दीनानाथ बने न कभी तुम, बने दीन के बंधु !
आँखों में भारत की श्री, स्वर में भारत का गान,
कर में भारत की सेवा, उर में भारत का ध्यान,
रोम-रोम में रमा तुम्हारे, भारत का उत्थान,
रहे विदेशी कब ? तुम तो थे भारत की सन्तान !
(अपना पथ निर्माण किया, पकडी न पुरानी लीक
न्याय-नीति के लिए लडे तुम बनकरके निर्भीक!)
भारत-माता के चरणों में ही ली आँखें मूंद !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोते तुम सुख की समाधि में, ढरके यश के बूँद !
दीनबंधु ऐंड्रूज, बंधुवर कैसे गायें गान ?
लिखा रहेगा नित्य गगन के उडुगण में आख्यान,
तपोपूत तुम, देवदूत तुम, शान्तिदूत, अवतार !
जयति देश की स्वतंत्रता के अचल शिला आधार!

महात्माजी के स्वर में अपना स्वर मिला रहे हैं।

चेतावनी

समालोचना साहित्यिक विकास के ही लिए नहीं जीवन-विकास के लिए भी अनिवार्य है। समालोचना का अर्थ है गुण-दोष का यथावत् निरीक्षण। जिसकी वृत्ति व बुद्धि जितनी समतोल होगी, उतना ही वह गुण-दोष-परीक्षण अच्छा कर सकता है। बुद्धि में समतोलता तभी आती है जब हम सदैव सत्य, न्याय के ही हामी होने की आदत डालें। एक के प्रति 'राग' रक्खा ता दूसरे के प्रति अपने-आप 'द्वेष' होने लगेगा। यह समता या समतोलता के विपरीत है। किन्तु कई बार हम सद्भावना से ही किसी पुस्तक या लेखक की अत्यधिक प्रशंसा कर देते हैं। अपने मन में हम कहते हैं—चलो उत्साह बढ़ाने के लिए दो अच्छी बातें कह दो। इसी तरह जब कोई पुस्तक या लेखक हमें अप्रिय मालूम होता है, तो सहज ही उसकी अधिक निन्दा करने की प्रवृत्ति हो जाती है। किन्तु सच बात तो यह है कि जब हमें किसी पुस्तक वस्तु या व्यक्ति की समालोचना करनी पड़े, तो हमें उससे अपने व्यक्तिगत संबंधों को भूल जाना चाहिए; क्योंकि व्यक्तिगत सम्बन्ध ही हममें एक के प्रति मोह और दूसरे के प्रति विराग पैदा करते हैं। यह बहुत कठिन काम अवश्य है और इसीलिए समालोचना करना भी कोई आसान बात नहीं है। किन्तु इसके विपरीत हम कई बार प्रत्यक्ष राग-द्वेष से या पक्षपात और प्रतिहिंसा से प्रेरित होकर ही स्तुति या निन्दा करते हैं। जहाँ यह प्रवृत्ति हो वहाँ मनुष्यता का आरंभ हुआ ही न समझना चाहिए। मिथ्या स्तुति से जो बढ़ते हैं, खुश होते हैं, वे भी धोखा खाते हैं और झूठी निन्दा से जो घबरा जाते हैं वे भी गलती करते हैं। मिथ्या स्तुति करके हम किसी का भला नहीं करते। अवास्तव विशेषणों का प्रयोग करके हम न केवल अपनी वाणी को ही दूषित करते हैं, बल्कि सामनेवाले को भी गलत रास्ते ले जाने के जिम्मेदार बनते हैं।

शायद ऐसे ही विचारों से प्रेरित होकर श्री कन्हैयालाल मुन्शी ने गुजरात साहित्य-सभा की एक सभा में गुजरात के साहित्यिकों को चेतावनी दी थी। उन्होंने कहा था—'मैंने देखा है कि गुजराती साहित्यिकों को थोड़ी ही शक्ति और सिद्धि से प्रशंसा मिल जाती है, जिसके फलस्वरूप शक्ति का प्रवाह रुक जाता है; मुझे आशा है कि गुजरात अपने उदीयमान कलाकारों को अत्यधिक प्रशंसा से बिगाड़ न डालेगा।" हमारे हिन्दी-साहित्यिकों के लिए भी क्या इस चेतावनी की आवश्यकता नहीं है? ह० उ०

दो शोक-संवाद

हृदय इस बात की कल्पना करके बड़ा व्यथित होता है कि प्रति मास हम हिन्दी-पत्रों को हिन्दी के महारथियों के महाप्रयाण की दुःखद सूचना देनी पड़ती है। इस बार भी हिन्दी-साहित्य के इतिहास के उद्धारक सर जॉर्ज ग्रियर्सन और तरुण-लेखक श्री योगेश्वरसिंह एम० ए० के देहावसान के समाचार देने का कष्टकर कार्य करना पड़ रहा है।

स्व० जॉर्ज ग्रियर्सन का हिन्दी-साहित्य के इतिहास-लेखन में हमपर जो ऋण है, वह हिन्दी के लिए विदेशी लेखक की सबसे बड़ी देन है। विदेशी होते हुए भी ग्रियर्सन साहब हिन्दी के अपने थे। उनके प्रति हम श्रद्धा के पुष्प अर्पित करते हैं!

श्री योगेश्वर सिंह का एक सुन्दर लेख जी० सा० में छपने के लिए आया हुआ है, पर वह उसे छपा हुआ न देख सके! ऐसे उदीयमान साहित्यकारों के असामयिक निधन पर नश्वर मानव शोकाश्रु बहाने के सिवा और कुछ कर भी तो नहीं सकता। मु०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मण्डल की ओर से

'रियायत' के बारे में

पिछले अंक द्वारा यह सूचना दी गयी थी कि जी० सा० के ग्राहकों की सिफारिश पर हमने १००० व्यक्तियों को १) में जी० सा० देने का निश्चय किया है। उसपर कई ग्राहकों ने लाभ उठाया है। यद्यपि अभी १००० संख्या पूरी नहीं हुई है, परन्तु, आशा है, पाठकगण शीघ्र इस रियायत का लाभ उठा लेंगे।

नये अंक से ग्राहक बनें

स्टॉक में **दूसरे, चौथे,** और **सातवें** अंक को छोड़कर कोई अंक न बचा होने से हमारा अनुरोध है कि ग्राहकगण नये अंक ही से ग्राहक बनें।

मंत्री

शुद्धि-पत्र

पिछले (मार्च १९४१ के) अंक में

पृष्ठ	कॉलम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३२८	१	२३	शब्द	लफ्ज़
३२९	"	२३	कामेच्छा	कामेच्छा न
"	"	३५	करने की	हो,
३३०	"	२१	कामशायक	कामशामक

इस अंक में

पृष्ठ	कॉलम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३६६	पैरा १	२	उठा सकते	उठाते
"	पैरा ५	४	धाराओं	धारणाओं

पृष्ठ ३६७ पर इकरारनामे की १९-२०वीं पंक्ति में **'देकर इसे अलग छपाने की व्यवस्था'** शब्द फालतू छप गये हैं।

दन्तामृत (रजिस्टर्ड)

दाँतों की बीमारियों के लिए अपूर्व स्वदेशी मञ्जन

दाँतों और मसूढ़ों की सब बीमारियों यहाँ तक कि पायोरिया तक के लिए यह मञ्जन इतना गुणकारी सिद्ध हुआ है कि भारत के साधारण श्रेणी से लेकर श्रीमन्त एवम् राजा-महाराजाओं और कौंसिलों के सदस्य तो इसका व्यवहार करते ही हैं, कई अंग्रेज़, जो कि अपने देश की चीज़ों के सिवा बाहर की बहुत कम चीज़ें इस्तेमाल करते हैं, वे भी अपने देश के टूथ-पाउडर एवम् पेस्टों से इससे अधिक लाभ पाकर इसके भक्त बन गये हैं।

जिसने एक बार इस मञ्जन का इस्तेमाल किया, वही सदा के लिए इसका भक्त बन गया। मूल्य टीन की डिबिया ।≈), बड़ी शीशी ।=), छोटी शीशी ।)

श्रीयुत. एम. के. आचार्य, एम. एल. ए. (मद्रास)—"आपका दंत-मंजन तो **मैंने अपनी दंत-पीड़ा के लिए गत पाँच वर्षों में व्यवहृत देशी-विदेशी सब मंजनों से श्रेष्ठतर पाया।** मंजन दाँतों, मसूडों और तालु के घावों पर जादू का-सा असर दिखलाता है।"

श्री. एम० एस० बरदाचार्य एडवोकेट (मद्रास हाईकोर्ट)—"दो वर्ष पूर्व मुझे दंत-पीड़ा हुई थी जो बढ़ती ही गयी और मसूडों में घाव हो गये; **परन्तु आपके मंजन से अब मेरेमसूडे स्वस्थ हैं और दाँत में पीड़ा नहीं होती।** मैं तो कहूँगा कि मेरे व्यवहृत दंत-मंजनों में सर्व-श्रेष्ठ आपका दंतामृत ही है।"

मिलने का पता—**मैनेजर, 'राजस्थान आयुर्वेदिक औषधालय,' अजमेर**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ्री इण्डिया

युद्ध-काल में रुपया लगाने के लिए सर्वोत्तम

केवल १९४० में ३,३०,०००) रु० से ऊपर दावे चुकाये गये

प्रभावशाली और परिश्रमी कार्यकर्ताओं के लिए

सफल भविष्य की गारन्टी

लिखिए—

फ्री इण्डिया जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

हेड आफिस—१५ । १४१, सिविल लाइन्स, कानपुर

शाखाएँ—कलकत्ता, लाहौर, पटना और अजमेर ।

दफ्तर—बनारस और नौगाँव ।

युवकोपयोगी तीन अनुपम पुस्तकें

आत्म संयम—लेखक—पं० जगपति चतुर्वेदी । यह पुस्तक कई प्रसिद्ध अंग्रेज़ी, संस्कृत, पाली तथा हिन्दी पुस्तकों के आधार पर लिखी गई है । संसार में अपने शत्रु पर विजय पाना उतना कठिन नहीं, जितना काम, क्रोध आदि षट्विकारों, मन तथा वासनाओं पर विजय पाना कठिन है । इस पुस्तक में अपने मन, वाणी आदि इन्द्रियों तथा वासनाओं पर अधिकार करने के सहज सरल उपाय बताये गये हैं । हिन्दी में अपने ढंग की यह एक ही पुस्तक है । मूल्य १)

देश की आन पर—लेखक—गणेश पांडेय । इस पुस्तक में देश-प्रेम और देश-भक्ति के लिए अपने सर्वस्व निछावर करनेवाले वीर-वीरांगनाओं की कहानियों का संग्रह है । प्रत्येक कहानी बहुत ही आकर्षक शैली में लिखी गई है, ओजस्वी और ज़ोरदार भाषा में लिखीहुई कहानियाँ प्रत्येक युवक को देश-प्रेम में मतवाला बनानेवाली हैं । सुन्दर कवर से युक्त पुस्तक का मूल्य ।।।)

चरित्र-निर्माण की कहानियाँ—लेखक—श्री व्यथितहृदय । इस पुस्तक में उन कहानियों का संग्रह है, जो विद्यार्थियों और नवयुवकों के चरित्र पर अद्भुत प्रभाव डाल सकती हैं । चरित्र-निर्माण के लिए इससे बढ़कर उपयोगी पुस्तक नहीं मिल सकती । मूल्य ।।।)

मैनेजर—**छात्र-हितकारी पुस्तकमाला, दारागंज, प्रयाग**

कानपुर के सोल एजेंट : साहित्य निकेतन, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालयों को समृद्ध बनाइए

हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर का प्रत्येक ग्रन्थ संग्रह करने योग्य है। प्रत्येक पुस्तकालय में उसके सभी ग्रन्थ रहना चाहिए। नीचे कुछ चुने हुए ग्रन्थों का परिचय दिया जाता है। एक कार्ड लिखकर पूरे ग्रन्थों का सूचीपत्र मँगा लीजिए।

मुगल साम्राज्य का क्षय और उसके कारण

अर्जुन-सम्पादक प्रो० इन्द्र विद्यावाचस्पति के कई वर्षों के अध्ययन का फल। मध्यकालीन इतिहास की गम्भीरतापूर्ण आलोचना। एक महान साम्राज्य के उत्थान और पतन की कहानी। उपन्यास की तरह मनोरंजक। मूल्य ४।)

भारत के प्राचीन राजवंश

ले०—साहित्यचार्य पं० विश्वेश्वरनाथ रेउ। इसका दूसरा और तीसरा भाग ही अब मिलता है। दूसरे भाग में शिशुनाग, नन्द, मौर्य, शुंग, काण्व, आन्ध्र, ग्रीक, शक, पल्लव, कुशान, गुप्त, शशांक, हूण, वैस, मौखरी, लिच्छवि, ठाकुरी आदि वंशों का क्रमबद्ध प्रामाणिक इतिहास है और तीसरे भाग में तमाम राष्ट्रकूट वंशों का अब तक का इतिहास है। मूल्य प्रत्येक भाग का तीन रुपया।

नीतिविज्ञान

ले०—श्रीगोवर्द्धनलाल एम० ए० बी० एल० आचार शास्त्र पर वैज्ञानिक पद्धति पर लिखा हुआ हिन्दी में यह एक ही ग्रन्थ है और बड़े ही परिश्रम से लिखा गया है। सदाचार, नीति और धर्म का वास्तविक स्वरूप इसके बिना समझ में नहीं आ सकता। मूल्य २) सजिल्द ३)

अरबी-काव्य-दर्शन

इसे हिन्दू यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर श्रीमहेश-प्रसाद मौलवी आलिम-फाजिल ने लिखा है और अरबी साहित्य के परिचय के लिए हिन्दी में एक ही ग्रन्थ है। अरबी कवियों के सुभाषित पढ़कर आप फड़क उठेंगे। मूल्य १।)

ज्ञान और कर्म

कलकत्ता हाईकोर्ट के चीफ जज स्व० सर गुरुदास बनर्जी का लिखा हुआ अपूर्व ग्रन्थ गहरे से गहरे दार्शनिक और तात्त्विक विचारों से लेकर साधारण से साधारण व्यवहार की बातों का विवेचन। ऐसा कोई विषय नहीं जिसकी इसमें चर्चा न हो। मूल्य ३।)

कालिदास और भवभूति

यह ग्रन्थ प्रसिद्ध नाटककार द्विजेन्द्रलाल राय का लिखा हुआ है। इसमें कालिदास के शाकुन्तल और भवभूति के उत्तर रामचरित की तुलनात्मक आलोचना की गयी है और इन दोनों कवियों पर बिलकुल नया प्रकाश डाला गया है। मूल्य १।)

सिद्धार्थ

कविवर पं० अनूप शर्मा एम० ए०, एल० टी० का लिखा हुआ खड़ी बोली का अपूर्व काव्य। इसमें भगवान बुद्धदेव का बहुत ही सरस और सालंकार गुण-कीर्तन किया गया है। मूल्य ३)

नया प्रकाशन

सुनीता (उपन्यास)—जैनेन्द्रकुमार	।।=)
कुलीनता (नाटक)—सेठ गोविन्ददास	१)
पुष्पलता (कहानियाँ)—सुदर्शन	१।)
हिन्दी साहित्य की भूमिका—हजारीप्रसाद द्विवेदी	२।)
दो फूल (कहानियाँ)—सत्यवती मलिक	१।)
मानव (कविता)—श्रीमन्नारायण	।।=)
कल्याणी (उपन्यास)—जैनेन्द्रकुमार	२।
परख और स्पर्द्धा—जैनेन्द्रकुमार	।।=)

संचालक—हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय, हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको

रुपया चाहिए

और हमको

आपका समय चाहिए

रुपये तथा समय की तुलना नहीं हो सकती, क्योंकि रुपया तो वापस भी मिल सकता है, परन्तु बीता समय फिर कभी हाथ नहीं आ सकता।

प्रति दिन नियमित रूप से आप केवल २ घण्टे का समय देकर

न्यू एशियाटिक

की जीवन-बीमा पालिसी

बेचकर हजारों रुपये कमा सकते हैं

आप प्रगतिशील कम्पनी के साथ प्रगतिशील बनें

जिसने—

१९३४ ई० में	१५,३८,५०० रु०
१९३५ ई० में	२५,०१,००० ,,
१९३६ ई० में	३०,६६,७५० ,,
१९३७ ई० में	३५,५९,५०० ,,
१९३८ ई० में	४१,७४,७५० ,,
१९३९ ई० में	५०,११,७६८ ,,
१९४० ई० में	६०,१३,२५० ,,

के बीमे किये हैं

आज ही पत्र भेजकर विवरण मँगाकर देखें

न्यू एशियाटिक लाइफ़ इन्शुरेन्स कम्पनी लिमिटेड

कनाट सर्कस, नयी दिल्ली

शाखायें—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, नागपूर, हैदराबाद दक्षिण, अर्नाकुलम (कोचीन), लाहौर तथा पटना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी'

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।
(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।
(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है कि 'कहानी' सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं...यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिये।

श्री जैनेन्द्र—

'...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...'

श्री सुदर्शन—

'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम क़ीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क़'—

'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब—सब विचार से अंक सर्वांग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा—

'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है—अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय—

'कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई...'

श्री पहाडी—

'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी-पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेंगीं।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका व्यापार

केवल सुन्दर और चित्ताकर्षक

- ब्लाक
- छपाई
- कलेन्डर
- कार्ड बोर्ड बक्स
- लेबिल आदि

पर ही निर्भर है

फोन नं० ६३२७

इसलिये उपरोक्त सामग्री के लिये—

मुरारी फ़ाइन आर्ट वर्क्स,
४, दरियागंज देहली

ब्रांच- कटराबड़ियान देहली

को हमेशा याद रखिये

ब्रांच- कसेरट बाजार आगरा

और हमारे

२७ वर्ष के अनुभव

से लाभ उठाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालोपयोगी इतिहास-माला

उथल-पुथल के इस ज़माने में अपने देश के भावी नागरिकों को संसार के उलट-फेर से परिचित कराने के लिये **'बालोपयोगी संसार का संक्षिप्त इतिहास'** ३७ खंडों में निकालने की योजना है। पुस्तकें सरस और रोचक ढंग से लिखी गयी हैं कि इन्हें ऐतिहासिक जानकर नीरस और उलझनदार न समझें। कहानी के ढंग पर लिखी पुस्तकें सब सचित्र हैं। ज्ञान का भंडार। **मूल्य प्रत्येक का १)**

प्रकाशित—**वैदिक भारत, पौराणिक भारत रामायण, महाभारत, अमेरिका, ब्रह्मदेश और बौद्ध भारत।**

प्रेस में—**तुर्की भारत, मुगल भारत, राजस्थान, दक्षिणापथ (द्रविड़ों का इतिहास) सिख जाति और महाराष्ट्र विशेष जानकारी के लिये विवरण पत्र मँगाइए।**

बिहार, युक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त और बड़ौदा में शिक्षा-विभाग स्वीकृत

किशोर

विद्यार्थियों को लोकप्रिय और ज्ञानवर्धक पठन-सामग्री देनेवाला अपने ढंग का अकेला सचित्र मासिक।

'किशोर' विज्ञान, इतिहास की प्राचीन संस्कृति, साहित्य, व्यायाम और शिक्षा आदि के सम्बन्ध में किशोरों की ज्ञान-पिपासा शान्त करता है।

अपने पाठकों को मानव-जीवनक्रम, दुनिया के इतिहास, विज्ञान के शोधकों और साहसिकों के रोमांचक प्रसंगों का परिचय कराना है।

प्रेरक कवितायें, प्रकृति का सजीव वर्णन, यात्रा-विषयक लेख 'किशोर' की विशेषतायें हैं।

वार्षिक ३) : प्रत्येक ।-)

अप्रेल का अंक **'उपकथांक'** है।

इस विशेषांक का मूल्य ।।=)

हमारा साहित्यिक प्रकाशन

भारतीय ईश्वरवाद	पांडेय रामावतार शर्मा	३)
विहार-दर्पण	गदाधर प्रसाद अंबष्ट	५)
वहार के दर्शनीय स्थान	,, ,, ,,	१।)
प्रजातन्त्र	बा० रा० मोदक	१।)
कलापी	आरसीप्रसाद सिंह	२)
रिमझिम	हंसकुमार तिवारी	१)
हमारे साहित्य-निर्माता	शांतिप्रिय द्विवेदी	१)
साहित्यिकी	,, ,,	१।)
जीवन-यात्रा	,, ,,	।।।=)
रामचरित चिंतामणि	रामचरित उपाध्याय	२)
पद्य-प्रमोद	हरिऔध	।।)
हिन्दी मुहावरे	रामदहिन मिश्र	२।)
हिंदुस्तानी भाषा कोष	मिश्र और अंबष्ट	१।)
नवजीवन	राजा राधिकारमण प्र० सिंह	।।)
उद्भ्रांत प्रेम	चन्द्रशेखर उपाध्याय	।।।)
मेरे यूरोप के अनुभव	डा० राजेन्द्रप्रसाद	।=)
सम्मोहन विद्या	पी० सी० सरकार	।।)
लाल चीन	रामवृक्ष बेनीपुरी	२)
स्टालिन	रामइक़बालसिंह	२)
खिलौना घर	हेनरिक इसेन	।।)
मज़दूरों की छाती पर	के० पी० झा	२)
भाई-बहन	मोहनलाल महता	१)
रजकण	,, ,,	।।)
विभेद	राधाकृष्ण प्रसाद	।।)
भूली हुई कहानियाँ	सरयू पंडा गौड़	१।)
पुण्य फल	व्यथित हृदय	।)
तुलसी-साहित्य	देवदत्त त्रिपाठी	।)
शकुन्तला	राजा लक्ष्मणसिंह	।।।)
जीवन-ज्योति	प्रफुल्लचन्द्र ओझा 'मुक्त'	३)
विमान	गिरधारीलाल शर्मा	१।)
ग्राम्य-पंचायत	वि० ग० वझे	।।=)
सन्त-साहित्य	भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'	१।।)

बाल-शिक्षा-समिति और ग्रंथमाला-कार्यालय, बाँकीपुर (पटना)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबी जनरल इंश्योरेंस कंपनी लि०

चेयरमेन--सेठ ब्रजमोहन बिड़ला

आयोजित पूँजी—४५,००,०००) रुपये

भुगतान पूँजी—१४,४०,०००) रुपये

ज़िन्दगी, आग, जहाज़ और (मोटर आदि सब) दुर्घटनाओं का बीमा कराने में

सबसे सुरक्षित बीमा कम्पनी

इसमें बीमा कराइए या एजेंसी लीजिए

जहां हमारे प्रतिनिधि नहीं हैं, उन शहरों में जीवन-बीमा-विभाग के लिए एजेण्टों की आवश्यकता है

प्रार्थनापत्र भेजिए

↓

जनरल मैनेजरः—

८, रॉयल एक्सचेञ्ज प्लेस, कलकत्ता

या

बम्बई, कराची, रामपुर, लाहौर, मद्रास, नई दिल्ली, कानपुर, पटना शाखाओं को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हँस-परिवार' की अनुपम योजना के सदस्य बनिए

[१] भारतीय-पुस्तक-माला
(क) कायाकल्प (३ भाग)
(ख) स्नेहय्यज्ञ [१-२]

[२] 'हंस' पुस्तकें
(क) मा [भाग १-२]
(ख) गाड़ीवानों का कटरा [भाग ३]
(ग) सात इनक़लाबी इतवार [भाग १-२-३]

[३] गल्प-संसार-माला
१० प्रमुख प्रान्तीय भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ कहानी-संग्रह।

[४] प्रगतिशील पुस्तकें
(क) नया हिन्दी-साहित्य : एक दृष्टि और पाँच अन्य पुस्तकें

[५] नवसृजन ग्रंथावली
(क) शोभा : ले० इन्द्र वसावड़ा
(ख) संजीवनी : ले० 'सोपान'
(ग) प्रायश्चित्त [भाग १-२] : ले० सोपान

[६] जाग्रत-महिला-साहित्य
(क) पिकनिक : लेखिका— कमलादेवी चौधरी
(ख) पिया : लेखिका— उषादेवी मित्रा
(ग) कौमुदी : लेखिका— शिवरानी देवी

[७] आज की किताब
(क) कँटीले तार [भाग १-२]
(ख) जाई-जुई
और ९ अन्य पुस्तकें

[८] 'हंस' मासिक १२ अंक

[९] 'कहानी' मासिक के १२ अंक और १।।) मूल्य की 'कोकिला' नामक पुस्तक भेंट।

इसके साथ हम जिन प्रवृत्तियों का संक्षिप्त विवरण दे रहे हैं उनका कुल मूल्य रु० ३३-१४-० होता है। पर हम अपने बहुत-से कृपालु ग्राहकों तथा विशेषतया सार्वजनिक संस्थाओं की सुविधा के लिए यह चाहते हैं कि इन प्रवत्तियों की मात्रा २५ रु० में दें। इसमें हमें आज की मँहगी के ज़माने में कितनी हानि उठानी पड़ेगी, यह हमारे दयालु सहायकगण समझ ही सकते हैं : यह संस्था तो सेवा के लिये ही खड़ी है। इन नौ प्रवृत्तियों के ग्राहक बननेवालों को हम 'हंस-परिवार' का एक सदस्य मान लेंगे और उनकी सूची आदि भी समय-समय पर प्रकाशित करेंगे।

इस मूल्य में निःशुल्क बारह महीने तक दो मासिक हर महीने मिलते रहेंगे और एक वर्ष में छोटी-बड़ी कुल मिलाकर ४७ पुस्तकें मिलेंगी जिनकी पृष्ठ-संख्या कुल जोड़कर १०,००० के लगभग होती है; अर्थात् पत्रिका के पृष्ठों और सामग्री को छोड़कर २।।) रु० में १००० पृष्ठ मिलते हैं। इससे सस्ती योजना भारत की किसी प्रान्तीय भाषा में तो क्या, अंग्रेज़ी में भी नहीं है। यह योजना बेजोड़ है। निस्सन्देह।

इन पुस्तकों में विविधता कितनी है, इसका परिचय नीचे लिखे परिचय से मिल जायगा।

[१] १२०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रमुख भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद। [२] १२०० पृष्ठों में संसार के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद। [३] २४०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रान्तीय भाषाओं से सुन्दरतम कहानियों का अनुवाद, जिसमें आप भारतीय साहित्य की सम्पूर्ण गतिविधि से परिचित हो जाते हैं। [४] प्रगतिशील दृष्टिकोण से लिखे निबन्धों, कहानियों और कविताओं के ६ संग्रह। १००० पृष्ठ की उत्तम पाठ्य-सामग्री आपको देंगे। [५] गुजराती साहित्य के सर्वश्रेष्ठ तीन उपन्यासों का अनुवाद, ९०० पृष्ठों में उचित किया गया है। [६] महिलाओं के लिए उन्हीं के दृष्टिकोण से लिखे उपन्यासों और कहानियों के तीन ग्रन्थ-रत्न। ये आपके परिवार में पत्नी तथा माँ-बहन के लिए स्वास्थ्यकर मानसिक भोजन प्रदान करेंगे। [७] 'आज की किताब' के अन्तर्गत एक वर्ष में आपको १२ किताबें मिलेंगी जिनमें आज की समस्याओं का सुझाव रहेगा। अधिकांश तो छोटे-छोटे उपन्यास होंगे जो आपको अपने यथार्थवाद से चौंका देंगे।

सरस्वती-प्रेस, बनारस : इन्दौर : लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिरला जूट मेनुफैक्चरिंग

कम्पनी लिमिटेड के

अत्यन्त सुन्दर, मज़बूत और सस्ते

जूट के बने गलीचे, दरियां और आसन

प्रत्येक साइज़ में सभी हमारी दुकानों पर मिलते हैं

और विशेष रूप में

१ खन्ना इन्डस्ट्रीज़, बनारस सिटी
२ नेशनल नोवेल्टी स्टोर, कानपुर
३ जेठमल भोजराज, दार्जिलिंग
४ एम. डी. जिन्दल, एन्ड सन्स,
दुकान नं० २० मरीना होटल, नई दिल्ली
५ नौर्दर्न ट्रेडिंग कम्पनी लाहौर
६ नॉवेल्टी स्टोर्स, अमृतसर
७ पंजाबी ब्रदर्स, लुधियाना
तथा पंजाब के बड़े-बड़े सभी शहरों में

और

बंगाल स्टोर्स, लिमिटेड

नं० ८ ए. चौरंगी प्लेस (टेलीफोन नं० ३६३३) कलकत्ता

में

भिन्न-भिन्न प्रकार के मनोहर डिज़ाइन, आपकी इच्छानुसार आपकी आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं।

टेलीफोन नं० ५६५

बिरला जूट मेनुफ़ैक्चरिंग कम्पनी लिमिटेड

नं० ८ रायल एक्सचेञ्ज प्लेस, कलकत्ता

टेलीग्राम 'जूट वीवर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग
के
प्रकाशन

१—**प्रेमघन-सर्वस्व (प्रथम भाग)**—व्रजभाषा के आचार्य स्वर्गीय पंडित बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की सम्पूर्ण कविताओं का सुसम्पादित और सम्पूर्ण संग्रह। भूमिका माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन और प्रस्तावना आचार्य पंडित रामचन्द्र शुक्ल ने लिखी है। मूल्य ४।)

२—**वीरकाव्य संग्रह**—हिन्दी-साहित्य के वीररस के कवियों की चुनीहुई सर्वश्रेष्ठ कवितायें और उनके साहित्य की विस्तृत आलोचना। सम्पादक—श्री भागीरथप्रसाद दीक्षित साहित्यरत्न और श्री उदयनारायण त्रिपाठी एम० ए०। मूल्य २)।

३—**डिंगल में वीररस**—डिंगल भाषा के आठ श्रेष्ठ वीररस के कवियों की कवितायें तथा तथा उनकी साहित्यिक कृतियों की आलोचना। सम्पादक—श्री मोतीलाल मेनारिया एम० ए०। मूल्य १।।)

४—**संक्षिप्त हिन्दी-साहित्य**—हिन्दी-साहित्य का संक्षिप्त और आलोचनात्मक इतिहास प्राचीन काल से आधुनिक काल तक की हिन्दी-साहित्य की समस्त धाराओं तथा प्रवत्तियों पर प्रकाश डालतेहुए विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। लेखक—पंडित ज्योति:प्रसाद मिश्र 'निर्मल'। मूल्य ।।।)

५—**चित्ररेखा**—हिन्दी के प्रसिद्ध रहस्यवादी कवि प्रोफेसर रामकुमार वर्मा एम० ए० की कविताओं का अपूर्व संग्रह। लेखक को इसी पुस्तक पर देवपुरस्कार प्राप्त हुआ है। मूल्य १।।)।

आधुनिक कवि—(१) प्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा एम० ए० की लिखीहुई अब तक की सर्वश्रेष्ठ कविताओं का संग्रह। यह संग्रह स्वयं कवयित्री ने किया है और पुस्तक के प्रारम्भ में अपनी कविताओं की प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में प्रकाश डाला है। मूल्य १।।)

बाल-साहित्य-माला

१. **वीरशतमन्यु** (कविता) मूल्य ।)
२. **छत्रपति शिवाजी** (जीवनी) मूल्य ।)
३. **बालभारती** (कविता) ठाकुर श्रीनाथसिंहजी की बालोपयोगी सर्वश्रेष्ठ कवितायें। मूल्य ।-)
४. **बालकथा** (कहानी) सौभाग्यवती श्रीमती कमलाबाई किबे मूल्य ।=)
५. **बालकवितावली** (कविता) मूल्य ।)

सम्मेलन-पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रयाग की यह मुखपत्रिका है, इसमें प्रतिमास पठनीय साहित्यिक लेख प्रकाशित होते हैं। हिन्दी के प्रचार और प्रसार पर विस्तृत प्रकाश डाला जाता है। सम्मेलन की प्रगति का परिचय प्रतिमास मिलता रहता है। इसके सम्पादक साहित्य-मन्त्री श्री ज्योति:प्रसाद मिश्र 'निर्मल' हैं। वार्षिक मूल्य केवल ३)।

पता—**साहित्य-मन्त्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल्ली में

सब प्रकार की उत्तम छपाई

और ख़ास करके

हिन्दी पुस्तकों की छपाई

का काम

फेडरल ट्रेड प्रेस

नया बाज़ार : दिल्ली : : फोन नं० ५३७७

में

बहुत अच्छा और सावधानी से

किया जाता है

एक बार परीक्षा कर देखें

यही एक प्रमाणपत्र काफी है कि हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ प्रकाशन-संस्था

'सस्ता साहित्य मण्डल' की पुस्तकें

हमारे यहाँ छपती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-सन्देश का साहस

अक्टूबर के महीने में अपना वृहद् उपन्यास-अङ्क निकालने के पश्चात्

[छः महीनों में चार विशेषांक]

पहला—परीक्षांक ! यह एक मार्च को पाठकों के हाथ में होगा। इस अंक का प्रकाशन विद्यार्थियों के लाभार्थ किया जा रहा है। इन्टर, बी० ए० और एम० ए० के विद्यार्थी इससे विशेष रूप में लाभ उठा सकेंगे और आगे चलकर सम्मेलन की परीक्षाओं में भी इस अंक का उपयोग हो सकेगा।

दूसरा—शुक्ल-अंक ! यह एक अप्रेल सन् १९४१ को तैयार होगा। इस अंक में शुक्लजी का प्रारम्भिक जीवन, उनकी समस्त कृतियों की आलोचना, आपकी शैली का विश्लेषण, हिन्दी के प्रति की गयी आपकी सेवाओं का विवेचन और आचार्य के जीवन के कुछ महत्वपूर्ण संस्मरण इस अंक में छापे जायेंगे। हिन्दी के पाठकों को संदेश के प्रसाद-अंक' और 'द्विवेदी अंक' की याद न भूली होगी। कोशिश यह की जा रही है कि यह अंक भी अपनी पिछली परम्परा का आदर्श उपस्थित कर सके।

तीसरा—उपन्यास-अंक ! (दूसरा खण्ड) यह अंक १ जून सन् १९४१ को प्रकाशित होगा। हम उपन्यास-अंक का प्रथम खण्ड अक्टूबर सन् १९४० में निकाल चुके हैं। उक्त अंक में हिन्दी उपन्यासों का मार्मिक विवेचन किया गया था। अब इस अंक में भारत की प्रान्तीय भाषाओं के उपन्यासों एवं विश्व के उपन्यासों की मूल धाराओं पर प्रकाश डाला जायगा। हिन्दी के कुछ श्रेष्ठ उपन्यासों पर इस अंक में अधिकारी व्यक्तियों के अध्ययन प्रस्तुत किये जाएँगे। और हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार अपनी उपन्यास-कला के विस्तृत अनुभव स्वयं अपनी कलम से हिन्दी पाठकों को देंगे।

चौथा—आलोचनांक ! यह चतुर्थ वर्ष की समाप्ति के बाद नववर्षांक के रूप में सितम्बर सन् १९४१ को तैयार होगा। यह अंक एक प्रकार से हिन्दी जगत् में अभूतपूर्व होगा। यह हिन्दी समालोचना का इतिहास, उसके विभिन्न पहलू, आधुनिक समालोचना के मान और हिन्दी के सभी समालोचकों की शैलियों पर अपना पूर्ण अध्ययन प्रस्तुत करेगा। यह अंक उपन्यास-अंक से भी अधिक महत्वपूर्ण होगा।

इन सभी अंकों के दाम लागत के अनुसार फुटकर लेनेवालों को अधिक देने पड़ेंगे। इससे अच्छा यह है कि स्थायी ग्राहक बना जाय और ३) पेशगी भेज दिये जायँ। विद्यार्थी समाज तो २) में ही वर्ष भर ग्राहक रह सकता है।

साधारण अंक का नमूना मुफ्त मँगाकर देख लीजिए।

पत्र-व्यवहार का पता

साहित्य सन्देश कार्यालय, आगरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री घनश्यामदास बिड़ला की कृतियाँ

बापू

एक पाठक की सम्मति

हिन्दी के लेखकों, पत्र-पत्रिकाओं, सम्पादकों समालोचकों और विचारकों ने तो 'बापू' को हिन्दी की एक अद्वितीय पुस्तक स्वीकार किया ही है, परन्तु नीचे एक ऐसे साधारण पाठक की सम्मति दी जाती है, जिन्हें इस कारण 'बापू' पुस्तक मुफ्त भेजी गयी थी कि वह महात्मा गांधी की विचारधारा से मतभेद रखते हैं, पर उसे समझना चाहते हैं। वह लिखते हैं—

"आपकी तरफ़ से आयी हुई बहुमूल्य भेंट पुस्तक 'बापू' मुझको मिली है। 'बापू' पुस्तक मैंने बड़े चाव से पढ़ी है। मैंने अभीतक कई मराठी और अंग्रेज़ी भाषा में लिखे हुए महात्माजी के चरित्र-ग्रन्थ पढ़े हैं, लेकिन 'बापू' के समान उनके विचार, व्यक्तित्व और महनीयत्व का सम्यक् परामर्श देनेवाला चरित्र शायद ही दूसरा होगा। उपन्यास के समान वाचक का अवधान पुस्तक अपनी ओर खींच लेती है। मेरे मनपर इसके परिशीलन का प्रभाव तो बहुत ही हुआ है—मेरे परिचित और आप्त लोगों में यह पुस्तक मैं पढ़ने के लिए देता रहा हूँ। खुद मेरे लिए भी पढ़ने को प्राप्त नहीं होती, इतनी पुस्तक की माँग आती है।

"मैं हिन्दी लिख नहीं सकता, इस कारण से बहुत से विचार अप्रदर्शित रक्खे गये हैं—लेकिन मतलब यह है कि भेंट-पुस्तक ने मुझे बहुत ऋणी बनाया है। दिल चाहता है मैं उसे बार-बार पढ़ूँ और मेरी विचार-सरणी उससे मिलती-जुलती रखने की कोशिश मनःपूर्वक करूँ।

शिरपुर, वेस्ट खानदेश
२६-३-४१

आपका नम्र
जनार्दन वामन जोशी

डायरी के पन्ने

एक साहित्यिक की सम्मति

"डायरी यह हृदय की नहीं, समय की है। सबसे क़ीमती आत्मा की डायरी होती है। उसकी कीमत साधक के लिए और सर्वकालीन है। पर समय की डायरी की भी कम कीमत नहीं। इतिहास के लिए वह दस्तावेज का काम देती है। कम-से-कम यह पुस्तक तो एक कीमती दस्तावेज ज़रूर रहेगी।

"इतिहास के बाजार में घटनाओं का पक्का माल आता है। भीतर कारखाने के अन्दर उन घटनाओं के ताने और बाने में क्या कुछ होता जाता है, इतिहास की आँख वहाँ नहीं पहुँचती। घनश्यामदासजी की डायरी में बहुत अच्छा सन्तुलन है। गोलमेज के नाटक का नेपथ्य अपनी यथार्थता में सामने दीख आता है।

× × ×

"**पुस्तक में दो बातें अपूर्व मिलीं। अपूर्व से मतलब कि हिन्दी पुस्तकों में वह गुण नहीं मिलते।** एक यह कि बड़ी-से-बड़ी बात सहज घरेलू ढंग पर कही गयी है। उसमें प्रयास नहीं है, खींचतान नहीं है। जीवन का स्वस्थ और यथानुपात दृष्टिकोण है। जैसे छोटी बात भी बड़ी नहीं।...बिड़लाजी की इस क्षमता पर मुझे अचरज तक है और मैं उसका अभिनन्दन करता हूँ।

"दूसरी है, उनकी अलिप्त और अनाविल शैली।...उन्होंने बात को सम्हाला है और भाषा अपने आप सँवर गयी है। मन को और बुद्धि को थामकर चलाया है और भाषा इसमें संयत होकर भी सहृदय रही है। इस पुस्तक की ताज़गी 'बापू' से भी मुझे बढ़ी हुई मालूम हुई।"

दिल्ली]

जैनेन्द्रकुमार

बिखरे विचार

"बिड़लाजी के कुछ व्यक्तिगत पत्रों तथा उन लेखों का संग्रह है जो समय-समय पर **'विश्वमित्र'**, **'त्यागभूमि'**, **'विशाल भारत'**, **'हरिजन-सेवक'**, **सरस्वती,** **'बिड़ला कॉलेज मैगजीन'** आदि पत्र-पत्रिकाओं में आज से कुछ वर्ष पहले प्रकाशित हो चुके हैं—अन्तिम लेख—**'हीरा'** इसी वर्ष की ताज़ी रचना है।" मूल्य १॥), २)

'मण्डल' तथा 'जीवन साहित्य' के ग्राहकों को पौने मूल्य में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

हिन्दी की एकमात्र प्रगतिशील, सार्वजनिक और लोकप्रिय प्रकाशन-संस्था है

उसके १४ वर्षों का कार्य ही उसकी निश्चित और ठोस प्रगति का तथा लोकप्रियता का जीवित प्रमाण है

* सन् १९४० के अन्त तक मण्डल ने एकसौ पैंतीस पुस्तकें प्रकाशित कीं।
* मण्डल से प्रकाशित इन पुस्तकों की पृष्ठ-संख्या इकत्तीस हज़ार एक सौ होती है।
* मण्डल के पूरे सेट का दाम एक सौ रुपया होता है।
* इन १४ वर्षों में मण्डल ने अपनी प्रकाशित पुस्तकों की चार लाख चालीस हज़ार प्रतियाँ बेची हैं।
* इन १४ वर्षों में मण्डल ने वर्ष भर में कम से कम चार हज़ार और अधिक से अधिक छासठ हज़ार रुपये की प्रति वर्ष बिक्री की है।

यह सब क्यों और कैसे हुआ ?

इसलिए कि मण्डल ने अपने लाभ की अपेक्षा पाठकों के लाभ का सदैव ध्यान रखा है।
इसलिए कि मण्डल ने हमेशा पाठकों के मन को लुभानेवाला नहीं, बल्कि दृढ़ और शुद्ध बनानेवाला साहित्य दिया है।
इसलिए कि देश के परखे हुए नेता और सेवक मण्डल का संचालन करते हैं।
इसलिए कि राष्ट्र-पुरुषों और नेताओं ने मण्डल को अपने आशीर्वाद दिये हैं।

अतः आप

निःशंक होकर अपने लिए मंडल से समय पर रिआयती दाम में पुस्तकें पाने के लिए

'मण्डल' और **'जीवन-साहित्य'** (मासिक पत्र) के ग्राहक बनिए।

(सम्पादक—हरिभाऊ उपाध्याय)

'जीवन-साहित्य' जीवनदायी विचारों के अलावा मंडल की अन्य पुस्तकों के समाचार भी देता है।

इस पते से पत्र-व्यवहार करें :— **सस्ता साहित्य मंडल कनाट सर्कस नई दिल्ली**

—शाखायें—

दरीबा कलाँ दिल्ली | अमीनुद्दौला पार्क लखनऊ | खजूरी बाजार इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मार्तण्ड उपाध्याय द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नई दिल्ली, में छपकर वहींसे मार्तण्डउपाध्याय

तमसो मा ज्योतिर्गमय

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन साहित्य

१ : अंक १० | सम्पादक | मई : १९४१

हरिभाऊ उपाध्याय

स्कूल का मक़सद

अगर किसी स्कूल का मक़सद यह हो कि किसी उद्योग के जरिये तालीम दी जाये तो उसे नीति और सुरुचि के गुणों को इज्ज़त देनी होगी और वह लगन पैदा करानी होगी जिससे वे हासिल हो सकें। ऐसा होगा तभी हमारे नौजवान आदर्शों के आगे झुकना सीखेंगे और तबतक जिन्दगी को बेमानी और फीकी समझेंगे, जबतक कि उसमें वे गुण नहीं झलकने लगेंगे, जिनपर समाज क़ायम है और जिससे उसे तेज़ी के साथ आगे बढ़ने की ताक़त मिलती है।

जिस स्कूल के वातावरण से या व्यापक समाज से विद्यार्थी लिये गये हैं, उसीमें व्यक्तिगत योग्यता और सहयोग को ही स्कूल अपना मक़सद नहीं बना सकता। सामाजिक गुणों के लिए उनके दिलों में जो इज्ज़त है वह ऐसे नैतिक गुणों के आगे झुक जानी चाहिए और जो होशियार नागरिक है उसे नैतिक दृष्टि से भी योग्य नागरिक पुरुष होना चाहिए। ऊँचे-से-ऊँचे मक़सद की खोज शुरूआत से ही हमें होनी चाहिए; और हमेशा उससे आगे बढ़ने की हौंस तो होनी ही चाहिए।

डॉ० ज़ाकिर हुसैन

सस्ता साहित्य मण्डल

कनाट सर्कस नई दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

१. आह्वान (कविता)—['अंचल'] ४०५
२. पाठकों तक पहुँचें— ४०६
[श्री हरिभाऊ उपाध्याय]
३. हिन्दी पुस्तकों की बिक्री— ४०७
[श्रीशंकरसहाय सक्सेना, एम. ए. बी. कॉम]
४. विज्ञापनों की बीमारी— ४१०
[श्री के. सी. चौधरी]
५. दूसरी बुनियादी तालीम-परिषद्— ४१३
[श्री गोपाल रामचन्द्र कुलकर्णी]
६. गुप्त ठग [श्री रामनरेश त्रिपाठी] ४१६
७. जीवन का उषाकाल— ४१८
[श्री प्रभुदास गांधी]
८. कवि का धर्म— ४२१
[श्री सोहनलाल द्विवेदी एम. ए. एल-एल. बी.]
९. 'अश्लील' और 'अश्लीलता'— ४२२
[श्री जैनेन्द्रकुमार]
१०. वृद्ध से—[श्री वियोगी हरि] ४२७
११. श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन : एक शब्द-चित्र [प्राप्त] ४२९
१२. प्रस्तुत प्रश्न— ४३०
शिक्षण का उद्देश [श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर]
राष्ट्रभाषा [श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन]
बालकों की रुचि [श्री राजेन्द्रकुमार]
कवियों से [श्री सुधीन्द्र एम. ए.]
१३. समालोचनार्थ प्राप्त— ४३३
१४. कसौटी पर— ४३४
'लालचीन', 'कलापिनी', 'महाकवि हरिऔध का प्रियप्रवास' 'अनुभूत पशु चिकित्सा'; 'अभिनव एकांकी नाटक'
१५. सहयोगियों में से— ४३७
शिक्षा और शिक्षक; यह 'पातक' हैं! ; मानव-धर्म
१६. सैर-सपाटा— ४३९
१७. कृष्णमन्दिर में— ३३९
१८. क्या और कैसे ? ४४०
गरीब लेखकों की समस्या; प्रकाशकों की चोरी; क्या लिखूं ?; पाठकों से; अमल से दिखाओ; 'सैनिक' के साथ न्याय; समर्थन; स्वर्गीय गोयनकाजी; 'हृदय'जी; अमर भेंट !

युवकोपयोगी तीन अनुपम पुस्तकें

आत्म संयम—लेखक—पं० जगपति चतुर्वेदी। यह पुस्तक कई प्रसिद्ध अंग्रेज़ी, संस्कृत, पाली तथा हिन्दी पुस्तकों के आधार पर लिखी गई है। संसार में अपने शत्रु पर विजय पाना उतना कठिन नहीं, जितना काम, क्रोध आदि षट्विकारों, मन तथा वासनाओं पर विजय पाना कठिन। इस पुस्तक में अपने मन, वाणी आदि इन्द्रियों तथा वासनाओं पर अधिकार करने के सहज सरल उपाय बताये गये हैं। हिन्दी में अपने ढंग की यह एक ही पुस्तक है। मूल्य १)

देश की आन पर—लेखक—गणेश पांडेय। इस पुस्तक में देश-प्रेम और देश-भक्ति के लिए अपने सर्वस्व निछावर करनेवाले वीर-वीरांगनाओं की कहानियों का संग्रह है। प्रत्येक कहानी बहुत ही आकर्षक शैली में लिखी गई है, ओजस्वी और जोरदार भाषा में लिखीहुई कहानियाँ प्रत्येक युवक को देश-प्रेम में मतवाला बनानेवाली हैं। सुन्दर कवर से युक्त पुस्तक का मूल्य ।॥)

चरित्र-निर्माण की कहानियाँ—लेखक—श्री व्यथितहृदय। इस पुस्तक में उन कहानियों का संग्रह है, जो विद्यार्थियों और नवयुवकों के चरित्र पर अद्भुत प्रभाव डाल सकती हैं। चरित्र-निर्माण के लिए इससे बढकर उपयोगी पुस्तक नहीं मिल सकती। मूल्य ।॥)

मैनेजर—**छात्र-हितकारी पुस्तकमाला, दारागंज, प्रयाग**

कानपुर के सोल एजेंट : साहित्य निकेतन, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

[हिन्दी की श्रेष्ठ राष्ट्रीय प्रकाशन संस्था]

शाखायें
दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

कनाट्सर्कस; नईदिल्ली
१ मई १९४१

स्थायीग्राहकों के नाम
—सूचना-पत्र—

[कृपया यह कार्ड भरकर बिना टिकिट लगाये ही भेजें]

स्थान.............................ता०...........................

प्रिय महोदय,

जी० सा० में नई पुस्तकों की सूचना पढ़ी। ये नई पुस्तकें तथा दूसरी पुस्तकें जिनके नाम नीचे लिखे हैं वी० पी० से भेजदें। पुस्तकें रेल पार्सल या पोस्ट से जो सस्ता पड़े भेजें। मैं वी० पी० छुड़ा लूँगा। मेरा ग्रा० नं०............है। **ये पुस्तकें भेजें—**

१. लड़खड़ाती दुनिया, २. सेवाधर्म-सेवामार्ग ३. दुनिया की शासन प्रणालियाँ ४. युद्ध संकट और भारत (२) ५. देशी नरेशों का दरजा ६. डायरी के पन्ने ७. बिखरे विचार ८. प्रलय-वीणा ९. सोने की माया १०. सत्यवीर की कथा.________

____

____

____

____

२. मैं जी० सा० का ग्राहक नहीं बन पाया हूँ, सो आप १) उपरोक्त पुस्तकें भेजते समय वी० पी० में जोड़ लें और अंक चालू करदें।

३. मेरे इन मित्रों के नाम भी जी० सा० चालू करदें और इनको भी १) वाला ग्राहक बना दें।

१________________ २________________

________________ ________________

________________ ________________

भवदीय

नाम________________ पता________________

____

...।० द्वारा दी गई थी। उसमें
...प्रकाशित हुई हैं।

...॥)
...एम० एल० ए०) १)
...यूरोपीय युद्ध १॥)
...हरलाल नेहरू) ।)
...।)
...॥।)
...१॥)
...१)
...) -)
...-)

कुल मूल्य ६॥।=)
...ग्रा० कमीशन १॥≡)॥
५=)॥

...गया है। इनमें × निशानवाली

...से कइयों के पत्र मिले कि खादी-
...तकें नहीं लीं। अब भी पुस्तकें
...जल्दी-से-जल्दी ले लिया करें;
...ह जाते हैं।
...हीं बने हैं। पिछली बार के आर्डरों
में आपमें से बहुतों ने लिखा तो कि जी० सा० भेजते रहें रुपया भेज देंगे, पर कई का रुपया तो अभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

१. आह्वान (कविता)—['अंचल'] ४०५
२. पाठकों तक पहुँचें— ४०६
[श्री हरिभाऊ उपाध्याय]
३. हिन्दी पुस्तकों की बिक्री— ४०७
[श्रीशंकरसहाय सक्सेना,
एम. ए. बी. कॉम]
४. विज्ञापनों की बीमारी— ४१०
[श्री के. सी. चौधरी]
५. दूसरी बुनियादी तालीम
[श्री गोपाल रामचन्द्र
६. गुप्त ठग [श्री रामनरे
७. जीवन का उषाकाल—
[श्री प्रभुदास गांधी]
८. कवि का धर्म—
[श्री सोहनलाल द्विवेद
एम. ए. एल-एल.
९. 'अश्लील' और 'अश्लील
[श्री जैनेन्द्रकुमार]
१०. वृद्ध से—[श्री वियोगि
११. श्री पुरुषोत्तमदास टण्ड
शब्द-चित्र [प्राप

१२. प्रस्तुत प्रश्न— ४३०
शिक्षण का उद्देश [श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर]
राष्ट्रभाषा [श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन]
बालकों की रुचि [श्री राजेन्द्रकुमार]
कवियों से [श्री सुधीन्द्र एम. ए.]
१३. समालोचनार्थ प्राप्त— ४३३
१४. कसौटी पर— ४३४
'लालचीन', 'कलापिनी', 'महाकवि

Business Reply Card

DELHI. G.P.O.
Permit No. 279.

Postage will be paid by addressee.

व्यवस्थापक,
सस्ता साहित्य मण्डल,
कनाट सर्कस,
NEW DELHI.

No postage stamp necessary if posted in India.

युवको

आत्म संयम—
पाली तथा हिन्दी पुस्तकों
उतना कठिन नहीं, जित
कठिन । इस पुस्तक में
के सहज सरल उपाय बत

देश की आन
के लिए अपने सर्वस्व नि
प्रत्येक कहानी बहुत ह
लिखीहुई कहानियाँ प्रत्ये
युक्त पुस्तक का मूल्य ।

चरित्र-निर्माण
कहानियों का संग्रह है; ज
हैं । चरित्र-निर्माण के लि

मैनेजर—ह

कानपुर के सोल एजंट : साहित्य निकेतन, कानपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

[हिन्दी की श्रेष्ठ राष्ट्रीय प्रकाशन संस्था]

शाखायें
दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

कनाट्सर्कस; नईदिल्ली
१ मई १९४१

स्थायीग्राहकों के नाम
—सूचना-पत्र—

बन्धुओ,

गतवर्ष नवंबर में नई पुस्तकों की सूचना आपको जी० सा० द्वारा दी गई थी। उसमें 'विनोबा के विचार' तक पुस्तकें थीं। उसके बाद निम्न पुस्तकें और प्रकाशित हुई हैं।

१.	लड़खड़ाती दुनिया (जवाहरलाल नेहरू)	।।)
२.	सेवाधर्म : सेवामार्ग (श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, एम० एल० ए०)	१)
३.	दुनिया की शासन-प्रणालियाँ और आज का यूरोपीय युद्ध	१।।)
४.	यूरोपीय युद्ध और भारत (गांधीजी और जवाहरलाल नेहरू)	।)
५.	देशी राजाओं का दरजा (प्यारेलाल)	।)
६.	डायरी के पन्ने (घनश्यामदास बिड़ला)	।।।)
×७.	बिखरे विचार ,,	१।।)
×८.	प्रलय-वीणा (सुधीन्द्र)	१)
९.	सोने की माया (किशोरलाल घ० मशरूवाला)	-)
१०.	सत्यवीर सुकरात (गांधीजी)	-)
	कुल मूल्य	६।।।=)
	स्था० ग्रा० कमीशन	१।।≡)।।
		५=)।।

इन पुस्तकों का परिचय कवर के चौथे पृष्ठ पर दिया गया है। इनमें × निशानवाली पुस्तकें सोल एजेन्सी विभाग की हैं।

पिछली बार जो सूचना गई थी उसके उत्तर में आपकी ओर से कइयों के पत्र मिले कि खादी-भण्डारों से पुस्तकें आप लेलेंगे पर अभी तक आपने भण्डारों से पुस्तकें नहीं लीं। अब भी पुस्तकें आपको भण्डारों पर मिलेंगी पर उनसे यह सूचना मिलने के साथ ही जल्दी-से-जल्दी ले लिया करें; क्योंकि फिर पुस्तकें खतम हो जाती हैं और आप पाने से वंचित रह जाते हैं।

अभी भी आप में से कई सज्जन 'जीवन-साहित्य' के ग्राहक नहीं बने हैं। पिछली बार के आर्डरों में आपमें से बहुतों ने लिखा तो कि जी० सा० भेजते रहें रुपया भेज देंगे, पर कई का रुपया तो अभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक नहीं आया। इसी कारण छठे अंक से ही हमें अंक भेजना बंद कर देना पड़ा था। आशा है अब आप शीघ्र ही जी० सा० के ग्राहक बन जावेंगे।

पिछले अंक में हमने यह सूचना भी छापी थी कि 'मण्डल' के या 'जी० सा०' के ग्राहक अपने किसी मित्र परिचित या प्रिय संस्था की सिफारिश करेंगे तो उनकी सिफारिश पर जी० सा० १) में वर्ष भर दिया जायगा। इस सूचना का लाभ जी० सा० के ग्राहकों ने तो काफ़ी उठाया। आप उठाना चाहें तो अपने परिचितों की सिफारिश कर सकते हैं और उनका रुपया आने पर १) में जी० सा० वर्ष तक भेजा जाया करेगा।

इस बार एक बहुत जरूरी सूचना आपको यह देनी है कि मण्डल के तथा जी० सा० के ग्राहकों को खादी-भण्डारों पर से मण्डल द्वारा प्रकाशित जो पुस्तकें पौनी क़ीमत पर मिल जाया करती थीं अब उसके बजाय ≡) रुपया कमीशन पर ही मिल सकेंगी। हमने सब भण्डारों और सोल एजेंसियों को यह सूचना भेज दी है। ग्राहक प्रमाण-पत्र का जो कार्ड आपके पास है उसे बताने पर अब आपको ≡) रुपया कमीशन मण्डल की पुस्तकों पर मिलेगा। हाँ मण्डल की शाखाओं (इन्दौर, दिल्ली लखनऊ) और प्रधान कार्यालय नई दिल्ली से आपको पौनी क़ीमत में पुस्तकें मिल सकती हैं।

पुस्तकें मँगाते समय जो कार्ड भरें उसमें अपना ग्राहक नंबर अवश्य लिखें। जल्दी ही आर्डर-कार्ड भरकर भेजने की कृपा करें। उसमें टिकिट न लगावें।

भवदीय
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री और प्रधान व्यवस्थापक

हाथ-कागज की स्टेशनरी

पाठकों को यह जानकर खुशी होगी कि 'मण्डल' के प्रधान कार्यालय तथा उसकी तीनों शाखाओं में हाथ के कागज के लेटर हेड, लिफाफे, कार्ड आदि बिक्री के लिए रखे गये हैं। कई साइज़ों में तथा कई तरह के मेल खाने वाले रंगों में लिफाफे और चिट्ठी लिखने के कागज मिलते हैं। ।) के टिकट भेजकर नमूना मँगाइए।

प्रधान कार्यालय में 'लेटर हेड' छपाने का भी प्रबंध है। लिखें—

व्यवस्थापक,
सस्ता साहित्य-मंडल,
कनाट सर्कस, नई दिल्ली.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बापू : लेखक—श्री घनश्यामदास बिड़ला
पृष्ठ संख्या २२०; दाम ॥=) १।) २)

'सर्वोदय' : (हिन्दी)

"गांधीजी पर हिन्दी में कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं; परन्तु यह अपने ढंग की निराली है। × × ऐसी रोचक और विचार-प्रेरक पुस्तक प्रकाशित करने के लिए सस्ता साहित्य मण्डल बधाई का पात्र है।"

'फूलछाब' : (गुजराती)

"××सिद्धांतोनी चर्चानुं उंडाण, अेनी प्रमाणिकता अने विशदता जोतां लागे छे के आ कोई अन्ध-भक्तनी गांधीपूजा नथी पण गांधी-जीने अनेक रीते अवलोकनार, पछी छिद्रो शोधनार अने अे छिद्रो माटे ऊँडा उतरवा जतां आदर अने परिणामे भक्तिनुं मोती मेळवनार अेक अभ्यासीनुं तत्त्व-दर्शन छे। सरल अने प्रमाणपुष्ट शैली मां लेखके गांधीजी ना सिद्धान्तोनी सुन्दर समीक्षा करी छे।"

'हंस' : (हिन्दी)

"जीवन-चरित्र लिखना ही एक कठिन कला है; फिर गांधी जैसे व्यक्तित्व पर लिखना तो असाधारण साहस का काम है। बिड़लाजी ने अपनी गहरी भक्ति के कारण इस कठिन कार्य को अपूर्व सफलता से पूरा किया किया है। × ×× आगे चलकर 'बापू' पर अनेक किताबें लिखी जायेंगी, लेकिन बिड़लाजी की रचना का स्थान सुरक्षित रहेगा, क्योंकि वह हृदय और बुद्धि की वाणी है।"

'माडर्न रिव्यू' : (अंग्रेज़ी)

"श्री घनश्यामदास हैज़ अम्ब्ली वॉक्ड इन् द शाइनिङ्ग फ़ुट स्टॅप्स ऑव गांधीजी फॉर ओवर ए स्कोर ऑव ईयर्स। कॉन्सीक्वॅण्ट्ली ही हैज़ बीन फॅमीलियर विद् एवरी एक्टिविटी ऑव हिज़, एण्ड सो इन् ए पोज़ीशन टु हैव हिज़ डाउट्स ऑन् द एलेज्ड इम्प्रैक्टिकेबिलिटी ऑव गांधी'ज़ आइडियलिज्म इन अवर मॉडर्न मैटीरियलिस्टिक वर्ल्ड क्लीअर्ड। हिज़ बुक गिव्ज़ अस, एकॉर्डिङ्ली, नॉट ओनली एन इन्साइट इन्टु द ओशनिक माइण्ड ऑव हिज़ हीरो, बट ऑलसो इन्टु हिज़ ओन्, इन् इट्स स्ट्रग्ल्स टु अन्डरस्टैण्ड हिम, फॉर इफ़ टु लव इज़ टु अन्डरस्टैण्ड, टु अण्डर-स्टैण्ड इज़ टु लव टू। हिज़ लैंग्वेज इज़ ए लैंग्वेज बोथ ऑव द हैड एण्ड द हार्ट। × ×

द इन्क्ल्यूज़न ऑव सम रेअर फ़ोटोग्रैफ्स ऑव गांधीजी इन् द बुक, कप्ल्ड विद् एक्सीलैण्ट प्रिंटिंग, हैज़ मेड 'बापू' एन ऑल्वेज़ वैल्कम कम्पैनियन ऑन वन्स प्राइवेट शैल्फ।"

'भारत' : (हिन्दी)

"× ×सब मिलाकर पुस्तक लेखक की तलस्पर्शी सूक्ष्म दृष्टि तथा अध्ययनशील परीक्षण से पूर्ण है। × × भाषा में एक प्रवाह है, एक रोचकता है जो पाठक को कोई थकावट नहीं मालूम होने देती। बिड़लाजी की लेखनशैली, भाव-व्यंजना और शब्दचयन अत्यन्त सुन्दर हैं।"

'सर्चलाइट' : (अंग्रेज़ी)

"श्री घनश्यामदासजी हैज़ बीन टु ए लार्ज एक्स्टॅण्ट सक्सॅसफ़ुली एबल् टु मेक ए स्टडी आव् गांधी-जी एण्ड टु अंडरस्टैण्ड एण्ड रियलाइज़ द ट्रू मीनिंग एण्ड सिगनिफिकेन्स ऑव द लाइफ एण्ड टीचिंग्स एण्ड दी इम्प्लिकेशन्स आव् ऑल दैट ही डज़ एण्ड सेज़। × × दिस बुक इज़ ए वेलुएबल ऐडीशन टु गांधियन लिट-रेचर फॉर इट इज़ एन अॅटेम्प्ट, एण्ड ए सक्सेसफुल अॅटेम्प्ट, टु पोर्ट्रे गांधी-जी एण्ड करेक्टली इंटरप्रीट हिज़ लाइफ़ एण्ड फिलॉसफी टु द हिंदी रीडिंग पब्लिक × × द बुक डिज़र्व्ज़ टु बी वाइडली रेड।"

'जन्मभूमि' : (गुजराती)

"× ×लखनारनी शैली, दृष्टि, प्रसंगनी पसन्दगी, अमुक बाजू पर वधु-ओछो भार मूकवानी वृत्ति वगेरे मां लखनारनो पोतानो प्राण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवेश थई. जाय छे। अेटले आ पुस्तकमां आलेख्य करतां आ लेखकनुं व्यक्तित्व सुन्दर रीते गुंजी उठेल छे। शैली तो सारी पेठे प्रवाही अने स्वस्थ छे।"

'सोशल वेलफ़ेयर' : (अंग्रेज़ी)

"सच ए क्रिटिकल इण्टरप्रीटेशन ऑव महात्माजी प्रेजेण्टेड इन ए सिम्पिल स्टाइल व्हिच कैन बी ईज़िली अण्डरस्टुड बाइ ईवन दोज़ हूज़ मदर-टंग इज़ नॉट हिंदी, अर्न्स फॉर हिज़ नाइसली प्रिण्टेड बुक एन इम्पॉर्टेंस, व्हिच कैन नॉट बी इग्नोर्ड, नॉट ऑनली बाइ महात्माजीज़ फॉलोअर्स, बट आलसो बाइ दोज़ हू हैपन टु डिफ़र फ्रॉम हिम।"

'वर्त्तमान' : (हिन्दी)

"××हरेक नगर के दानशील सज्जन सौ-सौ, पचास-पचास, प्रतियाँ मँगवाकर इस पुस्तका काघर-घर में प्रचार कर दें। इसके द्वारा सत्य और अहिंसा और अपने देश के धर्मयुद्ध का सच्चा ज्ञान उन लोगों तक पहुँच जायगा, जो अल्प से अल्प ज्ञान के लिए 'प्यासे बने रह जाते हैं। दूसरी बात यह भी होनी चाहिए कि देश की अन्य प्रधान बंगला, गुजराती, मराठी, तामिल, तेलगू आदि भाषाओं में भी इसका अनुवाद शीघ्र ही प्रकाशित हो।"

'प्रजासेवक' : (हिन्दी)

'बापू' की भाषा अत्यन्त परिमार्जित, वाक्य-विन्यास परम परिष्कृत एवं भाव के भव्यभवन में विराजनेवाली मा भारती के हृदयस्पर्शी भूषण हैं।

'जागरण' (हिन्दी)

"×× जो लोग महात्माजी के जीवन की अद्भुतता जानना चाहते हैं, उन्हें यह पुस्तक एक बार अवश्य पढ़नी चाहिए। हम तो समझते हैं कि बिड़लाजी ने हिन्दी-संसार के सामने यह एक नयी और उपयोगी वस्तु रखी है, जो उनकी कीर्ति को बढ़ाती हुई महात्माजी के सम्बन्ध में बहुत-सी ऐसी बातों पर प्रकाश डालेगी, जो उनसे निकट सम्पर्क रखनेवाला ही बतला सकता है।

'संघर्ष' : (हिन्दी)

"×× पुस्तक की शैली रोचक है और विषय का प्रतिपादन कलापूर्ण है। ××"

'नवशक्ति' : (हिन्दी)

"यह समीक्षा, बिड़लाजी आज अच्छे विद्वान या लेखक न माने जाते हों, तो भी समीक्षा की उत्तम पुस्तकों में स्थान पायेगी।" हम श्री महादेव देसाई की इस सम्मति से सम्पूर्ण रूप से सहमत हैं।"

'वीर अर्जुन' : (हिन्दी)

"× × यह पुस्तक एक अन्धश्रद्धालु की नहीं, लेकिन एक आलोचक की आलोचना है। भले ही इसमें श्रद्धा और भक्ति का पुट भी गहरा है। लेकिन इससे इसका आलोचकत्व कम नहीं होता। गांधीजी जैसे विश्व विभूति के हृदय, आत्मा और मस्तिष्क को समझाने का सुन्दर प्रयत्न करने के लिए लेखक हिन्दी-साहित्य के धन्यवाद का पात्र है। × ×"

'भारत' : (मराठी)

× × विवेचक बुद्धि आणि भक्ति यांचा सुन्दर मिलाप या ग्रंथांत झाला आहे। ग्रंथांत अनेक वचनो व महाभारतांतील सुन्दर दाखले ठिकठिकाणी दिले आहेत।

× गांधीजींचें जीवन खरोखर समजून घेण्याची ज्यांची इच्छा आहे अशा सर्व वाचकांनां ह्या ग्रंथ उपकारक होणार आहे × × गांधी वाङमयांत या ग्रंथात अपूर्व भर पड़ली आहे।× ×"

'स्वराज्य' : (हिन्दी)

"जब प्रस्तुत पुस्तक जैसी सुन्दर शैली में लिखी गयी पैनी एवं अन्तस्तलस्पर्शी विश्लेषण दृष्टि की रचना सामने आती है, तब साहित्यिकों की जमात में प्रथम प्रवेश में ही अनायास अग्रस्थान ग्रहण करनेवाले लेखक की ओर साश्चर्य दृष्टिक्षेप होने लगता है।"

'माहेश्वरी' : (हिन्दी)

"छिद्रान्वेषण से भक्ति के सोपान तक पहुँचनेवाले लेखक ने बापू का यह जीवन नहीं लिखा, प्रत्युत जीवन की कुंजी लिखी है। ×× महात्माजी के जीवन और धर्म के जिज्ञासुओं के लिए लेखक के पच्चीस वर्ष के सतत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

यक साबित होगा। ××"

'नवज्योति' : (हिन्दी)

'×× इस तरह पुस्तक केवल हरेक के पढ़ने योग्य ही नहीं, बल्कि संग्रह में रखने योग्य है।

'विशाल भारत' : (हिन्दी)

"× × श्री विड़लाजी ने अपनी लेखनी से महात्मा गांधी की जीवनी उनकी ईश्वर-श्रद्धा, उनके सत्याग्रह आदि प्रश्नों पर विश्लेणात्मक ढंगसे से वे पते की बातें लिखी हैं, जिसके लिए लेखक की क़लम की प्रशंसा

× × × महात्माजी के सामीप्य का जो प्रतिविम्ब लेखक के मस्तिष्क पर पड़ा है, उसीका सुन्दर चित्र लेखक ने नपे-तुले और सजीव शब्दों में खींचा है अपने स्नेहपूर्ण हृदय-पटल पर लेखक ने महात्माजी के व्यक्तित्व, उनकी कार्य-प्रणाली और उनके जीवन-रहस्य का मार्मिक चित्र खींचकर लेखनी द्वारा उसे क़ागज पर अंकित कर दिया है। महात्माजी की प्रेम-निर्झरिणी के स्रोत-अहिंसा—तक पहुँचने में सफल हुआ है। × ×

विनोबा और उनके विचार : सं०—वियोगी हरि पृ० सं० २००; मू० ।।)

'आज' : (हिन्दी)

"×× कहींसे भी पुस्तक को खोल लीजिए, मन लग जायगा। उन्हें जो कुछ कहना होता है उसे बड़े ही सुन्दर ढंग से वे कह जाते हैं। मजाल क्या कि श्रोता अथवा पाठक पर उसकी छाप न पड़े। पुस्तक सबके पढ़ने और मनन करने योग्य है और सस्ता-साहित्य मण्डल ने आचार्य विनोबा के लेखों लेखों और प्रवचनों का यह छोटा-सा संग्रह हिन्दी-जनता के सामने रखकर बधाई का कार्य किया है। पुस्तक सुसम्पादित है। छपाई-सफाई तो अच्छी है ही, विनोबाजी का एक चित्र भी है। और सबसे

पुस्तकों की भांति इसका भी मूल्य कम होना।"

'स्वराज्य' : (हिन्दी)

"××जो लोग श्री विनोबाजी के व्याख्यानों को सुन चुके हैं, अथवा जिन्होंने उनके लेखों का आस्वाद चखा है, उनके शुद्ध तर्क और मौलिक विचार-पद्धति को हृदयंगम किया है, वे जानते हैं कि विनोबाजी किस कोटि के पुरुष हैं।…सन्तोष की बात है कि श्री वियोगीहरि द्वारा सम्पादित इस पुस्तक ने विनोबाजी की वाणी हिन्दी-संसार को सुलभ कर दी। ×× प्रस्तुत पुतक में बिनोबाजी के ४० लेख व भाषण संग्रहीत हैं जो विचार-प्रवर्तक अंतस्तलस्पर्शी है।"

'लीडर' : (अंग्रेज़ी)

"फ्रॉम द शॉर्ट डिस्क्रिप्शन दैट गांधीजी हैज़ गिवॅन एवाउट विनोबा इट सीम्स दैट इन थॉट एन्ड ऐक्शन नोबडी इज़ नीयरर द महात्मा दैन विन बा। ××

इट इज इम्पॉसिबिल टु समराइज़ एन्ड रीप्रोडचूस द विनोबा इन हिज़ इन-इमिटेब्ल स्टाइल। ऑन रीडिंग दैट वन फ़ील्स दैट विनोबा इज द बेस्ट एक्सपोनेण्ट ऑव द गांधियन क्रीड।"

'साधना' : (हिन्दी)

"विनोबाजी के विचारों में विशेष तार्किकता और संगति है। …पुस्तक में विनोबाजी के राजनीतिक विचार ही नहीं हैं, वरन् धार्मिक, साहित्यिक और कला-सम्बन्धी लेख भी हैं।…"

'कहानी' : (हिन्दी)

"…विनोबाजी के छोटे-बड़े लेखों में जो पुस्तक में संग्रहीत हैं उनकी आध्यात्मिकता, सांस्कृतिकता एवं रचनात्मक कार्य-क्षमता का पर्याप्त पुट है। साथ ही उन लोगों का समाधान भी है जो गांधीजी द्वारा दिये गये उनके इस गौरव-पद के प्रति कुछ संशयालु हो उठे थे। 'बूढा तर्क', 'तरणोपाय कौन-सा ?' 'अस्पृश्यता-का निवारण का यज्ञ', 'खादी और गादी की लड़ाई', 'सेवा व्यक्ति की,

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्ति समाज को', 'सेवा का आचार-धर्म' आदि ऐसे विवेकमय लेख हैं—जिनसे गांधीवादी ही ही नहीं, कोई भी मनुष्य गांधीवाद के प्रति उठती हुई आशंकाओं का समाधान के सकेगा। मण्डल ने ऐसी पुस्तक को जन्म देकर एक नयी दिशा की ओर निर्देश किया है।"

'सर्चलाइट' : (अंग्रेज़ी)

"दिस बुक विल गिव सम आइडिया टु द रीडर्स ऑव द स्टफ़ दैट विनोबाजी इज़ मेड ऑव। दीज़ फ्यू एसेज़ एन्ड राइटिंग्स ऑव हिज़ कन्टेनिंग हिज़ थॉट्स एन्ड रिफ्लैक्शन्स रिवील नॉट ओनली हिज़ ग्रेट इन्टेलैक्युअल अॅटेनमेंट्स बट ऑलसो द फैक्ट दैट इफ़ देयर इज़ वन अमंग द वॅरी फ्यू, हू हैज़ ट्रुली इंबाइब्ड द फ़िलॉसफ़ी ऑव गांधीजी एन्ड हैज़ बीन एबल इवन टु लाइन अप टु द स्पिरिट ऑव हिज़ आइडियल्स एन्ड टीचिंग्स इट इज़ श्रीयुत विनोबा भावे। ×× इट वाज़ देयरफ़ोर, एन एक्सीलेण्ट आइडिया टु पब्लिश दिस कलैक्शन ऑव हिज़ थॉट्स एन्ड रिफ्लैक्शन्स व्हिच आर ट्रुली इन्स्पायरिंग एन्ड इन्स्ट्रक्टिव।"

'प्रजासेवक' : (हिन्दी)

"प्रत्येक सद्गृहस्थ को यह पुस्तक पढ़नी चाहिए और धनिक लोगों को इसकी हज़ारों प्रतियाँ अपनी तरफ़ से मुफ्त में बटवानी चाहिए।"

'वर्त्तमान' : (हिन्दी)

"विनोबा भावे के लेखों का इसमें सुन्दर संग्रह है। व्यावहारिकता के साथ-साथ अध्यात्मवाद का सूक्ष्म ज्ञान भी इन लेखों के पढ़ने से होता है, इसलिए यह प्रत्येक गांधी-साहित्य के साथ संग्रह की वस्तु है।"

'माहेश्वरी' : (हिन्दी)

"×× इन विचार रत्नों का महत्त्व किसी धर्मगुरु के विचारों से कम नहीं। इन विचारों में स्वयं श्री विनोबा की आत्मा प्रतिबिंबित हुई है। उन्होंने राष्ट्र की और व्यक्ति के धर्म की हरेक समस्या और उसके हरेक पहलू का अध्ययन और मनन किया है। उस मनन में विचिकित्सा नहीं बुद्धि का अन्त्य परिपाक है। ×× पुस्तक का उपदेश-ग्रन्थ की तरह आदर हो यह हमारी कल्पना है।"

'विशाल भारत' : (हिन्दी)

"हमें दुःख है कि स्थानाभाव के कारण हम आलोच्य पुस्तक की विस्तृत आलोचना नहीं कर रहे; पर इस संग्रह को छापकर सस्ता साहित्य मण्डल ने देश की बड़ी सेवा की है। आचार्य विनोबा भारतवर्ष के उन इने-गिने साधुओं और तितिक्षुओं में से हैं, जिन पर किसी भी देश को नाज़ हो सकता है।

"हमारा आग्रह है कि प्रत्येक विद्यार्थी, अध्यापक, व्यापारी और पूँजीपति इस पुस्तक को पढ़े, मोल लेकर पढ़े या माँग कर पढ़े—चोरी करके पढ़ने की हम सिफारिश नहीं कर सकते।"

खादी-मीमांसा : लेखक—बालूभाई मेहता पृ० सं० ४००; मू० १॥)

'भारत' : (हिन्दी)

×× इसमें सन्देह नहीं कि पुस्तक में जो विचार प्रकट किये गये हैं और जो आँकड़े प्रस्तुत किये गये हैं वे मनन करने योग्य हैं। लेखक ने इस विषय का गहरा अध्ययन किया है और जो कुछ लिखा है, वह गंभीर चिन्तन का परिणाम है। प्रारम्भ में खादी का इतिहास वर्णन किया गया है। ×× पुस्तक न केवल खादी और खादी के प्रेमियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी, बल्कि दूसरे लोग भी उसे पढ़कर लाभ उठा सकते हैं।"

'स्वराज्य' : (हिन्दी)

"...खादी से राष्ट्रीय सम्पत्ति में कितनी वृद्धि होती है, स्वशासन से उसका कहाँतक सम्बन्ध है, दुनिया में हस्त-व्यवसाय का महत्त्व कितना है, आदि गंभीर विषयों को प्रामाणिक ढंग से इस पुस्तक में समझाया गया है। खादी के सम्बन्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनोबा भावे । ×× इट वाज़ देयरफ़ोर, एन एक्सीलेण्ट आइडिया व्यक्ति के धर्म की हरेक समस्या और उसके हरेक पहलू का अध्ययन इतिहास वर्णन किया गया है। ×× पुस्तक न केवल खादी और प्रामाणिक ढंग से इस पुस्तक में समझाया गया है। खादी के सम्बन्ध

उपयोगी ग्रंथ में मौजूद न हो।''

'माहेश्वरी' : (हिन्दी)

''लेखक ने प्राचीन वैदिक काल से लेकर खादी के विचार और क्रियात्मक रूप का महत्त्व और प्रचलन बताते हुए वर्तमान समय तक उसके विकास पर प्रकाश डाला है।···पुस्तक के अन्त में लेखक ने खादी-सम्बन्धी गणनायें तथा विविध प्रान्तों की खादी की विशेषता आदि का भी दिग्दर्शन कराया है। खादी का अर्थशास्त्र से जो सम्बन्ध है, उसका हरेक पहलू से तात्विक विवेचन हुआ है। पुस्तक भारतीय अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों और उन लोगों के लिए जो खादी के सम्बन्ध में अधिक जानना चाहें बहुत अधिक उपयोगी है।···''

''····इसमें सन्देह नहीं कि खादी के पक्ष का इस पुस्तक में जितनी प्रामाणिकता के साथ समर्थन किया गया है, उतना हिन्दी में किसी दूसरी पुस्तक में नहीं।''

'फूलछाब' : (गुजराती)

''निःसंशय आ ग्रंथ खादीने,खादी धारण करनारों ने अने विरोधी ओनें पण उपकारक नीवड़शे।''

'वर्त्तमान' : (हिन्दी)

''×× प्रस्तुत पुस्तक में खादी-व्यवसाय पर हर तरह प्रकाश डाला गया है। ××खादी पर किये जानेवाले आक्षेपों का जो खण्डन किया गया है, वह आक्षेपकों को निरुत्तर करनेवाला है। भारत के प्रत्येक हित-चिंतक को यह पुस्तक पढ़े बिना न रहना चाहिए।''

'सर्चलाइट' : (अंग्रेज़ी)

''मेरी मुक्ति की कहानी' कन्टेन्स ट्रांसलेशन्स ऑव टॉल्स्टॉयज़ 'माइ कन्फेशन्स' एण्ड ''माइ रिकलैक्शन्स'' । इट इज़ वैलनोन दैट टॉल्स्टॉय'ज़ राइटिंग्स हैव ग्रेटली इन्फ्लुएंस्ड गांधीजी'ज़ थौट एण्ड ऐक्शन्स। द 'इण्डिपेण्डेण्ट थिंकिंग, द प्रोफाउण्ड मॉरैलिटी एण्ड ट्रुथफुलनैस आर सो वेल्युएबल इन ऑल द राइटिंग्स ऑव टॉल्स्टॉय्ज़ दैट वन कैन नॉट हैल्प बीइंग डीपली इम्प्रैस्ड बाइ दैम। 'माइ कन्फैशन्स' एण्ड ''माइ रिकलैक्शन्स'' रिवील्स द वर्किंग, द ग्रोथ एण्ड

ऑफ दिस वन ऑव द ग्रेटेस्ट टीचर्स ऑव द वर्ल्ड।''

'फूलछाब' : (गुजराती)

''टॉलस्टॉयना 'माइ कन्फैशन्स' अने ''माइ रिकलैक्शन्स'' नो हिन्दी अनुवाद छे। टॉल्स्टॉये पोतानुं सलग सूत्र जीवनचरित्र नथी लख्युं अेटले अेना संस्करणो अने बीजा पुस्तको ऊपर थीज अे जाणवानुं रहे छे। आ पुस्तकमां टॉल्स्टॉयना जीवननी झांखी सारा पेठे थाय छे। चिन्तन अने विचार-गांभीर्य थी भरेला 'टॉल्स्टॉय साहित्य' नो अनुवाद करवो घणो कठिन छे, छतां अनुवादक ने ठीक सफलता मळी छे।''

मेरी मुक्ति की कहानी : लेखक—टॉल्स्टॉय पृ० १७५ मू० ।।)

'नवशक्ति' : (हिन्दी)

जो लोग टाल्स्टाय के अत्यन्त उत्कृष्ट विचारों को उनकी मौलिक रूसी या अंग्रेजी भाषा में पढ़ने में असमर्थ हैं, उन्हें हिन्दी में उनकी ये पुस्तकें (टाल्स्टॉय ग्रंथावलि

पिछले वर्ष प्रकाशित 'मंडल' की इन प्रधान-पुस्तकों के बारे में भारत का पत्र-संसार क्या कहता है यह उपरोक्त सम्मतियों से आपसे मालूम होगा। यह भी आपको पता चलेगा कि 'मंडल' किस प्रकार एक प्रगतिशील और लोगों के दिलों में बसने वाली एक विशुद्ध साहित्यिक और सेवा-परायण संस्था है, जो आपके और अधिक सक्रिय और हार्दिक सहयोग की अपेक्षा रखती है।

—व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी अनोखी साहित्यिक पुस्तकें

१	अनुभूति (कविता) प्रो० जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' एम० ए०	१।।)
२	मीरा की प्रेम-साधना (आलोचना) श्रीयुत 'माधव' एम० ए०	१।।)
३	प्रेमचन्द की उपन्यास-कला (आलोचना) प्रो० 'द्विज' ए० मए०	१।।)
४	ज्योतिर्मयी (उपन्यास) श्रीयुत अनूपलाल मण्डल 'साहित्य-रत्न'	२)
५	चित्र-कथा (कहानियाँ) प्रो० कन्हैयाप्रसाद सिंह एम० ए०	१।)
६	रुदन (कविता) श्रीयुत श्यामधारी प्रसाद	।।)
७	जान हथेली पर (कहानियाँ) श्रीयुय रामवृक्ष बेनीपुरी	।।।)
८	फलों का गुच्छा (कहानियाँ)—श्रीयुत रामवृक्ष बेनीपुरी	।।।)
९	पद-चिन्ह (जीवनियाँ—श्रीयुत रामवृक्ष बेनीपुरी	।≡)
१०	आज का सवाल (लेख-संग्रह) श्री चन्द्रमा राय शर्म्मा	।।=)
११	तलवार की धार पर (कहानियाँ) „ „ „	।।)
१२	विरक्ति (कविता)—रचयिता—श्री रामनन्दन सिंह	।)
१३	तुम्हारी क्षय—श्री राहुल सांकृत्यायन	।।=)
१४	फुटबॉल को नियमावली—श्री वस्त्रबहादुर सिंह नेपाली	=)
१५	जीने के लिए (उपन्यास)—श्री राहुल साँकृत्यायन	२।।)
१६	सोवियत-न्याय—श्री राहुल सांकृत्यायन	१।।)
१७	पाक-विद्या—कुमारी विद्योत्तमा देवी, शास्त्रिणी	।।।)
१८	ईख की खेती—श्रीयुत रामलक्षण सिंह	।।।)
१९	कृषि और कृषक—श्रीयुत कार्तिकेयचरण मुखोपाध्याय	।।=)
२०	तेलहन की खेती— „ „ „	।=)
२१	किराने की खेती— „ „ „	।।)
२२	भदई की खेती— „ „ „	।।।)
२३	रबी की खेती— „ „ „	।।)
२४	भारतीय कृषि विज्ञान— „ „ „	३)
२५	जीवन देवता की वाणी—प्रो० ज० प्र० मिश्र एम० ए०	१।।)
२६	अन्तर्ध्वनि (कविता)—श्रीयुत प्रो० 'द्विज' एम० ए०	।।)
२७	मेरे जनम-मरण के साथी—श्रीयुत 'माधव' एम० ए०	।।।)

कृपाकर आज ही एक पत्र डाल कर उपर्युक्त किताबें मंगाइये। सब किताबें एक साथ मंगाने पर सभी पौने दाम में मिलेंगी।

निवेदक—'वाणी-मन्दिर' छपरा (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-साहित्य

असतो मा सद्गमय ; तमसो मा ज्योतिर्गमय ; मृत्योर्माऽमृतंगमय ।

मई, १९४१ नई दिल्ली | सम्पादक हरिभाऊ उपाध्याय | वर्ष पहला अंक दसवाँ

आह्वान

ओ प्रकाश के पिण्ड ! कारवाँ अन्धकार का बढ़ता

आ

अपनी बाती आप जलाकर तुम न मिटो एकाकी
कोटि-कोटि मिट्टी के ये कोरे पुतले हैं बाकी
स्नेह भरा है, केवल तुमसे माँग रहे चिनगारी
एक तुम्हारी भरी लपट के ये कबसे अधिकारी !
इन्हें जलाओ ये अपनों का आँचल फोड़ उठें तो !
धूल और झंझा का भय क्या नव किरणें फूटें तो !

ह्वा

जीकर ही क्या हुआ न यदि मानव का मूल्य बढ़ाया ?
मरकर ही क्या मिला न यदि जन-जाग्रति ने बल पाया ?
किसी अलख प्रियतम की पूजा के उपकरण न बनकर
आज ज्योति में ज्योति मिला तुम बनो क्रान्ति के रहबर
मूल्य उसीके बुझने का जिससे जन-जन पथ पाते
गृद्ध-वृत्ति के जगती में संपाती मिटने आते

न

वे मन्दिर के दीप उन्हें पूजा का थाल सजाना
किसी देवदासी का अर्चन पत्थर तक पहुँचाना
किन्तु तुम्हें मानव के दुखते दिल में आग लगाना
तेजी से नाशोन्मुख जग का सच्चा रूप दिखाना
नवयुग ये कर्तव्य तुम्हें देकर दोनों अति भारी
महाक्रान्ति की आज तुम्हारे बल पर किये तयारी
ओ प्रकाश के पिण्ड ! कारवाँ अन्धकार का बढ़ता

अंचल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकों तक पहुँचें

एक तरफ श्री सिद्धराजजी ढड्ढा जैसे ऊँचे दरजे के पढ़े-लिखे लोगों के सामने यह पहेली है कि क्या-क्या पढ़ें ?—इतना साहित्य सामने आता है और बहुतेरा पढ़ने लायक भी होता है, लेकिन फुरसत नहीं। दूसरी तरफ़ प्रकाशक चिल्लाते हैं कि हिन्दी में पाठकों की कमी है, खुद खरीदकर पुस्तक पढ़नेवाले और भी कम हैं। नतीजा यह होता है कि ऊँचे दरजे की, शास्त्रीय, गम्भीर विषयों पर पुस्तकें छापने की उनकी हिम्मत नहीं होती। यदि छपती भी हैं, तो थोड़ी-सी बिकती हैं, बाकी पड़ी-पड़ी भण्डार का बोझ बढ़ाती रहती हैं। जब प्रकाशक छापने का उत्साह कम रखते हैं तो लेखकों को लिखने का हौसला नहीं होता। पाठक हैं भी तो वे उपन्यास, कहानियाँ, कवितायें, ज्यादा पढ़ते हैं, उनमें भी भावुकतापूर्ण व कामुकता की ओर खींचनेवाली किताबों की संख्या अधिक रहती है।

शिक्षितों की उलझन तो खासकर समय या फुरसत से सम्बन्ध रखती है, और वह थोड़े लोगों की है। उसका हल यह है कि वे अपने पढ़ने के विषयों की सीमा बना लें। दो ही उद्देशों से पढ़ना सार्थक हो सकता है; (१) अपने कर्त्तव्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, अपने जीवन को बनाने के लिए, या (२) गुजर-बसर करने के लिए। जानकारी का दायरा बढ़ाने के लिए, मनोरंजन या आमोद-प्रमोद के लिए भी पढ़ने की जरूरत रहती है, लेकिन वह पढ़ने का मुख्य उद्देश नहीं हो सकता। बाज़ लोगों को जैसे बहुत और विविध व्यंजन खाने की आदत होती है वैसे ही बिना जरूरत के कुछ-न-कुछ पढ़ने का शौक कई लोगों को होता है। यह समय, धन, शक्ति तीनों का अपव्यय है। दिमाग को एक बीमारी-सी लग जाती है सो अलग। जैसे खाने-पीने में, आचार-व्यवहार में संयम की आवश्यकता व उपयोगिता है वैसे ही पढ़ने-लिखने में भी संयम लाजिमी समझना चाहिए।

लेकिन संयम एक बात है, और न पढ़ना या फजूल और ऊल-जलूल पढ़ना दूसरी बात है। पढ़ना मनुष्य के दिमाग के लिए उतनी ही जरूरी खुराक है जितना कि भोजन पेट के लिए है। जिन्हें अक्षर-ज्ञान नहीं है वे दूसरों से पुस्तकें या अखबार वगैरह सुनकर भी अपनी बुद्धि और ज्ञान को बहुत बढ़ा सकते हैं और बढ़ाना भी चाहिए। इस समय जबकि आवागमन के साधन बहुत बढ़ गये हैं और रेडियो ने सारी दुनिया को मानों एक कमरे में लाकर बिठा दिया है, किसी मनुष्य का ज्ञान व जानकारी से वंचित रहना अन्धा व बहरा हो जाने के बराबर है। अतएव जहाँ उच्च शिक्षितों व कार्यव्यस्त लोगों को पढ़ने में सीमा बाँध लेने की जरूरत है, तहाँ जो नहीं पढ़ते हैं उन्हें पढ़कर या सुनकर पुस्तकें आदि पढ़ने की निहायत जरूरत है। हाँ, यह उनके लिए भी जरूरी ह कि वे देखें कि उन्हें क्या पढ़ना है, और क्या नहीं पढ़ना है। लेखकों, प्रकाशकों व प्रचारकों पर भी यह जिम्मेवरी है कि ऐसा ही साहित्य जन-साधारण तक पहुँचावें जिससे उनका जीवन बने व पनपे, उन्हें अपने नित्य जीवन व जीवन-कार्यों में सहायक एवं उपयोगी पाठ्य व ज्ञान-सामग्री मिले। हम जो कुछ साहित्य लिखें, छापें, बेचें, फैलावें वह ऐसा हो जो जनता तक पहुँचे और पहुँचकर उसे जाग्रत, प्रबुद्ध, सजीव, पुरुषार्थी और कर्त्तव्यपरायण बनावे, अर्थात् वह समाज और राष्ट्र के निर्माण व विकास के लिए लिखा और फैलाया जाय।

इस सबकी कुंजी यह है कि पाठक बढ़ें। इसका उपाय सभी को करना चाहिए। लेखक, प्रकाशक, प्रचारक व साहित्य, समाज तथा राष्ट्र के सेवक, सबका यह समान कर्त्तव्य है। इस दृष्टि से श्री कालिदास कपूर ने[1] जो दो लेख जी० सा० में लिखे हैं वे बहुत ध्यान देने योग्य हैं। वाचनालयों

[1]. श्री कालिदास कपूर का पता है : हेडमास्टर, कालीचरण हाईस्कूल, लखनऊ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या पुस्तकालयों में जाकर या मित्रों से पुस्तकें मँगनी लेकर पढ़ लेना काफी नहीं है। भोजन जैसे हम माँगकर नहीं खाते हैं, कपड़े भी अपने ही पहनना पसन्द करते हैं, उसी तरह पुस्तकों की भिक्षा या मुफ्त पुस्तकें आदि पढ़ने की इच्छा भी एक किस्म का भिगमंगापन है, जो एक व्यक्ति की हैसियत से ही नहीं, समाज व राष्ट्र के एक सम्मानित सदस्य के नाते भी हमारे आत्मगौरव के खिलाफ़ समझा जाना चाहिए—खासकर उन लोगों के लिए जो अपना पैसा लगाकर अपना पुस्तकालय बना सकते हैं, या जो फिज़ूलखर्ची को रोककर वह पैसा अपने पुस्तक-संग्रह में लगा सकते हैं। हां, जो पाठक वास्तव में खर्च नहीं कर सकते, उनके लिए उनसे अधिक धन व साधन-सम्पन्न व्यक्तियों को अपनी खुशी से कुछ त्याग करके उन्हें पुस्तकें आदि मुफ्त या सस्ती मिलने की व्यवस्था करानी चाहिए। मगर यह सब लिखने या कहने से नहीं होने का। इसके संगठन में हमें लगना होगा। प्रत्येक हिन्दी-भाषी पठित व्यक्ति तक पहुँचने का आयोजन करना होगा। हिन्दी-भाषियों में पढ़ने की भूख बढ़ने लगी है। ज्यों-ज्यों हम स्वराज्य के निकट पहुँचेंगे व स्वराज्य का उपयोग करने लगेंगे, त्यों-त्यों यह भूख बढ़ेगी ही। जरूरत अब इसी बात की है कि हम प्रयत्न व योजनापूर्वक उनके पास पहुँचें और उनके हित की पाठ्य-सामग्री उनके सामने प्रस्तुत करें।

हरिभाऊ उपाध्याय

हिन्दी पुस्तकों की बिक्री

[शंकरसहाय सक्सेना]

हिन्दी में पुस्तकों का प्रकाशन आज तेज़ी से हो रहा है किन्तु फिर भी लेखक को अपनी कृति के प्रकाशन में जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है वे हिन्दी-जगत से छिपी हुई नहीं हैं। आज तो हिन्दी-पुस्तक-प्रकाशन घाटे का सौदा बन गया है। प्रकाशक लेखक का अधिक-से-अधिक शोषण करके उस घाटे की पूर्ति कर रहा है। प्रकाशक कागज़, प्रेस, तथा कमीशन के बिल में तो कमी कर नहीं सकता अतएव वह लेखक के पारश्रमिक को या तो बिलकुल न देकर अथवा नाममात्र देकर घाटे की पूर्ति करना चाहता है। प्रकाशकों के इस शोषण के सम्बन्ध में अधिक लिखकर में कटुता उत्पन्न नहीं करना चाहता किन्तु वस्तुस्थिति यही है कि हिन्दी-प्रकाशक हिन्दी-लेखक का शोषक बना हुआ है।

इसका एकमात्र प्रधान कारण यह है कि हिन्दी पुस्तकों की बिक्री बहुत कम होती है, उनका बाज़ार सुसंगठित नहीं है। इसका फल यह हुआ है कि प्रकाशक अधिक-से-अधिक कमीशन देकर पुस्तकों को निकालने का प्रयत्न करते हैं। एक ओर लेखक को कुछ न देकर अथवा बहुत कम देकर व्यय को घटाया जाता है और दूसरी ओर दूसरे सिरे पर पचास और साठ प्रतिशत कमीशन देने के परिणामस्वरूप मूल्य बढ़ाकर ग्राहक से अधिक धन वसूल किया जाता है। हिन्दी प्रकाशक यह कब समझेंगे कि आठ आना प्रतिपृष्ठ पर लिखायी गयी किताब पढ़ने के योग्य नहीं हो सकती और ऐसी रद्दी किताबों का उचित मूल्य से दुगुना मूल्य रखकर प्रकाशक अधिक ग्राहक नहीं पा सकता ?

हिन्दी प्रकाशक यह कहते नहीं अघाते कि हिन्दी-भाषियों में शिक्षा की कमी है, उनमें पढ़ने की रुचि नहीं है, वे पैसा देकर पुस्तकें खरीदना नहीं जानते, अंग्रेज़ी पढ़े लोग हिन्दी की पुस्तकों को न पढ़कर अंग्रेज़ी पुस्तकें पढ़ना पसंद करते हैं इत्यादि। ऊपर लिखे हुए आरोपों में कुछ तथ्य अवश्य है। जहाँतक शिक्षा की कमी का प्रश्न है, वह एक स्वतंत्र समस्या है। हिन्दी प्रकाशक उस दिशा में कुछ करने में असमर्थ हैं। परन्तु मैं पूछना चाहता हूँ कि हिन्दी प्रकाशकों ने हिन्दी पाठकों में रुचि उत्पन्न करने और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंग्रेज़ी पढ़ों में हिन्दी पुस्तकों के प्रति आकर्षण उत्पन्न करने का कौनसा प्रयत्न किया है ?

आज चाय के बाग़ों के मालिक यह रोना नहीं रोते फिरते कि भारतीयों में चाय पीने की आदत नहीं है, बल्कि उन्होंने मिलकर एक केन्द्रीय बोर्ड बनाया और पिछले वर्षों में गाँव-गाँव चाय के प्रचार का जैसा भागीरथ प्रयत्न किया है वह किसी से छिपा नहीं है और उसका परिणाम भी स्पष्ट है ।

हमारे प्रकाशकों ने क्या कभी पाठकों में पुस्तक पढ़ने की रुचि को उत्पन्न करने का संगठित प्रयत्न किया है ? आज के औद्योगिक संगठन में उत्पादन से अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य बिक्री के संगठन का है । प्रतिवर्ष उत्तर भारत में लाखों रुपये की तोता-मैना के किस्सों, ग़ज़लों, भजनों और इसी प्रकार की अन्य पुस्तकें कम पढ़े-लिखे लोग खरीदते हैं । शहरों के फुटपाथ पर, गाँवों की पैंठों और रेलवे स्टेशनों पर आपको बहुत बड़ी संख्या में इस प्रकार की पुस्तकों के विक्रेता दिखायी देंगे । क्या हमारे प्रकाशकों ने कभी इस अछूते क्षेत्र की ओर भी ध्यान दिया है ? यदि गाँववालों और कम पढ़े-लिखे हुए स्त्री-पुरुषों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर सरल, सुबोध, सुरुचिपूर्ण और उपयोगी साहित्य प्रकाशित करके बिक्री का संगठित प्रयत्न किया जाय, उन लोगों में पुस्तकों के लिए रुचि उत्पन्न की जाय, तो इस क्षेत्र को अनायास ही अपने अधिकार में किया जा सकता है । यही नहीं, इस क्षेत्र को प्रयत्न करके कई गुना बढ़ाया जा सकता है ।

हिन्दुओं में विवाह, भोज, अतिथि-आगमन तथा अन्य अवसरों पर रुपया तथा वस्त्र भेंट करने की प्रथा है । यदि संगठित प्रयत्न किया जाय तो बंगाल की तरह हम हिन्दी-भाषियों में भी पुस्तकें देने की प्रथा प्रचलित की जा सकती है । उदाहरण के लिए यदि वधू-पक्ष की ओर से बेटालियों को टीके या बिदाई में रुपये देने की अपेक्षा सुंदर पुस्तकें देने की प्रथा प्रचलित की जा सके तो विवाह के दिनों में ही प्रतिवर्ष लाखों रुपये की पुस्तकें खप सकती हैं । किसी को एक या दो रुपये देना कितना भद्दा प्रतीत होता है, इसपर हम लोगों ने कभी ध्यान ही नहीं दिया । उसके स्थान पर यदि एक अच्छी पुस्तक दी जाय तो वह कितनी सुंदर दिखे ! हमारे समाज में ऐसे अवसरों पर थाली और कटोरे तक देने का रिवाज है । तो फिर पुस्तकें देने में अधिक अड़चन न होगी ।

पुस्तकों की बिक्री में सबसे बड़ी कठिनाई पोस्टेज-सम्बन्धी है । कोई भी व्यक्ति एक रुपये की पुस्तक को सात आने पोस्टेज देकर मँगाना पसंद नहीं करेगा । पोस्टेज को कम करवाने का प्रश्न देशव्यापी प्रश्न है । सभी भाषाओं के प्रकाशकों को मिलकर इसके लिए आन्दोलन करना होगा । परन्तु इस समस्या को हल करने के लिए हिन्दी के प्रकाशकों को संगठित रूप से प्रयत्न करना होगा । पुस्तकें पाठकों के घर पर पहुँचनी चाहिएँ । तभी उनकी बिक्री बढ़ सकती है । सन लाइट साबुन और ताता कंपनी अपने साबुन के प्रचार के लिए प्रदर्शन-गाड़ियाँ (Demonstration Bus) भेजती हैं, परन्तु हिन्दी पुस्तक-प्रकाशकों के सामने पोस्टेज का भूत रहते हुए भी उन्होंने पुस्तक-बसें (Book Bus) भेजने पर ध्यान नहीं दिया । यदि कुछ प्रकाशक संगठित रूप में पुस्तक-बसें भेजने का प्रबंध करें जो अपने-अपने क्षेत्रों में प्रचार तथा पुस्तकों की बिक्री करें, तो पुस्तकों की बिक्री बढ़ सकती है । किन्तु यह कार्य या तो बहुत बड़े प्रकाशक ही कर सकते हैं या वह एक संगठन के द्वारा किया जा सकता है । इस प्रकार की पुस्तक-बसों से एक लाभ यह होगा कि उन कस्बों और छोटे-छोटे शहरों में जहाँ कि हिन्दी-पुस्तकों की कोई दूकान नहीं है और पोस्टेज के कारण वहाँके लोग पुस्तकें मँगाने में असमर्थ हैं वहाँ भी हिन्दी की पुस्तकों की खपत हो सकेगी । संयुक्तप्रान्त विहार, राजपूताना, मध्यप्रान्त और पंजाब में ऐसे बहुत से नगर हैं जहाँ वर्ष में चार-पाँच सौ की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकें बिक सकती हैं परन्तु वहाँ पुस्तकें मिलनें का कोई प्रबंध नहीं है।

संस्थाओं में परितोषिक वितरण करने की प्रथा है परन्तु वहाँ भी मैडिल, कप तथा अन्य वस्तुएँ ही अधिकतर दी जाती हैं। इस क्षेत्र की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है। हिन्दी प्रकाशकों को यह न भूल जाना चाहिए कि अंग्रेजी पढ़े लोग उस समय तक हिन्दी पुस्तकों की ओर आकर्षित न होंगे जबतक उन्हें अच्छी सामिग्री नहीं मिलेगी। सस्ते दामों में अच्छा लेखक भी उत्तम कृति उत्पन्न नहीं कर सकता। अच्छी पुस्तक लिखने के लिए लेखक को अध्ययन करना पड़ता है, विशेष परिश्रम और समय लगाना पड़ता है, फिर वह सस्ते दामों पर अच्छी पुस्तक कैसे लिख सकता है? हिन्दी प्रकाशकों के साथ केवल यही रोग नहीं है कि वह लिखाई बहुत कम देते हैं, बल्कि बहुत से प्रकाशक तो वह थोड़ी लिखाई देते ही नहीं। लेखक के एक मित्र को एक बहुत बड़े हिन्दी प्रकाशक को विवश होकर अदालती नोटिस देना पड़ा, तब कहीं रुपये वसूल हो सके। हिन्दी प्रकाशकों को यह समझ लेना चाहिए कि उनकी यह नीति अन्त में उनके लिए अहितकर सिद्ध होगी।

आवश्यकता इस बात की है कि कुछ बड़े हिन्दी प्रकाशक अपनी पुस्तकों की बिक्री का संगठन करने व पुस्तकों के प्रति जनता में रुचि उत्पन्न करने के लिए बिक्री-समिति बनालें जो उनकी पुस्तकों की बिक्री का संगठन करे। यदि प्रकाशकों का केन्द्रीय संगठन न हो सके, तो लेखक ही एक ऐसी व्यापारिक संस्था खड़ी करें जो प्रकाशन का कार्य तो न करे, केवल बिक्री का कार्य करे। लेखक-प्रकाशक उसके सदस्य बन जायें। आज विवश होकर हिन्दी लेखकों को प्रकाशक भी बनना पड़ रहा है; परन्तु वे बिक्री का उचित प्रबंध नहीं कर पाते, इसी कारण असफल हो जाते हैं, और उनका अनवरत शोषण होता रहता है। लेखकों की व्यापारिक संस्था के स्थापित हो जाने से वे शोषण से बच सकते हैं और पुस्तकों की बिक्री का उचित प्रबंध हो सकता है।

इस सम्बन्ध में हिन्दी के प्रमुख साहित्यिकों, हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा तथा अन्य हिन्दी-प्रचार-संस्थाओं का भी यह कर्तव्य है कि वे जनता में हिन्दी पुस्तकों के प्रति रुचि उत्पन्न करने का काम करें। विवाह इत्यादि शुभ अवसरों पर हिन्दी पुस्तकों को भेंट देने का आन्दोलन, हिन्दी पुस्तक-बिक्री-सप्ताह का आयोजन, हिन्दी पुस्तक-ग्राहक-क्लब स्थापित करके ये सभायें और संस्थायें पुस्तकों की बिक्री को बढ़ा सकती है। प्रतिवर्ष प्रत्येक नगर में हिन्दी सप्ताह मनाया जाये। उसमें अन्य बातों के साथ प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी को इस बात की प्रतिज्ञा लेनी चाहिए कि वह अपना सारा कार्य हिन्दी में करेगा, हिन्दी की कुछ मूल्य की पुस्तकें वर्ष में खरीदेगा, और कम-से-कम एक लड़के-लड़की अथवा प्रौढ़ को हिन्दी पढ़ा देगा। इस प्रकार हम भविष्य में हिन्दी पुस्तकों के ग्राहक बढ़ा सकेंगे तथा प्रतिवर्ष लोगों को कुछ पुस्तकें खरीदने के लिए उत्साहित कर सकेंगे।

यदि इस प्रकार कोई संगठित प्रयत्न हो जाय, तो कुछ समय में हिन्दी पुस्तकों के ग्राहकों की संख्या बढ़ सकती है और हिन्दी में उत्तम पुस्तकों का प्रकाशन हो सकता है।

हमें राजकारण से सरोकार नहीं। हमें तो स्वराजकारण से मतलब है। अपनी इस पवित्र स्वराज्य-साधना में हम ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह हमें चाहे जिस कोने में फेंक दे, लेकिन भ्रम या मोह में न डाले। हम स्वराज्य-साधक हैं, हमें राज्य-कामना का स्पर्श न हो।

—'विनोबा'

'नत्वहं कामये राज्यम्।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञापनों की बीमारी

[के० सी० चौधरी]

किसी भाषा का साहित्य ले लीजिए, उसमें समाचार-पत्रों का एक महत्त्वपूर्ण भाग होता है। दैनिक या साप्ताहिक पत्रों के और विशेषकर दैनिक पत्रों के रूप में जितना साहित्य रोजमर्रा पाठकों तक पहुँच जाता है, शेष साहित्य के रूप में उसका बहुत थोड़ा भाग ही उनतक पहुँच पाता है। परन्तु इस पत्र-साहित्य में से भी एक बड़ा भाग ऐसी सामग्री से पूर्ण होता है, जिसे हम भले ही साहित्य न कहें, लेकिन वस्तुतः वह किसी भाषा के प्रकाशित साहित्य का एक बहुत महत्त्वपूर्ण भाग जाने या अनजाने बन जाता है। वह किसी भी दूसरे साहित्य की अपेक्षा बलपूर्वक हमारे जीवन के अधिक निकट आ जाता है और हमपर व्यक्तिशः या सामाजिक रूप से अधिक प्रभाव डालता है। यह साहित्य राजनीति या समाज-शास्त्र से सम्बन्ध नहीं रखता और न धर्मशास्त्र, नीति या इतिहास से ही इसका सम्बन्ध है। इसका सम्बन्ध है कुछ व्यक्तियों के स्वार्थ से और विज्ञापन के रूप में यह हमारे सामने उपस्थित होता रहता है।

प्रतिदिन हिन्दी के दैनिक या साप्ताहिक पत्रों में भारी संख्या में छपनेवाले विज्ञापनों की यदि हम एक बार कल्पना करें, तो हमें मालूम हो जायगा कि विज्ञापन कितनी भीषण मात्रा में रोजमर्रा हमतक पहुँचते हैं और मज़ा यह कि हम अख़बार उन्हें पढ़ने के लिए नहीं खरीदते। वे समाचारों और लेखों के साथ विवश होकर हमें लेने पड़ते हैं और चार पैसे देकर ८ पृष्ठ का जो अखबार हम लेते हैं, उसमें से ३-३॥ पृष्ठ यही विज्ञापन होते हैं।

महात्मा गांधी का लेख या दुनिया को थर्रा देनेवाला हिटलर का भाषण इतने आकर्षक रूप में हमारे सामने नहीं आता, जितने आकर्षक रूप में घोड़ा शराब, विनाशकारी तमाखू-सिगरेट, रमणविलासिनी बटी, कामदेव तिला, या ८४ नंगे कामोत्तेजक चित्रों से परिपूर्ण कोकशास्त्र के विज्ञापन हमारे सामने सज-धजकर आते हैं और जाने या अनजाने शनैः शनैः पाठकों के दिल व दिमाग पर अपना भीषण व स्थायी प्रभाव डालते रहते हैं।

जिस वस्तु का किसी भी भाषा के साहित्य में इतना अधिक और व्यापक स्थान हो, आज हम उसकी ओर से उदासीन हैं। कवि कालिदास या गोस्वामी तुलसीदास की कविता और 'साकेत' व 'पल्लव' काव्यों की आलोचनाओं और उनके मानव जीवन पर पड़नेवाले प्रभावों पर जितना विवेचन होता है, उसका सौवाँ भाग भी उससे कहीं अधिक प्रभावकारी—चाहे बुरे प्रभाव के ही रूप में हो—साहित्य की ओर बहुत कम लोगों का ध्यान जाता है ! जावे भी तो कैसे ? साहित्य के महारथी, राष्ट्रों व समाजों के नेता, विवेकशील मार्गप्रदर्शक ही तो विज्ञापन-साहित्य के लिए जिम्मेदार हैं।

विज्ञापन पत्रों का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। उसकी उपेक्षा का अर्थ है आर्थिक क्षति। यदि विज्ञापन न लें, तो अखबार नहीं चल सकता या कम-से-कम दो-चार पैसे में नहीं दिया जा सकता। फिर विज्ञापन भी तो एक प्रकार की सेवा है—न सिर्फ़ कारोबार चलानेवालों की, बल्कि अपने पाठकों की भी, जिन्हें हम यह बताते हैं कि उनकी आवश्यकता की विविध वस्तुएँ कहाँ-कहाँ मिल सकती हैं ? विज्ञापनों से देश का कारोबार बढ़ता है, समृद्धि होती है—इत्यादि अनेक बातें पत्र-संचालक कहते हैं और इसमें सन्देह नहीं कि उनकी उन बातों में काफी सचाई भी है।

यह एक ठोस सचाई है कि यदि विज्ञापन न लिये जावें, तो अखबार के भारी खर्चे उठाने के बाद वह दो या चार पैसे में नहीं दिया जा सकता। और फिर आती लक्ष्मी कौन छोड़ता है ? वर्तमान अर्थशास्त्र के नियमों के अनुसार भी कारोबार बढ़ाने के लिए विज्ञापन एक अमोघ साधन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन मैं यह पूछना चाहता हूँ कि क्या पत्र-संचालकों को इन युक्तियों से सब प्रकार के विज्ञापनों के लिए स्वयं आत्म-सन्तोष हो जाता है? माना कि विज्ञापन आय-वृद्धि के अच्छे साधन हैं और इसके लिए पत्र-संचालकों को रोकना ठीक नहीं, हालाँकि वे ही देशभक्ति आदि ऊँचे शब्दों के नाम पर जनता को आत्म-त्याग व बलिदान का उपदेश देते रहते हैं। लेकिन क्या मैं यह भी पूछ सकता हूँ कि विज्ञापन का अर्थ सब प्रकार के झूठे-सच्चे, विनाशकारी विज्ञापन देना ही है या इसमें भी उनका कोई अपना उत्तरदायित्व है? जब वे पाठकों से अखबार के लिए पैसा लेते हैं, तब क्या उनका कर्तव्य नहीं कि वे पाठकों को सिर्फ़ ऐसी ही सामग्री दें, जो उनके लिए उपयोगी हो, कम-से-कम हानिकर तो न हो? क्या वे स्वयं यह नहीं जानते कि उनके पत्र में अत्यन्त आक्षेप-योग्य और झूठे विज्ञापन छपते हैं? पाठकों से पैसा लेने के बाद यह तो नैतिक कर्त्तव्य हो जाता है कि पाठक के लिए ऐसी अहितकर सामग्री न दें, जो उसके धन, चरित्र व स्वास्थ्य तीनों के लिए विनाशक हो।

कई बार पत्रों के प्रबन्ध-कर्ता या विज्ञापन-विभाग के अध्यक्ष कहते हैं कि 'हमें क्या पता कि कौन विज्ञापन झूठा है और कौन सच्चा, फिर. यह 'बिज़िनैस' है। विज्ञापनदाता पैसा देता है और हम उसका विज्ञापन छापते हैं। हम किसी पाठक को बाधित तो नहीं करते कि वह विज्ञा-पित वस्तु खरीदे ही।'

दलीलें वे दे जाते हैं, लेकिन इनकी निस्सारता को भी सबसे अधिक वही समझते हैं। एक पैसे की झूठी घड़ी के लिए 'डमी' जैसा अपरिचित शब्द देते हुए विज्ञापनदाता अपने पाठकों को उल्लू बनाने का ही संकल्प करता है और पत्र-संचालक भी इसे जानता है। अनेक विज्ञापनदाताओं के झूठे विज्ञापनों से ठगे जाने के पत्र भी अखबारों के कार्यालय में पहुँचते हैं, लेकिन वे पत्र मुस्कराकर रद्दी की टोकरी में ही डालने के योग्य समझे जाते हैं! एक बार भी विज्ञापनदाता का ध्यान उसकी धोखेबाज़ी की ओर नहीं खींचा जाता और न वह विज्ञापन बन्द किया जाता है। निष्काम भाव से अपने पाठकों की जेब, जिसपर अखबारों का जीवन निर्भर है, खाली होने दी जाती है।

कामोत्तेजक विज्ञापनों की तो इतनी भरमार होती है और कभी-कभी वे इतनी अश्लील भाषा में लिखे जाते हैं कि लज्जा भी शर्म से गड़ जाती है, परन्तु भारत की प्रान्तीय भाषाओं के पत्र-संचालक निर्लिप्त भाव से उनपर दृष्टि डालकर फिर अपने काम में लग जाते हैं। उन विज्ञापनों के ३-४) या ५-१०) रु० तो आ जाते हैं, बस इतने से ही काम। देहरादून के एक प्रोफ़ेसर ने एक पत्र-सम्पादक के पास पत्र लिखा कि मैं आपके साप्ताहिक को अपनी कन्याओं के लिए मँगाता हूँ। उनमें से एक की उम्र १७ वर्ष, दूसरे की १५ और तीसरी की १२ वर्ष है। वे आपके पत्र में प्राय हर दूसरे-तीसरे पृष्ठ पर आनेवाले आकर्षक विज्ञापनों का अर्थ नहीं समझ पातीं; मुझसे पूछती हैं। बताइए, मैं उन्हें क्या उत्तर दूँ? बेचारा सम्पादक क्या करता? पानी-पानी हो गया, लेकिन उन विज्ञापनों को निकलवा देने का सामर्थ्य उसमें कहाँ था?

विज्ञापनों का मैं विरोधी नहीं। पत्रकार के नाते मुझे पत्र की समस्याओं का थोड़ा-बहुत परिचय है। मेरा यह विश्वास है कि बिना विज्ञापनों की सहायता के अखबारों का जीवन चल ही नहीं सकता—स्वयं महात्मा गांधी द्वारा सम्पादित 'हरिजन-सेवक' वर्षों तक घाटे पर रहा और संभवत: कल भी वह स्वावलम्बी नहीं था—लेकिन इतनी तो तमीज की जा सकती है कि वे विज्ञापन न दिये जावें, जो सरासर झूठे हों या कामोत्तेजक भाषा में लिखे हों। मैं तो इसके लिए एक ही कसौटी रखना चाहता हूँ। जिस विज्ञापन को हम अपनी बहनों व बेटियों के हाथ में नहीं दे सकते या उसे पढ़ने की सिफ़ारिश नहीं कर सकते, समझ लीजिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वह विज्ञापन ऐसा है कि जो दूसरों की बहू-बेटियों के लिए भी उतना ही अपाठ्य है। स्मृतिकार मनु का **'स्वस्य च प्रियमात्मनः'** धर्मलक्षण ही किसी विज्ञापन के भी उचित-अनुचित होने की कसौटी है।

पत्र-संचालक जानते हैं कि वशीकरण का या 'जो चाहो हो जायगा' का विज्ञापन सरासर धोखा है, लेकिन दो-चार सफेद गोल टुकड़ों के लिए उसी धोखादेही में स्वयं भी भागी बनते हैं और चाहते हैं कि इस धोखे की सारी जिम्मेदारी विज्ञापनदाता पर जाये !

क्या मैं पूछ सकता हूँ कि प्रजाहित क्या केवल राजनैतिक उन्नति में ही है ? उनके मितव्यय और झूठी-झूठी दवाइयों में उनके पैसों की फ़िज़ूल-खर्ची बचाने में उनके चरित्र-निर्माण में उनका हित नहीं है ? क्या वे राष्ट्रीय पत्र में शराब के विज्ञापन देकर अपने पाठकों का उस हित से अधिक अहित नहीं करदेते जो वे एक कार्यकर्ता पर मार-पीट का विरोध करके करते हैं ? मैं तो यहाँतक कहने का साहस करता हूँ कि एक राजा की झूठी प्रशंसा या खुशामद करके ५-७ सौ रु० ले लेना उस पाप से कहीं कम और कहीं अधिक अक्षम्य है, जो हम झूठे व कामोत्तेजक विज्ञापन छापकर अपने निरीह भोले-भाले पाठकों के चरित्र और धन के साथ करते हैं और इसके लिए हमें मिलता है सिर्फ १।।) या १) रु० इंच ! और अधिकांश हिन्दी पत्र तो ।-) और ।=) इंच पर ही अपना ईमान बेचने को तैयार रहते हैं !!

कुछ बरसों से विज्ञापनों का नया रूप हमारे सामने आया है। यह है चाय, चीनी और बनस्पति घी का प्रचार। यह प्रचार अत्यन्त संगठित है। इससे पत्रों की आय भी काफ़ी होती है और आज यह इतने व्यापक रूप में प्रचलित हो रहे हैं, कि इन्हें धोखा या पाप कहने का साहस नहीं होता,' लेकिन इतना तो हो सकता है कि हम इन विज्ञापनों के लिए स्वाभिमत का गला तो न घोंटें। बड़ी-बड़ी विज्ञापन-कम्पनियाँ आज 'राइट अप' के नाम से संपादक की कलम से कभी ऐसी चीज़ भी चाहती हैं जो ईमानदार सम्पादक कभी लिख ही नहीं सकता। लेकिन लिखना पड़ जाता है। 'आज' पत्र चाय-प्रचार-विभाग द्वारा भेजी गयी सूचनाओं के नीचे 'वि०' लिखकर युधिष्ठिर की भांति अर्धसत्य अवश्य बोलता है कि यह **'विज्ञापन'** है। नपुंसकता-नाशक तिला आदि के विज्ञापनों में हमने अनेक प्रसिद्ध राष्ट्रीय पत्रों की सम्मतियाँ पढ़ी थीं। उन प्रतिष्ठित सम्पादकों ने उस कम्पनी की दवाइयों का कभी प्रयोग न किया होगा। लेकिन उन्हें सर्टीफिकेट देने के लिए शायद वे विवश थे।

यह प्रवृत्ति बढ़ते-बढ़ते आज पत्रकारों को यहाँतक नीचे ले गयी है कि सिनेमा के खेल में एक मुफ्त पास के बदले में वे अपनी लेखनी से व्यभिचार करने पर उद्यत हो जाते हैं। हीनोपमा के लिए माफी माँगता हूँ, लेकिन क्या मैं पूछ सकता हूँ कि चाकलेट की एक डिबिया के लिए ईमान बेचनेवाली अमेरिकन कन्या और १०-१२ आने के टिकट के लिए अपनी स्वतन्त्र सम्मति छिपाकर अपना ईमान बेचकर झूठी सम्मति लिखने में क्या बहुत अंतर है ? यह दशा है उन लोगों की जो अपने को आदर्श मानते हैं, जो राष्ट्र का नेतृत्व करते हैं !

लेख में अनेक स्थलों पर कठोर शब्द आ गये हैं, परन्तु सत्य कठोर भी होता है। मैं स्वयं पत्रकार हूँ और मैं मानता हूँ कि मैं भी साधारण पत्रकारों से अपने को अधिक ऊँचा नहीं मानता, परन्तु आत्मनिरीक्षण में अपने ही तो दोष देखने होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी बुनियादी तालीम-परिषद्[1]

एक दृष्टिपात

[गोपाल रामचन्द्र कुलकर्णी]

बुनियादी तालीम का प्रयोग शुरू किये आज तीन साल होगये। इस प्रयोग में दो किस्म की संस्थायें काम कर रही हैं। एक भिन्न-भिन्न प्रान्तों की सरकारी संस्थायें, और दूसरी निजी जिम्मेदारी पर प्रयोग करनेवाली व्यक्तिगत संस्थायें। जब सूबों में कांग्रेस-सरकारें थीं तब बुनियादी तालीम का प्रयोग कुछ वेग से जारी था। लेकिन प्रयोग शुरू करने के बाद थोड़े ही दिनों में कांग्रेस ने प्रान्तों में अधिकार छोड़ दिया और इस प्रयोग का काम गवर्नरों के हाथ में आगया। पिछले डेढ़ साल का अनुभव है कि गवर्नरों की वृत्ति इस प्रयोग के विषय में प्रान्त-प्रान्त में भिन्न-भिन्न है। किसी प्रान्त में, जैसे कि बंबई में, ज़ाहिर किया है कि हम न इस प्रयोग को आगे बढ़ावेंगे न रुकावट डालेंगे। वह जिस हालत में है उसी हालत में रहेगा। जबकि उड़ीसा ने तो सात महीने की ही आजमायश के बाद प्रयोग को निष्फल ठहराकर उसे स्थगित कर दिया। दरअसल तो बुनियादी तालीम की योजना ही सार्वजनिक लाजिमी तालीम की योजना है। इसलिए जबतक सरकार इस योजना को हाथ में न ले, तबतक उसका आम प्रचार नहीं हो सकता। लेकिन कांग्रेस-सरकारों के जाने के बाद राष्ट्रीय शिक्षा के अन्य प्रयोगों की तरह बुनियादी तालीम का प्रयोग भी खानगी संस्थाओं के सिर ही आ पड़ा है। बुनियादी तालीम की दूसरी परिषद् परिस्थिति की इस भूमिका पर ही हुई।

असल में माना जाता था कि यह परिषद् यू० पी० सरकार की तरफ़ से की जायगी, लेकिन कुछ अनिवार्य परिस्थितियों से परिषद् का कार्य हिन्दुस्तानी तालीमी-संघ को ही करना पड़ा। और डा० ज़ाक़िरहुसैन की जामिया मिलिया ने अपनी संस्था के आश्रम में उस परिषद् को निमंत्रित किया। सारे प्रान्तों के मिलकर १५० के लगभग प्रतिनिधि इसमें आये थे। बिहार, यू० पी०, उड़ीसा, दिल्ली, गुजरात, काश्मीर, सी० पी० राजपुताना व महाराष्ट्र के प्रतिनिधि थे। खुशी की बात यह है कि यू० पी० सरकार ने कांग्रेस-सरकार के हट जाने के बाद भी बुनियादी तालीम को अपने सूबे में आम तौर पर दाखिल करने की नीति अंगीकार की है। यू० पी० के बुनियादी तालीम-अफ़सर डा० खान बतलाया कि नयी तालीम के लिए यू० पी० सरकार ने पाँच लाख रु० मंजूर किये हैं और क्रमशः यू० पी० के सारे प्राथमिक मदरसे बुनियादी मदरसों में बदल देने का निश्चय किया है। सारी परिषद् में यू० पी० के कार्य के बारे में काफ़ी चर्चा हुई थी। कई प्रतिनिधियों का यह ख़याल था कि यू० पी० ने इस प्रयोग का प्रचार करने में जल्दबाज़ी से काम लिया है, जिसका नतीजा यह हुआ है कि बुनियादी तालीम के असली उसूल उसमें तितर-बितर होगये। यह आक्षेप परिषद् में प्रतिनिधियों ने प्रकट किये थे और डा० खान ने उसके बारे में अपनी तरफ़ से खुलासा भी किया था। यह सारी चर्चा सुनने के बाद मेरी यह राय हुई है कि यू० पी० ने सचमुच सच्चे दिल से इस प्रयोग को अपना लिया है। यू० पी० के कांग्रेसी शिक्षा-मंत्री सम्पूर्णानंदजी अपने समाजवादी विचारों के लिए मशहूर हैं। सोवियत रूस की कार्य-पद्धति पर उनकी बड़ी श्रद्धा है। सोवियत रूस ने वर्षा से उमड़ती हुई नदी के माफ़िक़ देश भर में समाजवादी विचारों को फैलाया। उसी तरह सम्पूर्णानंदजी ने भी इस बुनियादी तालीम को सूबे भर में छः महीने के अन्दर ही प्रचलित करने की चेष्टा की।

---

१. यह परिषद् जामियानगर, दिल्ली में गत ११ अप्रैल से १४ अप्रैल तक हुई थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन रूस में वेगवान् क्रान्ति के लिए जो वातावरण था वह हिन्दुस्तान में नहीं है, इसलिए बुनियादी तालीम का प्रचार क्रांति के द्वारा नहीं, विकास-क्रम से ही हो सकता है । इससे अगर यू० पी० में इस प्रयोग का स्वरूप विकृत हुआ हो तो उसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है । लेकिन बावजूद इस विकृति के यू० पी० का प्रयोग सारे प्रयोगों में अपना बड़ा हिस्सा दे रहा है ।

परिषद् का उद्घाटन राजेन्द्रबाबू ने किया था। परिषद् के सूत्रधार डा० जाकिरहुसैन थे। श्रीमती आशा देवी परिषद् की अदृश्य शक्ति थीं व श्री आर्यनायकम् उसके कार्यवाहक थे। आचार्य काका सा० व काश्मीर के डा० सैयदीन परिषद् के प्राणपूरक थे। डा० खान सा० परिषद् के सबसे बड़े आकर्षण-केन्द्र थे। ऐसी शक्तियों से परिपूर्ण परिषद् कितनी प्राणवान् बनी होगी इसका अन्दाज पाठक कर सकते हैं।

परिषद् की कार्रवाई ४ दिन तक चली। पहले दिन उद्घाटन व उपाधि-वितरण हुआ। दूसरे दिन सरकारी संस्थाओं के कार्य-विवरण पढ़े गये व प्रदर्शिनी का उद्घाटन हुआ। तीसरे दिन ख़ानगी संस्थाओं की रिपोर्टें सुनायी गयीं व बाद में अनुबन्ध-विज्ञान व पाठ्य-क्रम के बारे में चर्चा हुई। चौथे दिन अध्यापकों की तालीम में कला का स्थान, कताई के पाठ्यक्रम में फेर-फार की चर्चा हुई व बाद में परिषद् के निर्णयों को ठोस प्रस्ताव का रूप दिया गया व परिषद् समाप्त हुई। परिषद् के ही सिलसिले में प्रो० सैयदीन सा० ने देहली के टाउन हाल में बुनियादी तालीम के विषय पर एक भाषण भी किया था, जिसमें आचार्य कालेलकर अध्यक्ष थे।

परिषद् के बाद हरएक प्रतिनिधि पर यही छाप रही कि सारी परिषद् बहुत कामकाजी ढँग से हुई। हर बात की चर्चा व्यवस्थित रूप से हुई । हरएक प्रतिनिधि अपने काम व ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह समझता था। हर चर्चा के बाद कुछ खास निर्णय एक मत से हुआ करते थे। हर विषय की चर्चा के बाद अध्यक्ष के नाते डा० ज़ाकिरहुसैन जो उपसंहार करते थे उसमें बुनियादी तालीम के तत्त्वज्ञान व अमल पर काफ़ी प्रकाश डालते थे । खासकर हर संस्था पाठचक्रम में जो मनचाहा परिवर्तन कर लेती थी उसके बारे में उन्होंने जो खुलासा किया व बुनियादी दस्तकारी साधन है वा साध्य, इस विषय में हुई बहस पर उन्होंने जो निर्णय दिया वह लोगों को कायल कर देता था। उन्होंने बताया कि पाठचक्रम जैसा है उसे वैसा ही लेकर उसपर सचाई के साथ प्रयोग करना चाहिए व प्रयोग के बाद अगर उसमें कुछ त्रुटियाँ मालूम हों, तो पाठ्यक्रम के विशेषज्ञों को मिलकर उसमें जरूरी परिवर्तन करना चाहिए। साध्य-साधन का झगड़ा सिर्फ़ शब्दों का ही झगड़ा है—यह बताकर उन्होंने समझाया कि अच्छा साधन बुरे साध्य से कहीं अच्छा है ।

आचार्य कालेलकर ने अपनी अनुपम उपमा-शक्ति से परिषद् से सवाल किया—आप दस्तकारी को अपना बच्चा समझते हैं या गधा ? गधे से कितना काम लेना और उसपर कितना बोझ डालना इसका ही विचार सब लोग करते हैं; लेकिन बच्चे का विकास कैसे हो, वह सुखी कैसे हो, उसपर कम-से-कम बोझ कैसे पड़े, यह सोचते हैं । दस्तकारी गधा नहीं है, हमारा बच्चा है। दस्तकारी को शिक्षा का बोझ नहीं उठाना है बल्कि उसकी प्रगति करते हुए शिक्षा की उन्नति करना है। प्रो० सैयदीन ने अपने नपे-तुले शब्दों व मोहक शैली में अनुबन्ध-विज्ञान की मीमांसा की थी। पढ़े गये विवरणों में आर्य-नायकम्जी का मत था व मेरा भी ऐसा ही मत है कि मेरा निबन्ध जो कि अनुबन्ध-सम्बन्धी था, सबसे ज्यादा मौलिक व तलस्पर्शी था। सी० पी० के तोमर साहब का निबन्ध अच्छा था। दूसरे सज्जनों ने भी अनुबन्ध के विषय में निबन्ध पढ़े थे। रिपोर्टों में राजपीपला के बुनियादी मदरसे का वस्त्र-स्वावलम्बन का प्रयोग बुनियादी शिक्षा में एक नयी दिशा दिखाता था। पिलाणी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के दस्तकारी के मजदूरी के आँकड़े, अगर उनमें कोई भूल न हो तो, बताते थे कि काफ़ी प्रयत्न करने से शिक्षा को स्वावलम्बी बनाने की गांधीजी की अभिलाषा पूरी हो सकती है। बिहार की रिपोर्ट में दस्तकारी के विकास के लिए किया हुआ प्रामाणिक प्रयत्न दिखायी देता था। कई रिपोर्टें पढ़ी गयीं, जो ऐसी कठिन उर्दू में थीं कि मैं उनका ७५ फी सदी नहीं समझ सका। इस-लिए उनके बारे में कुछ नहीं कह सकता। इन रिपोर्टों में जामिया मिलिया की तो थी ही।

परिषद् का आकर्षक अंग था प्रदर्शिनी। काश्मीर-विभाग में अलग-अलग दस्तकारियों की चीज़ें थीं। जामिया मिलिया ने गत्ता व अब्री का काम बताया था। उनके अनुबन्ध के पाठ भी मौलिक थे। राजपीपला ने अनुबन्ध के बारे में बहुत-कुछ प्रत्यक्ष कार्य नक्शों के रूप में प्रदर्शिनी में दिखाया था। सारे पाठ्य-क्रम को किन चीज़ों के साथ व किस तरह अनुबन्ध में लिया जा सकता है, यह उन्होंने एक तरतीब से बताया था। उनका दस्तकारी को मनोविज्ञान की कसौटी पर कसना बिल्कुल मौलिक था। सारी नुमाइश में शिक्षण की सहायता में काम आनेवाले जो चित्र वग़ैरह राजपीपला या जामिया मिलिया ने बताये वे इस परिषद् की एक ख़ासियत गिनें जाते हैं। जामियामिलिया का पाठ्य-पुस्तकों का प्रदर्शन भी काफ़ी आकर्षक था। यू० पी० ने जो कला-प्रदर्शन किया था। उससे बुनियादी तालीम को एक नयी दिशा का दर्शन होता था।

परिषद् के निर्णयों में सभी काफ़ी महत्त्व के थे। लेकिन उनमें दो ऐसे थे जो बुनियादी तालीम के कार्य में प्रत्यक्ष परिवर्तन करनेवाले थे। पूना की परिषद् ने बुनियादी शिक्षकों के तालीम की न्यूनतम काल-मर्यादा एक साल की निश्चित की थी। उसको बढ़ाकर देहली-परिषद् ने दो साल कर दिया। ज़ाकिरहुसैन कमिटी ने बुनियादी तालीम की सारी श्रेणियों में दस्तकारी का समय ३ घंटा २० मिनिट रक्खा है। उसमें फर्क करके पहली कक्षा में २ घण्टे, दूसरी में २॥ व तीसरी में ३ घण्टे इस परिषद् ने निश्चित किये। स्वीकृत प्रस्तावों में उड़ीसा सरकार के प्रति विरोध का एक प्रस्ताव था। आगामी परिषद् के लिए बिहार का निमंत्रण स्वीकार किया गया।

डा० जाकिरहुसैन ने प्रतिनिधियों की सारी व्यवस्था शाही ढंग पर की थी। उनकी मोटर बस प्रतिनिधियों के ही अधीन रहती थी। भोजन में वैज्ञानिक दृष्टि से सब आयोजन किया जाता था। गाय का ही दूध दिया जाता था नहाने के लिए हर रोज़ सुबह जमनाजी की यात्रा होती थी। सारे प्रतिनिधि बड़ी प्रसन्नता से रहे। अखीर में काका साहब ने जैसे कहा—प्रति-निधियों को एक ही तकलीफ थी—उन्हें सारे दिन काम करना पड़ता था। यह परिषद् बुनियादी तालीम के इतिहास में युगनिर्माणकारी कही जा सकती है। डा० ज़ाकिरहुसैन की प्रखर बुद्धिमत्ता और कार्यकुशलता से यह परिषद् अत्यन्त सफल हुई। परिषद् से लौटते हुए हरएक प्रतिनिधि के मन में भविष्य में बुनियादी तालीम को किस तरह ज्यादा फलदायी बनाया जाय, यही एक विचार था।

साक्षर जीवन निरर्थक हो सकता है, इसके उदाहरण वर्तमान सुशिक्षित समाज में अनढूंढ़े मिल-जायँगे। इसके विपरीत निरक्षर जीवन भी सार्थक हो सकता है, इसके अनेक उदाहरण इतिहास ने देखे हैं। बहुत बार 'सु'—शिक्षित और 'अ'—शिक्षित इनके जीवन की तुलना करते हुए **अक्षराणामका-रोऽस्मि** गीता के इस वचन में कहे अनुसार 'सु' के बजाय 'अ' ही पसंद करने लायक़ जान पड़ता है।

सस्ता साहित्य मण्डल] —**'विनोबा'**— [**'विनोबा के विचार'**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुप्त ठग

[रामनरेश त्रिपाठी]

लोगों को अक्सर कहते सुनता हूँ कि **शहर की कमाई शहर में ही रह जाती है**; पर कभी इसे उलट-पलटकर समझने का अवसर नहीं मिला था। कल दो देहाती उसी बात को दुहराते हुए रास्ते में जाते हुए मिले। वे बुझी हुई आग में एक फूँक-सा लगा गये; और घर आकर मैं सोचने बैठा कि उक्त सिद्धांत-वाक्य की बुनियाद क्या किसी अनुभव पर है ? या यों ही वह चल निकला है ?

मैं स्वयं गाँव का रहनेवाला हूँ। किसान-कुटुम्ब का हूँ। सन् १९०८ में अपने खेत के मेंड़ों से शहर की सड़कों पर आया। कई वर्षों के अभ्यास के बाद गाँव की रहन-सहन छूटी और शहरी जीवन का रस मिलने लगा। अब मैं इस योग्य हो गया हूँ कि अपने निजी अनुभव की कसौटी पर ऊपर के सिद्धान्त-वाक्य को कसकर देख सकूँ। अस्तु; मैंने स्वयं अपने ही को अपनी परीक्षा में बैठा लिया।

सन् १९१६ से मैं प्रयाग में स्थायी रूप से रहने लगा। पहले मैंने 'साहित्य-भवन' खोला। उस समय तक मेरा जीवन शहर और गाँव का एक मिश्रित जीवन था। मेरे जीवन की गाड़ी यद्यपि कुछ सज गयी थी, पर उसे गाँव की सादगी और कमखर्च नाम के दो बैल खींच रहे थे। उसमें टीमटाम का एंजिन नहीं लग पाया था। इससे बचत कम नहीं थी।

'साहित्य-भवन' लिमिटेड हुआ। उन दिनों देश-सेवा की लगन जोरों पर थी। मैं स्वतंत्र होकर कांग्रेस और किसान-सभाओं का प्रचार-कार्य करता रहा। इसके बाद जेल गया। एक वर्ष से अधिक जेल में रहकर बाहर आया, तब फिर काम-काज की सूझी।

१९२४ में मैंने 'हिन्दी-मन्दिर' खोला। उस समय मेरे पास एक पैसे की भी पूँजी नहीं थी। साहित्य-भवन लिमिटेड हो जाने के बाद मेरे पास जो कुछ बचा-खुचा था, उसे मैंने साल-दो साल में खा-पकाकर बराबर कर दिया था। लखनऊ जेल से सरकारी टिकट पर इलाहाबाद आया, तब एक मित्र से दो रुपये उधार लेकर मैं घर गया था। इलाहाबाद में मेरी केवल साख थी, जिसके आधार पर, बिना किसी पूँजी के मैंने 'हिन्दी-मन्दिर' खोल दिया। यहींसे अर्थात् १९२४ से मेरा शहरी जीवन शुरू होता है।

हमें ऊपर के वाक्य की सचाई जाँचनी है, इससे हम दूसरी बातों पर न जाकर केवल कमाई ही पर विचार करेंगे। कमाई मैंने कितनी की ? इसका मैं अभी तक हिसाब नहीं लगा सका हूँ। पर खर्च भी कमाई का एक जुज़ है, उसका एक मोटा-सा हिसाब मैंने बैठे-बैठे तैयार कर लिया है। खर्च का टोटल देखकर मैं निस्तब्ध हो गया हूँ। आज तीसरा दिन है। मेरे मन की ऐसी हालत हो रही है, जैसे किसी ने मुझे ठग लिया है। मैं समझता हूँ, मेरी कहानी जो सुनेगा, अगर उसमें कुछ समझ-बूझ होगी तो वह भी एक आह भरकर स्तंभित हो जायगा।

अब १९२४ से १९४० तक, १६ वर्षों के मेरे खर्च के आँकड़े ये हैं :—

१९२४ से ३० तक

हिन्दी-मन्दिर, प्रयाग के कर्मचारियों का मासिक वेतन और दूकान-भाड़ा प्रति १००) मास के हिसाब से, ६ वर्ष में ७२००)

मेरा निजी खर्च घर-भाड़ा सहित १००) मासिक के हिसाब से, ६ वर्ष में ७२००)

हिन्दी-मन्दिर, प्रयाग के फुटकर खर्चे, जैसे स्टेशनरी, पान-सुपारी, आये-गये का स्वागत-सत्कार आदि ६ वर्ष में ६००)

१९३१ से ४० तक

हिन्दी-मन्दिर बुकडिपो और हिन्दी-मन्दिर प्रेस के कर्मचारियों का मासिक वेतन और प्रेस और दूकान का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाड़ा प्रतिमास ५००) के हिसाब से,
१० वर्ष में ६००००)
मेरा निजीखर्च घर-भाड़ा सहित
२००) मासिक के हिसाब से, १० वर्ष में २४०००)
ग्राम-गीतों के संग्रह में १९२५ से
१९३० तक ८०००)
१०७०००)

मोटे हिसाब से अपनी कमाई में से एक लाख सात हजार रुपये मैंने शहर को दिये।

यह तो निश्चित ही है कि मैं इतना कमा सकने की शक्ति रखता था, पर अपनी शक्ति का मुझे क्या लाभ मिला? केवल एक स्टाक जिसमें छपे हुए काग़ज़ ही काग़ज़ हैं, और मेरा यह शरीर जो गाँव की अपेक्षा शहर में ज्यादा खर्च कराके आगे कुछ और वर्षों के लिए शहर ही की सेवा करने को प्रस्तुत है। शहर ने मुझसे एक लाख सात हजार रुपये नक़द ही नक़द लिये। अपने घरवालों के लिए तो मैंने ५-६ हज़ार रुपये ही दिये, जिनसे एक पक्का मकान बन गया और घर के लोग गाँव का घर छोड़कर नज़दीक के शहर में, पक्के मकान में आ गये।

और घरवालों को गाँव से शहर में लाकर मैंने एक प्रकार से उनपर अत्याचार ही किया है। गाँव में वे गाय-भैंस रखते थे; ताज़ा दूध, दही और मट्ठा पीते थे। आज-कल मटर की फलियाँ और गन्ने के रस की बहार लेते थे। अब शहर में वे सब चीज़ें खरीदकर खाते हैं। गाँव में खाने-पीने की जो चीज़ें वे मित्रों में बाँटते फिरते थे, अब उन्हींके स्वयं मुहताज बने बैठे हैं।

अपनी कमाई से मैंने लड़कों को शिक्षा ज़रूर दिला ली, पर शिक्षा भी कौन-सी?—जिससे शहर ही को लाभ मिलेगा।

अब इसका अर्थ यह हुआ कि मानो शहर मुझसे कहता है कि मेरे लिए कमाओ, मेरे लिए बच्चों को पढ़ाओ-लिखाओ और मेरे लिए जिओ। मैं तुमको मरने नहीं दूँगा, पर यहाँ का धन गाँव को ले जाने भी नहीं दूँगा। मैंने अपनी जवानी के सुनहले दिनों की उपेक्षा करके अपना शरीर घिसा, बुद्धि-द्वारा जितना निगला उससे कई गुना उगला; संयम से रहकर शरीर और मन को स्वस्थ रक्खा; नाम पैदा किया, सबका लाभ शहर ही ने ले लिया? उसने मुझसे चाँदी ही चाँदी ली और काग़ज़ (स्टाक के रूप में) मेरे पास छोड़ दिया। जहाँ से मैं चला था और यह सोचकर चला था कि शहर से कुछ कमाकर फिर वहीं वापस जाऊँगा, वह तो स्वप्न हो गया। कैसी विडंबना है!

अब छपे हुए कागज़ों का एक बड़ा-सा स्टाक लिये मैं बैठा हूँ और शहर इस ताक में है कि उसमें से जितनी चाँदी बनती जाय, वह मैं उसे देता जाऊँ और स्टॉक की रखवाली भी करता रहूँ!

अब तो यह सच ही साबित हो रहा है कि **शहर की कमाई शहर ही में रह जाती है** और यह भी निखर आया कि शहर गाँव को किस तरह खा जाता है।

आज मुझे अपनी शक्ति का पता चला कि मैं एक लाख सात हज़ार कमा सका; पर साथ ही पश्चात्ताप भी हो रहा है कि शहर मुझे किस तरह विवश करके चुपचाप ठगता रहा।

क्या कोई अर्थशास्त्री ऐसा कोई रास्ता सुझायेंगे, जिससे गाँव की शक्ति, कुल न सही तो आधी-तिहाई ही सही, गाँव की उन्नति में भी लग सके?

प्रेम से की हुई मेहनत क्या है? यह है, तुम्हारे हृदय की रुई से काते हुए सूत से वस्त्र बुनना मानों स्वयं तुम्हारा प्रियतम इसे पहनेगा। यह है, स्नेह-सहित एक घर का निर्माण करना, मानों स्वयं तुम्हारा प्रियतम इसमें निवास करेगा। यह है तुम्हारा सँभाल-सँभाल कर बीज बोना और स्नेह-सहित फसल काटना मानों स्वयं तुम्हारा प्रियतम उन्हें खावेगा। यह है जिस चीज में हाथ लगाना उसे प्राणों के श्वास से सजीव कर देना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन का उषाकाल

[प्रभुदास गांधी]

तीसरा प्रकरण

ओताबापा

ओतागांधी या ओताबापा के नाम से हमारे प्रपितामह उत्तमचंद गांधी अधिक प्रसिद्ध थे। मेरे दादाजी जब कभी अपने दादा ओताबापा और अपने चाचा कवाकाका की कथा सुनाते थे तब बड़े आदर और बड़ी बारीकी के साथ सुनाया करते थे। सुनते-सुनते मेरे दिल में यह अभिलाषा पैदा होती थी कि आज भी वे महापुरुष मौजूद होते और उसी तरह हमारा समूचा परिवार संयुक्त ढंग से बसता होता तो कैसा अच्छा रहता! पर अधिक सोचने पर जब देखता हूँ कि उसी विशाल परिवार का विकास पूज्य बापूजी ने आश्रम के रूप में किया है और उसमें पलने का सौभाग्य मैंने पाया है, तब मैं अपने को कम बड़भागी नहीं समझता।

कहा जाता है कि ओताबापा आजानुबाहु थे--सीधे खड़े रहने पर उनके हाथ घुटनों तक पहुँचते थे। यह लक्षण महापराक्रमी पुरुषों का माना गया है। ओताबापा के ललाट में बड़ी चमक थी और उनकी आँखों में ऐसा तेज था कि कच्चे दिल का आदमी उनसे बात करने में हड़बड़ा जाता था। गांधीलोगों ने दूकान चलायी थी, रियासतों में छोटी-मोटी नौकरियाँ भी की थीं, परन्तु प्रतीत होता है कि सचिव बनने का सर्वप्रथम पुरुषार्थ ओताबापा ने ही प्रकट किया।

कुमार-वय में ओताबापा कुछ रोज़गार पाने के लिए कुतियाणा से अपने काका दमन गांधी के पास पोरबन्दर आये! दमन गांधी के दफ्तरी होने के कारण उनका रियासत में अच्छा वसीला था। उन्होंने **'मीठी मांडवी'** का ठेका ओताबापा को दिलवा दिया। 'मीठी मांडवी' सामुद्रिक चुंगी लेने का स्थान था। उन दिनों में भी पोरबन्दर का सामुद्रिक व्यापार कम नहीं था। मूछ की रेख अभी प्रकट हो ही रही थी, ऐसी छोटी आयु में पैंतरेबाज सामुद्रिक व्यापारियों से चुंगी लेने में ओताबापा ने अच्छी मुस्तैदी और चतुराई दिखायी। यह कड़ा काम अंजाम देने के साथ-साथ वह समय निकलकर दमाकाका के पास दफ्तर में तालीम भी लेने लगे और दफ्तर के काम में भी इतने निपुण हो गये कि कुछ ही दिनों में काका आराम करने के लिए उन्हें बाध्य करके स्वयं ही छोटा-मोटा काम निपटाने लगे।

एक दिन राणा विक्रमाजित् ने किसी काम से दमाकाका को बुला भेजा, पर वे दफ्तर में उपस्थित न थे। ओताबापा ने नाज़ुक मौक़े को सँभाल लिया। दमाकाका को बुलाने न दौड़े, पर खुद राणा साहब के सम्मुख उपस्थित हुए और झुककर प्रणाम करके उनसे विनयभरे वचन बोले--"मेरे चाचाजी बाहर गये हैं, जो आज्ञा हो मुझे बताइए। मैं भी आपका सेवक ही हूँ।" लड़के की फुर्ती और बोलने की शैली और निर्भीकता देखकर राणा साहब मुग्ध होगये। एक मँज़े हुए ओहदेदार के करने का काम उन्होंने इस नौजवान को सौंपा और कामयाबी के साथ उसने उसे कर दिया। काम को सही-सही हुआ देखकर ओताबापा के लिए राणा साहब की उम्मीदें बढ़ गयीं और दूसरे दिन उन्हें फिर दरबारगढ़ में बुलाया. और कहा--"ओता, एक विकट काम है। हिम्मत है?" ओताबापा : "ऐसा कौन-सा काम है जो आपके प्रताप से सिद्ध न हो?"

राणा साहब--माधवपुर[1] का ठेकेदार ऐंठने लगा है हमें कमज़ोर समझकर गाँठता नहीं है। लगातार वसूलयाबी खाली जारही है। उसे सीधा करना है।

ओताबापा--कोई बात नहीं, मैं माधवपुर चला जाऊँगा।

---

१. प्रभास पाटण और पोरबन्दर के बीचवाले समुद्र के किनारे एक बड़ा बन्दरगाह। रुक्मिणी-हरण के बाद कृष्ण भगवान के विवाह की स्मृति में यहाँ मेला लगता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राणा साहब—पर तू करेगा क्या, यह तो बता ?

ओताबापा—मौक़ा देखकर ही तो पता चलेगा। आपके आशीर्वाद से फतह ही होगी। मेरी पीठ पर अपना वरद हस्त रखिए, फिर बेड़ा पार ही है। मुझे कहाँ अपने बूते पर कुछ करना है ? आपके नाम ही से तो करना है।" इतना कहकर ओताबापा ने राणा साहब के चरणों में सिर झुकाया। राणा साहब ने आशीर्वाद की थपकी दी। बापा माधवपुर रवाना हुए।

उन दिनों में काठियावाड़ में अंग्रेज़ी शासन का प्रवेश-मात्र हो रहा था। वहाँकी असंख्य रियासतें एक सम्राट की छत्रछाया में सारी-की-सारी अभी नहीं आयी थीं। जूनागढ़ और जामनगर जैसी प्रबल रियासतें पोरबंदर जैसी निर्बल रियासतों पर तरह-तरह के आक्रमण करके उन्हें छिन्न-भिन्न कर रही थीं। पोरबंदर में मोर्चा लेने की ताकत बची न थी। छीज-छीजकर पोरबंदर की अमलदारी अब चंद देहातों में ही रह गयी थी। जूनागढ़ के कुछ गाँवों में सिर्फ़ उगा खानें के लिए छुटपुट पट्टियाँ रही थीं और माधवपुर जैसे बड़े बन्दरगाह में चुंगी लेने का हक भी कठिनाई से बच रहा था। जूनागढ़ के आसरे वहाँ की बहरी चुंगी का ठेकेदार भी अब चुंगी की रक़म जमा करने में लापरवाही करने लगा था। इस विषम परिस्थिति में राणा साहब ने ओताबापा को माधवपुर भेजा। बापा ने दीर्घ दृष्टि से काम किया। जूनागढ़ राज्य के साथ राजनैतिक परामर्श शुरू किया। जूनागढ़ के भिन्न-भिन्न देहातों में छुटपुट पट्टियों को उगा खाने का दीवानी हक छोड़ दिया। बदले में माधवपुर से पोरबन्दर तक के सारे समुद्री किनारे की एक चक जमीन और उस बीच के कुल देहातों को पूरे सियासी और दीवानी हकों के साथ पोरबंदर रियासत के लिए लिखवा लिया। उस समय वह सारा प्रदेश रेतीली और नमकीन बंजरों से छाया हुआ था। परन्तु ओताबापा के हाथ की लिखी हुई **नोंध** आज भी पोरबन्दर रियासती दफ्तर में मिल सकती है कि "भादर नदी का बाँध बाँधा जाय तो यह सारी जमीन सोने की फसल देगी।" हुआ भी वैसा ही। उन दिनों ७०-८० रुपयों की उत्पत्तिवाले देहात अब पौन-पौन लाख रुपये की फसल पैदा कर रहे हैं, और जूनागढ़-पोरबंदर की उसी संधि के बदौलत आज पोरबंदर का स्थान प्रथम श्रेणी की रियासतों में है। जिसके पास पूरे दीवानी हक भी न थे, उसके पास आज अव्वल दरजे की रियासत के पूरे-पूरे हकूक हैं।

माधवपुर की संधि-चर्चा इतनी अधिक सफलता के साथ ओताबापा ने पार उतारी, कि उसे देखकर राणा साहब ने तुरन्त ही उन्हें वजारत की पौसाख दी। जवानी की देहलीज में कदम रखने के साथ-साथ पायी हुई उस वजारत को उत्तमचंद गांधी ने अखीर तक अपनी बुद्धिमत्ता, प्रतिभा, सत्यप्रियता और शूरता के सहारे सँभाला, क्रमशः उसे उज्ज्वल बनाया और अपने वारिसों को उदात्तता की सीख दी।

राणा साहब विक्रमाजित् दीर्घायु नहीं हुए। उनके पीछे कुँवर नाबालिग थे, इसलिए राजसत्ता रानी के हाथ में थी। परन्तु सारा काम ओताबापा ही चलाते थे। राज्य और प्रजा के हित को देखते हुए बापा को अनेक बार राणी की हाँ में हाँ मिलाना असंभव हो जाता था। खुशामद से परे रहकर जो कुछ अपने को सच्चा और कल्याणकारी जँचे उसीको करने में ओताबापा अपनी बुद्धि और शक्ति खपा देते थे।

ऐसे ही एक मौके पर बापा ने मौत को न्यौता दिया था, यह सुप्रसिद्ध बात है। खीमा कोठारी राज्य का खज़ानची और भंडारी था। रानी की दासियों को मनमानी चीजें भंडार से निकाल देने में वह अपना हाथ खींचता रहता था, इसलिए दासियाँ उसके खिलाफ रानी के कान भरती रहती थीं।

एक बार कोठारी पर भीषण दोषारोपण किया गया। उसे बाँधकर अपने सामने पेश करने का रानी ने हुक्म दिया। कोठारी दौड़कर बापा की शरण में आया और जीवन-दान माँगा। बापा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने दिया। राणी ने बापा को अपने आगे बुलाया और खीमा कोठारी को सौंप देने की आज्ञा की। बापा ने इस तरह उसे सौंपने से साफ इंकार किया और बाकायदा मुकदमा चलाने के लिए राणी से प्रार्थना की। राणी ने नहीं माना और जबर्दस्ती कोठारी को छीन लेने की धमकी दी। बापा अडिग रहे। चार दिन तक दोनों के बीच सँदेशे चलते रहे। आखिरकार राणी ने एक फौजी टुकड़ी बापा के मकान पर भेजी। बाद में एक तोप भी मकान तोड़ने के लिए भेज दी। पोरबंदरी सफेद पत्थर का वह पक्का मकान था और दरवाजा भी किले के फाटक-जैसा था। दरवाजे में बापा के अंगरक्षक आरबों की एक छोटी टोली थी। आरबों ने बापा से कह दिया कि हमारा एक-एक सिर बलि चढ़ जाने पर ही आपको कोई छू सकेगा। बापा ने बाहर की रक्षा उन्हें सौंपकर घर में सब तैयारियाँ शुरू कीं। सत्य के लिए शांत चित्त से आहुति देने का अनुष्ठान प्रारम्भ किया। घर के बीचोंबीच अपना आसन जमाया। अगल-बगल में उस समय मौजूद पाँचों पुत्रों और पुत्रों की माता को बिठाया। आठवें कोठारी को बिठाया। सत्य के लिए हँसते-हँसते बलि होने का सबको उपदेश दिया। बाहर से तोप के गोलों की मार चली और मोटी दीवार में छेद हुए।

अन्दर रामधुन मची और सत्य पर दृढ़ रहने की अभ्यर्थना चालू रही। ईश्वर को सारे के सारे वंश का बलिदान लेना उचित न लगा। उत्तमचंद बापा को तो स्वप्न में भी कल्पना न होगी कि बलरहित होने पर भी झुकने से इनकार करने और सच्चाई के पीछे मरना पड़े तो मरने का जो मोर्चा मैंने लिया है उसका विकास अपना ही पौत्र सार्वजनिक सत्याग्रह के रूप में करेगा और उसमें से जगत-परिवर्तन और धर्माभ्युदय होगा। परन्तु ईश्वर को तो इसका पता होगा ही। कुछ भी अनिष्ट परिणाम आने से पहले पोरबंदर की इस धाँधली के समाचार राजकोट पहुँच गये। काठियावाड़ के पोलिटिकल एजेंट ने बीच-बचाव किया और रानी के बलात्कार का अंत हुआ।

इस बखेड़े के बाद बापा ने पोरबंदर छोड़ा और कुतियाणा आकर अपना शेष जीवन शान्ति और भक्ति के साथ बिताया। कुतियाणा जूनागढ़ की मातहती में होने के कारण पोरबंदर छोड़कर आये हुए कुशल मन्त्री को नवाब ने न्यौता भेजा। बापा जूनागढ़ गये, परन्तु उन्होंने बायें हाथ से नवाब को सलाम किया। और अपना दाँया हाथ पोरबंदर को समर्पित हो चुका है यह कहकर अपनी एकनिष्ठा प्रकट की। उस जमाने में नवाब के प्रति ऐसा घोर अपमान करनेवाले को करारा दण्ड मिलता, परन्तु नवाब के दिल में इस एकनिष्ठा के प्रति समादर का भाव पैदा हुआ। अपने भरेपूरे दरबार के बीच नवाब साहब ने बापा की स्तुति की और बख्शीश के रूप में बापा को और उनके वारिसों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी कुतियाणा में बिना चुंगी दुकान चलाने का रुक्का लिख दिया।

कुतियाणा जाकर बापा ने कोई विशेष प्रवृत्ति नहीं की। घुड़सवारी का शौक उन्हें शुरू से ही था। एक बढ़िया घोड़ी रक्खी थी, उसपर रोज कुतियाणा के इर्द-गिर्द दूर तक टहल आते और बाक़ी वक्त कथा-कीर्तन में बिताते। सुना है कि बापा और उनकी घोड़ी की सेवा मेरे प्रपितामह जीवनलाल बापा ने अखीर तक बड़े लगन के साथ की थी। जीवनबापा ओताबापा के चौथे पुत्र थे। बिना चुंगी के दुकान चलाने का जूनागढ़ के रुक्के का लाभ उन्होंने कुतियाणा में दुकान खोलकर ओताबापा की सेवा करते हुए यथासंभव लिया।

हमारे कुल के मूलत: पुष्टिमार्गी वल्लभसंप्रदायी होने के कारण हमारे यहाँ कृष्ण-भक्ति विशेष रूप से होनी चाहिए। परन्तु बापा की पोरबंदर के एक खाखी साधु पर श्रद्धा थी। उस साधु-बाबा के लिए बापा ने पोरबंदर में एक खाखी-चौक भी बनवाया है। खाखी रामजी का अनन्य उपासक था। उसके सत्संग से बापा भी बड़े रामउपासक हुए। उत्तरवय में दिन का अधिक समय तुलसी-रामायण का पाठ सुनने में और उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुशीलन में बापा ने बिताया ।

बापा का भक्ति-रस दिखावा-मात्र नहीं, बल्कि उनके जीवन की गहरी सतह तक पहुँच गया था। यह जैसे खीमा कोठारीवाले प्रसंग की सत्य-प्रियता और बलिदान-वृत्ति से साफ़ नज़र आती है, उसी तरह एक दूसरे मौके पर बतायी हुई अलोभवृत्ति और नेकदिली से भी स्पष्ट होता है। पोरबंदर में जब बापा प्रधान थे, तब उनका वार्षिक वेतन दो हजार कोरी (पाँच सौ रुपये) था। इसके अलावा कच्चा सीधा, साग-भाजी आदि चीजें दरबार-गढ़ से मिलती थीं। यह कोई बड़ा वेतन न था, फिर भी रिवाज के अधीन होकर बापा ने अपने दो बड़े बेटे बल्लभजी और पीतांबर के विवाह में बहुत भारी भोज दिया। बेटे के ब्याहने में बड़ा पुरुषार्थ सन्निहित होने की उस समय की भावना से ओताबापा मुक्त नहीं थे। उस पुरुषार्थ को भी उन्होंने सीमा तक पहुँचा दिया। सारे नगर की चौरासी की, शहर के दरवाजे पर अक्षत लगाकर दीन-ग़रीब हर किसी को भोजन का न्यौता दिया। सात दिन तक तो घुड़-सवारी और बरात का प्रदर्शन किया। राणा साहब खुद बरात के अगुआ बने। मेरे दादाजी कहते हैं कि "ऐसा भव्य भोज और घुड़सवारी ओताबापा के समय से आजतक कोई नहीं कर पाया है!"

ओताबापा प्रजाप्रिय दीवान थे। रैयत ने नजराना भी खूब दिया। जो-कुछ खर्चा हुआ, उससे नज़राना कम न था। मामूली आदमी यह देखकर फूला न समाता और सारे धन को घर में जमा करता, परन्तु बापा ने शादी का काम समाप्त होते ही सारा-का-सारा नज़राना राणा साहब के चरणों में धर दिया और कहा, "यह आपकी प्रजा का ही धन है आपके प्रताप से ही मैं चौरासी कर पाया हूँ।" राणा गद्गद् हुए और आज्ञा दी—"धन को राजकोष में जमा करदो और चौरासी का सारा खर्च राज्य के खाते में डालकर खाता सरभर करदो। तुम्हारे पुत्र मेरे ही पुत्र हैं।"

इस प्रसंग से कल्पना की जा सकती है कि अमात्य का पद रखते हुए भी बापा में नम्रता थी, धन-लोलुपता का अभाव था और निष्काम कर्म की ओर जिंदगी का झुकाव था। वे आजानुबाहु थे इतना ही नहीं, वे सचमुच महापुरुष थे।

कवि का धर्म

[सोहनलाल द्विवेदी]

काव्यकला का एक मात्र उद्देश है हमारी उदात्त वृत्तियों को जाग्रत करना। जो कविता दुर्जन को सज्जन, क्रूर को दयालु, दानव को मानव और मानव को देवता के रूप में प्रतिष्ठित न कर सके, जो हमारी आत्मा को ऊपर न उठाये, उसे हम निम्न कोटि की कविता कहेंगे।

इस प्रकार कविता का क्या असर पड़ता है—मन पर, विचारों पर, प्राणों पर, आकांक्षाओं पर, हमारे चरित्रगठन में और अंत में समाज के उत्थान-पतन में, राष्ट्र-निर्माण में, जीवन-निर्माण में, इसीसे कविता की अच्छाई-बुराई समझनी चाहिए।

कवि सामाजिक व्यक्ति है। उसका उत्तरदायित्व है, समाज के प्रति। जबतक समाज का वह सजीव क्रियाशील व्यक्ति है, अंग है, तभीतक उसकी सार्थकता है। जब वह समाज के लिए पंगु हो जाता है, तब उसकी आवश्यकता नहीं।

कवि अपने समाज के प्रति उत्तरदायी है। जब वह उसके कल्याणकारी पक्ष में अपने प्राणों के गान मिलाता है, तभी वह वन्दनीय होता है। पर जब इसके विपरीत समाज में प्रमाद से, लोभ से, अस्वास्थ्यकर कीटाणुओं को उत्तेजन देनेवाला अहितकर स्वर छेड़ता है, तब निन्दनीय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अश्लील' और 'अश्लीलता'

[जैनेन्द्रकुमार]

प्रिय सम्पादकजी,

आपने चिट्ठी का सिलसिला मेरे सिर बाँध ही दिया। चलिए अच्छा हुआ। ऐसे खुद मुझे अपनेको समझने में मदद मिल जायगी।

मार्च-अंक में मशरूवालाजी का 'अश्लीलता' पर लेख पढ़ा। में तो भुगता प्राणी हूँ। अब भी सुन मिल जाता है कि मेरी अमुक रचना यों अश्लील है। स्तुति अनसुनी की जा सके पर त्रुटि-निर्देश पर अचेत कैसे रहा जा सकता है? चुनाँचे अश्लीलता को समझने की लाचारी मेरे सामने कई बार आयी है। परिणामस्वरूप मुझे सोचना पड़ गया है। पर सोच-विचार वह किसी किनारे आ लगा है इसका सन्तोष मुझे नहीं है। मशरूवाला-जी के वक्तव्य से भी मन भरा नहीं। और मैं अपना निवेदन सुना चलना चाहता हूँ।

शुरू आपबीती से करूँ, क्योंकि जगबीती को समझने की दूसरी कुंजी क्या है? मुश्किल से बारह वर्ष उम्र का हूँगा कि एक पत्रिका के चित्र को लेकर मैंने अपना बुरा हाल कर लिया था। कहा जायगा कि चित्र सदोष रहा होगा। वह अश्लील होगा। पर वह चित्र अब भी जहाँ-तहाँ दीखता है और विकार नहीं उपजता। न चित्र में कुछ दोष पकड़ मिलता है। इससे उचित मालूम होता है कि अपनी दुरवस्था का सारा पाप मैं उठाऊँ और उसका तनिक भी भाग निमित्त बननेवाले उस चित्र पर न टालूँ।

इसपर से मैं नतीजा निकालना चाहता हूँ कि अश्लीलता यदि है तो वस्तु में नहीं, व्यक्ति में है। मेरे भीतर जिस निमित्त को लेकर बुराई उभर उठी है वह निमित्त उतना भर्त्सनीय नहीं जितना मैं स्वयम् हूँ। बुराई को अपने भीतर न टटोलकर उसे वस्तु में आरोपित करूँ तो यह मेरे हक़ में छल की बात होगी।

इस ढंग से सोचने पर शायद अश्लील कहीं कुछ रह ही न जाय। मेरे लेखे तो ऐसा हो तो हर्ज नहीं। मेरा काम तब भी चल जायगा। पर सुधारक का काम तब कैसे चलेगा? और सुधार अभीष्ट तो है ही। उसके लिए अश्लील को अपने से बाहर भी देखना लाज़िमी है। यानी अश्लीलता का एक मापक बनाकर समाज को देना होगा।

मशरूवालाजी का प्रयत्न इसी दिशा में है। पर मुझे मालूम होता है कि भलाई की वृत्ति की भूमिका में सचाई की दृष्टि चाहिए। अन्यथा भलाई की बुनियाद कच्ची होगी। और सचाई के लिहाज़ से शायद मशरूवालाजी के तर्क से आगे बढ़ा जा सकता है। उस ढंग से उनका माप मुझे अपर्याप्त और अयथार्थ दीखता है।

मशरूवालाजी ने फल में परीक्षा बतलायी है। यानी जिससे कामोत्तेजन हो और वीर्यपात की सम्भावना बढ़े, वह उतना ही अश्लील है। (मशरूवालाजी का वीर्य-वमन शब्द-प्रयोग मुझे अवैज्ञानिक, इसलिए तत्व-विचार की दृष्टि से ग़लत मालूम होता है।)

ऊपर जो मैंने अपने बचपन की बात कही, उसमें अनिष्ट का दुहरा कारण है। एक चित्र, दूसरा मैं। इन दोनों के मिलने से जो अनिष्ट फल हुआ, उसपर से चित्र के सम्बन्ध में मुझे अनधिकारी और मेरी अपेक्षा में चित्र को वर्जनीय कहा जा सकता है। मेरी अपेक्षा के अभाव में, अर्थात् अपने आप में, चित्र को अश्लील नहीं कहा जा सकता।

इस बात को और साफ़ करने के लिए एक मित्र की मिसाल दूँ। वह गांधीजी के परम भक्त हैं। उनकी आतम-कथा उनके लिए एक धर्म-पुस्तक ही है। पर वह जब गांधीजी के उस अनुताप-प्रसंग पर आते हैं जहाँ पिता मृत्यु-शैया पर हैं और गांधीजी विषयलिप्त, तो वह अपने बावजूद उत्तेजित हो रहते हैं। यहाँतक कि वीर्य-रक्षण तब उनके लिए दुःसाध्य हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस फल को देखकर क्या यह नतीजा निकाल लिया जाय कि गांधीजी की आत्म-कथा अश्लील है, अथवा वह प्रसंग ही अश्लील है ? मेरे लिए तो वह गहरे पश्चाताप की अश्रु-कथा है। फिर भी एक व्यक्ति है कि उसको पढ़कर विकार में बेबस हो जाता है !

इसपर से यह तो परिणाम निश्चयपूर्वक निकाला जा सकता है कि विषयोत्तेजन प्राप्त हो उस सान्निध्य और स्पर्श से बचो। लेकिन वह स्थल अथवा वह वस्तु अश्लील है, यह ठहराना ठीक नहीं है। हेय-उपादेय जैसे शब्दों से ऐसी जगह मदद ली जा सकती है, क्योंकि हेयोपादेयता वस्तु में नहीं है। रोगी खटाई से बचे, खटाई उसके लिए हेय है। पर खटाई इसी कारण अपने आपमें निषिद्ध तो नहीं है न।

फल द्वारा परीक्षा के नियम में बड़ी कठिनाई यह है कि किस व्यक्ति को औसत मनुष्य का प्रतिनिधि मानें ? हर चीज का हर आदमी पर जुदा असर देखा जाता ह। क्या सामान्य नियम निकालने के लिए गणित का सहारा लेना होगा और अधिकांश आदमियों पर क्या असर पड़ता है इसको देखना होगा ? पर इसकी जाँच का भी कोई उपाय नहीं है। अन्त में जाकर यह काम अनुमान के सहारे ही किया जाता है।

पर एक उपाय है। वह यों कि गहराई में हर आदमी हर दूसरे का प्रतिनिधि है। आत्मा तो सबमें एक है न। इसलिए वह उपाय यह है कि दोष वस्तु में न देखकर व्यक्ति में देखने की आदत डाली जाय। फल व्यक्ति-निर्भर है।

इस दृष्टि से सृष्टि में कुछ अश्लील नहीं है, यद्यपि सब कुछ उसमें है।

एक युवक चिड़ियों और कबूतरों के जोड़ों को आसक्त भाव से देखते रह जाते हैं। अब हम क्या कहें ? यह कहें कि चिड़िया या कबूतर अश्लील हैं, इसलिए उनपर आँख बन्द रक्खो, या कपड़े पहनाकर उन्हें सभ्य बनाना शुरू करो ? या यह कहें कि युवक अभी कच्चे हैं, प्रकृति-पुस्तक पढ़ने योग्य नहीं है, इसलिए धर्म की और नीति की पुस्तकों में उन्हें अधिक ध्यान रखना चाहिए ?

छुटपन में एक पुराण की कहानी सुनी थी। एक स्त्री का शव मरघट आता है। वहाँ चार जने चार तरह की कल्पना करते और चार तरह की भावनाओं में डूब जाते हैं। यहाँतक कि एक यह सोचकर कि यह स्त्री वेश्या ही न रही हो, कामान्ध बन जाता है। इस उदाहरण में स्खलन की उत्तेजना मिलने पर भी शव को अश्लील नहीं कहा जा सकता।

एक और दृष्टि से वीर्य-व्यय और अश्लीलता का सम्बन्ध जोड़ना असंगत है। परस्त्री के प्रति कुदृष्टि अश्लील है कि नहीं ? अवश्य अश्लील है। किन्तु क्या पितृत्व और मातृत्व भी अश्लील हैं ? कदापि नहीं।

मात्र कुदृष्टि में वीर्यपात का प्रश्न नहीं उठता। जब कि रजो-वीर्य संयोग बिना माता-पिता की कल्पना ही असम्भव है।

ऊपर से स्पष्ट हो कि एक जगह वीर्य-व्यय है लेकिन अश्लीलता नहीं है। दूसरी जगह वह व्यय नहीं है लेकिन अश्लीलता है।

नग्नता और आवरण से भी अश्लीलता के प्रश्न का सम्बन्ध नहीं है। मैं कह सकता हूँ कि सम्भ्रान्त श्रेणी में पहिनी जानेवाली चटकीली साड़ियाँ और निमंत्रण देते जम्पर-ब्लाऊज़ अश्लील हैं और जंगल में लकड़ी बीनती या घास छीलती नग्नप्राय एक भील युवती की मूर्त्ति में अश्लीलता नहीं है। क्योंकि एक तरफ़ कपड़े बदन को ढँककर भी बदन को उघाड़ते नहीं तो उसपर आँख तो खींचते ही हैं। दूसरी ओर शरीर पर आवरण नहीं पर उस शरीर का ध्यान भी नहीं है।

अर्थात् नग्न शरीर अश्लील नहीं है और पूरी तरह ढँका हुआ शरीर भी अपने-आप में अश्लीलता के दोष से बाहर नहीं है।

अब वह तत्त्व लें, जिसे ग्राम्यता, फूहड़पन vulgarity कहा जाता है। उसके पीछे एक प्रकार की अरुचि और अशुचि भावना है। सुनते हैं कि जहाँ पर्दा बहुत सख्त है वहाँ स्त्री के पैर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की एड़ी खुली दीख जाय तो मन में कुण्ठा-सी पैदा हो आती है। यानी स्त्री की ओर से यह फूहड़पन है कि उसकी एड़ी दिखलायी दे गयी।

आज जिस सभ्यता में साँस लेकर हम जी रहे हैं, मैं मानता हूँ कि वह बहुत कृत्रिम है, आत्मा से उसका लगाव नहीं है। वह हठात् धन के प्रमाद में पैदा की हुई नाजुक-खयाली है। कहते है कि लखनऊ के नवाब की तरफ़ से कहलाया गया कि कम्पनी बहादुर उनके खतम करने की फिक्र में न पड़े। बाहर के सहन से महतरानी गुज़र जाय तो यही उनकी जान लेने को काफ़ी होगा। इस नज़ाकत के नजदीक भला क्या चीज़ फूहड़ न हो जायगी?

कला और कुलीनता और शिष्टता के नाम पर बहुत-कुछ व्यर्थता आज पल और पुज रही है, पर वह निर्वीर्य है। जीवन का स्वास्थ्य विकसेगा तो यह मानी गयी भद्रता, शुचिता और कला-पूजा झर जायगी।

काका एक बार किन्हीं अतिशय कोमल रुचि की महिला की बात सुनाते थे। वह बहुत ऊँचे घराने की थीं और वस्त्र की ज़रा भी असावधानी उन्हें बरदाश्त न थी। पिंडली तो क्या, किसी का टखना भी खुला दीखे तो उनका मन जाने कैसा हो आता था। वही गांधीजी से मिलकर आयीं तो बेहद खुश। पूछा गया, कि गांधीजी सिर्फ़ पंछा पहनकर रहते हैं, सो? पर उन्हें तो इस बात की सुध भी न थी। उन्हें यह मानने तक में दिक्कत हुई कि गांधीजी सचमुच उघाड़े बदन थे।

इसपर से प्रकट होगा कि ग्राम्यता कोई दोष नहीं है। बल्कि जबरदस्ती पैदा करली गयी नाज़ुकमिज़ाजी कुछ टूटनी ही चाहिए। अब भी तो ऐसे लोग हैं, स्त्रियाँ और भी अधिक हैं जो महतर का नाम सुनकर ग्लानि अनुभव करने लगते हैं। गांधीजी ने मैला खुद साफ़ किया है। अपने सब शिष्यों से कराया है और बताया कि वे कृतघ्न हैं जो उनका मैला साफ़ करनेवाले के प्रति कृतज्ञता अनुभव नहीं करते। और जो उनको हीन मानकर अपने को श्रेष्ठ जानते हैं वे पाप कमाते हैं। अर्थात अहम्मन्यता—अहम्-सेवन की वृत्ति में से जो एक तहज़ीब की नज़ाकत खड़ी कर दी गयी है—वह असभ्य वस्तु है, गिरनी चाहिए।

धन में, बुद्धि में, कुल में और विद्या में श्रेष्ठ मानी जानेवाली श्रेणियों में इस तरह का छुआ-मुआपन काफ़ी देखने में आता है। ये श्रेणियाँ अश्लीलता के बारे में भी जरूरत से ज्यादा चौकन्नी हैं। इसलिए नहीं कि उन्हें संयम की साधना प्रिय है। बल्कि इसलिए कि सत्य की साधना का उन्हें साहस नहीं है। और ऊपर की सफ़ेद पोशी के सहारे भीतर के मैले अँधियारे को सहने और सम्हालने में उन्हें सुभीता होता है।

इस तरह जबकि मशरूवालाजी की कसौटी या कि दूसरी कसौटियाँ स्थूल होने से अपर्याप्त ठहरीं तब सवाल उठता है कि अश्लीलता का आरम्भ कहाँ ढूँढ़ना होगा? मेरी धारणा है कि अश्लीलता छल के साथ है। जहाँ शरीर-संबंधी असत्य है, उसके वर्णन में, चित्रण में, सँवार-व्यवहार में, दर्शन-स्मरण में असत्य है, कपट है, वहीं अश्लीलता है।

असत्य, छल और कपट शब्दों का इस सिलसिले में शायद मुझसे खुलासा माँगा जा सकता है।

शरीरवर्णन जहाँ ध्यान को अपनी ओर अटकाने के लिए है, या वर्णन करनेवाले का ध्यान खुद शरीर में अटककर रह गया है, और इस तरह जहाँ समभाव और आत्मभाव का भंग है, वहाँ अश्लीलता है। किन्तु जहाँ शरीर-व्यापार द्वारा मनोवृत्ति को समझने-समझाने का अथवा उससे भी आगे बढ़कर उसके भीतर से आत्म-धर्म की शोध या प्रतिष्ठा का प्रयास है—वहाँ अश्लीलता नहीं है।

शरीर अपने आप में सत्य नहीं। भोग निमित्त होकर तो असत्य ही है। आत्म को साधने का साधन होकर वही सत्य हो जाता है। उस दृष्टि से हम शरीर के कोने-कोने को छान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते हैं क्योंकि कहीं भी मैल रह गया तो मुक्ति असिद्ध होगी। इसी लिहाज़ से जितेन्द्रिय पुरुषों को शरीर (काम) विज्ञान के बारे में ज्ञानपूर्वक समाज में स्वच्छता लाने का प्रयत्न करना होगा।

महान् और अश्लील साहित्य में मूल में बहुत थोड़ा भेद है। थोड़ा है पर गहरा है। वह भेद वृत्ति का है। महान् साहित्य में से ढेर के ढेर ऐसे उद्धरण निकाले जा सकते हैं जिनमें अश्लीलता देखी और दिखलायी जा सके। पर उससे क्या? रामायण-महाभारत में क्या नहीं देखा-दिखाया गया? क्या कुछ उनमें नहीं खोजा पाया जा सकता? पर यह भी प्रत्यक्ष है कि लोग हैं जो उनसे आत्म-स्फूर्ति और धर्म-प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

जो अश्लील है उसमें या तो दुबकाचोरी है या सीनाजोरी। वहाँ या तो चुनौती के साथ भोगपक्ष में शरीर का निरंकुश वर्णन होगा, नहीं तो शील के एक आडम्बर के नीचे लाग-लपेट के साथ वैसा कुतूहल पैदा करने की वृत्ति होगी। जहाँ आड़े-बाँके सूचन हैं, जहाँ डॉट्स से काम लिया गया है; जहाँ तीक्ष्ण (चाहे फिर वे भर्त्सना के ही हों) विशेषण काम में लाये गये हैं—वहाँ अचूक अश्लीलता है।

एक भाई ने वेश्याओं पर किताब लिखी। उसमें उन्हें सख्त से सख्त दुर्वचनों से याद किया था, करतूतें खोलीं और उनका खतरा दिखाया था। लेखक का कहना था कि वह समाज के शरीर पर से इस कोढ़ के दाग को मिटाना चाहते हैं। पर वह जो हो, पुस्तक अश्लील है। इसलिए नहीं कि वह वेश्या और उसके कार्य के बारे में है बल्कि इसलिए कि उसमें छल है। घृणा छल है। वेश्या को प्रेम कर सकते हो तो उसपर लिख भी सकते हो। पर उसके लिए छाती चाहिए। तब उसके पाप तुम्हारे पाप होंगे। पाप दिखाया जा सकता है, पर अपना पाप दिखाया जा सकता है। दूसरे का पाप जबतक तुम्हें अपने भीतर नहीं दीखे तबतक कोई हक़ नहीं है कि तुम उसे देखो। और वेश्या कही जाने-वाली बहिनों के हृदय और आत्मा की अपेक्षा उनके निम्न समझे जानेवाले कर्मों को देखा और दिखलाया जायगा तो उससे मन में दुर्वचन के लिए जगह खाली नहीं रह जायगी, क्योंकि वह मन सहानुभूति से भर आयगा।

इस उदाहरण से साफ है कि जहाँ चुनौती और सीनाजोरी है वहाँ भी मूल में छल ही है—कपट और दर्प दोनों एक मर्ज़ हैं।

मन का यह असत्य ही वस्तु में अनिष्टता पैदा करता है।

अश्लीलता को लेकर हम आतंक में न पड़ें। स्त्री-पुरुष सम्बन्ध से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वैसा हो तो विवाह-संस्कार, गृहस्थ-धर्म, पितृऋण, मातृ-सेवा आदि सब शब्द झूँठे पड़ जायेंगे। विवाह से वर-कन्या पति-पत्नी बनते हैं। अर्थात् विवाह उन्हें परस्पर में (भोग द्वारा) सन्तति-सृष्टि करने की अनुमति देता है। विवाह एक धार्मिक अनुष्ठान है। इसी तरह पितृत्व, मातृत्व आदि समाज को कायम रखनेवाली पवित्र संस्थायें हैं।

'अश्लील' शब्द का प्रयोग उनके सम्बन्ध में एकदम असम्भव है। वहाँ वह शब्द ही अश्लील है। समाज की ओर से विवाहित होने के कारण उनकी अपत्य-सृष्टि में सत्य का अंश है और असत्य का दम्भ नहीं।

असत्य (Supression) के आधार पर शिष्टता की और नैतिकता की बहुत ऊँची इमारत खड़ी की जा सकती है। पर नींव में घुन है इससे वह इमारत ढहने को ही खड़ी है। बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों के पतन की कहानियों का क्या भेद है? वह है यही असत्य।

अश्लीलता के कीटाणु सत्य की धूप से ही मरेंगे। आँखों से उन्हें लुकाने-छिपाने की नीति से वे अँधेरा पाकर और भी बढ़ सकते हैं। बुराई अँधेरे में फैलती है। हवा और धूप लगने से वह छू होती दीखती है। यह कहना क्या गंगा को उलटा बहाना न हो जायगा कि हवा और धूप में अश्लीलता को न आने दो, क्योंकि इससे हवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खराब होगी और धूप मैली पड़ेगी।

महान् साहित्य में और धर्म में वह चीज़ यदि अनिवार्य रूप से है जिसको कहनेवाले अश्लील कह दें तो क्यों? कारण, समस्तता और सम्पूर्णता में निषेध किसी का नहीं है। शरीर अपने प्रत्येक अवयव, और जीवन अपनी सब प्रवृत्तियों को लेकर वहाँ स्वीकृत है। किसी को भी काटकर कम करने की जरूरत नहीं है। आत्मा की साधना में उनको नाश नहीं, वश करना है। अर्थात् साधक शरीर ह्रस्व और हीन नहीं होता केवल आत्मगत होता है। इसीसे जहाँ शरीर-धर्म एकदम अनुपस्थित है वहाँ आत्मा की महत्ता भी अप्रकट है। महत्ता के पेटे में क्षुद्र इसी कारण क्षुद्र नहीं रहता कि महत्ता के साथ वह समरस हो जाता है। महान् साहित्य महान नहीं रहेगा अगर वह केवल 'नीका' और 'भला' रह जायगा। अपूर्णताओं के मेल से पूर्णता बनेगी। उन्हें छोड़ते चलने से पूर्ण नहीं, शून्य हाथ रह जायगा।

पर यह सब कहने के बाद भी प्रश्न जो रह जाता है वह यह कि बच्चे के हाथ चाकू कैसे न पहुँचे? चाकू ग़लत न हो, पर बच्चे के हाथ पड़कर तो उसमें खतरा है।

सच पूछिए तो सवाल का रूप यही है। और इसका उपाय समझदार लोग जहाँ जैसी स्थिति हो, करें। ईश्वर की ओर से तो आदमी को बुद्धि मिल गयी है जो उसकी अनुकम्पा से परिमित भी है। अनन्तर ईश्वर ने उसके चारों ओर अपनी प्रकृति की खुली पुस्तक रख दी है। पुस्तक खुली है। हमारी अविद्या का ही बीच में पर्दा हो तो हो, स्वयं उसपर अवगुंठन नहीं है। जीव-जन्तु, लता-वनस्पति अपने रहस्यों को लेकर हमारी आँखों के आगे अपनी लीला सम्पन्न कर रहे हैं। अर्थात् ईश्वर ने मनुष्य का इतना विश्वास किया है कि दया की भी अधिकता नहीं की। अपनी अनोखी करुणा में उसने मनुष्य को अवसर दिया है कि वह प्रकृति को देखकर चाहे तो अपने को उद्भ्रान्त भी बना ले। हाँ, ऐसे ही वह अपने को उत्तरोत्तर मुक्त भी बना सकता है। ईश्वर की ओर से मनुष्य को तो स्वराज्य ही है।

इसी तरह अश्लीलता के प्रश्न के बारे में मेरी धारणा है कि हवा और धूप खूब लगने देनी चाहिए। अश्लीलता कहाँ धरी है वस्तु में? और हो तो उसमें दम कितना है?

बालक बढ़कर किशोर होता है और उसमें लाज समा आती है। कन्या वय पाकर अपने आप ही में कंटकित हो रहती है। वे दोनों बढ़ते बढ़ते वर-वधू, पति-पत्नी, पिता-माता बनते हैं। यह सहज राह है। एक निगाह से देखो, तो यह बढ़ती हुई अश्लीलता की राह है। पर अश्लीलता कोई हौआ न हो। तो यही सहज जीवन की भी राह है।

असल चीज़ अश्लीलता को समझाना नहीं, धर्म को समझना है। धर्म सबको धारण करता है। यहाँतक कि धर्म की श्वास से भोग भी न्याय्य होता है। गांधीजी के जीवन में धर्म का बीज ही तो था। उसको लेकर वह किशोरावस्था में किशोर यौवन में युवा और गृहस्थी में गृहस्थ रहे, फिर भी उन सब दशाओं में से होकर बराबर मुक्ति की ही दिशा में बढ़ते रहे।

और धर्म वृत्ति का प्रश्न है, वस्तु का वह थोड़े है।

पर लीजिए, यह जाने कहाँ किनारे से दूर में आ रहा। और कह गया इतना कि बिसात से बाहर। पर मशरूवालाजी मुझे गुरुतुल्य हैं और बालक को बहुत माफ़ होता है, यही ढाढ़स है। लेकिन आपके पत्र की जो इतनी जगह ली सो क्या आप भी माफ़ कर सकिएगा?

विनीत

जैनेन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्ध से

[वियोगी हरि]

लोगों का यह घोर अज्ञान ही है, जो उनसे कहलाता है कि तुम वृद्धावस्था से सदा परेशान रहते हो। जिन श्वेत केशों और दन्तविहीन मुहँ ने तुम्हें आज बालकों और युवकों के सामने, बिना ही प्रयास के, 'श्रद्धा-भाजन' बना दिया उनसे भला तुम कभी परेशान हो सकते हो? वृद्धावस्था तो तुम्हारे लिए एक वरदान है।

ये शुभ दिन तुम्हें कितनी लम्बी प्रतीक्षा के बाद देखने को मिले हैं, इसका अंदाजा टीकाकार युवकों को हो नहीं सकता। सेवा कराने की तुम्हारी सुन्दर जीवन-साध आज जाकर कहीं पूरी हुई है।

शरीर शिथिल न पड़ता तो दूसरों से सतत सेवा लेने का सुयोग तुम्हें मिलता ही कैसे? साथ ही, तुमने उन्हें भी तो कृतार्थ किया है, जिन्हें सेवा करने का यह स्वर्ण-अवसर दिया है।

निरन्तर सेवा कराते-कराते उनके धैर्य की तुम कड़ी परीक्षा भी तो ले रहे हो। कारण कि परेशान तो सेवक ही हो सकता है, सेव्य कभी नहीं।

यह अच्छा है कि तुम उनकी सेवा-सुश्रूषा से सन्तोष नहीं मानते। तुम्हें आशंका बनी रहती है कि संतोष प्रकट करने से शायद उनकी सेवा की गति मन्द पड़ जाये, और इस तरह उन्हें कृतकृत्य होने का लाभ न मिले।

लेकिन सेवा करनेवाले भी कुछ ऐसे मिल जाते हैं, जो तुम्हारे असन्तोष को पराजित करके छोड़ते हैं। वे समझ लेते हैं कि तुम रीझोगे तो केवल सेवा से ही—तुम्हारी शिथिल बुद्धि के आगे दलीलें काम नहीं देंगी।

उनके कामों में तुम कुछ-न-कुछ दोष ढूँढ़ते ही रहते हो। अपने लम्बे घिसे-मिसे अनुभवों के आगे तुम्हें उनका हरेक काम अधूरा ही दिखता है।

और वे भी कैसे मूर्ख हैं, जो तुम्हें मन्द दृष्टिवाला समझकर धोखा देना चाहते हैं! कम्बख्त यह नहीं समझते कि तुम बूढ़ों की दृष्टि को ईश्वर ने कान दिये हैं। देखने का काम तुम कानों से चला लेते हो, और सुनने का काम आँखों से।

अद्भुत है कि तुम्हारी एक इन्द्रिय शिथिल पड़ जाती है, तो दूसरी में तेज़ी आ जाती है। जिह्वा में तो ऐसी स्फूर्ति और जवानी आ जाती है कि देखकर आश्चर्य होता है। तुम्हारी बूढ़ी-वाणी का प्रवाह रुकना नहीं जानता। सुननेवाला कोई न भी हो, तब भी बोलना तुम्हारा उसी गति से जारी रहता है। चारपाई पर पड़े-पड़े खूँखूँ करते रहते हो, और ज़बान से फूल झड़ते रहते हैं।

भाँति-भाँति के स्वाद लेने की भी शक्ति तेज़ हो जाती है। स्वाद की रस-कला को तुम वृद्धों ने ही साधा है, क्योंकि बालक को तो कुछ भी देकर फुसला लिया जाता है, और युवक को उसके यौवन की मस्ती भुलावे में डाले रहती है। लक्कड़-पत्थर भी चबा जाता है, और स्वाद का पता नहीं चलता।

तुम कितने सहृदय हो कि अपने जर्जरीभूत शरीर के प्रति भी तुम्हारा अनुराग दिन-दिन बढ़ता ही जाता है। जिस शरीर ने तुम्हें तीनों पनों में बेहद सुख पहुँचाया उसके प्रति चौथे पन में अत्यधिक अनुराग का होना स्वाभाविक है। देह-विराग तो किसी कृतघ्न वृद्ध को ही होता होगा।

युवावस्था में किसी 'रोमांस' के फेर में पड़कर जगत् को भले ही तुमने कभी मिथ्या माना हो, पर वृद्धावस्था में तो तुम उसे सत्य और सुखदायी ही मानते हो। संसार से ऊबकर आत्मघात अधिकतर अधीर युवक ही करते हैं—प्रबुद्ध वृद्धजन ऐसा पाप का काम कभी नहीं करते।

तुम खीज उठते हो कि लोग तुम्हें रामनाम जपने का थोथा उपदेश क्यों देते रहते हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसकी आँखों के सामने सारे जीवन का लेखा-जोखा रखा हो, कितने ही अधूरे काम करने को पड़े हों और बुढ़ापे में आराम से कुछ सोचने की फ़ुर्सत मिली हो, वह दुनिया से बिदा होते समय क्यों व्यर्थ राम का नाम जपे ?

यह तो ध्रुव-प्रह्लाद-जैसे अबोध बच्चों का काम है, जिनके मुलायम कन्धों पर न तो कोई जिम्मेदारी होती है, न भला-बुरा सोचने की कुछ समझ ही।

समाज ने तुम्हारे खिलाफ़ प्राचीन काल में न जाने क्यों यह काला क़ानून बना डाला था कि तुम्हें चौथे पन में तप करना जरूरी है; और घर से तुम क़ानूनन निकाल बाहर कर दिये जाते थे। सद्भाग्य है कि आज वह दुष्ट क़ानून रद हो गया है। अब तुम्हें न तप की ज़रूरत है न जप की। जप-तप तो अनाथ-अपाहिज किया करते हैं—तुम्हारे जैसे पुत्र-पौत्रादि-संपन्न भाग्यवान वृद्ध नहीं।

और तुमने तो सारी ज़िंदगी ही तप किया। गृहस्थी चलाना क्या तप नहीं है ? उस महाजाप का ही यह फल है कि वासना और तृष्णा-जैसी दैवी सिद्धियाँ तुम्हारे सामने हाथ जोड़े खड़ी हैं।

तुम्हारी जिम्मेदारी कम नहीं हुई, बल्कि और बढ़ गयी है। लड़कों की कच्ची बुद्धि पर तुम्हारा विश्वास नहीं। और जिसने इतना बड़ा ज़माना देखा है, वह सहसा किसीपर विश्वास करे क्यों ?

तुम्हारी मान्यता है कि हमारे परिपक्व निर्णयों पर जो विश्वास नहीं करता, वह ग़लती करता है, पाप करता है—क्योंकि तुम मानते हो कि बूढ़े आदमी जो भी निर्णय करते हैं, वह हमेशा शुद्ध ही होता ह।

तुम मानते हो कि लड़के किसी शुद्ध निर्णय पर पहुँच ही नहीं सकते, और तुम्हारी व्याख्या के अनुसार वे सब लड़के ही हैं, जिनकी उम्र तुमसे कम है—कम चाहे एक-दो साल ही क्यों न हो !

युवक कहते हैं कि उनके 'अविनयी' बनने की बहुत-कुछ जिम्मेदारी बूढ़ों पर है—बूढ़ोंने बलात्कारपूर्वक उनसे आज्ञा-पालन कराने का हमेशा ही प्रयत्न किया और इसीलिए वे उनके खिलाफ़ विद्रोही बन गये।

तुम्हारा कहना बिल्कुल सही है कि युवकों का यह आरोप भी अविनय से भरा हुआ है। तुम उसी युवक को विनयशील मानते हो, जो तुम्हारे सामने न तो आँख मिलाने की हिम्मत कर सकता है, न मुहँ खोलने की—जो बुजुर्गों के निर्णय को कभी शंका की दृष्टि से नहीं देखता, और उनकी बात का जवाब देना जो घोर पाप समझता है।

ऐसे विनयशील पुत्र-पौत्रादि तुम्हारे भाग्य में दुर्लभ हैं, अतः कलियुग को तुम हमेशा कोसते रहते हो—वैसे ही, जैसेकि तुम्हारे पिता ने तुम्हें और तुम्हारे पितामह ने तुम्हारे पिता को 'कुपूत' कहकर कलियुग को कोसा था।

तब क्यों न यह सिद्धान्त स्थिर कर लिया जाये कि बालक और युवक सब कलियुगी होते हैं और वृद्ध सभी सतयुगी ?

बुढ़ापे ने तुम्हारी दृष्टि को इतना तेज़ कर दिया है कि काल्पनिक ख़तरे को भी बहुत दूर से देख लेते हो। इसीलिए दूसरों के काम में तुम बहुत अधिक आपत्ति करते हो। ऐसी कोई चीज़ तुम्हारी नज़र से नहीं गुज़रती, जिसमें तुम कोई-न-कोई आपत्ति न उठाते हो, और चेताते रहने का तो तुम्हारा मानो स्वभाव बन गया है।

सलाह देना—अक्सर बिना चाहे ही—तुम्हें बहुत पसन्द है। सलाह तुम्हारी काफ़ी लम्बी चलती है। 'ज़रा देखो, सोचो, समझो'—यह बुज़ुर्गाना शब्द तुम्हारी सलाह में ज़रूर रहेंगे। मौत तुम्हें बुलाने आयेगी, तो उस नासमझ को भी तुम शायद यही नेक सलाह दोगे।

निरीक्षणों और अनुभवों का तुम्हारे सर पर इतना भारी बोझ है कि पैर मुश्किल से आगे को उठते हैं। क़दम किसी तरह उठाया भी, तो आगे रखने में हिचक होती है। तुम्हारी परिमा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जित शंका-शीलता ने तुम्हें इतना ज्यादा सावधान बना दिया है !

यह तुम्हारी अनुभवसिद्ध सतर्कता का ही फल है, जो तुम हरेक बालक और युवक को संदेह की दृष्टि से देखते हो। तुम्हारी यह वृद्धोचित धारणा बिल्कुल दुरुस्त है कि शंका या संदेह से परे केवल तुम्हीं हो।

अपनी बात मनवाने की तुम बहुत ज्यादा जिद करते हो, क्योंकि तुम्हें भरोसा है कि तुम्हारे सफ़ेद बाल और पोपले मुहँ ने तुम्हें निश्चित निर्णय पर पहुँचा दिया है, अतः तुम्हारी बात मान लेने में ही भलाई है।

जगत् के प्रति तुम्हारी कल्याण-कामना इतनी अधिक बढ़ गयी है कि युवकों को ही नहीं बालकों को भी तुम अपने-जैसे ही समझदार, शान्त और धीर प्रकृति के देखना चाहते हो। तुम्हें कैसा लगता होगा कि वे इतने चुलबुले, इतने अधीर, इतने अल्हड़ और इतने नासमझ क्यों हैं ?

पर तुम शायद तब यह भूल जाते हो कि अज्ञान-सूचक उनके काले बाल अभी सफ़ेद कहाँ हुए हैं, अल्हड़ यौवन के प्रतीक दाँत अभी कहाँ गिरे हैं, उद्धतता की निशानी कमर अभी कहाँ झुकी है ?

तुम्हारे हृदय में रह-रहकर जलन-सी उठती होगी कि इन बालकों और युवकों में क्यों इतना उबाल और उफान है, यह उद्धत अभिमानी प्राणी तुम्हारे ही जैसे शिथिल और शान्त क्यों नहीं हो जाते !

श्री पुरुषोत्तमदास टंडन : एक शब्दचित्र

तपे हुए संत तथा मँजे हुए सिपाही—यही सूत्ररूप में टंडनजी का परिचय है, जिनके विशाल नेत्रों में ओज और तप की आग एवं शील और प्रेम का जल दोनों एक ही ठौर बसते हैं; जिन्होंने शुद्ध त्याग को अपना जीवन-सहचर बनाया, जो अपनी टेक को, रंक के धन की तरह, छाती से लगाये हैं।

राष्ट्रीय भावना और राष्ट्रीय संस्कृति को उन्होंने अपना पूजा-स्थान बनाया—यह पूजा ही उनके जीवन की कला है, और यही साधना है। इस साधना-मंदिर की सीढ़ियों पर अपना सब कुछ बलिदान करने में उन्हें ज़रा भी हिचकिचाहट नहीं होती।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के पीछे तो वह जन्म से दीवाने हैं—राष्ट्रसभा और राजसभा दोनों में ही उन्होंने उसका मान और दृढ़ता के प्रवेश कराया।

काफ़ी आलोचना हुई कि सम्मेलन के प्रति तो उनका यह मोह है—जो त्यागवृत्तिवाले के लिए भूषण नहीं, दूषण है। पर इस टीका को भी उन्होंने हँसते-हँसते सिरमाथे धारण कर लिया।

रिझाने या सौदा करने की हीनवृत्ति उनके सामने सदा त्याज्य रही, विश्वास को सच्चे अर्थ में दैवी संपदा के अंदर लिया—इस मान्यता के पीछे कितनी ही बार कुछ ठगे भी गये, पर कभी पछताये नहीं।

अहिंसा के अर्थों में ईमानदारी से कभी-कभी मतभेद भी रखा, पर सत्य को सदा 'सत्य' ही समझा। उनकी दृष्टि, उनकी वाणी, उनकी प्रत्येक क्रिया इस परम-सत्य की आग से प्रज्ज्वलित रही।

यही कारण है कि राष्ट्रीय महासभा को वह कुंदन-सा शुद्ध देखना चाहते हैं। राजनीति के दावपेचों और क्षुद्र स्वार्थों की गंदगी से वह आजकल बहुत क्षुब्ध हैं। तथाकथित राष्ट्रीयता के आगे सत्य को वह निश्चय ही सर्वोपरि स्थान देते हैं।

इस बात का शायद कम को ही पता होगा कि टंडनजी संत-साहित्य के एक ऊँचे पारखी हैं, उनका अन्तर 'साखियों' और 'शब्दों' के रंग में रँगा हुआ है। वह पहले सत्य-शोधक हैं बाद को राष्ट्रकर्मी हैं; पहले प्रेमभक्ति के साधक हैं, पीछे और कुछ।

टंडनजी को राष्ट्र का एक शूरवीर संत-हृदय पुरुष क्यों न कहें ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत प्रश्न

शिक्षण का उद्देश

मनुष्य के मानव-प्रेम में स्वभावतः ही ज्ञान की क्षुधा रहती है। यदि हममें राजनैतिक वाद-प्रतिवादों के अतिरिक्त इस क्षुधा का सर्वथा अभाव हो तो भी कम-से-कम निष्काम ज्ञान-पिपासा ही हमें एक दूसरे के निकट ला सकती थी। परन्तु, इसमें भी हम असफल ही रहे और हमें हानि उठानी पड़ी क्योंकि ज्ञान की दुर्बलता शक्ति की दुर्बलता की भित्ति है। जबतक हमारे मन में भारतवर्ष का पूर्णरूप से स्पष्ट बोध नहीं हो जाता तबतक हम भारतवर्ष को उसके सत्य स्वरूप में नहीं प्राप्त कर सकते। और जहाँ सत्य ही अपूर्ण है वहाँ प्रेम का पूर्ण राज्य हो नहीं सकता। हमारे शिक्षण-केन्द्रों का वरिष्ठ कार्य हमें आत्मानुशीलन में सहायता देना है और तभी इसके साथ-ही-साथ आत्म-निवेदन के लिए प्रेरणा उत्पन्न करने का दूसरा उद्देश्य भी पूर्ण हो जायगा।

यूरोप की इतनी विशाल बौद्धिक शक्ति का कारण उसकी मानसिक शक्तियों का सहयोग है। यूरोप ने एक ऐसे साधन का विकास कर लिया है जिसकी सहायता से उस महाद्वीप के सब राष्ट्र एक साथ मिलकर सोच सकते हैं। विचारों की इतनी बड़ी संघटना अपनी गति के प्रचण्ड प्रवाह से स्वभावतः यूरोप के विचारों के सब वैयक्तिक विकारों तथा अयौक्तिकता के आतिशय्य को मिटा देती है। यह यूरोप की कल्पना की उड़ानों को उद्दाम नहीं होने देती और उसे उपयुक्त सीमा में रखकर शान्त किये रहती है। यूरोप की विभिन्न विचार-किरणें एक सामान्य संस्कृति में केन्द्रित हो गयी हैं और यह संस्कृति यूरोप के सभी विश्वविद्यालयों में पूर्णरूप से अभिव्यक्त होती है।

दूसरी ओर, भारत का चित्त विभक्त और विकीर्ण है। यहाँ कोई सामान्य मार्ग नहीं जिस पर चलकर हम इसतक पहुँच सकें। हमें बड़े दुःख से देखना पड़ता है कि हमारी मानसिक शक्तियों का निर्माण करनेवाली शास्त्रीय शिक्षा में संजीवनी-शक्ति की न्यूनता है। इन मनों द्वारा ज्ञान और सहानुभूति के सहयोग से देश के वृहत्तर मन को समुपलब्ध किया जा सकता है। हमारी शिक्षण-संस्थाओं का सबसे अधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य प्रत्येक विद्यार्थी को उसके व्यक्तित्व की उपलब्धि करने में सहायता देना है। यह उपलब्धि ऐसी होनी चाहिए कि प्रत्येक विद्यार्थी यह उदारतापूर्वक अनुभव कर सके कि वह व्यक्तिरूप में समूची जाति का प्रतिनिधित्व कर रहा है और यह जानने में भी समर्थ हो सके कि इस विशाल मानव-जगत् में उत्पन्न होना उसके जीवन का महत्तम तथ्य है।

गुरुकुल कांगड़ी के
दीक्षान्त अभिभाषण में } **रवीन्द्रनाथ ठाकुर**

राष्ट्रभाषा

हिन्दी राष्ट्रभाषा इसीलिए कही जाती है, और इसीलिए अन्यभाषाभाषी उसे राष्ट्रभाषा के स्वरूप में देखते हैं कि हिन्दी एक ऐसी भाषा है जिसमें हमारे देश की सब भाषाओं का समन्वय है। यह अच्छी तरह से ध्यान देने की बात है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा क्यों है? इसलिए नहीं कि वह प्रयाग, काशी, लखनऊ या देहली में बोली जाती है, बल्कि इसलिए कि दूसरी संस्कृतियाँ अर्थात् महाराष्ट्र संस्कृति, बंगीय संस्कृति, गुजराती संस्कृति, मद्रासी संस्कृति उस भाषा में अपने स्वरूप को भी देख सकती हैं। भाषा का सम्बन्ध संस्कृति से है और यह अच्छी तरह से विचार करने की बात है, विशेषकर उनके लिए जो राष्ट्रभाषा के प्रश्न का अध्ययन कर रहे हैं और भावी राष्ट्रभाषा का स्वप्न देख रहे हैं, कि हम जिस भाषा को राष्ट्रभाषा का स्वरूप देना चाहते हैं, उसमें यह आवश्यक गुण होना चाहिए कि वह अन्य सब देशी भाषाओं के समीप हो।

यहाँ पुणें में ही थोड़े दिन हुए मुझसे यह कहा गया कि यहाँपर उत्तर भारतीय काँग्रेसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेता आये और उन्होंने अरबी-फ़ारसी-मिश्रित भाषा में जो भाषण दिये वे लोगों की समझ में नहीं आये। किन्तु मेरे लिए यह सौभाग्य की बात है कि जब मैंने यहाँ भाषण दिया तो मुझसे यह कहा गया कि तुम्हारी भाषा हम लोगों ने अच्छी तरह समझ ली और अगर यह भाषा राष्ट्रभाषा होने जा रही है तो हमें कोई डर नहीं है। बात यह है कि कुछ वक्ता हिन्दुस्तानी के नाम पर ऐसी अपरिचित शब्दावली और मुहावरों का प्रयोग करते हैं जिसे हमारे देश के बहुत लोग बिलकुल ही नहीं समझ सकते। यह बात केवल महाराष्ट्रवालों के लिए ही नहीं, बल्कि बंगालियों के लिए, मद्रासियों के लिए और सब अहिन्दी-भाषियों के लिए लागू है। हमारी भाषा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसको सब साधारण भारतवासी अपने समीप देख सकें और ग्रहण कर सकें।

बहुत वर्षों से मैं इस बात का हामी रहा हूँ कि हमारी हिन्दी में दूसरी भाषा के शब्दों का समन्वय हो। राष्ट्रीयता की दृष्टि से यही उचित है कि हम लोग, जो देशभर में काम करना चाहते हैं और देश को एक सूत्र में बाँधना चाहते हैं, दूसरी भाषाओं और उन भाषाओं की विचार-शैलियों के साथ आदान-प्रदान करने के लिए तैयार रहें। यह प्रेम से ही हो सकता है।

फ़ारसी और संस्कृत एक ही भाषा से निकली हैं दोनों का स्रोत एक ही है। फ़ारसी और संस्कृत का कोई झगड़ा हिन्दी और उर्दू में नहीं होना चाहिए, क्योंकि फ़ारसी और संस्कृत शब्दों का बड़ी आसानी से हमारी भाषा में समन्वय किया जा सकता है।

मैंने विश्लेषण आरम्भ किया तो मुझको मालूम हुआ कि फ़ारसी के ६० वा ७० सैकड़ा शब्द संस्कृत शब्दों के समीप हैं। फ़ारसी और संस्कृत शब्दों का समन्वय होना कोई कठिन समस्या नहीं है। खुसरो ने यह काम किया था। रहीम ने किया था।

पहले-पहल हमारी भाषा के लिए 'हिन्दी' शब्द मुसलमानों ने दिया। कुरान का पहला अनुवाद जो हमारी भाषा में हुआ उसकी भूमिका में अनुवाद की भाषा 'हिन्दी' कही गयी थी। हैदराबाद और दक्खिन में फ़ारसी-अरबी-मिश्रित ग़ज़लों की भाषा को भी पहले हिन्दी ही कहते कहते थे। मैं अपने महाराष्ट्रीय-गुजराती भाइयों से कहता हूँ कि राष्ट्रीयता के लिए आप हिन्दी को अपनाइए।

हिन्दी के द्वारा राष्ट्रीयता की भावना जागी है। कांग्रेस की पहुँच जनता के पास मुख्यकर इसीके द्वारा हुई है। अंग्रेज़ी में अपने घर का काम कर आप स्वयं अपने मुहँ से पुकारते हैं कि हम गुलाम हैं, गुलाम हैं। इस तरह से राष्ट्रीयता की आशा करना व्यर्थ है।

भाषा का भी स्वरूप बदलता रहता है। बालकृष्ण भट्ट की जो भाषा थी वह अब नहीं है। विचार और शैली दोनों में परिवर्तन हो रहा है। लेकिन दूसरों से घबड़ाकर या दुर्बलता के कारण हमको कोई परिवर्तन स्वीकार करना नहीं है। हममें हीनता का भावमंडल बनना नहीं चाहिए। बुद्धि और विवेक से हमें काम लेना है। हमारी भाषा में मराठी, तामिल, तैलगू, गुजराती सबके शब्द आवेंगे और हमारी भाषा इन नये शब्दों से प्रौढ़ होती जायगी और उसकी शक्ति बढ़ती जायगी। **पुरुषोत्तमदास टण्डन**

पुणे हि० सा० सम्मेलन में दिये भाषण में]

बालकों की रुचि

श्री सुमनेश व श्री सुधीर का लेख "हिन्दी के बाल-साहित्य पर एक दृष्टि और एक योजना की रूपरेखा" पढ़ा। मैं उनके विचारों से सहमत होता हुआ कुछ बातों में उनसे विभिन्न विचार रखता हूँ। अभी फिलहाल एक "बाल-मित्र" हस्तलिखित पत्र में सहयोग दे रहा था। उससे बालकों की रुचि से कुछ परिचित हुआ हूँ। मेरे अनुभव यूँ हैं—

१. यह बिलकुल सत्य है कि भद्दे और अजीब नाम उनमें कभी रुचि उत्पन्न नहीं करते। मैंने अधिक बुद्धिमान बालकों को ऐसी पुस्तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेंकते देखा है । सुन्दर नाम उनको अधिक पसंद आते हैं ।

२. बालकों में वीर-पूजा की भावना बहुत अधिक होती है । उनके कहानी-नायक में अगर कोई दुर्गुण हो तो वे उसे बिलकुल भी पसंद नहीं करते । उनका कहानी-नायक सर्वगुण-सम्पन्न होना चाहिए । नायिका को अनिवार्यतः सुन्दर होना चाहिए । पर अगर किसी कुरूप नायिका के हृदय के उद्गार स्पष्ट करने की चेष्टा की जाय तो वे उसे पसंद करते हैं । ज्यादा छोटे बालकों के लिए अंत में यह आवश्यक हो जाता है कि बाद में उसकी अच्छाई के बदौलत उसे सुन्दरता का पुरस्कार मिले । बड़े बालक उस कुरूप नायिका के जीवन का ध्येय पूरा हो जाने पर संतुष्ट हो जाते हैं ।

एक बालक में मैंने बड़ी अजीब रुचि पायी । उसमें शक्ति-पूजा की भावना है, जोकि अन्य बालकों में नहीं पायी जाती । उसको कोई भी कहानी सुनायी जाय उसमें शेर-हाथी आना आवश्यक है । कहानी में हाथी के पाँव के नीचे खरगोश दब जाने पर उसे कुछ भी दुख नहीं होता । अगर शेर किसी आदमी को खा जाय तो वह बहुत खुश होता है । बालक अभी बहुत छोटा है ।

३. कहानी में घटनाओं का बाहुल्य उन्हें बहुत अच्छा लगता है । हृदय के भावों को वे समझ जाते हैं, पर मनोवैज्ञानिक रूप से उनका विश्लेषण करने से वे थक जाते हैं और उनकी दिलचस्पी भाग जाती है ।

४. कहानी से किसी प्रकार का भी दिशा-परिवर्तन उन्हें पसंद नहीं । उसे वे सुनना नहीं पसंद करते ।

५. वे कहानी पढ़ने के बजाय सुनना अधिक पसंद करते हैं । इसका कारण मुझे बिलकुल भी समझ में नहीं आया ।

६. अगर कहानी के अंदर तुक की भी जरा स्थान हो तो वह कहानी उन्हें बहुत ही अधिक पसंद आती है ।

मेरी राय है कि कहानी 'कहनेवाले बूढ़ों से कहानी सुनकर उन्हें लिखने का प्रयत्न करना चाहिए । ये कहानियाँ बरसों सुनने-सुनाने के बाद इस रूप में आयी हैं और पसंदगी की टकसाल में ढल चुकी हैं । ये अवश्य बालकों की रुचि की होंगी । ग्राम-गीतों के समान नष्ट हो जाने के पहले इनका संकलन हो जाना अत्यंत आवश्यक है, अन्यथा एक ऐसा खजाना नष्ट हो जायेगा जिसकी हानि की पूर्ति कभी न हो सकेंगी । अभी ही इनका प्रचार कम हो रहा है । मंडल को यह कार्य अवश्य हाथ में लेना चाहिए ।

राजेन्द्रकुमार

कवियों से

हम प्रेमगीत लिखें; न लिखेंगे तो हम जीवन के स्पर्श से दूर ही रहेंगे और कविता में स्थायित्व नहीं ला सकेंगे । परन्तु क्या हमारा दावा है कि हमने प्रेम को सत्य-शिव-सुन्दर रूप में ही अपनी कविता में ग्रहण किया है ? इतना विवेक कवि-मेधा को करना ही चाहिए ।

हमारी कविता जब वस्तु-जगत् की ओर से आँख मूँदकर उससे मुक्ति पाने की खोज में निकली, तो उसने प्रेमगीतों का रूप धारण किया । पर कवि उस स्थिति में जागरूक न रह सका और उसकी मानवोचित दुर्बलताओं ने उस उड़ान में भी उसका पीछा न छोड़ा और वह आध्यात्मिकता में भी शरीरी धारणा कर बैठा । उसके प्रेमगीतों में मानव-हृदयों की विलास-वासना और शृंगारिकता बोलने लगी और उसने दम्भ किया कि वह जो कुछ कहता है, सब अशरीरी, असीम, अरूप के प्रति है । यह तर्क कुछ ऐसा है कि जो सारी 'नाजायज़ हरक़तों' पर परदा डाल देता है । परन्तु जिन आलोचकों और समीक्षकों की निगाहें तीखी हैं, वे उनके मूल उद्गम को खोज लेते हैं और फिर कवियों का अन्तर्मन जैसे अपने समस्त आवरण दूर करके उनकी लेखनी के आगे आ जाता है । यह दशा दयनीय है । यह स्थिति हेय है, इसका जितना भी विरोध हो, समीचीन है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैसे नारी करुणा, कोमलता, मातृत्व, ममत्व आदि प्रेम की अनेक विभूतियों की पुंजीभूत प्रतिमा है, परन्तु प्रेम की जो हीनतम, स्थूलतम अभिव्यक्ति भोग या काम है, उसने इन प्रेम-गीतों में इतनी प्रधानता या आग्रह ग्रहण कर लिया है कि वह रचना जो प्रेम के हार्द के स्वर्गिक स्पर्श से अजर-अमर कृति होनी चाहिए थी, वह निरी मानवीय दुर्बलताओं का प्रदर्शन-मात्र बन रही है। जो कविता हमारी मनोभावना, मनस्थिति और संस्कृति को ऊँचा उठानेवाली होनी चाहिए थी, वह हमें अपने न केवल शील बल्कि पुरुषत्व के आदर्श से गिरानेवाली बनती जा रही है।

नारी के सौन्दर्य पर मुग्ध होना कवि-हृदय के लिए कोई खराब बात नहीं है, क्योंकि सौन्दर्य मुग्ध करने ही के लिए है, परन्तु उसका प्रवाह कामातुरता की ओर तो नहीं होना चाहिए। यदि अनियन्त्रित उद्गार कविता के रूप में कवि की प्रतिभामयी लेखनी से प्रसूत होने लगें तो वह उसकी सौन्दर्य-प्रियता, जो अपने आप में कोई खराब वस्तु नहीं है, बल्कि कलाप्रियता या संस्कृत रुचि की ही परिचायिका है, सौन्दर्य-प्रियता नहीं रह जाती। सौन्दर्य का जो चित्रण आपके अन्तर में कर्त्ता के प्रति प्रेम, निर्मल प्रेम, श्रद्धा या अमृत आनन्द जाग्रत करे, वही सौंदर्य का सत्-चित्रण है, इसके विपरीत सौन्दर्य का जो चित्रण हमें सौन्दर्य के आधार के प्रति कामातुर करे और उस सौन्दर्य का अनैतिक उपभोग करना चाहने की प्रेरणा जगा दे, तो वह चित्रण असत् या अश्लील है।

यों तो श्लीलता, अश्लीलता व्यक्तिगत संस्कृति और सुरुचि के अनुसार निर्धारित होती है, इसलिए यह व्याख्या सम्भव है आपको ग्राह्य न हो, परन्तु सामान्य रूप से किसी भी प्रकार की अपुरुषोचित, अमंगल या असंस्कृत भावना को स्फूर्ति देनेवाली वस्तु अश्लील कही जायगी। जिन कविताओं में ऐसा आग्रह हो, जो इसी हीनवृत्ति को स्फूर्ति दें वे अश्लील हैं, सत्य से विमुख हैं और कविता-कला के खरा उतने में बाधक हैं। इस प्रकार के अश्लील चित्रण को 'कला के चिरंतन सत्यों', 'मानव जीवन की व्याख्या', या 'सृष्टि के अमर तत्त्वों' के लुभावने शब्दजाल में लपेट दिया जाता है। यह मोह दूर होना चाहिए और जबतक आलोचक या विचारक की यह दृष्टि कवि के आगे रहेगी नहीं, तबतक कविता की धारा में परिष्कार या दिशा-परिवर्तन होना कठिन है।

सुधीन्द्र

समालोचनार्थ प्राप्त

हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, वर्धा

कताई गणित (१) : ले०—श्रीकृष्णदास गांधी; पृष्ठ संख्या ४४ : मूल्य ।।)

कताई गणित (२) : ले०—श्री कृष्णदास गांधी; पृष्ठ संख्या ६०; मूल्य ।)

खेती शिक्षा : ले० शंकर रामचन्द्र भिसे, हरिश्चन्द्र पाटिल; पृष्ठ संख्या १३०; मूल्य ।।।)

बुनियादी दस्तकारियाँ, ओटना धुनाई (उर्दू)—ले० सतीन, दफ्तर नयी तालीम देहली; पृष्ठ संख्या ८४; मूल्य ।=)

तकली : ले० श्री कुन्दर दिवाण; पृ०२८६; १)

हिन्दी-विद्यापीठ बम्बई

गद्य सुमन (संकलन) पृ० सं० ११०; ।।)

भारती–(संकलन): पृष्ठ संख्या ६४; मूल्य ।)

उन्मुक्त (काव्य) : ले०—श्री सियाराम शरण गुप्त, प्रकाशक—साहित्य सदन, चिरगाँव, (झाँसी); पृ० स० १६०; मूल्य अज्ञात।

नवरत्ननीति—(संस्कृत) : लेखक—गिरिधर शर्मा 'नवरत्न'; नवरत्न-सरस्वती भवन-झालरापाटन; पृष्ठ संख्या १२, मूल्य -)।।

राष्ट्र-वाणी (दैनिक) : सं०—देवव्रत शास्त्री पटना; वा० मूल्य १२), छःमास ६), तीन, मास ३।।) एक प्रति =)

विश्व-वाणी—(साप्ताहिक) : सं० हेमचन्द्र जोशी डी० लिट० प्रभातचन्द्र शर्मा; वा० मूल्य ४); एक प्रति -)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कसौटी पर

लालचीन : ले०—श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी; प्रकाशक—ग्रन्थमाला कार्यालय, बांकीपुर; मूल्य २)।

यह कम आश्चर्य और दुःख की बात नहीं है कि हम ७००० मील दूर इंग्लैण्ड, फ्रांस और अमेरिका के बारे में जितनी दिलचस्पी लेते हैं, उसका शतांश भी अपने निकटतम पड़ोसी चीन के बारे में नहीं लेते। और सोवियत चीन के बारे में तो बहुत ही कम जानकारी रखते हैं। प्रस्तुत पुस्तक के लेखक स्वयं साम्यवादी हैं और अपने देश के ऊपर हो रहे चीन सोवियत के महान भगीरथ प्रयत्न को उन्होंने अत्यन्त श्रद्धा से लिखा है,इसलिए शैली अत्यन्त सजीव हो गयी है। किस तरह विविध परिस्थितियों में चीन के साम्यवादी नेताओं ने प्रबल संगठन किया, इससे भी महत्त्वपूर्ण हजारों लाखों साम्यवादी चीनियों के अत्यन्त साहसिक महाअभिमान की कहानी है। वह इस पुस्तक की प्राण है। सचमुच वह कहानी इतनी अद्‌भुत और इतनी साहसपूर्ण है कि उसे ऐतिहासिक की अपेक्षा औपन्यासिक ही मानने को जी होता है। साम्यवादियों की प्रगति का इतिहास अधिक सुबोध करने लिए ज़रूरी था कि दो-तीन नक्शे आदि दिये जाते। सोवियत शासनपद्धति पर और अधिक प्रकाश डाला जाता, तो अधिक अच्छा होता।

समस्त पुस्तक को पढ़ने से यह स्पष्ट ध्वनि निकलती है कि लेखक ऐतिहासिक नहीं है, वह साम्यवादियों का भक्त है और इसलिए यह पुस्तक पढ़ने के बाद भी यह प्रश्न बिना हल हुए ही रह जाता है कि क्या सचमुच चांग काई शेक, जो आज चीन के स्वातंत्र्य-संग्राम का नेता है, इतना क्रूर, दुष्ट और स्वार्थी है, जैसा कि पुस्तककार ने दिखाया है। लेखक ने सिर्फ़ एक पक्ष रखा है और इसलिए पुस्तक सरस, सजीव और सूचनापूर्ण होते हुए भी एकांगी प्रतीत होती है। लेखक ने सोवियत नेताओं को ही नहीं, सिपाहियों तक को मनुष्य से देवता बना दिया है। आधे से अधिक योद्धा अखण्ड ब्रह्मचारी हैं, कभी किसी स्त्री की ओर बुरी दृष्टि तक नहीं डालते आदि अत्युक्ति से भरी हुई इन बातों पर सहसा हमको विश्वास नहीं होता। इसका कारण हमारे अपने चरित्र की दुर्बलता है। लेखक की अगाध श्रद्धा और अत्युक्ति साहित्यिक शैली ?

सोवियत चीन के महान् क्रान्तिकारी नेताओं का वर्णन पढ़ने योग्य ही नहीं है, अनुकरणीय भी है। विकट परिस्थितियों में इन महान नेताओं को गुजरना पड़ा, इसकी कहानी भी अनुप्राणित करनेवाली है।

यों सोवियत सेनाओं का संगठन, लाल बालकों का जीवन, लाल रंगमंच, शिक्षा-पद्धति आदि सभी किसी भी राष्ट्र के नेताओं के लिए विचारणीय हैं। परन्तु २३५ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य २) रु० बहुत अधिक दीखता है।

कृष्ण

कलापिनी—(कविता-संग्रह) : कवि—श्री केदारनाथ 'प्रभात' एम० ए०; प्रकाशक—नवलकिशोर प्रेस, हजरतगंज, लखनऊ; मूल्य ।॥)

'कलापिनी' गीति-काव्य है और हिन्दी के उसी छायावादी वर्ग का, जो वास्तव में रोमेंटिक है। प्रिय का वियोग, मिलन, आशा, आकांक्षा ही इन गीतों के विषय हैं, अतः कोई नितान्त नवीनता नहीं है और गीतिकाव्य में नवीनता अथवा मौलिकता भावना में नहीं, भाव और उसके प्रतिपादन में होती है।

'कलापिनी' के गीतों का नाद-सौंदर्य, शब्दों की सुमधुर प्रांजलता और भावनाओं की अतिशयोक्तिरहित सुकुमारता कवि की कवित्व-शक्ति का यथेष्ट सुन्दर प्रमाण हैं। अपरिचित प्रिय की आराधना करनेवाले कवियों की अस्पष्टता और तारतम्यहीनता का कलापिनी में प्रायः अभाव है। केवल शब्द-सौंदर्य के लिए कोई भी पद-जाल इसमें नहीं बुना गया। साँझ का शतदल,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांध्यगीत, निशीथ आदि अति सुन्दर गीत हैं।

प्रसाद-गुण 'कलापिनी' की विशेषता है। बच्चन की-सी तन्मयता 'कलापिनी' का कवि भी पद-पद में प्रदर्शित करता है।

जगमगाता आँसुओं की रात में
स्वर्ण-सा मधुमास मेरा
'कम्पन'

माँगता जीवन मरण से
आज प्रिय वरदान कैसा
'सांध्यगीत'

आँकते नक्षत्र जीवन का करुण इतिहास
'निशीथ'

शेष जीवन में मिटा बनता अशेष अचिन्ह
'अशेषदान'

'कलापिनी' आधुनिक प्रगतिशील साहित्य में स्वतः कोई योग नहीं है, किन्तु प्रकृति के चिरमोहक सौन्दर्य की रंगीन छाया में पोषित इन्द्रधनुषी कल्पनाओं का प्रांजल आस्वाद अवश्य कराती है। शाश्वत और स्थायी साहित्य का यह एक गुण है।

पुस्तक का मुद्रण साधारणतया सुन्दर है और इसके लिए बारह आने खर्च करके पाठक पछतायेगा नहीं।

महाकवि हरिऔध का 'प्रिय-प्रवास' : लेखक--प्रो० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री; प्रकाशक--रामनारायणलाल प्रयाग; पृष्ठ संख्या १७०; मूल्य १)

प्रस्तुत पुस्तक हरिऔधजी के सुविदित महाकाव्य 'प्रिय-प्रवास' की समालोचना है, जो विशेषरूप से विद्यार्थी-वर्ग की आवश्यकताओं को दृष्टिगत करके लिखी गयी है; किन्तु साधारण पाठक भी इसमें महाकाव्य के गुण-दोषों का यथेष्ट संतुलित परिचय पा सकता है। यद्यपि यह समालोचना आलोचनात्मक कम और प्रशंसात्मक अधिक है, फिर भी खड़ी बोली में व्रजभाषा के क्रिया-पदों के प्रयोग पर स्वयं हरिऔधजी के तर्कों को सावधानी तथा शालीनता से अप्रमाणित करके अपनी सहज समालोचनात्मक विद्वत्ता का परिचय दिया है। 'प्रियप्रवास' में चरित्र-चित्रण की असफलता तथा तत्सम्बन्धी कारणों का समुचित विवेचन प्रोफ़ेसर साहब ने किया है। केवल प्रशंसा करने के लिए अर्थ का अनर्थ भी कहीं नहीं किया है।

हरिऔध-साहित्य की विवेचना में प्रस्तुत समालोचना पथ-प्रदर्शक बन सकती है। छपाई, गेटअप साधारण है। लेखक के परिश्रम तथा इसकी उपादेयता को देखते हुए पुस्तक का मूल्य भी अधिक नहीं है। **चन्द्रकिरण (साहित्यरत्न)**

अनूभूत पशु-चिकित्सा : लेखक--श्री कुँवर सुरेंद्रसिंह, 'इन्द्र', आई डी. डी. साहित्य भूषण; प्रकाशक—युवराज-प्रकाशन-मन्दिर लखनऊ : पृष्ठ संख्या १४३; मूल्य १॥)

इस समय हिन्दी में गोपालन-साहित्य की बड़ी कमी अनुभव हो रही है। ऐसी पुस्तक का प्रकाशित होना यह ज़ाहिर करता है कि लेखकों तथा प्रकाशकों का ध्यान इस ओर गया है, जो शुभ चिन्ह है।

पुस्तक के लेखक एक उत्साही और योग्य व्यक्ति हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्होंने पुस्तक लिखने में खूब उत्साह दिखाया है।

पुस्तक में जो चिकित्सा रोगों की बतायी गयी है उसके अनुभूत होने के विषय में टीका-टिप्पणी करना बड़ा कठिन है। इस प्रकार की देशी दवाइयों का इतना विस्तार है कि इस विषय पर कोई कुछ नहीं कह सकता। पर माँग करने में लेखक नीचे लिखी बातों की ओर ध्यान देते तो यह पुस्तक हमारी राय में अधिक उपयोगी हो सकती थी—

(१) रोगों का क्रम उनकी उत्पत्ति, बचाव या इलाज के क्रम से या अकारादि क्रम से रखते तो अच्छा रहता।

(२) कुछ दवाइयों के नाम जरा कम समझ में आते हैं। जैसे—कुंभीर का अंडा चेचक की अत्युत्तम ओषधि बतायी गयी है और इसी प्रकार एक स्थान पर 'हलंच का शाक' खिलाने को बताया है। यदि ऐसी चीज़ें आमतौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से लोग नहीं जानते और अलग-अलग प्रान्तों में अलग-अलग नामों से पुकारी जाती है तो दूसरे प्रान्तों के नाम या उनके अंग्रेज़ी नाम भी साथ में दिये जाने से ठीक चीज़ प्राप्त करने में सुविधा होती है।

(३) कई जगह होमियोपैथिक दवाइयाँ भी बतायी हैं। वहाँ यह स्पष्ट नहीं किया है कि दवाइयाँ जो बतायी हैं वे सब मिलाकर ली जायें या अलग-अलग। इसी प्रकार कहीं-कहीं होमियोपैथिक और देशी (आयुर्वेदिक) दोनों दवाइयाँ काम में लेने को लिखा है, जो शायद होमियोपैथिक प्रणाली के अनुकूल न हो।

(४) जहाँ दवाइयों के नुसखे दिये हैं, वहाँ यह बहुत कम लिखा है कि एक दिन में कितनी बार यह दवा दी जाये ?

यह पुस्तक जितनी शहर या कस्बों में रहनेवालों को उपयोगी है उतनी गाँववालों के लिए प्रतीत नहीं होती। गाँववालों के लिए बाज़ार से दवा खरीदकर लाना कठिन है। उन्हें अपने घर, गाँव या आसपास के खेत और जंगल में मिलनेवाली दवा प्रयोग करने में सुविधा होती है। गाँववालों को पशुओं को छूत की बीमारी से बचाने के लिए अधिक विस्तार से समझाना पड़ेगा ताकि वे परम्परा से चले रिवाज को छोड़कर ठीक रिवाज को अपनायें। इतने पृष्ठ की पुस्तक का दाम ॥।) रखने से वह सर्वसुलभ नहीं हो सकती। परंतु अन्त में हम लेखक को उसके परिश्रम और उत्साह के लिए सराहते हैं और आशा करते हैं कि इस पुस्तक को वे अगले संस्करण में अधिक उपयोगी बनाने का प्रयत्न करेंगे। **परमेश्वरीप्रसाद गुप्त**

अभिनव एकांकी नाटक : लेखक—श्री उदयशंकर भट्ट; प्रकाशक—लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा; पृ. सं. १२२; मूल्य १)

एकांकी नाटकों में मुझे विशेष दिलचस्पी नहीं थी। 'थी' इसलिए लिख रहा हूँ कि अब स्थिति वह नहीं है। उस दिन जब मैंने अपना सर्वप्रथम एकांकी—'राखी' लिखा तो ऐसा लगा कि उससे अच्छे रूप में उस कथानक को कहानी या कविता में मैं व्यक्त नहीं कर पाता। आज तबीयत खराब थी। लेटे-लेटे दिल-बहलाने की दृष्टि से भट्टजी का 'अभिनव एकांकी' संग्रह पढ़ना शुरू किया। दिल लग गया। पहले ही नाटक से रुचि उत्पन्न हुई। दूसरा पढ़कर प्रतीत हुआ कि भट्टजी में पाठक को आकर्षित करने की क्षमता है। एक-एक करके उसी हालत में छहों नाटक (**दुर्गा, नेता, उन्नीस सौ पैंतीस, वर-निर्वाचन, एक ही क़ब्र में, सेठ लाभचंद**) पढ़ डाले। इसलिए यह तो कहना होगा कि वे नीरस नहीं हैं। पर कला का लक्ष्य केवल मनोरंजन ही है ?

संग्रह के सब नाटकों में एक बात मिलती है कि भट्टजी के नाटकों के पात्र परिस्थिति में पलनेवाले होते हैं, परिस्थितियों से लोहा लेकर उन्हें बदलनेवाले नहीं। शायद लेखक खुद परिस्थितिवादी हो। उनका सुरेन्द्र बी० ए०, खादी का दृढ़ व्रती देशी राज्य की नौकरी मिलने की उम्मीद भर ही में अपना व्रत ताक में रखने को उतारू हो सकता है—

"सच तो यह है कि ग़रीब के लिए यह दुनिया होती नहीं। हम लोग जवानी में जिसे जीवन समझते हैं, क्लासरूम में बैठकर जिसे ध्येय मानते हैं, वह सपना निकलता है। देश की सेवा कौन नहीं करना चाहता, पर परिस्थिति भी तो कोई चीज है।"

और हरिजन-उद्धार का कट्टर पक्षपाती नेता भी इसी प्रकार कहता है—

"हमारा समाज अभी इस काम के लिए इतनी दूर जाने के लिए तैयार नहीं। मैं अब कोई व्याख्यान न दूँगा। मुझमें शक्ति नहीं है। मुझ में साहस नहीं है। मैं झूठा दंभी नेता था।

'एक ही क़ब्र में' में अवश्य समाज के एक कलंक को धोने के प्रयत्न में एक निष्ठावान् व्यक्ति अपना प्राणोत्सर्ग कर देता है, पर वह भी आकस्मिक दुर्घटना में।

सो इन एकांकियों में जीवन-संघर्ष करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्रेरणा तो मिलती नहीं—पढ़कर मनोरंजन करके, जैसा कि लेखक ने भूमिका में लिख भी दिया है, उसे आल्मारी में भले ही धर दें। पर-लेखक चित्रण करने में कुशल हैं। अफ़ीम के गुलाम एक राजपूत का, आधुनिक वाग्वीर नेता का, बेकारी के मारे ग्रेजुएट और उसकी कमज़ोरियों का, बैरिस्टर की बातचीत का, उनकी अंग्रेज़ी पढ़ी-लिखी नयी सभ्यता में पली लड़की की मनोवैज्ञानिक वृत्ति का—सबका अंकन बड़ी सच्चाई और सफलता के साथ हुआ है।

प्रेस की भूलें जहाँ-तहाँ काफ़ी हैं। कहीं-कहीं कथोपकथन लम्बे हो गये हैं, कहीं-कहीं बातचीत में अस्वाभाविकता भी आगयी है, पर कुल मिलाकर सारे नाटक अच्छे हैं। उनमें समाज की तस्वीरें हैं और ठीक। यथार्थवादी कला से मेरा उतना अनुराग नहीं जितना आदर्शवादी से; तो भी मनोवैज्ञानिक चित्रण की दृष्टि से लेखनी को सफलता मिली है, यह मैं कहना चाहता हूँ।

इतने दिनों तक संग्रह की समालोचना नहीं कर सका, इसके लिए लेखक और प्रकाशक से क्षमा माँगता हूँ। सुधीन्द्र

सहयोगियों में से

शिक्षा और शिक्षक

पिछले दिनों बिड़ला कॉलिज पिलाणी के पारितोषिक-वितरणोत्सव के सभापति-पद से श्री सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने श्रीयुत घनश्यामदास बिड़ला के कुछ प्रश्नों का उत्तर दिया था—जो शिक्षा में रुचि रखनेवालों के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। प्रश्न ये थे :—

क्या यह सम्भव है कि हम किसी विशेष गुण या क्षमतावाले युवक-युवतियों का निर्माण कर सकते हैं? यदि हाँ तो वे कैसे हों? और उस उद्देश्य के लिए हमें क्या करना चाहिए?

इनके उत्तर में सर राधाकृष्णन् ने कहा—

हाँ, सारा संसार इसका साक्षी है कि हम विशेष गुण और क्षमतावाले पुरुष-स्त्रियों का निर्माण कर सकते हैं। सामाजिक नव-निर्माण के लिए समस्त शिक्षण-तंत्र पर नियंत्रण करके विशेष आदर्श के अनुसार युवकों का निर्माण करना होता है। ग्रीकों, रोमनों, यहूदियों ने ऐसा किया था। हिटलर, स्टालिन मुसोलिनी आदि शिक्षण-तन्त्र द्वारा ही अपने युवकों और युवतियों को कम्यूनिस्ट, फसिस्ट, या नाज़ी जैसा चाहें वैसा बना रहे हैं कि नहीं?

महज़ ज्ञान प्राप्त कर लेना ही काफ़ी नहीं है। उपनिषद में छात्र कहता है—मैंने चारों वेद पढ़े हैं। छहों शास्त्रों का पारायण किया है। परन्तु मैं मंत्रविद् ही तो हूँ—आत्मविद् नहीं।

आत्मज्ञान, आत्मसंयम ही भारतीय ज्ञान का आदर्श है। हम चाहते हैं हमारे नवयुवक और नवयुवतियाँ अपने जीवन के आत्मिक रूप का अधिक विकास करें। शिक्षा का उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी उच्चतर जीवन में प्रवेश करें, भौतिक से भिन्न अदृश्य-अस्पर्श्य जगत् से सम्पर्क स्थापित करें और समझें कि वे प्रकृति की उत्पत्ति-मात्र ही नहीं हैं। वे यहाँ जन्म लेने, पालित-पोषित होने, विवाह करने, संतति उत्पन्न करने, कुनबे क़ायम करने और मर जाने मात्र ही के लिए नहीं आये हैं। यह तो पशु-जीवन की ही आवृत्ति है। मानव-जीवन में तो कुछ विशेषता, कुछ अद्वितीयता होनी चाहिए। उसका शारीरिक के अतिरिक्त दूसरा रूप भी है। वह प्रकृति की पैदायश है, प्रकृति का अधिवासी है, परन्तु इतर जगत् से उसका नाता है। वह जगत् आध्यात्मिक जगत् है। और उसी का साक्षात्कार ही शिक्षाका वास्तविक लक्ष्य है।

शिक्षक का कार्य है कि हमें अपनी पूरी ऊँचाई तक पहुँचने में उनसे मदद मिले। शिक्षक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का कार्य है कि ऐसा वातावरण बनायें जिसमें शिष्य उनके अन्दर रहनेवाली आत्मिक क्षमताओं का साक्षात्कार कर सकें। शिक्षक इसे पूरा करें।

विश्वविद्यालयों का ध्येय है कि हमें उसी वातावरण में रहते हुए उच्चतर स्पिरिट को ग्रहण करने में समर्थ बनायें। धर्म सिखाया नहीं जाता, वह ग्रहण किया जाता है। वह तभी सीखा जा सकता है जब हमारे शिक्षक महान हों। हमें तो उसे वातावरण ही से ग्रहण करना है।

हम जितने ही सुशिक्षित होंगे, हमारा जन्म उतना ही उच्च कोटि का होगा और हमारा जन्म जितना ही उच्च कोटि का होगा उतने ही अधिक हम विनीत होंगे, अनुशासनशील होंगे। विद्या, धन और उच्च जन्म तो मद और अहंकार के स्रोत नहीं वरन् आत्मा के अनुशासन और विनय के मूल स्रोत होने चाहिएँ।

मानव-प्राणी शरीर, मन और आत्मा की एक त्रिपुटी है। सच्चा शिक्षित वह है जिसमें शारीरिक शक्ति, मानसिक जागरूकता और आत्मिक क्षमता तीनों हों। ['हिन्दुस्तान टाइम्स'

यह 'पातक' है !

किसी भी स्त्री का दर्शन तक न करना, स्त्रियों से काम-काज से भी न बोलना, स्पर्श से भी बचना आदि पुराने कट्टर नियम हम न पालें, परन्तु इनके साथ रहनेवाली सावधानी और जागरूकता को हम न भूल जायें। एक पुराने संस्कृत ग्रंथ में मैंने पढ़ा कि 'काष्ठ की बनी स्त्री-प्रतिमा को भी ब्रह्मचारी न देखे।' तुकाराम ने भी लिखा—

स्त्रियांचा तो संग, नको नारायण।
काष्ठा या पाषाणा मृत्तिकेच्या।

पहले तो मुझे भी ऐसी अति-सावधानी से चिढ़ आयी। लेकिन बाद में इसका विशेष अर्थ ध्यान में आ गया। कला, कौशल या सौन्दर्य-उपासना के नाम पर नग्न मूर्तियाँ, गुड़ियायें और चित्र आज जहाँ-तहाँ संग्रह किये और बखाने जाते हैं। पैसेवाले और प्रतिष्ठित लोगों के घरों में ऐसी मूर्तियों और चित्रों का संग्रह होना संस्कारिता का लक्षण गिना जाता है। मासिकों में भी अब इनकी बाढ़ आने लगी है। नीति-अनीति के बीच मर्यादा की रेखायें मिटती जाती हैं। पुराने लोगों का अत्यन्त विवेकहीन और बेहूदा दुराग्रह होता है, यह ठीक है, परंतु इसका लाभ लेकर कई नये लोग पुरानों की निन्दा करके दूसरी अति पर पहुँचकर नीतिमात्र का उच्छेद करने लगे हैं। नाटक, सिनेमा, उपन्यास आदि तथा अनाचार-पोषक चित्र और साहित्य बढ़ने लगे हैं। ऐसे अवसर पर जो कोई संकट-सूचना देता है, वह संकुचितमना, सूतकी और समाज-विद्रोही माना जाता है! विकारोत्तेजक मूर्तियों और चित्रों का दर्शन अवश्य पातक (पात+क=गिराने वाला) है। लकड़ी की गुड़िया और चित्र न देखने की हिदायत उस जमाने में थी। आज तो सिनेमा और मासिक पत्रों में आनेवाले गंदे चित्रों पर ये नियम लगाये जाने चाहिएँ। पर नियमों से ही होगा क्या? यह सब प्रेरणा तो भीतर से ही होनी चाहिए।

'शिक्षण अने साहित्य' गुजराती] **काका कालेलकर**

मानव-धर्म

जन-सामान्य को अपने-अपने ढंग से इष्टदेव की आराधना करने में स्वाधीन छोड़कर भी हमें सब धर्मों की मौलिक एकता में हिन्दू, मुसलमान सिक्ख, जैन, पारसी, और ईसाई के भेदों की असत्यता और हानिकरता को भी अनुभव करना होगा। और समस्त समाज को एक सच्चे सार्वभौम मानव-धर्म की ओर लाने का सस्नेह और प्रशान्त प्रयत्न करना होगा। मानवता, समता, मानव-प्रेम, परसेवा, स्वार्थ-त्याग, न्याय और सत्यता के उस सार्वभौम धर्म को अपना एकमात्र धर्म स्वीकार करना होगा, जिसतक मनसूर और कबीर जैसे अनेक सूफ़ियों और महात्माओं ने हमें लाने का प्रयत्न किया।

'विश्ववाणी'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैर-सपाटा

'जीवन-साहित्य' की पाठिका बहनों के काम की कोई बातें अभी तक नहीं बतायी गयीं, इससे उन्हें नाराज़गी होगी। यद्यपि 'जीवन-साहित्य' में 'नारी' से सम्बन्धित बहुत-कुछ निकल चुका है, पर अभी वह काफ़ी नहीं है। महिलाओं की मासिक पत्रिका 'कमला' ने इस बार अपना नववर्षांक निकाला है जो सर्वांगपूर्ण है। कई लेख नारी-जीवन से अत्यन्त निकट सम्बन्ध रखते हैं।

अप्रेल मास के 'दीपक' में **'स्त्री शिक्षा'** पर भावनगर के आचार्य हरभाई त्रिवेदी का भाषण मननीय है। सहशिक्षा तथा स्त्री-शिक्षा में रुचि रखनेवालों को उसे पढ़ना जरूरी है।

'विशाल-भारत' के अप्रेल-अंक में **घरेलू उद्योग धन्धे** लेख है जिसे हमारी बहनों को विशेष रूप से पढ़कर जानना चाहिए कि राष्ट्र-निर्माण का कितना बड़ा अंग उनकी लगन की प्रतीक्षा में अछूता पड़ा है। उसी अंक में पशु-विशेषज्ञ पं० श्रीराम शर्मा ने **'गाय की पहचान'** कराने के लिए कई बातें बतायी हैं।

पत्र-साहित्य का जीवन-साहित्य में अपना खास स्थान है। अप्रेल की 'सरस्वती' में श्री महेशप्रसाद मौलवी आलिम फाजिल ने स्वामी दयानन्दजी के कुछ पत्रों के अंश प्रकाशित कराये हैं, जिनसे स्वामीजी के बारे में जानकारी मिलती है। बाबू श्यामसुन्दरदासजी **मेरी आत्म-कहानी** शीर्षक से अपनी जीवन-कथा 'सरस्वती' में ८ महीनों से लिख रहे हैं। उसे पढ़ने से हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास की कहानी का भी ज्ञान होता है।

अप्रेल की 'माधुरी' में प्रकाशित श्री सन्तराम बी० ए० के **साहित्य-संसार में अनुवादकर्त्ता का स्थान'** लेख से अनुवाद के बारे में जो कई लोगों की उपेक्षा-सी हो गयी है वह दूर होती है।

'विश्ववाणी' के अप्रैल-अंक में चीनी और नीग्रो संस्कृति पर लिखे गये दोनों लेख जानकारी के लिए पढ़ने योग्य हैं। इन्हीं के साथ आचार्य श्री क्षितिमोहन सेन का **'निष्पक्ष साधन'** लेख हिन्दू धर्म और संस्कृति का दूसरी संस्कृति से छुआछूत का भाव रखनेवालों की आँखें खोलनेवाला है। डॉ० सैयद महमूद की **'यह साम्प्रदायिक कटुता शुरू कैसे हुई**? सामयिक वस्तु होने के कारण विशेष रूप से पढ़ने की चीज़ है।

'किशोर' के 'उपकथांक' में देश-विदेश की लोक कथायें, ग्राम्य कथायें, दन्त कथायें तथा रूप कथायें दी गयी हैं। हिन्दी-साहित्य में ऐसी चीजों की बड़ी आवश्यकता है।

'कल्पवृक्ष' के अप्रैल अंक में श्री सतीशचन्द्र दासगुप्त की प्रसिद्ध अंग्रेजी पुस्तक **'होम एण्ड विलेज डाक्टर'** का कुछ अनुवाद निकला है, यदि यह प्रयत्न आगे भी रहे तो हिन्दी-पाठकों का सचमुच बड़ा लाभ हो। ऐसा ही अनुवाद 'हल' की अप्रेल की संख्या में भी निकला है। अप्रेल की 'नयी तालीम में' **'छोटा देहाती स्कूल'** नामक लेख अपने विषय का सुन्दर लेख है। तालीम के बारे में जी० सा० के प्रस्तुत अंक में भी कई लेख व चर्चायें हैं।

'शिक्षण पत्रिका' (अप्रेल) में **'वर्धा योजना'** पर आचार्य नानाभाई का दिया एक भाषण छपा है, जो अत्यन्त उपयोगी और सूचनापूर्ण है।

कृष्ण-मन्दिर में

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन : हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के प्राण और युक्तप्रान्तीय धारासभा के अध्यक्ष (स्पीकर) माननीय टण्डनजी को कौन नहीं जानता होगा ?

श्री मैथिलीशरण गुप्त : भारतीय और आर्य संस्कृति के अनन्य उपासक और प्रतिष्ठाता, 'भारत भारती' के गायक, 'साकेत' कार कवि-वरेण्य गुप्तजी आज राष्ट्र के प्रतिनिधि-कवि हैं।

श्री महेन्द्र : नागरीप्रचारिणी सभा आगरा के प्राण, हिन्दी साहित्यरत्न भंडार के संचालक तथा हिन्दी के एकमात्र आलोचना-मासिक 'साहित्य-संदेश' के सयुक्त सम्पादक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या और कैसे ?

ग़रीब लेखकों की समस्या

लेखकों और प्रकाशकों के पारस्परिक संबंध के सिलसिले में श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी ने एक पत्र लिखकर ग़रीब लेखकों की समस्या की तरफ़ हमारा ध्यान दिलाया है, जिसकी हम क़द्र करते हैं। वे लिखते हैं--

'ऐसा मालूम पड़ता है मानो आपको आज के लेखकों के गहरे असन्तोष का पता नहीं। समस्या उनकी नहीं है, जिनको प्रकाशकों की कमी नहीं है, जिन्हें प्रकाशकों से मनचाहा मिल जाता है या जो अन्य प्रकार से घर-गिरस्ती, खाने-पीने की चिन्ता से दूर हैं। समस्या तो उनकी है, जिन्होंने साहित्य के पीछे जीविका के अन्य साधनों को छोड़ दिया है और जिन्हें वह भी नहीं मिलती।'

हिन्दी में लेखक भी दो वर्ग के हैं। एक वे जिनके निर्वाह का कोई दूसरा प्रबन्ध है। लेखन-व्यवसाय पर उनका गुज़र-बसर अवलंबित नहीं। दूसरे वे, जिनकी जीविका का एक मात्र सहारा लेखन है। अक्सर यह देखा जाता है कि साधन-सम्पन्न लेखक भी बिना दक्षिणा लिये और बाज़-बाज़ तो तगड़ी दक्षिणा लिये, न लेख लिखते हैं न पुस्तक। साधन-सम्पन्नता के कारण इनकी विख्याति और क़ीमत भी अधिक हो जाती है और उन्हें पुरस्कार भी अधिक मिल जाता है। दूसरी तरफ़ गरीब साधन-हीन लेखक के पल्ले ज़रूरी मेहनताना भी नहीं पड़ता। होना तो यह चाहिए कि जो ग़रजमंद हो उसे पहले और ज्यादा मिलना चाहिए और जो सुखी, सम्पन्न है, उसे देने की अपेक्षा उससे पाने की ज़रूरत है। भगवान् कृष्ण ने कहा है--

'दरिद्रान् भर कौन्तय मा, प्रयच्छेश्वरे धनम्'

इसका यही आशय है। पुरस्कार की कसौटी ग्रंथ के लिए किया गया परिश्रम और उसकी श्रेष्ठता ही नहीं, लेखक की जीविका-सम्बन्धी आवश्यकता भी होनी चाहिए। बल्कि सही बात तो यह है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को जीवन-निर्वाह की आवश्यक सामग्री प्रायः समान रूप से मिलनी चाहिए। वह उसे उसके परिश्रम के फल के रूप में मिले। उसकी आवश्यकता-पूर्ति के बाद जो समय या कृति बच रहती है, उसका लाभ समाज और जनता को मुफ्त मिलना चाहिए। ऐसी वृत्ति या नियम बना लेने पर ही इससे वास्तविक समाज या साहित्य-सेवा हो सकती है। साधन-सम्पन्न लेखकों से निवेदन है कि वे या तो पुरस्कार न लिया करें, सेवाभाव से ग्रन्थ-प्रणयन करें या थोड़ा पारिश्रमिक लेकर पुस्तक को सस्ता बनने दें या पूरा पुरस्कार लेकर उसका विनियोग ग़रीब लेखकों की सहायता में करें।

प्रकाशकों की चोरी ?

'लेखक बनाम प्रकाशक' नामक लेख और मेरे अनुरोध के अनुसार सम्माननीय मित्रों और हितैषियों ने अपने-अपने सुझाव भेजना शुरू कर दिया है। जिनमें विचार करने की अच्छी सामग्री दी गयी है। उनमें से इस समय तो एक ही बात की ओर यहाँ प्रकाशकों का ध्यान दिलाना ज़रूरी समझता हूँ, जिससे मुझे बहुत दुःख पहुँचा है और जो बतलाती है कि बाज़-बाज़ प्रकाशक किस तरह चोरी करते हैं। एक लब्धप्रतिष्ठ लेखक और प्रकाशक पूछते हैं-- यदि प्रकाशक किसी संस्करण की २ हज़ार प्रतियाँ छपाये और लेखक को १ ही हज़ार बताये तो लेखक क्या कर सकता है ? मैं मण्डल पर आक्षेप नहीं करता हूँ, पर मैं लेखकों को ठगनेवाली इस प्रकार की प्रवृत्ति के कुछ प्रकाशकों का परिचय रखता हूँ।'

एक प्रसिद्ध विद्वान् लेखक जो प्रकाशकों के प्रति असहिष्णुता का भाव नहीं रखते हैं, लिखते हैं—

'मेरी दृष्टि में इक़रारनामों का अधिक मूल्य नहीं है। यदि पुस्तक सहस्रों बिकती है तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक अवश्य बेईमानी करेंगे। और उनसे उलझते रहना लेखक की शक्ति के बाहर है। टैक्स्ट बुक प्रकाशित करनेवाली कोई भी तो फ़र्म मेरे अनुभव में ऐसी नहीं आयी, जो पूरी तरह ईमानदार हो। ऊपर से जिनके हिसाब जितने पक्के हैं, अन्दर से उतने ही कच्चे।'

एक विख्यात कवि भी प्रकाशकों की इस चोरी की शिकायत हमसे करते थे।

इन मित्रों की प्रामाणिकता पर सन्देह करना असम्भव है। ऐसी दशा में प्रकाशकों के लिए उनकी शिकायत पर विचार करना ज़रूरी है, क्योंकि प्रकाशकों को हर तरह से ऐसे आक्षेपों और सन्देहों से परे अपनेको रखना चाहिए। यों तो पुस्तकों का व्यवसाय, जिससे मुनाफा उठाया जाता हो, नैतिक दृष्टि से उचित नहीं है। पर वह फिर भी समझ में आ सकता है। किन्तु यह चोरी तो किसी प्रकार सहन करने लायक नहीं है।

क्या लिखूँ ?

कवि व लेखक की कई व्याख्यायें हैं। मेरे सामने इनका जो चित्र खड़ा होता है वह महज समाज के वर्तमान चित्र की प्रतिलिपि करनेवाले का नहीं, बल्कि उस चित्र को सुधारने व भावी चित्र की झलक दिखानेवाले, समय की गति को मोड़नेवाले का होता है। उस दिन एक प्रख्यात राष्ट्रीय कवि-मित्र से बातें हुईं। मैंने कहा— माता की कड़ियाँ व बन्धन खुलना तो अब थोड़े ही समय का प्रश्न है, उसके बाद क्या ? आपका कवि उस समय का भी कुछ चित्र अपने मन में बनाता है ? उसकी तैयारी का कुछ मसाला आप देंगे या नहीं ? मेरा सुझाव उनके हृदय के तह तक पहुँचा मालूम हुआ।

स्वराज या आजादी पाना हमारे लिए एक बहुत बड़ा व विकट काम है, इसमें कोई सन्देह नहीं। इसके लिए जितना कष्ट व परिश्रम उठाया जाय, जितना कुछ स्वाहा किया जा सके थोड़ा है। परन्तु उसके बाद की जिम्मेदारियाँ हमारी कम आजमायश नहीं करेंगी। हमारा असली काम तो भारतवर्ष को 'सारे जहाँ से अच्छा' बना देना है। स्वराज्य-सत्ता मिल जाने भर से यह काम नहीं बन सकता। एक बड़ी भारी रुकावट या कठिनाई अलबत्ते दूर हो जायगी। तब हमें अपने समाज-जीवन के प्रत्येक अंग को पुष्ट और बलिष्ठ बनाते हुए उसे विकास की ओर ले जाना होगा। हमारे शरीर को स्वस्थ व बलिष्ठ बनाना होगा, हमारे मन-बुद्धि को निर्मल, जाग्रत, तेजस्वी, ज्ञानयुक्त करना होगा। हमारी दरिद्रता, दीनता मिटानी होगी। एक ओर महान् कंगाली व दूसरी ओर महान् साधन-सम्पन्नता——इस विषमता को दूर करना होगा। इसके लिए आर्थिक व औद्योगिक योजनायें तथा व्यवस्थायें करनी व बदलनी होंगी। समाज व राष्ट्र-रक्षा के प्रश्नों को हल करना होगा। यह सब इस दृष्टि से करना होगा कि हम दूसरे देशों के सामने उच्चता, योग्यता, सुव्यवस्थितता का नमूना पेश कर सकें। तभी तो **'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा'** बन सकेगा। आज तो हम इन कड़ियों को भक्तिभाव में झूम-झूमकर गाते हैं। पर कल हमें संसार को अपना यह दावा साबित कर दिखाना होगा। इन सबके लिए हमारा आज का कवि व लेखक-समुदाय कितना जाग्रत व कर्त्तव्य-रत है ? जबकि सारे संसार से ही अब हिंसा-बल व शस्त्रास्त्र के कम करने की नौबत आ रही है तब भारतवर्ष के सामने तो यह प्रश्न और भी तेजी से आ रहा है। हमारी महान् राष्ट्रीय संस्था——कांग्रेस हिंसा को छोड़ चुकी है और अहिंसा की संगठित तालीम राष्ट्र को बरसों से दे रही है। हमें अपने घरेलू, संस्थागत व समाजगत ही नहीं, बाहरी हमले के प्रश्नों को भी अहिंसात्मक साधनों से हल करना है। इसकी तरफ़ कितने साहित्यिकों का सजग ध्यान रहने लगा है ? कितनों ने इसके मर्म को समझ लिया है, इसके महत्त्व को समझने में कितने तल्लीन हो रहे हैं ? कितनों ने अपने निजी अनुभव व पारिवारिक जीवन में इनके प्रयोग किये हैं और अपने अनुभव देश व संसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सामने पेश करने की तैयारी कर रहे हैं ? ये सब प्रश्न हैं, जिन्हें मेरी समझ में एक सजीव व विकासशील—या, प्रगतिशील कहूँ ?—लेखक अथवा कवि के दिमाग़ में उठते व चक्कर काटते रहना चाहिए। इनके उत्तर में वे जो कुछ लिखेंगे वह अवश्य नवीन, विचारणीय व आकर्षक होगा। टकसाली लेखों व विचारों की नहीं, सत्य व जीवन के नित्य-नये अनुभवजन्य विचारों व योजनाओं की आज हिन्दी-समाज को सबसे अधिक आवश्यकता है।

पाठकों से

'जीवन-साहित्य' के एक पाठक श्री ओंकारलालजी ने बड़े परिश्रम से मण्डल और जी० सा० के सम्बन्ध में कई उत्तम सुझाव मुझे लिख भेजे हैं। उनमें से एक जिसका सम्बन्ध सीधा पाठकों से है यहाँ प्राय: ज्यों-का-त्यों देता हूँ—

"जिस हिन्दी जनता के लिए, विद्वानों और लेखकों के लिए नहीं बल्कि साधारण जीवनयापी जनता के लिए, आपने यह पत्र (जी० सा०) प्रकाशित किया है, उसके अभावों को समझ लेना अतीव आवश्यक है, क्योंकि तबतक आप उनको हटाने का प्रयत्न नहीं कर सकते। अतः इसकी जानकारी पाने के लिए आप स्वतः सामान्य पाठकों के नाम 'जीवन-साहित्य' में एक चिट्ठी सर्क्युलेट कीजिए और पूछिए —

(१) आपको हिन्दी-साहित्य के किस अंग में क्या-क्या कमी मालूम होती है और उसको दूर किस तरह किया जाय ?

(२) हिन्दी में किस तरह की पुस्तकों का प्रचार अधिक होना चाहिए और किस प्रकार की पुस्तकें बन्द होनी चाहिएँ और ऐसा किस तरीके से किया जाय ?

(३) अन्य भारतीय भाषाओं या विदेशी भाषा की कौन-कौन-सी प्रवृत्ति को आधार मानकर हिन्दी-साहित्य में भी वही प्रवृत्ति चलायी जाय, और किस प्रकार ?

(४) 'जी० सा०' के अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने के लिए किस-किस प्रकार के लेख उसमें होने चाहिएँ ? क्या वह अपना मौजूदा स्वतन्त्र मार्ग ही रखे अथवा इसे बदले ? यदि हाँ, तो क्यों और कैसे ?

(५) आपकी निगाह में 'जी० सा०' किस तरह का निकल रहा है ? उसमें कौन-कौन-सी कमियाँ दिखायी देती हैं ? इसमें और क्या-क्या संशोधन और परिवर्तन होना चाहिए ?"

आशा है जी० सा० के पाठक इन प्रश्नों के उत्तर देने और अपनी तरफ़ से भी नये-नये सुझाव भेजने की कृपा करेंगे।

अमल से दिखाओ

अभी कुछ समय पहले नरेन्द्र-मण्डल में बड़े लाट साहब ने हमारे राजा-महाराजाओं का ध्यान अपनी प्रजा की राजनैतिक माँगों की ओर दिलाते हुए कहा था कि उन्हें सन्तुष्ट करना उनका कर्त्तव्य है। जब फैडरेशन को चालू करने की धुन बड़े लाट साहब को थी, तब तो वे अक्सर हमारे राजा-महाराजाओं पर शासन-सुधार के लिए ज़ोर देते रहते थे पर अब तो ब्रिटिश-सरकार के दिमाग में युद्ध ही युद्ध भरा होने से हिन्दुस्तान में भी सरकार उसी निगाह से सब चीज़ों को देखती नज़र आती हैं और हमारे कई राजा-महाराजा या उनके अधिकारी भी युद्ध के नाम और प्रयत्न का सहारा लेकर राजनैतिक माँगों और प्रवृत्तियों की दाद देने में आनाकानी करते हैं। इतना ही नहीं बल्कि कहीं-कहीं तो दमन के लिए भी युद्ध के नाम 'भारत-रक्षा कानून' का सहारा लेने में संकोच नहीं करते।

अभी इन्दौर-राज्य में प्रजामण्डल का अधिवेशन भारत-रक्षा कानून की मातहत ही रोका गया, जबकि प्रजामण्डल के नेताओं ने यह स्पष्ट कर दिया था कि युद्ध के मामले में वे बिल्कुल तटस्थ हैं। देशी राजा और उनके शासक कई बार बेधड़क यह कहते हैं कि अंग्रेजी भारत की तरह देशी रियासतों के राजा और प्रजा के हितों में कोई विरोध नहीं है, क्योंकि हम सब हिन्दुस्तानी हैं, मगर जहाँ जनता की माँगों का सवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आता है और उनके आन्दोलनों का मुकाबला करने की नौबत आती है, तब वे अंग्रेजी हुकूमत से भी ज्यादा नीचे उतर आते हैं—इसीका यह नतीजा है कि कई दफा लोग कहते हैं कि हिन्दुस्तानी हाकिम और राजा से तो अंग्रेज हाकिम और हुकूमत कहीं अच्छी होती है।

हमारे राजा-महाराजाओं और उनके हाकिमों को इस हालत पर अच्छी तरह गौर करके अपने अमल से यह परिचय देना चाहिए कि सचमुच उनके और प्रजाजनों के स्वार्थ बिल्कुल एक हैं। ह० उ०

'सैनिक' के साथ न्याय

अखिल भारतीय हिन्दी पत्रकार-संघ के अध्यक्ष श्री मूलचन्द अग्रवाल ने वक्तव्य देते हुए कहा है—

"हमने आशा की थी कि आखिर यू० पी० सरकार को सद्बुद्धि आयेगी और वह 'सैनिक' और उसके प्रेस से माँगी हुई ६०००) की जमानत के अन्यायपूर्ण हुक्म को वापस ले लेगी, परन्तु हमें अत्यन्त निराशा हुई! सरकार इस विषय में दृढ़ है और कहती है कि इस मामले में कुछ भी नहीं हो सकता। समस्त हिन्दी-पत्रों ने मुझपर जोर डाला है कि मैं यू० पी० सरकार से यह अपील करूँ कि वह पिछली बातों को भुलाकर सहनशीलता और न्याय की भावना से एकबार पुनः इस मामले पर विचार करे।"

स्मरण रहे कि 'सैनिक' का अपराध केवल यही था कि उसने विनोबाजी का मुकदमा चलने के वक्त का वक्तव्य छापा था, जिसे एक भी हिन्दी पत्र ने नहीं रोका और जिसे जिम्मेदार न्यूज एजेन्सी ने ब्रॉडकास्ट किया था! निस्सन्देह 'सैनिक' के साथ इस विषय में बड़ा अन्याय हुआ है और हम श्री अग्रवालजी की अपील का समर्थन करते हुए यू० पी० सरकार से अनुरोध करते हैं कि वह 'सैनिक' के साथ न्याय करे।

समर्थन

'वीणा'-सम्पादकजी ने हमारा ध्यान फाल्गुन १९९७ : मार्च १९४१ की 'वीणा' में प्रकाशित उस सम्पादकीय टिप्पणी की ओर दिलाया है जिसमें उन्होंने श्री रामानन्द चटर्जी के इस कथन का खण्डन किया है कि 'महाकवि रवीन्द्रनाथ ने पूर्व या पश्चिमवासी, जीवित या स्वर्गीय गीतकार से अधिक गीतों की रचना की है।'

हमारा भी ऐसा ही ख़याल है कि श्री रामानन्द चट्टोपाध्याय का यह कथन अत्युक्तिपूर्ण है। स्वयम् कवीन्द्र भी शायद इस बात से इनकार करेंगे कि वे अबतक 'सूर' से अधिक गीत लिख चुके हैं। इन पंक्तियों के साथ हम 'वीणा'संपादक की उक्त टिप्पणी का समर्थन करते हैं।

स्वर्गीय गोयनकाजी!

पिछला अंक छप चुकने पर यह दुःखद समाचार मिला था कि दिल्ली के लोकप्रिय समाज-सेवी, साहित्य और भाषा की उन्नति के लिए सतत प्रयत्नशील सेठ श्री केदारनाथजी गोयनका का जेल से लायी गयी बीमारी से स्वर्गवास होगया! यहाँकी हिन्दी-प्रचारिणी सभा के वह जन्मदाता थे, हिन्दी साहित्य-सम्मेलन अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष थे और यहाँ की प्रत्येक हिन्दी-प्रवृति के प्राणरूप थे, उनका दिल्ली में कोई उपयुक्त स्मारक बनाये जाने के लिए पूरा प्रयत्न होना चाहिए। यही उनके प्रति सबसे अच्छी हार्दिक श्रद्धांजलि होगी।

'हृदय' जी!

"यह लिखते हुए हृदय विदीर्ण होता है कि आज हम लोगों के बीच प्रो० रमाशंकर शुक्ल 'हृदय' एम० ए० नहीं रहे! उनका भौतिक शरीर ता० २४ मार्च को पंचतत्त्व में विलीन हो गया!

स्व० शुक्लजी अभी सर्वथा युवावस्था में ही (३९ वर्ष) थे, वे मध्यभारत के साहित्य-सेवकों में अपने ढंग के अद्वितीय थे। वे गम्भीर-विचारक, दार्शनिक, निरन्तर अध्ययन-शील, साहित्य शास्त्र के ठोस पण्डित, दूरदर्शी, निष्पक्ष आलोचक, [illegible] सम्पादक और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वतोपरि 'कवि' थे। शुक्लजी की प्रतिभा चतुर्मुखी थी। श्री प्रो० माचवेजी का यह कथन उचित है कि 'वे श्री माखनलालजी चतुर्वेदी के बाद साहित्यिक विषय के सरस वक्ता थे।' दैनिक 'लोकमत' (जबलपुर) के वे यशःप्राप्त सम्पादक थे, उत्कृष्ट निबन्ध-लेखक थे। एकांकी नाटक भी उन्होंने लिखे और सफलता के साथ। कवितायें बहुत लिखीं, पर वे अपने को प्रकाशन में नहीं आने देते थे।

शुक्लजी मध्यभारत ही के नहीं, समस्त हिन्दी-साहित्य के प्रथम श्रेणी के साहित्यिक-विद्वान् एवं कवि थे। शुक्लजी के अस्तित्व से मध्यभारत गौरवान्वित था, और आज उन्हें खोकर अमूल्य निधि से वंचित हो गया है।"

१० वर्षों से उनके आत्मीय बने हुए बन्धुवर श्री सूर्यनारायणजी व्यास द्वारा भेजे गये एक बहुत सुन्दर संस्मरणात्मक लेख में से चुनी हुई इन पंक्तियों द्वारा हम स्व० 'हृदय'जी के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें चिर-शान्ति प्रदान करे।

अमर भेंट

स्वनामधन्य श्री मैथिलीशरण गुप्त भारत-राष्ट्र के प्रतिनिधि-कवि हैं। उस दिन भारत-सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। आज भी वह बन्दी हैं। भारत की भारती के गायक, राष्ट्र की संस्कृति के प्राण-प्रतिष्ठाता कवि-वरेण्य गुप्तजी का राष्ट्र-जननी की इस पुण्य पूजा में अपने जीवन के संचित तप-त्याग का अर्घ्य चढ़ाना तो प्रत्येक भारतवासी के लिए परम गर्व और गौरव का विषय है, पर उस राजतंत्र को यह क्या हो गया है कि जो 'भारत-रक्षा' के नाम पर भारत और उसकी भारती के रक्षक को सीखचों में रखना चाहता है?

राष्ट्र-भारत के इस मुक्तियज्ञ में राष्ट्र-कवि के रूप में हिन्दी की यह भेंट युग-युग तक इतिहास में अमर रहनेवाली है। मु०

दन्तामृत (रजिस्टर्ड)

दाँतों की बीमारियों के लिए अपूर्व स्वदेशी मञ्जन

दाँतों और मसूढ़ों की सब बीमारियों यहाँ तक कि पायोरिया तक के लिए यह मञ्जन इतना गुणकारी सिद्ध हुआ है कि भारत के साधारण श्रेणी से लेकर श्रीमन्त एवम् राजा-महाराजाओं और कौंसिलों के सदस्य तो इसका व्यवहार करते ही हैं, कई अंग्रेज, जो कि अपने देश की चीज़ों के सिवा बाहर की बहुत कम चीज़ें इस्तेमाल करते हैं, वे भी अपने देश के टूथ-पाउडर एवम् पेस्टों से इससे अधिक लाभ पाकर इसके भक्त बन गये हैं।

जिसने एक बार इस मञ्जन का इस्तेमाल किया, वही सदा के लिए इसका भक्त बन गया। मूल्य टीन की डिबिया ।≈), बड़ी शीशी ।−), छोटी शीशी ।)

श्रीयुत. एम. के. आचार्य, एम. एल. ए. (मद्रास)—"आपका दंत-मंजन तो मैंने अपनी दंत-पीड़ा के लिए गत पाँच वर्षों में व्यवहृत देशी-विदेशी सब मंजनों से श्रेष्ठतर पाया। मंजन दाँतों, मसूडों और तालु के घावों पर जादू का-सा असर दिखलाता है।"

श्री. एम० एस० वरदाचार्य एडवोकेट (मद्रास हाईकोर्ट)—"दो वर्ष पूर्व मुझे दंत-पीड़ा हुई थी जो बढ़ती ही गयी और मसूडों में घाव हो गये; परन्तु आपके मंजन से अब मेरे मसूडे स्वस्थ हैं और दाँत में पीड़ा नहीं होती। मैं तो कहूँगा कि मेरे व्यवहृत दंत-मंजनों में सर्व-श्रेष्ठ आपका दन्तामृत ही है।"

मिलने का पता—मैनेजर, 'राजस्थान आयुर्वेदिक औषधालय,' अजमेर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके विज्ञापन का खर्च !
आधा से भी कम किया जा सकता है,
हमारे चारों हिन्दी टाइम-टेबुलों में विज्ञापन छपाकर ।

ये टाइमटेबुल रेलवे बोर्ड गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, तथा भारतीय रेलवेज के सहयोगसे प्रकाशित होते हैं :— समस्त भारत खास करके महाराष्ट्र प्रान्त, गुजरात, काठियावाड़, सिन्ध, राजपूताना, पंजाब, मध्यप्रान्त, मध्यभारत, यू० पी०, बिहार, उडीसा एवं बंगाल के लिए—

१. अखिल भारतीय रेलवे हिन्दी टाइम टेबुल तथा गाइड—मूल्य ।।।)—इसमें भारतवर्ष की समस्त रेलवे लाइनों के टाइमिंग्स देने के साथ ही किराये के तीन प्रकार के चार्ट—रेट, मील के हिसाब से तथा एक स्थान से दूसरे स्थान जोड़ा हुआ—धर्मशाला-सूची, तीर्थ एवं दर्शनीय-स्थानों का परिचय, स्वास्थ्यवर्धक स्थानों का विवरण, पर्व तथा मेले आदि कितनी ही आवश्यक बातें दी गई हैं। साथ में एक बहुत ही सुन्दर नक़शा दिया गया है, जिसमें हर एक लाइन अलग-अलग चिन्हों द्वारा दिखलाई गई है, बड़ी, छोटी एवं सरकारी लाइनों का भी डिस्टिंक्शन किया गया है ।

गुजरात, महाराष्ट्र प्रान्त, गुजरात, कठियावाड़, राजपूताना, मध्यभारत के साथ ही मध्यप्रान्त तथा यू० पी० के पश्चिमीय हिस्से के लिए—

२. जी० आई० पी०, बी० बी० सी० आई०, गुजरात, काठियावाड़ तथा राजपूता-टाइम टेबुल—मूल्य ≡)—इसमें जी० आई० पी०, बी० बी० सी० आई० बार्सी लाइट, गायकवाड़ बड़ौदा स्टेट, मोरवी, गोंडल, भावनगर स्टेट, जूनागढ़ स्टेट, जामनगर, ऐंड द्वारका, कच्छस्टेट, जोधपुर, बीकानेर स्टेट, जयपुर स्टेट, उदयगढ़ चित्तौड़गढ़ धोलपुर स्टेट, ग्वालियर लाइट रेलवे का पूरा-पूरा तथा ई० आई० आर०, बी० एन०, आर०, एन० डबल्यू आर० एम० एस० एम० तथा निजाम्स स्टेट रेलवे के संक्षिप्त टाइम-टेबुल देने के साथ धर्मशाला-सूची तीर्थ एवं दर्शनीय स्थानों का परिचय, किराये तथा लगेज़ का चार्ट भी है ।

यू० पी० बिहार, दिल्ली प्रान्त तथा पूर्वी बंगाल के लिए—

३. ई० आई० आर० टाइम-टेबुल—मूल्य =)—इसमें ई० आई० आर०, आरासहसराम, बख्तियारपुर-बिहार, फतुहा-इस्लामपुर, डेहरी रोहतास, शाहदरा-सहारनपुर तथा बर्दवान-कटवा-अहमदपुर रेलवे का पूरा तथा बी० एन० डबल्यू०, जी० आई० पी०, आर० के० आर०, बी० एन० आर. व बी० बी० सी० आई० का संक्षिप्त टाइम-टेबुल देने के साथ ही धर्मशाला सूची तीर्थ एवं दर्शनीय स्थानों का परिचय, पार्सल व लगेज़ के रेट, किराये का चार्ट आदि आवश्यकीय बातें दी गई हैं। रेलवे लाइन का नक़शा भी दिया गया है ।

पूर्वी राजपूताना, गुजरात, तथा मध्यभारत, यू० पी० वम्बई प्रान्त के कुछ हिस्से के लिए

४. बी० बी० सी० आई० टाइम-टेबुल—मूल्य ~)—इसमें बी० बी० सी० आई० जयपूर स्टेट, उदयपुर-चित्तौड़गढ़, गायकवाड़-बड़ौदा स्टेट रेलवे का पूरा टाइम-टेबुल देने के साथ ही पार्सल-लगेज रेट, धर्मशाला-सूची तथा तीर्थ एवं दर्शनीय स्थानों का संक्षिप्त परिचय भी है ।

भारतवर्ष के प्रायः सभी रेलवे स्टेशनों के व्हीलर के स्टाल पर मिलता है। कुछ शहरों या कस्बों में लोकल एजेण्टों के पास भी मिलता है ।

टाइम-टेबुल में विज्ञापन छपाने का अर्थ है—कम-से-कम खर्च में अधिक प्रचार

हमारा तीर्थयात्रा विभाग—रातभर सोते हुए आराम से तीर्थयात्रा कम खर्च में करने के लिए हमसे पूछिए ।

पत्र-व्यवहार का पता— **रेलवे हिन्दी टाइम-टेबुल आफ़िस बनारस सिटी**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

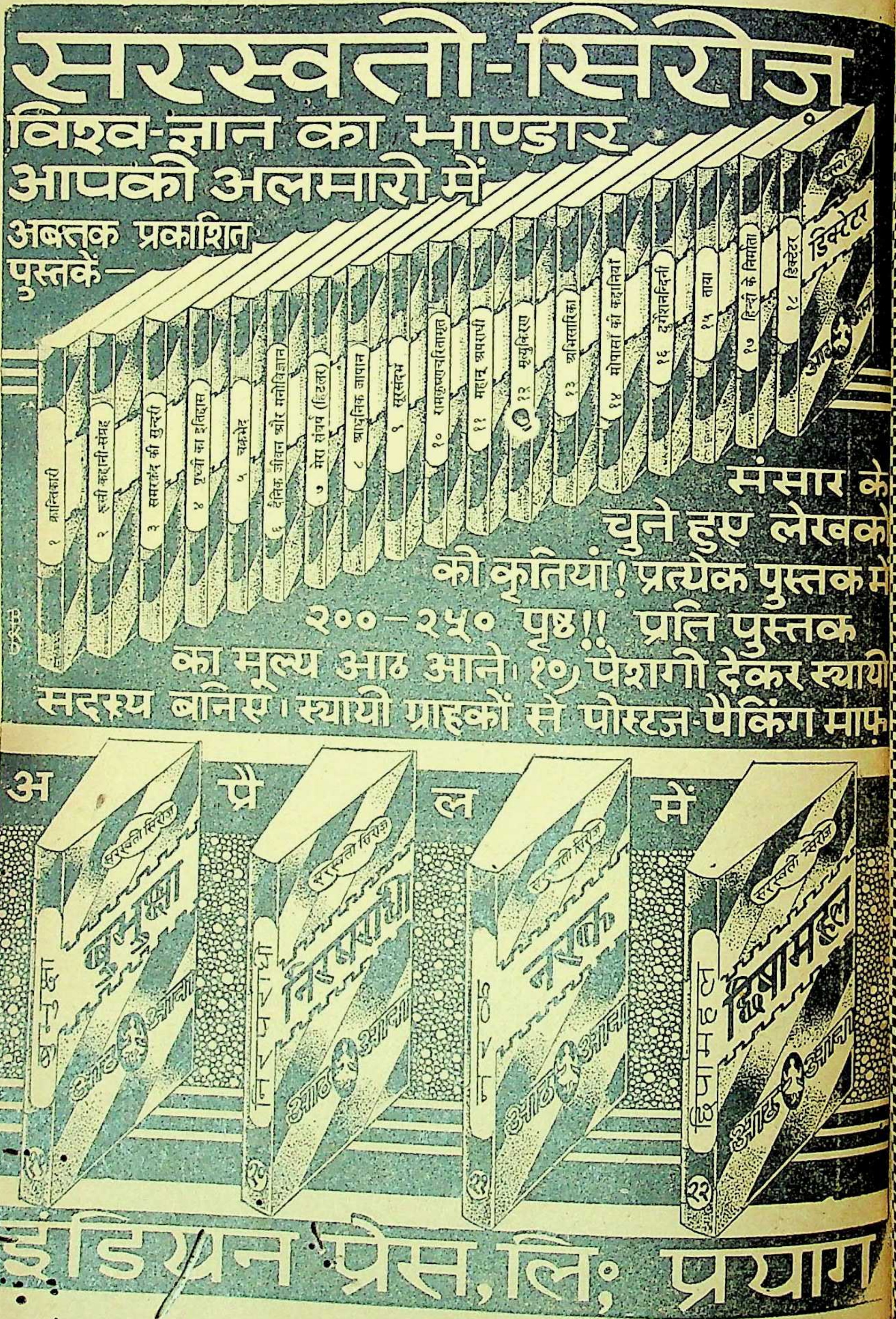

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी पुस्तकों के प्रसिद्ध प्रकाशक

लहरी बुकडिपो

बनारस सिटी

आज पचास वर्षों से हिन्दी में पुस्तकें निकालकर हिन्दीभाषी जनता का मनोरंजन और उसमें ज्ञान की वृद्धि कर रहे हैं। हिन्दी में हमारी प्रकाशित पुस्तकें जितनी अधिक संख्या में छपी और बिकी हैं उतनी दूसरे किसी प्रकाशक की नहीं बिकी हैं। बाबू देवकीनंदन खत्री रचित चन्द्रकान्ता और भूतनाथ आदि उपन्यासों के सैंकड़ों संस्करण हो चुके हैं और लाखों की संख्या में हिन्दी-प्रेमी पाठक उन्हें पढ़ चुके हैं। हमारे प्रकाशित सैंकड़ों उपन्यासों में से कुछ ये हैं—

चन्द्रकान्ता २८ भाग	९)	भूतनाथ २१ भाग	१०।)
रोहतास मठ दो भाग	१।)	चोर	१।।)
मीठी भूल	१)	सुफेद शैतान ४ भाग	६)
मृत्युकिरण ४ भाग	६।)	लाल पञ्जा	२)
विधि-विधान	२।)	प्रवीन पथिक	१।)
भयानक भ्रमण	२।)	कलंक कालिमा	१)
सुवर्ण-रेखा	२)	स्वर्ग पुरी	१।)
कुसुमलता	१।)	नरेन्द्र मोहनी	१।)
किसान की बेटी	१)	महात्मा	१)
नर-पिशाच	३।)	टार्ज़न	३)

सूचीपत्र मुफ्त मँगाइये

लहरी बुक डिपो, बनारस सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकतन्त्र के लिए शिक्षा ?

※ आज के इस जलते हुए सवाल का उत्तर आपके पास क्या है ?

※ विश्व में युद्ध, कलह और अशान्ति क्यों है ? इसका मूल कारण आप जानते हैं ?

※ आपका लाडला इतना दुखी और अव्यवस्थित क्यों है ? वह स्कूल जाना क्यों पसन्द नहीं करता ? घर को सर पर क्यों उठाये हुए है ? इन सभी महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर आप जानते हैं ?

※ माता-पिता के कर्त्तव्य क्या है ? सच्चा शिक्षक और स्कूल क्या है, आप जानते हैं ? श्री हरिपद मैति कलकत्ता विश्व-विद्यालय के चित्त विश्लेषण के अभ्यासी विद्वान् हैं। वे बालकों के कठिन प्रश्नों का उत्तर देते हैं। पर यह सब महत्वपूर्ण ज्ञान आपको—

बालहित

में प्रतिमास मिल जायेगा।

वार्षिक २) नमूना ≡) उदयपुर (मेवाड़)

हिन्दी की सुन्दर सचित्र मासिक पत्रिका

वीणा

सम्पादक

श्रीकालिकाप्रसाद दीक्षित 'कुसुमाकर'

प्रकाशक

श्रीमध्यभारत-हिन्दी-साहित्य-समिति,

डॉक्टर बाबूराम सक्सेना, एम. ए. डी. लिट्, भू. पू. प्रधान-मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग:—

"'वीणा' हिन्दी की उच्च कोटि की पत्रिका है और मातृ-भाषा और साहित्य की प्रचुर सेवा कर रही है।"

वार्षिक मूल्य ४) नमूने का अंक फ्री नहीं भेजा जाता एक प्रति ।=)

व्यवस्थापक—'वीणा' इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको

रुपया चाहिए

और हमको

आपका समय चाहिए

रुपये तथा समय की तुलना नहीं हो सकती, क्योंकि रुपया तो वापस भी मिल सकता है, परन्तु बीता समय फिर कभी हाथ नहीं आ सकता।

प्रति दिन नियमित रूप से आप केवल २ घण्टे का समय देकर

न्यू एशियाटिक

की जीवन-बीमा पालिसी

बेचकर हजारों रुपये कमा सकते हैं

आप प्रगतिशील कम्पनी के साथ प्रगतिशील बनें

जिसने—

१९३४ ई० में	१५,३८,५००	रु०
१९३५ ई० में	२५,०१,०००	,,
१९३६ ई० में	३०,६६,७५०	,,
१९३७ ई० में	३५,५६,५००	,,
१९३८ ई० में	४१,७४,७५०	,,
१९३९ ई० में	५०,११,७६८	,,
१९४० ई० में	६०,१३,२५०	,,

के बीमे किये हैं

आज ही पत्र भेजकर विवरण मँगाकर देखें

न्यू एशियाटिक लाइफ़ इन्शुरेन्स कम्पनी लिमिटेड

कनाट सर्कस, नयी दिल्ली

शाखायें—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, नागपूर, हैदराबाद-दक्षिण, अर्नाकुलम (कोचीन), लाहोर तथा पटना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोग्य शास्त्र का प्रतिनिधि पत्र

जीवन सखा

वास्तव में जीवन-सखा है

यह एक नहीं अनेकों की राय है : आप भी पढ़कर यही कहेंगे।

'आज' काशी

"शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य के ज़बर्दस्त······हामी 'जीवन-सखा' ने ५ वर्ष के भीतर ही अपना एक विशेष स्थान बना लिया है। विशेषांक में···कही गई बातों के अनुसार जीवन व्यतीत कर हम अपार लाभ उठा सकते है।"

'सरस्वती' प्रयाग

"प्रत्येक साध्य तथा असाध्य मर्ज़ का निवारण प्रकृति-द्वारा हो सकता है, यही इस पत्र का सन्देश है।"

'जीवन-साहित्य' नई दिल्ली

"जीवन-सखा के अंकों और विशेषांक को देखकर यह कहना होगा कि इसका नाम बिलकुल सार्थक है। आरोग्य-शास्त्र का सुन्दर मानसिक होने से यह वास्तव में जीवन-सखा ही है। विशेषांक में प्राकृतिक-चिकित्सा, इन्द्रिय निग्रह की समस्या, प्रकृति बनाम दावा, अधार निदान, भाजी और फल, भोजन और धूप, योग और स्वास्थ्य, विटामिन की कहानी, विद्युत-चिकित्सा आदि लेखों से पता चलता है कि सम्पादक स्वास्थ्य के विषय में सब विचार-धाराओं के लेख जुटाने में कितने सतर्क हैं। कहना नहीं होगा कि एक-एक लेख इसका पाठनीय और आचरणीय है।"

'हिन्दुस्तान' दिल्ली

"जीवन-सखा······के विशेषांक में स्वास्थ्य सम्बन्धी पारायण करने योग्य भरपूर सामग्री दी गई है। लेख पढ़ने, मनन करने और आचरण करने योग्य हैं।"

'नवशक्ति' पटना

"यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी पत्रिकाओं में······जीवन-सखा का सर्वोच्च स्थान है। छपाई-सफ़ाई तो आदर्श है।"

'हल' प्रयाग

"·······अंक सुपाठ्य और संग्रहणीय है। प्राकृतिक चिकित्सा के छोटे कोष का काम करता है।"

'विशाल-भारत' कलकत्ता

"जीवन-सखा का विशेषांक सब तरह से उपयोगी है।"

'हंस' बनारस

"······हिन्दी में जीवन-सखा अपने ढंग का विशेष पत्र है। विशेषांक···में स्वास्थ्य, व्यायाम, चिकित्सा आदि के सम्मबन्ध में प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञों अथवा इसमें दिलचस्पी रखनेवालों—जैसे महात्मा गांधी, बरनर मैकफेडन, श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती आदि के पठनीय लेख हैं। हिन्दुस्तान के प्राकृतिक चिकित्सकों के पते देकर एक उपयोगी कार्य किया गया है।"

'Leader', Allahabad

"The Special January number is sumptuously got-up and contains a number of useful informative and thought-provoking articles......well written and require a careful perusal. Needless to say, the highly educative value of the monthly is obvious and commendable and we have no doubt adout its success in the world of journalism."

विशेषांक का मूल्य १) : वार्षिक चन्दा, ३ आज ही भेजकर इसे प्राप्त कीजिए।

बहुत थोड़ी प्रतियाँ रह गई हैं।

मैनेजर—जीवन-सखा कर्यालय, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका व्यापार

केवल सुन्दर और चित्ताकर्षक

- ब्लाक
- छपाई
- कलेन्डर
- कार्ड बोर्ड बक्स
- लेबिल आदि

पर ही निर्भर है

फोन नं० ६३२७

इसलिये
उपरोक्त सामग्री के
लिये —

मुरारी फ़ाइन आर्ट वर्क्स,

४, दरियागंज देहली

ब्रांच- कटराबड़ियान देहली

को हमेशा याद रखिये

ब्रांच- कसेरट बाजार आगरा

और हमारे

२० वर्ष के अनुभव

से लाभ उठाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी'

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।

(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।

(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है कि 'कहानी' सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं...यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रेमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिये।

श्री जैनेन्द्र—

'...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...'

श्री सुदर्शन—

'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम क़ीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—

'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब—सब विचार से अंक सर्वांग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा—

'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है—अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय—

'कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे बैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई...'

श्री पहाड़ी—

'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी-पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेंगी।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना।

कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २।।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबी जनरल इंश्योरेंस कंपनी लि०

चेयरमेन--सेठ ब्रजमोहन बिड़ला

आयोजित पूँजी—४५,००,०००) रुपये

भुगतान पूँजी--१४,४०,०००) रुपये

ज़िन्दगी, आग, जहाज़ और (मोटर आदि सब) दुर्घटनाओं का बीमा कराने में

सबसे सुरक्षित बीमा कम्पनी

इसमें बीमा कराइए या एजेंसी लीजिए

जहाँ हमारे प्रतिनिधि नहीं हैं, उन शहरों में जीवन-बीमा-विभाग के लिए एजेण्टों की आवश्यकता है

प्रार्थनापत्र भेजिए

↓

जनरल मैनेजरः—

८, रॉयल एक्सचेन्ज प्लेस, कलकत्ता

या

बम्बई, कराची, रामपुर, लाहौर, मद्रास, नई दिल्ली, कानपुर, पटना शाखाओं को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हँस-परिवार' योजना

७५) रु० की पुस्तकें २५) रु० में

युग की प्रतिनिधि : क्रांतिकारी

उपयोगी : सस्ती

[१] भारतीय-पुस्तक-माला
(क) कायाकल्प (३ भाग)
(ख) स्नेह-यज्ञ [१-२-३]

[२] 'हंस' पुस्तकें
(क) मा [भाग १-२-३]
(ख) गाड़ीवानों का कटरा [भाग ३]

[३] गल्प-संसार-माला
१० प्रमुख प्रान्तीय भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ कहानी-संग्रह।

[४] प्रगतिशील पुस्तकें
(क) नया हिन्दी-साहित्य : एक दृष्टि और पाँच अन्य पुस्तकें

[५] नवसृजन ग्रंथावली
(क) शोभा : ले० इन्द्र वसावड़ा
(ख) संजीवनी : ले० 'सोपान'
(ग) प्रायश्चित्त [भाग १-२] : ले० सोपान

[६] जाग्रत-महिला-साहित्य
(क) पिकनिक : लेखिका—कमलादेवी चौधरी
(ख) पिया : लेखिका—उषादेवी मित्रा
(ग) कौमुदी : लेखिका—शिवरानी देवी

[७] आज की किताब
(क) कँटीले तार [भाग १-२]
(ख) जाई-जुई और ९ अन्य पुस्तकें

[८] 'हंस' मासिक १२ अंक

[९] 'कहानी' मासिक के १२ अंक

सदस्य बनिए

इसके साथ हम जिन प्रवृत्तियों का संक्षिप्त विवरण दे रहे हैं उनका कुल मूल्य रु० ३३-१४-० होता है। पर हम अपने बहुत-से कृपालु ग्राहकों तथा विशेषतया सार्वजनिक संस्थाओं की सुविधा के लिए यह चाहते हैं कि इन प्रवृत्तियों की मात्रा २५ रु० में दें। इसमें हमें आज की मँहगी के ज़माने में कितनी हानि उठानी पड़ेगी, यह हमारे दयालु सहायकगण समझ ही सकते हैं स्मरण रहे कि अंग्रेज़ी अथवा किसी दूसरी भाषा में मूल पुस्तक का जो मूल्य है, हंस-परिवार योजनान्तर्गत उस अनुदित पुस्तक को हम तिहाई मूल्य में दे रहे हैं। हमने हिसाब लगाकर देखा है कि हम ७५) की पाठ्य-सामग्री २५) में दे रहे हैं। यह संस्था तो सेवा के लिये ही खड़ी है। इन नौ प्रवृत्तियों के ग्राहक बननेवालों को हम 'हंस-परिवार' का एक सदस्य मान लेंगे और उनकी सूची आदि भी समय-समय पर प्रकाशित करेंगे।

इस मूल्य में निःशुल्क बारह महीने तक दो मासिक हर महीने मिलते रहेंगे और एक वर्ष में छोटी-बड़ी कुल मिलाकर ४७ पुस्तकें मिलेंगी जिनकी पृष्ठ संख्या कुल जोड़कर १०,००० के लगभग होती है; अर्थात् पत्रिका के पृष्ठों और सामग्री को छोड़कर २५) रु० में १००० पृष्ठ मिलते हैं। इससे सस्ती योजना भारत की किसी प्रान्तीय भाषा में तो क्या, अंग्रेज़ी में भी नहीं है। यह योजना बेजोड़ है। निस्सन्देह।

इन पुस्तकों में विविधता कितनी है, इसका परिचय नीचे लिखे परिचय से मिल जायगा।

[१] १२०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रमुख भाषाओं के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद। [२] १२०० पृष्ठों में संसार के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों का अनुवाद। [३] २४०० पृष्ठों में भारत की सभी प्रान्तीय भाषाओं से सुन्दरतम कहानियों का अनुवाद, जिससे आप भारतीय साहित्य की सम्पूर्ण गतिविधि से परिचित हो जाते हैं। [४] प्रगतिशील दृष्टिकोण से लिखे निबन्धों, कहानियों और कविताओं के ६ संग्रह। १००० पृष्ठ की उत्तम पाठ्य-सामग्री आपको देंगे। [५] गुजराती साहित्य के सर्वश्रेष्ठ तीन उपन्यासों का अनुवाद, ९०० पृष्ठों में उचित किया गया है। [६] महिलाओं के लिए उन्हीं के दृष्टिकोण से लिखे उपन्यासों और कहानियों के तीन ग्रन्थ-रत्न। ये आपके परिवार में पत्नी तथा माँ-बहन के लिए स्वास्थ्यकर मानसिक भोजन प्रदान करेंगे। [७] 'आज की किताब' के अन्तर्गत एक वर्ष में आपको १२ किताबें मिलेंगी जिनमें आज की समस्याओं का सुझाव रहेगा। अधिकांश तो ये छोटे-छोटे उपन्यास होंगे जो आपको अपने यथार्थवाद से चौंका देंगे।

सरस्वती-प्रेस, बनारस : इन्दौर : लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिरला जूट मेनुफैक्चरिंग

कम्पनी लिमिटेड के

अत्यन्त सुन्दर, मज़बूत और सस्ते

जूट के बने गलीचे, दरियां और आसन

प्रत्येक साइज़ में सभी हमारी दुकानों पर मिलते हैं

और विशेष रूप में

१ खन्ना इन्डस्ट्रीज़, बनारस सिटी
२ जेठमल भोजराज, दार्जिलिंग
३ एम. डी. जिन्दल, एन्ड सन्स,
दुकान नं० २० मरीना होटल, नई दिल्ली
४ नौर्दर्न ट्रेडिंग कम्पनी लाहौर
५ नॉवेल्टी स्टोर्स, अमृतसर
६ पंजाबी ब्रदर्स, लुधियाना

(सब एजेन्ट)

तथा पंजाब के बड़े-बड़े सभी शहरों में

और

बंगाल स्टोर्स, लिमिटेड

नं० ८ ए. चौरंगी प्लेस (टेलीफोन नं० ३९३३) कलकत्ता

में

भिन्न-भिन्न प्रकार के मनोहर डिज़ाइन, आपकी इच्छानुसार आपकी आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं।

टेलीफोन नं० ५६५

बिरला जूट मेनुफैक्चरिंग कम्पनी लिमिटेड

नं० ८ रायल एक्सचेञ्ज प्लेस, कलकत्ता

टेलीग्राम 'जूट वीवर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालोपयोगी इतिहास-माला

उथल-पुथल के इस ज़माने में अने देश के भावी नागरिकों को संसार के उलट-फेर से परिचित कराने के लिये **'बालोपयोगी संसार का संक्षिप्त इतिहास'** ३७ खंडों में निकालने की योजना है। पुस्तकें सरस और रोचक ढंग से लिखी गयी हैं कि इन्हें ऐतिहासिक जानकर नीरस और उलझनदार न समझें। कहानी के ढंग लिखी पुस्तकें सब सचित्र हैं। ज्ञान का भंडार **मूल्य प्रत्येक का १)**

प्रकाशित—**वैदिक भारत, पौराणिक भारत रामायण, महाभारत, अमेरिका, ब्रह्मदेश और बौद्ध भारत।**

प्रेस में—**तुर्की भारत, मुगल भारत, राजस्थान, दक्षिणापथ (द्रविड़ों का इतिहास) सिख जाति और महाराष्ट्र** विशेष जानकारी के लिये विवरण पत्र मँगाइए।

बिहार, युक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त और बड़ौदा में शिक्षा-विभाग स्वीकृत

किशोर

विद्यार्थियों को लोकप्रिय और ज्ञानवर्द्धक पठन-सामग्री देनेवाला अपने ढंग का अकेला सचित्र मासिक।

'किशोर' विज्ञान, इतिहास की प्राचीन संस्कृति, साहित्य, व्यायाम और शिक्षा आदि के सम्बन्ध में किशोरों की ज्ञान-पिपासा शान्त करता है।

अपने पाठकों को मानव-जीवनक्रम, दुनिया के इतिहास, विज्ञान के शोधकों और साहसिकों के रोमांचक प्रसंगों का परिचय कराता है।

प्रेरक कवितायें, प्रकृति का सजीव वर्णन, यात्रा-विषयक लेख 'किशोर' की विशेषतायें हैं।

वार्षिक ३) : प्रत्येक ।~)

अप्रेल का अंक 'उपकथांक' है।

इस विशेषांक का मूल्य ।।~)

हमारा साहित्यिक प्रकाशन

भारतीय ईश्वरवाद	पांडेय रामावतार शर्मा	३)
विहार-दर्पण	गदाधर प्रसाद अंबष्ट	५)
विहार के दर्शनीय स्थान	,, ,, ,,	१।।)
प्रजातन्त्र	बा० रा० मोदक	१।।)
कलापी	आरसीप्रसाद सिंह	२)
रिमझिम	हंसकुमार तिवारी	१)
हमारे साहित्य-निर्माता	शांतिप्रिय द्विवेदी	१)
साहित्यिकी	,, ,,	१।।)
जीवन-यात्रा	,, ,,	।।।~)
रामचरित चिंतामणि	रामचरित उपाध्याय	२)
पद्य-प्रमोद	हरिऔध	।।।)
हिन्दी मुहावरे	रामदहिन मिश्र	२।)
हिंदुस्तानी भाषा कोष	मिश्र और अंबष्ट	१।)
नवजीवन	राजा राधिकारमण प्र० सिंह	।।)
उद्भ्रांत प्रेम	चन्द्रशेखर उपाध्याय	।।।)
मेरे यूरोप के अनुभव	डा० राजेन्द्रप्रसाद	।~)
सम्मोहन विद्या	पी० सी० सरकार	।।।)
लाल चीन	रामवृक्ष बेनीपुरी	२)
स्टालिन	रामइक़बालसिंह	२)
खिलौना घर	हेनरिक इसेन	।।।)
मज़दूरों की छाती पर	के० पी० झा	२)
भाई-बहन	मोहनलाल महता	१)
रजकण	,, ,,	।।)
विभेद	राधाकृष्ण प्रसाद	।।।)
भूली हुई कहानियाँ	सरयू पंडा गौड़	१।।)
पुण्य फल	व्यथित हृदय	।।)
तुलसी-साहित्य	देवदत्त त्रिपाठी	।।)
शकुन्तला	राजा लक्ष्मणसिंह	।।।)
जीवन-ज्योति	प्रफुल्लचन्द्र ओझा 'मुक्त'	३)
विमान	गिरधारीलाल शर्मा	१।।)
ग्राम्य-पंचायत	वि० ग० वझे	।।~)
सन्त-साहित्य	भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'	१।।।)

बाल-शिक्षा-समिति और ग्रंथमाला-कार्यालय, बाँकीपुर (पटना)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

‘सबकी बोली’

सम्पादक—काका कालेलकर

[यह मासिक पत्रिका हर महीने की १५वीं तारीख़ को निकलती है।]

अिसमें आहिस्ता आहिस्ता हिन्दुस्तान के सभी प्रान्तों की सांहित्यिक और भाषा-विषयक बातें प्रकाशित हुआ करेंगी।

अिसका मुख्य अुद्देश्य है :—

हिन्दुस्तान की तमाम भाषाओं का आपस में हार्दिक संगठन करना।

भारतमाताको पहचानके लिये और अुसकी सेवा करनेकी शक्ति प्राप्त करनेकी लिये जिन बातोंकी ज़रूरत होगी, अुन सभी विषयोंकी चर्चा ‘सबकी बोली’ में हुआ करेगी।

अिसके ‘साहित्य-सत्कार-विभागमें राष्ट्रभाषा और प्रान्तीय भाषाओंके सहयोग से राष्ट्रकी अुन्नति करनेवाले सेवकों की विचारधारा का परिचय तथा अुनके साहित्यकी समालोचना रहा करेगी।

अिसमें अेक खास विशेषता यह होगी—

पारिभाषिक शब्द-चर्चा, कहानी, प्रवास, विशिष्ट व्यक्तियोंके शब्द-चित्र राष्ट्रभाषा-आन्दोलन सम्बन्धी व विद्यार्थियोंके लाभ के नियमित लेख।

वर्धा-राष्ट्रभाषा-प्रचार समिति भी अपनी सभी ज़रूरी सूचनाअें अिसमें प्रकाशित करती हैं।

ख़ास सूचना :—

राष्ट्रभाषा-प्रचार परीक्षाओंमें बैठनेवाले विद्यार्थी अपनी चालू क्रम-संख्या बतलाकर, १ रुपया वार्षिक चन्दा देकर, अेक वर्ष के लिये ‘बोली’ पा सकते हैं। सर्व-साधारणसे वार्षिक चंदा रु० १-४-० मनीऑर्डरसे ही लिया जायगा। हम वी० पी० नहीं भेजते। पत्र-व्यवहार करते समय अपना नाम और पता साफ़-साफ़ नागरी हर्फों में लिखने की कृपा करें। फुटकर संख्याका तथा पुराने अङ्कका मूल्य दो आना। डाकख़र्च पुरानी संख्याके लिए प्रति अंक ‌)॥ और नये अङ्कके लिये ‌)। अङ्क की क़ीमतके साथ अवश्य आ जाना चाहिये।

पता—व्यवस्थापक,

सबकी बोली, वर्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक प्रकाशित हो चुका है : [परीक्षाङ्क]
और अब दूसरा छप रहा है : [शुक्ल-अङ्क]

दो और भी छपने बाकी हैं

साहित्य-संदेश का साहस

छः महीने में चार विशेषाङ्क

शुक्ल-अङ्क १ मई को प्रकाशित हो रहा है

शुक्ल-अङ्क की रूप-रेखा :—

यह लगभग १२५ पृष्ठ का होगा और नये इलाहाबादी टाइप में सचित्र छपेगा। यह अंक तीन खण्ड में विभाजित है। प्रथम खण्ड में शुक्लजी का जीवन, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का विवेचन, उत्तम संस्मरण और लब्धप्रतिष्ठ साहित्यिकों के इन्टरव्यू होंगे। इस अंक के लेखकों में सर्वश्री० श्यामसुन्दरदास, श्री अयोध्यासिंहजी उपाध्याय, सूर्यकान्त निराला, नलिनीमोहन सान्याल, सोहनलाल द्विवेदी, शिवमंगलसिंह 'सुमन' और आचार्य के ज्येष्ठ पुत्र श्री० केशवचन्द्र शुक्ल पी० सी० एस० हैं। दूसरे खण्ड में आचार्य के साहित्यिक कार्य की विभिन्न दिशाओं और उसके द्वारा पड़े हुए हिन्दी पर प्रभाव की विस्तृत आलोचना रहेगी। इस प्रकार के लगभग २० लेख हैं जो हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ समालोचकों द्वारा अधिकार पूर्वक लिखाये गये हैं। कुछ नाम इस प्रकार हैं—

श्री हजारीप्रसाद जी द्विवेदी, श्रीशान्तिप्रिय द्विवेदी, श्री नन्ददुलारे वाजपेयी, श्री जैनेन्द्र, श्री शिवपूजनसहाय जी, वासुदेवशरण अग्रवाल एम० ए०, श्री सत्येन्द्रजी, प्रो० नगेन्द्रजी, प्रो० रामविलास शर्मा, श्री० गुलाबराय एम० ए०, कन्हैयालाल सहल एम० ए०, श्री प्रभाकर माचवे एम० ए०, श्री ललिताप्रसाद शुक्ल एम० ए० आदि।

तीसरा खंड व्यक्तिगत आभार है, उसे पत्रों और लेखों के रूप में दिया जा रहा है।

इन सभी अंकों के दाम लागत के अनुसार फुटकर लेनेवालों को अधिक देने पड़ेंगे। इससे अच्छा यह है कि स्थायी ग्राहक बना जाय और ३) पेशगी भेज दिये जायँ। विद्यार्थी-समाज तो २) में ही वर्ष भर ग्राहक रह सकता है।

साधारण अंक का नमूना मुफ्त मँगाकर देख लीजिए।

पत्र-व्यवहार का पता

साहित्य सन्देश कार्यालय, आगरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

[हिन्दी की श्रेष्ठ सार्वजनिक एवं राष्ट्रीय प्रकाशन-संस्था]

कनाट सर्कस, नई दिल्ली

शाखाएँ—दिल्ली :: लखनऊ :: इन्दौर

मई : १९४१

आशीर्वाद

१. **महात्मा गांधी**—"मैं इस सुन्दर सस्ते और उपयोगी हिन्दी साहित्य के प्रकाशन के उद्योग का स्वागत करता हूँ। ×× मैं कुल खादी भंडारों में इन्हें बिक्री के लिए रखनेकी सिफारिश करता हूँ।"

२. **पण्डित मदनमोहन मालवीय**—"मण्डल ने हिन्दी में उच्च कोटि की सस्ती पुस्तकें निकालकर हिन्दी की बड़ी सेवा की है। सर्व-साधारण को इस संस्था की पुस्तकें लेकर इसकी सहायता करनी चाहिए।"

३. **डॉ० राजेन्द्रप्रसाद**—"मण्डल ने बहुत-सी पुस्तकें प्रकाशित की हैं। इनमें कई पुस्तकें लोकमान्य हो गयी हैं। वे साधारण जनता के के लिए शिक्षाप्रद होती हैं। दाम भी उनका ऐसा होता है कि जन-साधारण उन्हें आसानी से मोल ले सकते हैं। आशा है कि जनता प्रकाशकों का उत्साह इसी प्रकार बढ़ाती जायगी।"

४. **पण्डित जवाहरलाल नेहरू**—"मण्डल बहुत दिनों से हिन्दी-साहित्य में सस्ती और अच्छी किताबों के छापने में और नये विचारों के फैलाने में बहुत अच्छा काम कर रहा है। मेरी भी कई किताबें उन्होंने छापी हैं जिसके लिए मैं उनका मशकूर हूँ। मैं आशा करता हूँ कि वह अपने काम में सफलता पाते जावेंगे।"

५. **आचार्य नरेन्द्रदेव**—"सस्ता साहित्य मण्डल आज १५ वर्षों से हिन्दी-साहित्य की अच्छी सेवा कर रहा है। 'मण्डल' का सदा यह उद्योग रहा है कि अच्छी-से-अच्छी पुस्तकें पाठकों को सस्ते-से-सस्ते दामों में दी जायँ। 'मण्डल' पुस्तकों के चुनाव में सतर्क रहता है और इस कारण उसके द्वारा जो साहित्य प्रकाशित हुआ है, उसका उद्देश्य जनता में सुरुचि उत्पन्न करना है। आशा है कि हिन्दी-संसार 'मण्डल' की सेवाओं का उचित आदर करेगा।"

अपने शहर के प्रधान पुस्तक-विक्रेता

तथा

चर्खासंघ के 'खादीभण्डारों' और 'गांधी आश्रमों' से ये पुस्तकें लीजिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-साहित्य

[जीवन और साहित्य का समन्वयकार मासिक-पत्र]

संपादक—हरिभाऊ उपाध्याय

यह क्या है ? कैसा है ? और क्यों है ?

यह इन सम्मतियों से आप जान सकते हैं—

"मानता हूँ यह लोकोपयोगी होगा।" विनोबा

"× × आशा हुई कि ऐसा विलक्षण पत्र जीवित रह सकेगा।......" अमरनाथ झा

"अस्वाभाविक परिस्थितियों के कारण जीवन से बिदककर भागते हुए साहित्य की जीवन से गँठजोड़ी करने में 'जीवन-साहित्य' सफल होगा।" पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल

"जीवन के पहलुओं पर विचार किया गया है। लेखों से स्पष्ट है कि साहित्य 'सुन्दर' होते हुए 'शिव' भी हो सकता है।" बाबूराम सकसेना

"हिन्दी-साहित्य के निर्माण और प्रकाशन की इतनी सुथरी और निष्पक्ष विवेचना मैं किसी अन्य पत्र में नहीं देख सका।" रामकुमार वर्म्मा

"अपने पत्र के द्वारा जीवन की जिस व्याख्या को देने का आपका उद्देश्य है, उससे मेरा किसी प्रकार का विरोध नहीं है। मैं आपके पत्र की हार्दिक सफलता चाहता हूँ।" सुमित्रानन्दन पन्त

"मैं इस नये पत्र का हृदय से स्वागत करता हूँ। हिन्दी में विचारपूर्ण साहित्यिक पत्रिका की कमी मैं बहुत दिनों से अनुभव करता आया हूँ।" (राजकुमार) रघुबीरसिंह

"जिस सात्विक दृष्टि को इसने अपनाया है। उसके प्रसार की बहुत आवश्यकता है।" सियारामशरण गुप्त

"विषय की दृष्टि से अद्भुत है। एक-एक शब्द सजीव।.........मेरे लिए तो यह पत्रिका अमृत है।" श्रीनाथसिंह

"अपने ढंग का हिन्दी-साहित्य में यह अकेला पत्र निकला है, इसमें सन्देह नहीं।" —'देशदूत'

"'जीवन-साहित्य' मासिक पत्र का प्रकाशन मण्डल की प्रवृत्तियों में एक शुभ वृद्धि है।" —'नेशनल हेरल्ड'

"राष्ट्र के जीवन-निर्माण में कैसा साहित्य वाञ्छनीय है, इसकी रूपरेखा हमें 'जी०-सा०' के अंकों में सहज ही देखने को मिल सकेगी।" —'साहित्य-संदेश'

"पत्रिका का उद्देश्य ऐसे साहित्य की सृष्टि करना है, जो जीवनस्पर्शी हो, जीवन के विकास और उसकी पूर्णता का साधक हो।" —'संघर्ष'

"ऊँची कोटि और उच्चादर्श के कारण पत्र हिन्दी में अपना विशेष स्थान बना लेगा।" —'हिन्दुस्तान टाइम्स'

"पत्र तेजस्वी और गम्भीर है। × × इसने शीघ्र ही साहित्य-जगत् में अपने लिए सम्माननीय स्थान बना लिया है।" —'आरती'

इसमें जीवन की कसौटी पर कसे हुए विशेष अध्ययन, चिन्तन, मनन व अनुभव से युक्त लेख रहते हैं।" —'दीपक'

इसमें 'मण्डल' की तथा दूसरी पुस्तकों के उत्तमोत्तम समाचार रहते हैं।

इसमें छपा विज्ञापन प्रतिमास हज़ारों विचारशील और उपयोगी हाथों में जाता है।

वार्षिक मूल्य २) :: 'मण्डल' के ग्राहकों से १)

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

दिल्ली : लखनऊ : इन्दौर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मण्डल' के बारे में

भारत का पत्र-संसार क्या सोचता है ?

" 'मण्डल'ने हिन्दी पाठकों की निस्सन्देह बड़ी सेवा की है ।" —यंग इंडिया

"सस्ता साहित्य मण्डल हिन्दी में सस्ती किताबें प्रकाशित करके हिन्दी-साहित्य की सराहनीय सेवा करने की ख्याति प्राप्त कर चुका है ।" —नवशक्ति (पटना)

"रोचक और अच्छे साहित्य को बहुत कम दामों में देकर उसे लोकप्रिय बनाने में सस्ता-साहित्य मण्डल प्रसिद्ध हो चुका है ।" —माडर्न रिव्यू (कलकत्ता)

"सस्ता साहित्य मण्डल (नई दिल्ली) हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र में ऊँची कोटि के हिन्दी-ग्रंथ कम दामों में सुलभ करने के रूप में सेवा करने के लिए प्रसिद्ध हो चुका है ।"—'हिन्दुस्तान टाइम्स' (दिल्ली)

" थोड़े दाम में जीवनदायक, राष्ट्रीय साहित्य सुलभ करने के लिए सस्ता साहित्य मण्डल के संचालकगण हमारे बधाई के पात्र हैं । हिन्दी-साहित्य-सेवा में मंडल सदैव गौरवपूर्ण स्थान का अधिकारी है । सस्तेपन तथा उत्कृष्टता के लिए मण्डल प्रसिद्ध है ।" —सम्मेलन-पत्रिका (प्रयाग)

"सस्ता साहित्य मण्डल ने अपनी समस्त प्रवृत्तियों से, जिनकी विशेषता एक आदर्श स्थापित करना और कल्याणकारी कार्य करना रही है, यश कमाया है । ऊँचे दर्जे की पुस्तकें प्रकाशित करके उसने हिन्दी की बहुमूल्य सेवा की है । आज जब कि हिन्दी में हानिकर प्रकाशनों की बाढ़ आ रही है, तब सस्ता साहित्य मण्डल की सेवाओं को देखकर बड़ी राहत मिलती है ।"—नेशनल हेरल्ड (लखनऊ)

"पत्र के प्रकाशकों का कार्य गौरवशाली रहा है । सामाजिक चेतना उत्पन्न करने और हमारे विचारों की कोटि और रुचि को ऊँचा उठाने में उनकी देन अमूल्य रही है ।" —इंडिपेंडेंट (नागपुर)

"सस्ता साहित्य मण्डल ने गत १५ वर्षों में स्फूर्तिदायक, मननशील, सस्ता साहित्य हिन्दी-संसार को भेंट कर भारी सेवा की है ।" —दीपक (अबोहर)

"सस्ता साहित्य मण्डल गत १५ बरस से हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि में संलग्न है । मंडल द्वारा प्रकाशित साहित्य गंभीर एवं उच्च कोटि का है और मण्डल जब भी कोई प्रकाशन करता है, तो उसकी उच्चता में संशय नहीं हो सकता ।" — हिन्दी मिलाप (लाहौर)

"सस्ता साहित्य मण्डल की साहित्य-सेवा आज प्रत्येक देशसेवी या साहित्यिक के हृदय में अंकित है । अच्छे से अच्छा, सामयिक एवं उपयोगी साहित्य देने में सस्ता साहित्य मंडल-जैसी शायद ही कोई संस्था हिन्दी की हो, यह निस्संकोच कहा जायगा ।" —बालक (लहेरियासराय)

"आज दिल्ली का सस्ता साहित्य मण्डल अपने प्रकाशन के कार्य में सबसे खरा उतर रहा है । नवीन से नवीन विचार-धारा इस मण्डल के प्रकाशनों में मिलती है ।" —वर्तमान (कानपुर)

"सस्ता साहित्य मंडल ने लागत मात्र मूल्य पर राष्ट्रीय, ओजपूर्ण, बलप्रद और सुरुचिपूर्ण ग्रन्थ हिन्दी-जगत् की भेंट करके बहुत प्रसिद्धि हासिल कर ली है ।" —प्रजा-सेवक (जोधपुर)

"यह स० सा० मण्डल के प्रकाशनों की मुख्य विशेषताओं में से एक है कि मण्डल अपने प्रकाशनों से पैसा नहीं कमाना चाहता बल्कि आम तौर पर हिन्दी भाषी जनता की सच्ची सेवा करना और खास तौर पर हिन्दी-साहित्य की भी वृद्धि करना ही उसका उद्देश्य है ।" —सर्च लाइट (पटना)

"सस्ता साहित्य मण्डल हिन्दी प्रकाशन-संसार में अपना सानी नहीं रखता । वह उत्तम ग्रंथों को सस्ते मूल्य पर प्रकाशित कर हिन्दी-साहित्य की एक महान् सेवा कर रहा है ।"—प्रताप (कानपुर)

"(दिल्ली का) सस्ता साहित्य मण्डल सर्व-सुलभ राष्ट्रीय साहित्य के निर्माण के लिए ख्याति प्राप्त कर चुका है । राष्ट्र के उत्थान और पुनर्निर्माण का लक्ष्य अपने सामने रखकर उसने साहित्य के प्रकाशन का कार्य किया है । भारत का निर्माण करने के महान् कार्य में मण्डल अपना हिस्सा सफलता के साथ अदा करने में समर्थ हुआ है ।" —हिन्दुस्तान (दिल्ली)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Regd No L. 4671

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मण्डल' के नवीन प्रकाशन

जनवरी १९४१ से अप्रैल १९४१ तक

प्रकाशित

इन पुस्तकों की सूचना इसी अंक में ग्राहकों को जारही है। ग्राहकों से प्रार्थना है कि पुस्तकें शीघ्र ही मँगा लेने की कृपा करें, क्योंकि कई पुस्तकों की बहुत थोड़ी प्रतियाँ बची हैं।

१. **लड़खड़ाती दुनिया**—पंडित जवाहरलाल नेहरू के लिखे अंतर्राष्ट्रीय राजनीति और समस्या पर लेख। दाम ।।)

२. **सेवाधर्म : सेवामार्ग**—पंडित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल एम. ए. एम. एम. एल. ए की लिखी सेवा के धर्म और सेवा किन मार्गों से की जानी चाहिए, इसपर सुन्दर पुस्तक। दाम १)

३. **दुनिया की शासन-प्रणालियाँ और वर्तमान यूरोपीय युद्ध**। कलतक संसार के प्रधान देशों में किस प्रकार की शासन प्रणालियाँ प्रचलित थीं और आज वे किस प्रकार तहस-नहस हो रही हैं इस सबका इसमें करुण, बीभत्स और ज्ञानप्रद दर्शन मिलेगा। दाम १।)

४. **यूरोपीय युद्ध और भारत (२)**—इसमें वर्तमान यूरोपीय युद्ध और भारत के राजनैतिक संकट पर महात्माजी के 'हरिजन' में प्रकाशित लेखों में से चुने हुए प्रधान अंश लिये हैं और जवाहरलाल-जी के हाल ही प्रकाशित Parting of the ways का अनुवाद दिया गया है। दाम ।)

५. **देशी नरेशों का दरजा**—महात्माजी के प्रा० सेक्रेटरी श्री प्यारेलाल के लिखे देशी नरेशों के दरजे और उनके अधिकार तथा अंग्रेज़ों के साथ हुई संधियों के बारे में अध्ययन और गवेषणापूर्ण लेखों का यह संग्रह है। इसकी भूमिका महात्मा गांधी ने लिखी है। दाम ।)

६. **डायरी के पन्ने**—श्री घनश्यामदास बिड़ला की 'बापू' के बाद की मौलिक और चमत्कारपूर्ण पुस्तक। दूसरी गोलमेज़ परिषद् में गांधीजी के साथ के तथा परिषद् के संस्मरण। नया सस्ता संस्करण। दाम ।।।) १)

७. **बिखरे विचार**—श्री घनश्यामदासजी के समय-समय पर लिखे और पत्र-पत्रिकाओं में छपे सुन्दर और विचारपूर्ण लेखों का संग्रह। दाम १।।) २)

८. **प्रलय-वीणा**—श्री सुधीन्द्र एम. ए., साहित्यरत्न की नवीन और भावपूर्ण युगसंदेश-वाहिनी कविताओं का संग्रह। दाम १)

९. **सोने की माया**—श्री किशोरलाल घ० मशरूवाला का लिखा रुपये के चलन और विनिमय को समझानेवाला रोचक रूपक। दाम ≡)

१०. **एक सत्यवीर की कथा**—महात्मा गांधी का लिखा यूनान के सुविख्यात महात्मा सुकरात के मुक़दमे और उनकी सफ़ाई का वर्णन। दाम ≡)

इनमें से कुछ पुस्तकें इस महीने की ७ ता० तक तैयार होंगी। अतः इनका ७ मई के बाद ही आर्डर देने की कृपा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मार्तण्ड उपाध्याय द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नई दिल्ली, में छपकर वहींसे मार्तण्ड उपाध्याय

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमसो मा ज्योतिर्गमय

जीवन साहित्य

१ : अंक १२ सम्पादक जुलाई : १९४१

हरिभाऊ उपाध्याय

साहित्य

किसी जाति के उत्कर्ष और अपकर्ष का पता उसके साहित्य से ही लगता हैं। भारतवर्ष के गुप्तकाल का साहित्य लीजिए और अठारहवीं शताब्दी का—दोनों में कितना विशाल अन्तर है। एक में वह विराट जीवनी-शक्ति है जो आज डेढ़ हजार वर्ष बाद भी हमारी रहनुमाई कर रही है और दूसरी की नाड़ी में स्पन्दन भी नहीं—न राग, न विराग, न प्रेम, न द्वेष। रूस का साहित्य आज समुद्र और पर्वतों को अनायास ही लाँघकर संसार के गले का हार बन गया, क्योंकि रूसी जाति में आज जीवन है।

मनुष्य का स्वभाव ही है सुन्दर देखने का। लेकिन सुन्दरता को सदा-सर्वदा तलाश करने की शक्ति साधना द्वारा प्राप्त होती है। उच्छृंखलता और सौन्दर्य-बोध में अन्तर है। सौन्दर्य-प्रेम में संयम होता है, उच्छृंखलता नहीं। इस विषय में भी साहित्य ही हमारा मार्गदर्शक हो सकता है।

मनुष्य कुछ जटिलताओं में आ फँसा है कि उसके भावों का ठीक-ठीक पहचानना सब समय सुकर नहीं होता। ऐसी अवस्था में हमें संसार के मनीषियों की चिन्ता का सहारा लेना पड़ता है। इस दिशा में साहित्य के अलावा दूसरा उपाय नहीं है।

मनुष्य की सर्वोत्तम कृति साहित्य है और उसे मनुष्य-पद का अधिकारी बने रहने के लिए साहित्य ही एक मात्र सहारा है। यहाँ 'साहित्य' से हमारा मतलब सब तरह की उसकी चिन्ताधारा से है।

—हजारीप्रसाद द्विवेदी—

सस्ता साहित्य मण्डल

कनाट सर्कस नई दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

१. व्रत (कविता)— ४८५
[श्री सुधीन्द्र, एम० ए०]

२. कार्यकारी योजना— ४८६
[श्री हरिभाऊ उपाध्याय]

३. कमाई—[श्री जैनेन्द्रकुमार] ४८७

४. श्लील और अश्लील— ४८८
[रायबहादुर सरदार श्री माधव विनायक किबे]

५. स्वगत—[श्री हरिभाऊ उपाध्याय] ४८९

६. प्रचारक से—[श्री वियोगी हरि] ४९०

७. लेखक बनाम प्रकाशक— ४९२
[श्री जैनेन्द्रकुमार]

८. काव्य-कला — ४९७
[श्री सद्गुरुशरण अवस्थी, एम० ए०]

९. भाषा का सवाल— ४९९
[श्री शांतिप्रसाद वर्मा, एम० ए०]

१०. जीवन का उषाकाल— ५०२
[श्री प्रभुदास गांधी]

११. व्यक्ति और साहित्य— ५०४
[श्री प्रयागनारायण त्रिपाठी]

१२. हमारे पाठक— ५०६
[श्री ओंकारलाल जोशी]

१३. हिन्दी-प्रचारिणी सभा, बरेली— ५०
[श्री शंकरसहाय सक्सेना, एम०ए०, बी० कॉम]

१४. प्रस्तुत प्रश्न— ५१
विज्ञापन-नीति [एक पाठक]
अनुवाद के नामों में भारतीय करण (श्री रवींद्र)
एक कसौटी [श्री रवीन्द्र]

१५. कसौटी पर— ५१
'साहित्य-सन्देश' का शुक्ल-अंक'; 'साधना' का 'परिचयांक'; 'कौमुदी', 'निर्झर'; हिन्दी-कविता का विकास सहोदरा; गत्ते का काम; स्वास्थ्य के लिए शाक-तरकारियाँ

१६. समालोचनार्थ प्राप्त ५१६

१७. कृष्ण-मन्दिर में— ५१७

१८. सैर-सपाटा— ५१८

१९. क्या और कैसे — ५१९
आशीर्वाद दें; भगवान-भरोसे !; अन्तर्निरीक्षण करेंगे ?; संशयात्मा विनश्यति; कायदेआजम सोचें; गुप्त विवाह; अगले अंक में; लज्जा की बात; 'सत्साहित्य-सेवक-समाज को सहयोग

२०. मण्डल की ओर से— ५२४

दन्तामृत (रजिस्टर्ड)

दाँतों की बीमारियों के लिए अपूर्व स्वदेशी मञ्जन

दाँतों और मसूढ़ों की सब बीमारियों यहाँ तक कि पायोरिया तक के लिए यह मञ्जन इतना गुणकारी सिद्ध हुआ है कि भारत के साधारण श्रेणी से लेकर श्रीमन्त एवम् राजा-महाराजाओं और कौंसिलों के सदस्य तो इसका व्यवहार करते ही हैं, कई अंग्रेज़, जो कि अपने देश की चीजों के सिवा बाहर की बहुत कम चीज़ें इस्तेमाल करते हैं, वे भी अपने देश के टूथ-पाउडर एवम् पेस्टों से इससे अधिक लाभ पाकर इसके भक्त बन गये हैं।

जिसने एक बार इस मञ्जन का इस्तेमाल किया, वही सदा के लिए इसका भक्त बन गया। मूल्य टीन की डिबिया ।≡), बड़ी शीशी ।=), छोटी शीशी ।)

श्रीयुत. एम. के. आचार्य, एम. एल. ए. (मद्रास)—"आपका दंत-मंजन तो **मैंने अपनी दंत-पीड़ा के लिए गत पाँच वर्षों में व्यवहृत देशी-विदेशी सब मंजनों से श्रेष्ठतर पाया।** मंजन दाँतों, मसूड़ों और तालु के घावों पर जादू का-सा असर दिखलाता है।"

श्री. एम० एस० बरदाचार्य एडवोकेट (मद्रास हाईकोर्ट)—"दो वर्ष पूर्व मुझे दंत-पीड़ा हुई थी जो बढ़ती ही गयी और मसूड़ों में घाव हो गये; **परन्तु आपके मंजन से अब मेरे मसूड़े स्वस्थ हैं और दाँत में पीड़ा नहीं होती।** मैं तो कहूँगा कि मेरे व्यवहृत दंत-मंजनों में सर्वश्रेष्ठ आपका दंतामृत ही है।"

मिलने का पता—**मैनेजर, 'राजस्थान आयुर्वेदिक औषधालय,' अजमेर**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

[हिन्दी की श्रेष्ठ राष्ट्रीय प्रकाशन-संस्था]

शाखायें
दिल्ली, लखनऊ, इन्दौर

कनॉट सर्कस; नईदिल्ली
१ जुलाई, १९४१

पुस्तकालयों के लिए खास रियायत

प्रिय महोदय,

आप एक पुस्तकालय के व्यवस्थापक या मंत्री हैं। आपको अपने पाठकों के लिए हमेशा अच्छी और उपयोगी पुस्तकों की ज़रूरत रहती होगी। आपके पाठक हमेशा ही दिलचस्प पुस्तकें नहीं चाहते होंगे—कुछ गंभीर ठोस और मन को ऊँचा उठानेवाला तथा दिल में उत्साह और उमंगें भरनेवाला साहित्य भी माँगते होंगे! ऐसा साहित्य आप कहाँ खोजते हैं? ५०—६० प्रतिशत कमीशन देने वाले हॉकरों और एजेण्टों के पास? निश्चयपूर्वक वे ऊँचे दरजे का अच्छा साहित्य नहीं दे पाते हैं। वहाँतक उनकी पहुँच भी नहीं होती और वह उनको इतने ज्यादा कमीशन में पुसाता भी नहीं। उसके लिए आपको प्रतिष्ठित पुस्तक-विक्रेता या खास उद्देश्य से कार्य करनेवाली किसी प्रकाशन-संस्था के पास जाना पड़ेगा।

ऐसी संस्थाओं तथा पुस्तक-विक्रेताओं में 'सस्ता साहित्य मण्डल को आप प्रथम स्थान पर पा सकते हैं। उत्तर तथा मध्य भारत के तीन प्रधान नगरों में उसकी शाखायें हैं; २–३ शाखायें और खोलने का प्रयत्न चल रहा है। उत्तर तथा मध्य भारत के चर्खा-संघ के कोई ७५ खादी-भण्डारों में 'मण्डल' की पुस्तकें मिलती हैं। 'मण्डल' की दुकानों पर उत्तम और चुना हुआ सब प्रकार का साहित्य मिलता है। 'मण्डल' से अपने पाठकों को नियमित उत्तम साहित्य और विचारों की जानकारी देने के लिए 'जीवन साहित्य' नामक यह पत्र भी निकाला जा रहा है। हम इस पत्र का नमूना और 'मण्डल' का सूचीपत्र आपके लिए भेजते हैं। साथ में एक आर्डर कार्ड भी है। इसे आप भरकर भेज देने की कृपा करें। आपमें से बहुतसे तो शायद मण्डल के ग्राहक हों भी। वे तो पुस्तकें मँगावेंगे ही। पर जो नहीं हैं उनके लिए हम एक खास रिआयत यह करना चाहते हैं कि एकमुश्त १०) की पुस्तकें 'मण्डल' से खरीद लेने पर उनको 'मण्डल' का एक वर्ष तक का स्थायी ग्राहक बना लिया जायगा, तथा 'जीवन-साहित्य' उन्हें एक वर्ष तक मुफ्त में दिया जायेगा। साथ का कार्ड भरकर भेज देने की कृपा करें—

भवदीय
मार्तण्ड उपाध्याय
मन्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

[हिन्दी की श्रेष्ठ सार्वजनिक एवं राष्ट्रीय प्रकाशन-संस्था]

कनॉट सर्कस, नई दिल्ली

शाखाएँ—दिल्ली :: लखनऊ :: इन्दौर :: नागपुर

जुलाई : १९४१

आशीर्वचन

१. **महात्मा गांधी**—"मैं इस सुन्दर सस्ते और उपयोगी हिन्दी साहित्य के प्रकाशन के उद्योग का स्वागत करता हूं। × × मैं कुल खादी भंडारों में इन्हें बिक्री के लिए रखनेकी सिफारिश करता हूँ।"

२. **पण्डित मदनमोहन मालवीय**—"मण्डल ने हिन्दी में उच्च कोटि की सस्ती पुस्तकें निकालकर हिन्दी की बड़ी सेवा की है। सर्व-साधारण को इस संस्था की पुस्तकें लेकर इसकी सहायता करनी चाहिए।"

३. **डॉ० राजेन्द्रप्रसाद**—"मण्डल ने बहुत-सी पुस्तकें प्रकाशित की हैं। इनमें कई पुस्तकें लोकमान्य हो गयी हैं। वे साधारण जनता के के लिए शिक्षाप्रद होती हैं। दाम भी उनका ऐसा होता है कि जन-साधारण उन्हें आसानी से मोल ले सकते हैं। आशा है कि जनता प्रका-शकों का उत्साह इसी प्रकार बढ़ाती जायगी।"

४. **पण्डित जवाहरलाल नेहरू**—"मण्डल बहुत दिनों से हिन्दी-साहित्य में सस्ती और अच्छी किताबों के छापने में और नये विचारों के फैलाने में बहुत अच्छा काम कर रहा है। मेरी भी कई किताबें उन्होंने छापी हैं जिसके लिए में उनका मशकूर हूँ। मैं आशा करता हूँ कि वह अपने काम में सफलता पाते जावेंगे।"

५. **आचार्य नरेन्द्रदेव**—"सस्ता साहित्य मण्डल आज १५ वर्षों से हिन्दी-साहित्य की अच्छी सेवा कर रहा है। 'मण्डल' का सदा यह उद्योग रहा है कि अच्छी-से-अच्छी पुस्तकें पाठकों को सस्ते-से-सस्ते दामों में दी जायँ। 'मण्डल' पुस्तकों के चुनाव में सतर्क रहता है और इस कारण उसके द्वारा जो साहित्य प्रकाशित हुआ है, उसका उद्देश्य जनता में सुरुचि उत्पन्न करना है। आशा है कि हिन्दी-संसार 'मण्डल' की सेवाओं का उचित आदर करेगा।"

अपने शहर के प्रधान पुस्तक-विक्रेता

तथा

चर्खासंघ के 'खादीभण्डारों' और 'गांधी आश्रमों' से ये पुस्तकें लीजिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारा भारत एक स्वर से यह कहता है

कि

" 'मण्डल' ने हिन्दी पाठकों की निस्सन्देह बड़ी सेवा की है।" —यंग इंडिया

"सस्ता साहित्य मण्डल हिन्दी में सस्ती किताबें प्रकाशित करके हिन्दी-साहित्य की सराहनीय सेवा करने की ख्याति प्राप्त कर चुका है।" —नवशक्ति (पटना)

"रोचक और अच्छे साहित्य को बहुत कम दामों में देकर उसे लोकप्रिय बनाने में सस्ता-साहित्य मण्डल प्रसिद्ध हो चुका है।" —माडर्न रिव्यू (कलकत्ता)

"सस्ता साहित्य मण्डल (नई दिल्ली) हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र में ऊँची कोटि के हिन्दी-ग्रंथ कम दामों में सुलभ करने के रूप में सेवा करने के लिए प्रसिद्ध हो चका है।"—'हिन्दुस्तान टाइम्स' (दिल्ली)

" थोड़े दाम में जीवनदायक, राष्ट्रीय साहित्य सुलभ करने के लिए सस्ता साहित्य मण्डल के संचालकगण हमारे बधाई के पात्र हैं। हिन्दी-साहित्य-सेवा में मंडल सदैव गौरवपूर्ण स्थान का अधिकारी है। सस्तेपन तथा उत्कृष्टता के लिए मण्डल प्रसिद्ध है।" —सम्मेलन-पत्रिका (प्रयाग)

"सस्ता साहित्य मण्डल ने अपनी समस्त प्रवृत्तियों से, जिनकी विशेषता एक आदर्श स्थापित करना और कल्याणकारी कार्य करना रही है, यश कमाया है। ऊँचे दर्जे की पुस्तकें प्रकाशित करके उसने हिन्दी की बहुमूल्य सेवा की है। आज जब कि हिन्दी में हानिकर प्रकाशनों की बाढ़ आ रही है, तब सस्ता साहित्य मण्डल की सेवाओं को देखकर बड़ी राहत मिलती है।"—नेशनल हेरल्ड (लखनऊ)

"पत्र के प्रकाशकों का कार्य गौरवशाली रहा है। सामाजिक चेतना उत्पन्न करने और हमारे विचारों की कोटि और रुचि को ऊँचा उठाने में उनकी देन अमूल्य रही है।" —इंडिपेंडेंट (नागपुर)

"सस्ता साहित्य मण्डल ने गत १५ वर्षों में स्फूर्तिदायक, मननशील, सस्ता साहित्य हिन्दी-संसार को भेंट कर भारी सेवा की है।" —दीपक (अबोहर)

"सस्ता साहित्य मण्डल गत १५ वरस से हिन्दी-साहित्य की अभिवृद्धि में संलग्न है। मंडल द्वारा प्रकाशित साहित्य गंभीर एवं उच्च कोटि का है और मण्डल जब भी कोई प्रकाशन करता है, तो उसकी उच्चता में संशय नहीं हो सकता।" — हिन्दी मिलाप (लाहौर)

"सस्ता साहित्य मण्डल की साहित्य-सेवा आज प्रत्येक देशसेवी या साहित्यिक के हृदय में अंकित है। अच्छे से अच्छा, सामयिक एवं उपयोगी साहित्य देने में सस्ता साहित्य मंडल-जैसी शायद ही कोई संस्था हिन्दी की हो, यह निस्संकोच कहा जायगा।" —बालक (लहेरियासराय)

"आज दिल्ली का सस्ता साहित्य मण्डल अपने प्रकाशन के कार्य में सबसे खरा उतर रहा है। नवीन से नवीन विचार-धारा इस मण्डल के प्रकाशनों में मिलती है।" —वर्तमान (कानपुर)

"सस्ता साहित्य मंडल ने लागत मात्र मूल्य पर राष्ट्रीय, ओजपूर्ण, बलप्रद और सुरुचिपूर्ण ग्रन्थ हिन्दी-जगत् की भेंट करके बहुत प्रसिद्धि हासिल कर ली है।" —प्रजा-सेवक (जोधपुर)

"यह स० सा० मण्डल के प्रकाशनों की मुख्य विशेषताओं में से एक है कि मण्डल अपने प्रकाशनों से पैसा नहीं कमाना चाहता बल्कि आम तौर पर हिन्दी भाषी जनता की सच्ची सेवा करना और खास तौर पर हिन्दी-साहित्य की भी वृद्धि करना ही उसका उद्देश्य है।" —सर्च लाइट (पटना)

"सस्ता साहित्य मण्डल हिन्दी प्रकाशन-संसार में अपना सानी नहीं रखता। वह उत्तम ग्रंथों को सस्ते मूल्य पर प्रकाशित कर हिन्दी-साहित्य की एक महान् सेवा कर रहा है।"—प्रताप (कानपुर)

"(दिल्ली का) सस्ता साहित्य मण्डल सर्व-सुलभ राष्ट्रीय साहित्य के निर्माण के लिए ख्याति प्राप्त कर चुका है। राष्ट्र के उत्थान और पुनर्निर्माण का लक्ष्य अपने सामने रखकर उसने साहित्य के प्रकाशन का कार्य किया है। भारत का निर्माण करने के महान् कार्य में मण्डल अपना हिस्सा सफलता के साथ अदा करने में समर्थ हुआ है।" —हिन्दुस्तान (दिल्ली)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल

संक्षिप्त परिचय

१—सस्ता साहित्य मण्डल 'सोसाइटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट' के अनुसार एक सार्वजनिक और रजिस्टर्ड संस्था है।

२—हिन्दी में ऊँचे दरजे का राष्ट्रीय, सामाजिक एवं नैतिक साहित्य सस्ते से सस्ते मूल्य में प्रकाशित करना और इसी प्रकार की पुस्तकों का प्रचार करना इसका उद्देश्य है।

३—उपरोक्त उद्देश्य से सन् १९२५ में अजमेर में सर्वश्री जमनालाल बजाज, घनश्यामदास बिड़ला, हरिभाऊ उपाध्याय, महावीरप्रसाद पोद्दार, जीतमल लूणिया आदि सज्जनों ने इसकी स्थापना की।

४—१९३४ में 'मण्डल' का कार्यालय अजमेर से दिल्ली आगया और अब मण्डल का प्रधान कार्यालय कनाट सर्कस, नई दिल्ली में है। दिल्ली लखनऊ, इन्दौर तथा नागपुर में उसकी शाखायें हैं। आदर्श साहित्य मन्दिर ब्रह्मपुरी अजमेर, साहित्य निकेतन, कानपुर और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मदरास अपने स्थानों के लिए मण्डल के सोल एजेण्ट हैं।

५—'मण्डल' से निम्नलिखित मालाओं में पुस्तकें प्रकाशित होती रहती हैं—

(१) **सर्वोदय साहित्य माला**—इस माला में नीचे की नं० २, ३, ४ मालाओं की तथा राष्ट्रीय उत्थान में सहायक खास-खास पुस्तकें निकलती हैं।

(२) **लोक साहित्य माला**—इसमें साधारण जनता के काम की सब विषयों पर ज्ञानवर्द्धक और विचारोत्तेजक सरल पुस्तकें निकलती हैं।

(३) **गांधी साहित्य माला**—इसमें गाँधीजी की पुस्तकें निकलती हैं।

(४) **टाल्स्टाय ग्रंथावलि**—इसमें टाल्स्टाय के चुने हुए ग्रंथ प्रकाशित होते हैं।

(५) **नवजीवन माला**—इस माला में छोटी-छोटी लोकोपयोगी नवजीवनदायी पुस्तकें निकलती हैं।

(६) **सामयिक साहित्य माला**—इसमें संसार तथा हिन्दुस्तान के सामयिक प्रश्नों तथा समस्याओं पर पुस्तकें निकलती हैं।

(७) **बाल साहित्य माला**—इसमें बालोपयोगी पुस्तकें निकलती हैं।

(८) **विविध प्रकाशन**—इसमें वे पुस्तकें निकलती हैं जो उपरोक्त मालाओं में न आती हों।

(९) इसके अलावा 'मण्डल' दूसरों की अपने उद्देश्यों के अनुकूल पुस्तकों की सोल एजेन्सी भी लेता है।

६—ऊपर लिखी सब मालाओं तथा सोल एजेंसी के अन्तर्गत मण्डल से अबतक लगभग १४० पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं; जिसमें अधिकांश के दो से लगाकर सात-सात संस्करण तक हो चुके हैं। यह मण्डल की पुस्तकों के सर्वप्रिय होने का जबर्दस्त प्रमाण है।

७—'मंडल' से 'जीवन-साहित्य' नामक एक मासिक पत्र भी निकलना शुरू हुआ है। हिन्दी में साहित्य का जीवन के साथ मेल करने तथा सद्विचार और सद्ग्रन्थों के प्रचार के उद्देश्य से यह निकाला गया है। इसका मूल्य २) है; पर मण्डल के ग्राहकों से १) लिया जाता है। मण्डल के ग्राहकों के लिए इसे खरीदना जरूरी हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८—मण्डल से महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य तथा डॉ० पट्टाभि सीतारामैया जैसे महान् नेता, टाल्स्टाय, ह्यूगो, मोटले, क्रोपाटकिन, केम्पिस, मार्डेन, मेक्स्विनी, खलील जिब्रान जैसे दुनिया के विचारकों तथा डॉ० भगवान्दास, विनोबा, काका कालेलकर, किशोरलाल मशरूवाला, स्व० रामदास गौड़, हरिभाऊ उपाध्याय, वियोगी हरि, वामन मल्हार जोशी जैसे भारतीय साहित्य के प्रसिद्ध लेखकों की रचनायें प्रकाशित हुई हैं।

९—मण्डल के संचालकों में भारतवर्ष के निम्नलिखित सुप्रसिद्ध लोकनेता, व्यवसायी, साहित्यसेवी और कार्यकर्त्ता हैं :—

सर्वश्री घनश्यामदास बिड़ला नई दिल्ली, 'अध्यक्ष' बाबू राजेन्द्रप्रसाद पटना, जमनालाल बजाज वर्धा, काका कालेलकर वर्धा, वियोगी हरि दिल्ली, हरिभाऊ उपाध्याय अजमेर, पारसनाथसिंह कलकत्ता, देवदास गांधी नई दिल्ली, महावीरप्रसाद पोद्दार गोरखपुर, जीतमल लूणिया अजमेर, मार्तण्ड उपाध्याय (मन्त्री) नई दिल्ली।

१०—'मण्डल' की सब शाखाओं की दुकानों में हिन्दी की सभी विषयों की उच्च कोटि की पुस्तकें हमेशा मिलती हैं।

११—संयुक्तप्रांत, मध्यप्रांत, महाराष्ट्र, बिहार, राजस्थान, पंजाब तथा सिंध के खादी-भण्डारों पर भी मण्डल की पुस्तकें मण्डल के स्थायी ग्राहकों को तीन आना रुपया कमीशन पर मिल सकती है।

पुस्तकों तथा 'जीवन-साहित्य' के नियम

१. स्थायी ग्राहकों के लिए—

१—एक रुपया प्रवेश-फीस देने से मण्डल के स्थायी ग्राहक हमेशा के लिए बन सकते हैं। स्थायी ग्राहकों को मण्डल से अवतक के प्रकाशित तथा आगे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ **पौने मूल्य** में मिलते हैं। प्रवेश-फीस का रुपया वापस नहीं लौटाया जाता और न किसी हिसाब में मुजरा दिया जाता है।

२—स्थायी ग्राहकों को मण्डल के प्रकाशनों की **एक-एक प्रति ही** पौने मूल्य में मिलेगी। एक से ज्यादा लेने पर चौथाई कमीशन के बजाय दो आना रुपया कमीशन दिया जायगा।

३—'मंडल' के स्थायी ग्राहकों को **प्रतिवर्ष कमीशन काटकर पाँच रुपये की मण्डल से प्रकाशित पुस्तकें** अवश्य खरीदनी होंगी। एक साल न खरीदने पर दूसरे साल उनका नाम ग्राहक-श्रेणी से अलग किया जा सकेगा; पर खास हालतों में रियायत करने का अधिकार मंत्री को रहेगा।

४—जब नयी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं तो पहले उनका विवरण और मूल्य आदि का सूचना-पत्र स्थायी ग्राहकों के पास भेज दिया जाता है। (अब चूँकि 'जीवन-साहित्य' मण्डल का मुखपत्र निकल रहा है अत: यह सूचना इसीके द्वारा दी जाया करेगी। अत: अच्छा हो कि 'मण्डल' के सब ग्राहक उसके ग्राहक बन जायँ। ऐसा हो जाने से स्थायी ग्राहकों को मण्डल की पुस्तकों की सूचना जल्दी मिल जाया करेगी।)

ग्राहकों को चाहिए कि सूचना मिलते ही यदि उन्हें पुस्तकें मँगाना हो तो **पुस्तकें पसन्द करके विवरण-पत्र के साथ जानेवाले कार्ड पर अपना आर्डर लिखकर भेज दें। यदि पुस्तकें न लेना चाहें तो भी तुरन्त ही उसी कार्ड पर अपनी इनकारी भेज दें। उसे अधिक दिन रोकें नहीं।**

५—स्थायी ग्राहक जब कभी पत्र-व्यवहार करें तो उन्हें चाहिए कि वे अपना **ग्राहक-नम्बर अवश्य लिख दिया करें,** जिससे उनके आर्डर पर कमीशन काटने में तथा दूसरी कार्रवाई करने म हमें सुविधा हो।

६—दूसरे प्रकाशकों की पुस्तकें जो, मण्डल की दिल्ली, लखनऊ तथा इन्दौर की दुकानों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिक्री के लिए रहती हैं, उनपर साधारणतः मण्डल के स्थायी ग्राहकों को ६¼%, १२½% और १५% तक कमीशन दिया जायगा।

२. साधारण ग्राहकों के लिए—

७—साधारण ग्राहकों को मण्डल की १) से ५) तक की पुस्तकों पर एक आना रुपया और ५) से १०) तक की पुस्तकों पर दो आना रुपया और १०) से ऊपर तीन आना रुपया कमीशन दिया जायगा। बाहरी पुस्तकों पर एक आना रुपया और दो आना रुपया तक कमीशन दिया जायगा। ज्यादा कमीशन पाने के लिए स्थायी ग्राहक बन जाना ही अच्छा उपाय है।

३. अन्य नियम

८—१०) से अधिक या रेल से माल मँगाने पर जितने का आर्डर हो उसका **एक-चौथाई दाम पेशगी** भेजना चाहिए। बिना पेशगी रुपया आये माल नहीं भेजा जायगा।

९—पत्र-व्यवहार हिन्दी में ही करना चाहिए और साफ़ लिखा होना चाहिए। रेलसे माल मँगाना हो तो **रेलवे स्टेशन का नाम अंग्रेज़ी के बडे-बडे अक्षरों में** (A. B. C.) साफ़ लिखना चाहिए।

१०—२) रु० से कम का वी० पी० नहीं भेजा जायगा।

११—ग्राहकों के पास वी० पी० पहुँचने पर, उनको हमारे हिसाब में अगर कोई भूल मालूम हो तो वी० पी० छुड़ाकर भूल की सूचना हमें दें। उनका पत्र आते ही भूल सुधार दी जायगी। थोड़ी-सी भूल के लिए वी० पी० लौटा देना ठीक नहीं है। इससे आपकी ही हानि होती है; क्योंकि 'मण्डल' आपकी संस्था है।

१२—पहले आर्डर देकर फिर उसे वापस कर देना ठीक नहीं है। यदि भूल से या किसी कारणवश ऐसा हो जाय तो ग्राहक को चाहिए कि 'मण्डल' की जो पोस्टेज-हानि हुई हो, उसे भेज दें और पुस्तकें फिर भेजने को लिखें।

१३—आर्डर भेजते समय इस बात का भी खुलासा कर देना चाहिए कि जो पुस्तकें स्टॉक में न हों, उन्हें न भेजें या तैयार होने पर भेजें या जो हों वे ही भेजदें, आदि।

४. 'जीवन-साहित्य' मासिक पत्र के नियम—

१४—'जीवन-साहित्य' का वार्षिक मूल्य २) है पर 'मण्डल' के ग्राहकों से आधा मूल्य यानी १) लिया जाता है। जो सज्जन २) देकर जीवन साहित्य के ग्राहक बनते हैं उनको मण्डल की पुस्तकें जबतक वह जी० सा० का ग्राहक है तब तक पौने मूल्य में मिला करेंगी।

१५. जी० सा० के विस्तृत नियम नीचे दिये गये हैं।

१६—इससे पूर्व प्रकाशित सभी नियम रद्द किये जाते हैं। इनमें भी समय-समय पर रद्दोबदल करने का अधिकार मंत्री को है।

—मंत्री

'जीवन-साहित्य' मासिक पत्र के नियम

१. हर महीने की पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

२. किसी भी महीने से ग्राहक बन सकते हैं, पर साल से कम के लिए नहीं।

३. 'मण्डल' की दिल्ली, लखनऊ और इंदौर शाखाओं तथा संयुक्तप्रांत, बिहार, मध्यप्रांत, महाराष्ट्र, राजस्थान, पंजाब व सिंध के चर्खासंघ के खादी-भंडारों तथा साहित्य निकेतन कानपुर में 'जीवन-साहित्य' के ग्राहक बन सकते हैं।

४. हर मास के पहले हफ्ते में पत्र न मिले तो अपने यहाँके डाकखाने से पूछताछ करके अपनी ग्राहक-संख्या के साथ पत्र लिखना चाहिए। उचित कार्रवाई की जायगी।

५. अपने पते में कोई परिवर्तन कराना हो तो तुरन्त सूचना दिया करें—**ग्राहक-संख्या अवश्य लिखें।**

६. पत्र का चंदा इस प्रकार है—

भारत में	बर्मा में	विदेश में	एक प्रति
१॥)	२)	४ शिलिंग	=)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—नमूने के अंक के लिए =) के टिकट भेजें। वार्षिक मूल्य डाक के टिकटों में भी भेजा जा सकता है।

७. पत्रव्यवहार करते समय अपनी **ग्राहक-संख्या अवश्य लिखें।**

८. 'जीवन-साहित्य' में शिष्ट साहित्य तथा उपयोगी सुरुचिपूर्ण और देशी वस्तुओं के विज्ञापन लेने की गुंजायश रक्खी है।

दर इस प्रकार हैं—

कवर का दूसरा पृष्ठ प्रतिमास ४०)

„ तीसरा „ „ ४०)

„ चौथा (दोरंगा) „ ६०)

„ „ (एकरंगा) „ ५०)

पाठ्य विषय के सामने „ ४०)

साधारण पृष्ठ— „ ३०)

९. विज्ञापन-एजेण्टों को कमीशन आदि के लिए अलग पत्रव्यवहार करना चाहिए।

पता—

व्यवस्थापक, 'जीवन-साहित्य',

कनाट सर्कस, नई दिल्ली।

हिन्दुस्तान में 'मण्डल' की पुस्तकें मिलने के स्थान

निम्न स्थानों पर 'मण्डल' के स्थायी ग्राहकों को मंडल की पुस्तकें एक रुपये में तीन आने कमीशन पर मिला करेंगी तथा वहीं 'जीवन साहित्य' के ग्राहक भी बन सकते हैं—

संयुक्तप्रान्त—सस्ता साहित्य मण्डल, लखनऊ साहित्य निकेतन, कानपुर, श्री गांधी आश्रम मुरादाबाद, इलाहाबाद, मेरठ, मुजफ्फरनगर, काशी, मथुरा, बरेली, देहरादून, फैजाबाद, गोरखपुर, सहारनपुर, डिबाई, फर्रुखाबाद, कानपुर, लखनऊ, आगरा, अकबरपुर, शामली, हरदोई, जौनपुर, सीतापुर, झाँसी, गाज़ीपुर बलिया, नैनीताल, शिकोहाबाद।

बिहार—चर्खासंघ खादी भंडार हाजीपुर, राँची, मधुबनी, बेतिया, हजारीबाग़, लहेरियासराय, मुजफ्फरपुर, गया, सीतामढ़ी, पटना, डाल्टनगंज, बेगूसराय, मोतीहारी, भागलपुर, छपरा, समस्तीपुर।

मध्यप्रान्त—महाराष्ट्र चर्खासंघ खादी भंडार नागपुर (सीताबर्डी), गोंदिया, जबलपुर रायपुर, खण्डवा।

राजपूताना-मध्यभारत—सस्ता साहित्य मंडल इन्दौर, आदर्श पुस्तक भण्डार अजमेर, राजस्थान चर्खा संघ खादी भंडार अजमेर, जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, मन्दसौर, ग्वालियर, इन्दौर, मुकुन्दगढ़, नवलगढ़, भेलसा, भरतपुर।

पंजाब—गांधी खादी-भंडार लाहौर, भिवानी, आदमपुर, गांधी सेवा आश्रम, शहादरा (लाहौर)

दिल्ली—सस्ता साहित्य मण्डल कनाट सर्कस नई दिल्ली, तथा दरीबा कलाँ, श्री गांधी आश्रम।

कलकत्ता—शुद्ध खादी भंडार, हरिसन रोड।

बम्बई-प्रान्त—'नवजीवन' कार्यालय, अहमदाबाद, और बम्बई, खादी भंडार भुसावल, खादी भंडार जलगाँव।

सिंध—खादी भंडार हैदराबाद, करांची, सक्खर।

खादी-भण्डारों के अलावा 'मण्डल' की पुस्तकें निम्न स्थानों पर भी मिलती हैं

अजमेर राजपूताना बुकहाउस आदर्श साहित्य भण्डार

इलाहाबाद हिन्दी मंदिर; साहित्य भवन लि०; छात्रहितकारी पुस्तकमाला; किताबिस्तान सरस्वती प्रेस; रामनारायण लाल

आगरा साहित्य रत्न भण्डार

कानपुर साहित्य निकेतन; प्रकाश पुस्तकालय;

भिवानी हिन्दी साहित्य भंडार

इन्दौर सस्ता साहित्य मण्डल खजूरी बाजार, सरस्वती प्रेस; सरूप ब्रदर्स

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीकानेर नवयुग ग्रंथ कुटीर
लखनऊ सस्ता साहित्य मण्डल; गंगा ग्रंथागार; सरस्वती प्रेस
बनारस सरस्वती प्रेस; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी; ज्ञानमण्डल पुस्तक-भंडार; लहरी बुकडिपो; पुस्तक भवन; भार्गव पुस्तकालय; इण्डियन बुक शॉप; विद्या भास्कर बुकडिपो
पटना नवशक्ति प्रकाशन मंदिर; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी; हिंदी साहित्य एजेन्सी; मोतीलाल बनारसीदास; एज्यूकेशनल बुक डिपो
छपरा वाणी-मंदिर
लहेरियासराय पुस्तक भण्डार;
कलकत्ता बंगाल स्टोअर्स, चौरंगी; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी; विशालभारत बुकडिपो; लहरी बुकडिपो, पुस्तक मंदिर,बंबई पुस्तक भंडार; कलकत्ता पुस्तक भंडार; पुस्तक मंदिर
वर्धा राष्ट्रभाषा प्रचार समिति; ग्रामसेवा मण्डल (नालवाड़ी)
बंबई हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर; भारतीय पुस्तक भण्डार; हिन्दी पुस्तक भण्डार; नवजीवन कार्यालय (प्रिंसेसस्ट्रीट)
ग्वालियर लायल बुक डिपो
मद्रास दक्षिण-भारत हिन्दी प्रचार सभा
अहमदाबाद नवजीवन कार्यालय
मछलीपट्टम लोकमान्य हिन्दी मंदिर
हैदराबाद (दक्षिण) हिन्दी पुस्तक भण्डार; प्रीमियर स्टोर्स सप्लाइंग कम्पनी
जबलपुर तेजमल सौभाग्यमल; महाकोशल साहित्य मंदिर
लाहौर हिन्दी भवन; मोतीलाल बनारसीदास; हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
कराची एस. एस. बागड़िया एण्ड सन्स
कोटा मोहन न्यूज़ एजेन्सी
भोपाल हिंदुस्तान स्टोअर्स; **बरेली** वैश्य बुकडिपो
अमृतसर भारत पुस्तक भण्डार
जम्मु तावी (काश्मीर) स्टूडेण्ट स्टोअर्स
उदयपुर हितैषी पुस्तक भंडार
नागपुर सस्ता साहित्य मण्डल, सीताबर्डी

'मण्डल' की दुकानों पर संसार के निम्न महापुरुषों, लेखकों और विचारकों की रचनायें मिलती हैं—

भारतीय

ऋषि तिरुवल्लुवर,स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, लो० तिलक, महात्मा गांधी, रवीन्द्र नाथ ठाकुर, जवाहरलाल नेहरू, सर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, अरविन्द घोष, लाला लाजपतराय, आदि

विदेशी

टाल्स्टॉय, मेक्सिम गोर्की, अलेक्ज़ेण्डर ड्यूमा विक्टर ह्यूगो, तुर्गनेव, खलील जिब्रान, क्रोपाटकिन, जेम्स एलेन, स्वेट् मॉर्डेन, सेम्युअल स्माइल्स, बुकर टी वाशिंगटन, मेरे कॉरेली, रोमाँरोलाँ, हेरल्ड लास्की, रिचर्ड ग्रेग, आदि

हिन्दी

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, स्व० महावीरप्रसाद द्विवेदी स्व० प्रेमचन्द, स्व० गणेशशंकर विद्यार्थी, स्व० जयशंकरप्रसाद, स्व० रामचन्द्र शुक्ल, स्व० कृष्णकांत मालवीय,मैथिलीशरणगुप्त,सियारामशरण गुप्त, जैनेन्द्रकुमार,राहुल सांकृत्यायन, अयोध्यासिंह उपाध्याय, डॉ०त्रिलोकीनाथ वर्मा, श्यामसुन्दर दास, रायकृष्णदास,जयचन्द्र विद्यालंकार, घनश्यामदास बिड़ला,महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पंत,सोहनलाल द्विवेदी भगवतीचरण वर्मा,भगवतीप्रसाद वाजपेयी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, हजारीप्रसाद द्विवेदी, हरिभाऊ उपाध्याय, वियोगी हरि, सुभद्राकुमारी चौहान, उषादेवी मित्रा, कमलादेवी चौधरी आदि

मराठी

हरि नारायण आपटे, वामन मल्हार जोशी, डॉ० हरि रामचन्द्र दिवेकर, सदाशिव नारायण दातार, गोविंद सखाराम सरदेसाई, विनोबा, आदि

बंगला

बंकिमचन्द्र चटर्जी, द्विजेन्द्रलाल राय, शरत् चन्द्र चटर्जी, जदुनाथ सरकार, रमेशचन्द्रदत्त, निरुपमा देवी आदि

गुजराती

किशोरलाल मशरूवाला, काका कालेलकर, कन्हैयालाल मुनशी, गिजुभाई, हरभाई त्रिवेदी, नानाभाई भट्ट आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ता साहित्य मण्डल : 'सर्वोदय साहित्यमाला' के प्रकाशन

१. दिव्य जीवन : स्वेट मार्डेन की 'The Miracles of Right Thought' नामक पुस्तक का अनुवाद। जीवन की कठिन समस्याओं से निराश युवकों के लिए, यह पुस्तक संजीवनी विद्या के समान है। उत्साह-वर्द्धक और ओजपूर्ण। ।=)

२. जीवन-साहित्य : काका कालेलकर के शिक्षा, संस्कृति, सभ्यता, राजनीति आदि महत्त्व-पूर्ण विषयों पर लिखे निबन्ध। पहले भाग का मूल्य ।।=) दूसरा भाग दुबारा छप रहा है।

३. तामिल वेद : दक्षिण के अछूत महात्मा तिरुवल्लुवर का उच्च कोटि की नैतिक, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक शिक्षाओं से भरा हुआ ग्रन्थ। भूमिका-लेखक श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य। ।।।)

४. भारत में व्यसन और व्यभिचार : (ले० बैजनाथ महोदय) इसमें तथ्यों तथा आँकड़ों से यह बताया है कि भारतवर्ष में शराब, भाँग, गाँजा, अफीम आदि दुर्व्यसन कैसे फैले तथा उनसे भारतवर्ष की जनता को क्या हानियाँ हुईं और हो रही हैं; व्यभिचार के पाप से भारतवासी किस प्रकार ग्रसित हो रहे हैं और किस प्रकार हम इन दुर्गुणों के पंजों से निकल सकते हैं। ।।।=)

✤**५. सामाजिक कुरीतियाँ :**

✤**६. भारत के स्त्री-रत्न :** इस पुस्तक में भारतवर्ष की लगभग सभी प्रसिद्ध एवं पूजनीय देवियों की मनोहर तथा पवित्र जीवन-कथायें लिखी गयी हैं। बहनें इन्हें पढ़ें तथा अपने पवित्र और गौरवशाली भूतकाल की झाँकी देखकर स्वयं को आदर्श स्त्री-रत्न बनावें। तीन भागों में। चौथा भाग तैयार हो रहा है। दुबारा छप रहा है ३)
[तीसरा भाग अप्राप्य है]

✤**७. अनोखा :** १।=)

८. ब्रह्मचर्य-विज्ञान : (जगन्नारायणदेव शर्मा) इस पुस्तक में ब्रह्मचर्य की महिमा, उसके पालन की विधि, उसके लाभ आदि बातें बहुत अच्छे ढंग से बतायी गयी हैं। पुस्तक में वेद, उपनिषद्, पुराण आदि सद्ग्रन्थों के शुभ वचनों का बहुत अच्छा संग्रह है। ।।।=)

✤**९. यूरोप का इतिहास :** २)

१०. समाज-विज्ञान : (संक्षिप्त संस्करण ले० चन्द्रराज भंडारी) समाज-रचना, उसके विकास तथा निर्माण पर इसमें बहुत अच्छी तरह विचार किया गया है। समाजशास्त्र पर हिन्दी की मौलिक पुस्तक (छप रहा है) ।।।)

✤**११. खद्दर का संपत्ति-शास्त्र :** (ग्रेग)

✤**१२. गोरों का प्रभुत्व :** ।।।=)

✤**१३. चीन की आवाज़ :** ।-)

१४. दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह : (महात्मा गांधी) सत्याग्रह की उत्पत्ति तथा उसके प्रयोग का खुद गांधीजी द्वारा लिखा इतिहास पढ़ें कि किस प्रकार बहादुरी से इस शस्त्र द्वारा अफ्रीकावासियों ने अपने अधिकारों की बिना दूसरों को तकलीफ़ पहुँचाते हुए रक्षा की। १।)

✤**१५. विजयी बारडोली :** [अप्राप्य] २)

१६. अनीति की राह पर : संयम, इंद्रिय-निग्रह तथा ब्रह्मचर्य पर गांधीजी की यह कृति अनुपम और सर्वश्रेष्ठ है। ।।=)

✤**१७. सीता की अग्नि-परीक्षा**

१८. कन्या-शिक्षा : स्व० चन्द्रशेखर शास्त्री ने इसमें बिलकुल सरल ढंग से, शुरू से लेकर विवाह के बाद तक के कन्याओं के जीवन तथा उनके कर्तव्यों की चर्चा प्रश्नोत्तर के रूप में बड़े सुन्दर ढंग से की है। कन्याओं के सीखने योग्य सभी बातें इसमें आ गयी हैं। ।)

१९. कर्मयोग । अश्विनीकुमार दत्त की यह पुस्तक पढ़ने से पाठक 'कर्मयोग' के संसार में प्रवेश पा जाते हैं और उनको पारमार्थिक सुख का अनुभव होने लगता है। ।=)

२०. कलवार की करतूत : टॉल्स्टॉय की

✤ ये पुस्तकें अप्राप्य हैं। इनको मँगाने का कष्ट न करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरल भाषा में शराब के आविष्कार की मनोरंजक और शिक्षाप्रद कहानी । =)

२१. व्यावहारिक सभ्यता : बच्चों, युवकों तथा अवस्थाप्राप्त लोगों के लिए रोज़ के व्यवहार में आनेवाली शिक्षाओं की पोथी। बोधप्रद, शिक्षाप्रद तथा ज्ञानप्रद । ।)

२२. अँधेरे में उजाला : टॉल्स्टॉय के 'Light Shines in the Darkness' नामक नाटक का अनुवाद। इस नाटक में टॉल्स्टॉय ने अपने जीवन की छाया अंकित की है। यह उनके हृद्गत मनोभावों और हृदय-मंथन की अनुपम कहानी है। (दुबारा छप रहा है) ।)

✤**२३. स्वामीजी का बलिदानः** (ह०उ०)

✤**२४. हमारे ज़माने की गुलामी :** ।)

२५. स्त्री और पुरुष । संयम तथा ब्रह्मचर्य पर टॉल्स्टॉय की यह पुस्तक बहुत महत्त्वपूर्ण है। स्त्रियों को अपनी इच्छा-पूर्ति का साधन समझनेवाले इसे पढ़ें और समझें कि स्त्री-पुरुषों का सम्बन्ध भोग-विलास का नहीं; बल्कि एक पवित्र उद्देश्य के लिए किया गया एक पवित्र सम्बन्ध है। ।)

२६. सफ़ाई : घर, गाँव तथा शरीर की सफ़ाई रखने आदि के बारे में उत्तम पुस्तक। ।=)

२७. हम क्या करें ? टॉल्स्टॉय की सुप्रसिद्ध पुस्तक 'What shall we do then ?' का अनुवाद। पीड़ितोंकी समस्यायें और उनका हल। यह एक समभावी हृदय का मंथन है १)

✤**२८. हाथ की कताई-बुनाई :** ।।=)

✤**२९. आत्मोपदेश :** ।)

✤**३०. यथार्थ आदर्श जीवन :** ।।-)

३१. जब अंग्रेज़ नहीं आये थे। (देखिए नवजीवन माला) ≡)

✤**३२. गंगा गोविन्दसिंह :** ।।≈)

✤**३३. श्रीरामचरित्र :** (श्री वैद्य) १)

✤**३४. आश्रम-हरिणी :** (जोशी) ।)

✤**३५. हिन्दी-मराठी-कोष :** २)

✤**३६. स्वाधीनता के सिद्धान्त :** ।)

✤**३७. महान् मातृत्व की ओर :** उसकी गुरुता और आदर्श का दिग्दर्शन है। स्त्री-उपयोगी उत्तम और दिलचस्प पुस्तक।

✤**३८. शिवाजी की योग्यता :** ।=)

३९. तरंगित हृदयः आचार्य श्रीअभयदेवजी की विचार-तरंगों का सुन्दर-संग्रह। स्व० स्वामी श्रद्धानन्द के आशीर्वाद सहित। ।)

✤**४०. हालैण्ड की राज्यक्रान्ति [नरमेध]**

४१. दुखी दुनिया : ग़रीब और पीड़ित मानवी दुनिया के करुण चित्र। श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की सच्ची घटनाओं पर लिखी-कहानियाँ। मधुर, करुण और सुन्दर। ।=)

४२. जिन्दा लाश । टॉल्स्टॉय के 'The-Living Corpse' नामक नाटक का अनुवाद। टॉल्स्टॉय के सब नाटकों में यह बड़ा ही करुण और मर्मस्पर्शी है। (दुबारा छप रहा है) ।)

४३. आत्म-कथा : (महात्मा गांधी) संसार के साहित्य का यह एक उज्ज्वल रत्न है। उपनिषदों की भाँति पवित्र और उपन्यासों की भाँति रोचक। चरित्र को निर्मल और मन को ऊँचा उठानेवाला। हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा किया गया प्रामाणिक अनुवाद। नवीन और सस्ता संस्करण। साधारण १) विशेष संस्करण १।)

✤**४४. जब अंग्रेज़ आये :** १=)

४५. जीवन-विकास : डार्विन के विकास-बाद के सिद्धान्त को विशद रूप से समझानेवाली हिन्दी में यह एक ही पुस्तक है। १)

४६. किसानों का बिगुल : =)

✤**४७. फाँसी :** ।=)

४८. अनासक्तियोग : गीता-बोध । (देखिए नवजीवन माला) ।-)

✤**४९. स्वर्ण-विहान : [ज़ब्त]** ।=)

५०. मराठों का उत्थान और पतन : (गोपाल दामोदर तामस्कर) मराठा साम्राज्य का विस्तृत और सच्चा इतिहास। मराठी भाषा में भी मराठों का ऐसा सच्चा और बड़ा इतिहास नहीं है, ऐसा महाराष्ट्र के अनेक विद्वान् और

✤ये पुस्तकें अप्राप्य हैं। इनको मँगाने का कष्ट न करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेता मानते हैं। २।।)

५१. भाई के पत्र : (रामनाथ 'सुमन') स्त्री-जीवन पर प्रकाश डालनेवाली; उनकी घरेलू एवं रोज़मर्रा की कठिनाई में पथ-प्रदर्शक; बहनों के हाथों में दिये जाने योग्य एक ही पुस्तक। (दुबारा छप रही है) १)

✤**५२. स्वगत :** ।=)

✤**५३. युगधर्म :** [ज़ब्त] १=)

५४. स्त्री-समस्या : (मुकुटबिहारी वर्मा) नारी-जीवन की जटिल समस्याओं का गम्भीर अध्ययन। स्त्री-आन्दोलनके इतिहास सहित स्त्रियों की समस्या पर यह अच्छी और संग्रह करने योग्य 'रेफ़रेन्स बुक' है। सुन्दर जिल्द। १।।।)

✤**५५. विदेशी कपड़े का मुक़ाबिला :**

✤**५६. चित्रपट :** ।=)

✤**५७. राष्ट्रवाणी :** (गांधीजी) ।।=)

५८. इंग्लैण्ड में महात्माजी : (महादेव देसाई) महात्माजी की दूसरी गोलमेज़ परिषद् के समय की इंग्लैण्ड की यात्रा का सुन्दर, सरस और मज़ेदार वर्णन। हिन्दी में अपने ढंग का सर्वोत्तम यात्रा-वृत्तान्त। सस्ता और नवीन संस्करण। ।।)

५९. रोटी का सवाल अथवा **भावी क्रान्ति का संगठन :** रूस के मशहूर क्रांतिकारी लेखक प्रिंस क्रोपाटकिन की अमर कृति 'Conquest of Bread' का सरल अनुवाद। अराजक समाजवाद का सुन्दर, सरल और सुबोध विवेचन। सस्ता नया संस्करण। ।।)

६०. दैवी-सम्पद् : उत्तम नैतिक एवं धार्मिक पुस्तक। 'दैवी-सम्पद् से मनुष्य को मोक्ष होता है।' गीता की इस उक्ति का सुन्दर विवेचन। मनुष्य को मोक्ष का रास्ता बतानेवाली पुस्तक। ।=)

६१. जीवन-सूत्र : अंग्रेज़ी में थॉमस केम्पिस लिखित सर्व-प्रसिद्ध पुस्तक 'Imitation of Christ' का अनुवाद। जीवन को उन्नत और विचारों को सात्विक बनानेवाली पोथी। अंग्रेज़ी में इसको बाइबिल के समान माना जाता है। ।।)

✤**६२. हमारा कलंक :** ।।=)

नोट—इस पुस्तक का अंग्रेज़ी संस्करण भी 'Bleeding Wound' के नाम से मण्डल से निकला है। मूल्य १।।), यह 'मण्डल' के ग्राहकों को ।।।) में मिलेगा।

✤**६३. बुद्बुद् :** (हरिभाऊ उपाध्याय)

६४. संघर्ष या सहयोग ? : क्रोपाटकिन की 'Mutual Aid' नामक पुस्तक का अनुवाद। इसमें बतलाया है कि पशु-पक्षियों से लेकर मनुष्य तक सबके जीवन का आधार सहयोग है, एकता है, संघर्ष नहीं। १।।)

६५. गांधी-विचार दोहन : (किशोरलाल मश्रुवाला) इसमें महात्माजी के समस्त राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक एवं नैतिक विचारों का बड़ा सुंदर संकलन और दोहन किया गया है। महात्माजी की सम्मति सहित नवीन संस्करण ।।)

✤**६६. एशिया की क्रांति :** [ज़ब्त] १।।)

६७. हमारे राष्ट्र-निर्माता : (रामनाथ 'सुमन') इस सुन्दर पुस्तक में राष्ट्रनिर्माताओं के जीवन-परिचय और उनके जीवन की झलक दी हुई है। १।।)

६८. स्वतंत्रता की ओर : (हरिभाऊ उपाध्याय) (दुबारा छप रहा है) १।।)

६९. आगे बढ़ो : स्वेट् मार्डेन के 'Pushing to the Front' का संक्षिप्त अनुवाद। कठिनाई में पड़े युवकों को सच्चे साथी के समान रास्ता बतानेवाली पुस्तक। ।।)

७०. बुद्ध-वाणी : (वियोगी हरि) भगवान् बुद्ध के चुने हुए वचनों का विषयानुक्रम से किया गया संकलन। बौद्ध-धर्म के विषय में हिन्दी में मिलनेवाले सब ग्रन्थों का सार-तत्त्व। ।।=)

७१. कांग्रेस का इतिहास : डॉ० पट्टाभि सीतारामैया की लिखी तथा कांग्रेस की स्वर्ण-जयन्ती पर प्रकाशित अंग्रेज़ी पुस्तक 'History of the Congress' का हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा संपादित प्रामाणिक अनुवाद। २।।)

✤ये पुस्तकें अप्राप्य हैं। इनको मँगाने का कष्ट न करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७२. हमारे राष्ट्रपति : (सत्यदेव विद्यालंकार) कांग्रेस के पहले अधिवेशन से अबतक के तमाम सभापतियों के जीवन-परिचय। भूमिका राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रबाबू ने लिखी है। सभापतियों के चित्रों के साथ। १)

७३. मेरी कहानी : पं० जवाहरलाल नेहरू की आत्म-कथा। हिन्दी अनुवाद और संपादन हरिभाऊ उपाध्याय ने किया है। वर्तमान समय की अद्वितीय पुस्तक। पुस्तक पं० जी द्वारा अपटूडेट कर दी गयी है। नवीन संस्करण। ३)

७४. विश्व-इतिहास की झलक : पण्डित जवाहरलालजी के अपनी पुत्री के नाम लिखे पत्रों का संग्रह। इसमें उन्होंने सारी दुनिया के इतिहास की झाँकी बड़ी सरलता से करायी है। ८)

✣**७५. हमारी पुत्रियाँ कैसी हों ?** ॥)

७६. नया शासन-विधान [प्रान्तीय स्वराज्य]—(हरिश्चंद्र गोयल) इसमें बताया गया है कि किस प्रकार इस नये शासन-विधान में हमें कुछ भी अधिकार नहीं दिये गये हैं। इस विषय की ऐसी पुस्तक अभीतक हिन्दी में नहीं लिखी गयी है। ॥)

७७. (१) हमारे गाँवों की कहानी : (स्व० रामदास गौड़) इसे पढ़कर तो आप सिहर उठेंगे कि हमारे अन्नदाताओं ने जिनको मेहमान समझा और उनका इतना आदर-सत्कार किया, वे कितने कृतघ्न निकले और उनको कितना नीचे गिरा दिया ! ॥)

७८. (२-६) महाभारत के पात्र : (दो भाग) (आचार्य नानाभाई) महाभारत के प्रधान-प्रधान पात्रों का सरस, परिचय। १)

७९. गाँवों का सुधार और संगठन (स्व० रामदास गौड़) हमारे गाँवों के सुधार और संगठन की समस्या पर हिन्दी में यह बहुत महत्त्वपूर्ण और प्रामाणिक पुस्तक है। (दुबारा छप रहा है) १)

८०. (३) सन्तवाणी (वियोगी हरि) सुप्रसिद्ध संतों—कबीर, नानक, सूर, तुलसी, रैदास, दादू आदि की मुख्य-मुख्य वाणियाँ टीका सहित। दूसरा संस्करण छप रहा है ॥)

८१. विनाश या इलाज ? (म्यूरियल लेस्टर) लेखिका ने अपने अनुभव और ज्ञान से यह साबित किया है कि दुनिया जो हत्या व युद्ध के संकट से आज त्रस्त हो रही है वह सत्य और अहिंसा से ही मुक्ति पा सकती है और दूसरा कोई रास्ता कारगर नहीं हो सकता। ॥)

८२. (४) अंग्रेज़ी राज में हमारी दशा : (ज़ेड० ए० अहमद) इसमें बताया गया है कि अंग्रेज़ों ने अपनी आर्थिक नीति से किस प्रकार भारतवासियों को चूसा और उन्हें निःसत्व बना दिया। पुस्तक बड़ी रोचक है। (दुबारा छप रही है) ।)

८३. (५) लोक-जीवन : काका कालेलकर के ग्राम-जीवन तथा ग्रामीण लोगों को रास्ता दिखानेवाले और उनके अज्ञान को दूर करनेवाले सरल और सुबोध निबन्धों का संग्रह। ।)

८४. गीता-मंथन : (किशोरलाल मश्रुवाला) गीता का सरल सुबोध और सरस भावानुवाद। अबोध पाठक भी गीता के तत्त्व को आसानी से समझ सकते हैं। उपन्यासों की भाँति रोचक और सरल। १।)

८५. (६) राजनीति-प्रवेशिका : प्रसिद्ध अंग्रेज़ विद्वान् हेरल्ड लास्की की 'Introduction to Politics' का अनुवाद मूल्य ।)

८६. (७) हमारे अधिकार और कर्तव्य : (कृष्णचन्द्र विद्यालंकार) इस पुस्तक में लेखक ने बड़ी सरल भाषा में बताया है कि नागरिकों के क्या अधिकार होते हैं और देश, समाज और राष्ट्र के प्रति उनके क्या कर्तव्य हैं ? ।)

✣**८७. गांधीवाद : समाजवाद :** ॥)

८८. स्वदेशी और ग्रामोद्योग : इसमें महात्माजी के आजतक के इस विषय के चुने हुए लेखों का संग्रह है। इसमें महात्माजी की स्वदेशी की नयी व्याख्या पढ़िए। (दुबारा छप रहा है) ॥)

८९. (८) सुगम चिकित्सा : श्री चतुरसेन शास्त्री ने इसमें सरल भाषा में देहात के लोगों

✣ये पुस्तकें अप्राप्य हैं। इनको मँगाने का कष्ट न करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए सफ़ाई और चिकित्सा सम्बन्धी बातें बड़ी सरलता से बतायी हैं। ।)

९०. **प्रेम में भगवान्** : टॉल्स्टॉय की सत्रह चुनी हुई शिक्षाप्रद कहानियाँ, पृष्ठ २५०। टाल्स्टाय ग्रन्थावलि की तीसरी पुस्तक। (दुबारा छप रहा है) ।।।)

❖९१. **महात्मा गांधी**—(रामनाथ 'सुमन'): इसमें लेखक ने बड़े मार्मिक और कलापूर्ण ढंग से महात्माजी के जीवन के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला है और उनके जीवन की झाँकियाँ दिखायी हैं। ।।)

९२. **ब्रह्मचर्य** : महात्माजी के ब्रह्मचर्य तथा संयम पर लिखे ताज़े लेखों का संग्रह है। पहले 'अनीति की राह पर' नामक इस विषय की पुस्तक निकल चुकी है। यह उसका दूसरा भाग ही समझिए। ।।)

९३. (१०) **हमारे गाँव और किसान** : चौधरी श्री मुख्तयारसिंह ने इस पुस्तक में हमारे गाँवों और किसानों की हद दर्जे की ग़रीबी का वर्णन किया है और बताया है कि गाँवों और किसानों की यह दशा कैसे सुधर सकती है। ।।)

९४. **गांधी-अभिनन्दन-ग्रन्थ** : महात्मा गांधी की ७१वीं वर्षगाँठ पर समर्पित विश्व-प्रसिद्ध ग्रन्थ। सम्पादक सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, सस्ता संस्करण १।) सजिल्द २)

९५. **हिन्दुस्तान की समस्यायें** : पं० जवाहरलाल नेहरू के भारत की समस्याओं पर विचारपूर्ण निबन्ध। १)

९६. **जीवन-सन्देश** : सुप्रसिद्ध सीरियन कवि खलील जिब्रान की मशहूर पुस्तक 'The Prophet' का अनुवाद। ।।)

९७. **समन्वय** : हिन्दी के सुप्रसिद्ध विचारक और दार्शनिक विद्वान् श्री डॉ० भगवानदास के मौलिक लेखों और व्याख्यानों का उत्तम संग्रह। २)
नया संपादित संग्रह तैयार हो रहा है

९८. **समाजवाद : पूँजीवाद** : प्रसिद्ध अंग्रेज़ी लेखक बर्नार्ड शॉ की प्रसिद्ध पुस्तक के आधार पर लिखी। ।।।)

९९. **मेरी मुक्ति की कहानी** : महर्षि टॉल्स्टॉय की आत्म-कहानी तथा उनके बचपन के संस्मरण। ।।)

१००. **खादी-मीमांसा** : खादी-विचारधारा को तर्क तथा आँकड़ों और उद्धरणों से समझानेवाली अद्वितीय पुस्तक। १।।)

१०१. **बापू** : (घनश्यामदास बिड़ला) महात्मा गांधी का अत्यन्त निकट से किया हुआ विश्लेषण, अनेक निजी रोचक तथा स्मरणीय प्रसंगों से पूर्ण—१३ सुन्दर चित्रों सहित; ।।=), सजिल्द १।), हाथ कागज़ की २)

१०२. **विनोबा और उनके विचार** : प्रथम सत्याग्रही विनोबा के विचारों को पढ़कर आप जीवन जीना जान जायेंगे। यह समझेंगे कि सफल जीवन उसीका है जिसने जीवन जीना सीखा। नया संस्करण छप रहा है। ।।।)

१०३. **लड़खड़ाती दुनिया** : (जवाहरलाल नेहरू) आज की दुनिया की तस्वीर। देश-विदेश पर लिखे गये महत्त्वपूर्ण लेखों का सुन्दर संग्रह। भूमिका लेखक—आचार्य नरेन्द्रदेव। ।।।)
नया संस्करण छप रहा है।

१०४. **सेवाधर्म-सेवामार्ग** : प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता श्री कृष्णदत्त पालीवाल की सेवाधर्म पर लिखी सुन्दर पुस्तक। इसमें सेवा के क्षेत्र, सेवा के प्रकार और सेवा के तरीके पर बड़ा अच्छा प्रकाश डाला गया है। हमारे कर्मक्षेत्र के लिए उपयोगी पुस्तक है। १)

१०५. **दुनिया की शासन प्रणालियाँ तथा यूरोप का वर्तमान युद्ध** : दुनिया की प्रचलित शासन प्रणालियाँ उनके संगठन तथा कार्य के साथ वर्तमान-युद्ध की पृष्ठभूमि, उसकी वर्तमान गति-विधि तथा उसके होनेवाले असरों का रोचक वर्णन है। पुस्तक सामयिक तथा स्थायी महत्व की है। १।।)

१०६. **डायरी के पन्ने**—(लेखक श्री घनश्यामदास बिड़ला) श्री बिड़लाजी की डायरी

❖ पुस्तकें अप्राप्य हैं। इनको मँगाने का कष्ट न करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ये पत्रे उस समय के हैं जब दूसरी गोलमेज़-परिषद् में वे गांधीजी के साथ गये थे। रोचक और ज्ञान वर्धक होने के साथ यह भारतीय राजनीति के विद्यार्थी के लिए बहुत उपयोगी है। अनेक चित्रों सहित—मू० ।।।) १।)

१०७. तीस दिन : मालवीयजी के साथ

१०८. युद्ध और **अहिंसा :** (म० गांधी)

१०९ महावीर-वाणी (पं० बेचरदास दोशी)

'नवजीवनमाला' की पुस्तकें

१. गीताबोध—महात्मा गांधी द्वारा लिखा गीता का सरल तात्पर्य —)

२. मंगल प्रभात—महात्मा गांधी के जेल से लिखे सत्य, अहिंसा ब्रह्मचर्य आदि व्रतों पर प्रवचन। —)

३. अनासक्तियोग—गांधीजी द्वारा लिखी गीता की टीका—=), श्लोक सहित ≡), सजिल्द ।)

४. सर्वोदय—रस्किन के 'Unto This Last' का गांधीजी द्वारा किया गया रूपान्तर। —)

५. नवयुवकों से दो बातें—प्रिंस क्रोपाटकिन के 'A word to Youngmen' का अनुवाद। —)

६. हिन्द-स्वराज—महात्माजी की भारत की मौजूदा समस्या पर लिखी प्राचीन पुस्तक जो आज भी ताज़ी है। ≡)

✤**७. छूतछात की माया**— —)

८. किसानों का सवाल-डॉ० ज़ेड० ए० अहमद की इस छोटी-सी पुस्तिका में भारत के ग़रीब प्रतिनिधियों–किसानों–के सवाल पर बड़ी सुन्दरता से विचार किया गया है। =)

९. ग्राम-सेवा—ग्राम-सेवा किस प्रकार हो—इसपर गांधीजी ने इसमें विशद प्रकाश डाला है। =)

१०. खादी और **गादी की लड़ाई**—(विनोबा) (दुबारा छप रही है) =)

✤**११. मधुमक्खी-पालन**— =)

१२. गांवों का आर्थिक सवाल—गाँवों के आर्थिक प्रश्न तथा उनको हल करने की योजनाओं का इस पुस्तक में ग्राम-सेवक विद्यालय के अध्यापक श्री झवेरभाई पटेल ने संग्रह किया है ≡)

१३. राष्ट्रीय गायन-देशभक्ति-पूर्ण राष्ट्रीय गायनों और कविताओं का अपूर्व संग्रह। =)

१४. खादी का महत्व—श्री गुलजारीलाल नन्दा द्वारा लिखा खादी-विषयक प्रामाणिक और खादी की महत्ता और उपयोगिता बताने वाला निबन्ध। —)।।

१५. जब अँग्रेज़ नहीं आये थे—अँग्रेज़ोंके आने के पहले की भारत की दशा का वर्णन। ≡)

१६. सोने की माया—श्री. किशोरलाल मशरूवाला का लिखा विनिमय और मुद्रा पर रोचक रूपक। दाम —)

१७ सत्यवीर सुकरात.(म० गांधी) ग्रीस के महापुरुष सुकरात के मुक़दमे और उनके बयान का महात्मा गांधी द्वारा लिखा हुआ दिलचस्प और शिक्षाप्रद हाल। —)

ख़ास सूचना

नये वर्ष से जीवन-साहित्य का वार्षिक मूल्य २) के बजाय १।।) हो गया है। विशेष सूचना जी० सा० के १२वें अंक में देखें या दफ्तर से मंगा लेने की कृपा करें।

व्यवस्थापक

✤**ये पुस्तकें अप्राप्य हैं। इनको मँगाने का कष्ट न करें।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामयिक साहित्य माला

✣१. कांग्रेस-इतिहास (१९३५-३९)

✣२. दुनिया का रंगमंच =)

३. हम कहाँ हैं ? कांग्रेस की वर्तमान हालत और देश की मौजूदा समस्याओं पर पं० जवाहरलालजी के लेख। =)

४. युद्ध-संकट और भारत। वर्तमान यूरोपीय युद्ध और भारत की स्थिति पर कांग्रेस की ओर से तथा म० गांधी, राष्ट्रपति आदि द्वारा निकाले गये वक्तव्यों का संग्रह। ।)

५. सत्याग्रह : क्यों, कब और कैसे ? (म. गांधी) सत्याग्रह कब, क्यों और कैसे शुरू किया जावे, इस पर महात्माजी के लेख। =)

६. राष्ट्रीय-पंचायत। भारत के अपना शासन-विधान बनाने की माँग तथा विधान-सभा 'Constituent Assembly' पर महात्माजी, पं० जवाहरलाल नेहरू, राजाजी आदि के लेख ।)

७. देशी राजाओं का दरजा देशी राजाओं के अधिकार और दरजे के बारे में अधिकार पूर्ण पुस्तक (प्यारेलाल)

८. यूरोपीय युद्ध और भारत २ (गांधी; जवाहर लाल) यूरोपीय युद्ध और भारतीय संकट को स्पष्ट समझानेवाली पुस्तक। इस में पहले खण्ड से आगे का हाल है। =)

बाल साहित्य माला

१. कथा - कहानी—बालोपयोगी रोचक कहानियाँ =)

२. सीख की कहानियाँ—(२ भाग) बालोपयोगी शिक्षाप्रद कहानियाँ =) =)

३. शिवाजी चरित्र—छत्रपति शिवाजी का बालोपयोगी जीवन चरित्र =)

४. देश-प्रेम की कहानियाँ—इतिहास में से चुनी हुई देश प्रेम की ५ कहानियाँ =)

विविध प्रकाशन

✣१. पंडित मोतीलाल नेहरू—लेखक—श्री 'सुमन' ।)

✣२. पंडित जवाहरलाल नेहरू—लेखक—श्री 'सुमन' =)

३. सप्तसरिता—भारत की सात लोकमाताओं का भक्तिपूर्वक किया हुआ उपस्थान; लेखक—आचार्य काका कालेलकर =)

४. चारा दाना और उसके खिलाने के उपाय—पशुपालन विषय की रोचक और वैज्ञानिक पुस्तक (परमेश्वरी प्रसाद गुप्त) =)

५. पशुओं का इलाज—उपरोक्त लेखक की पशुओं के इलाज पर अनुभूत और वैज्ञानिक पुस्तक (छपरही है) ।।)

'सोल एजेन्सी' की पुस्तकें

१. लोपामुद्रा—(श्री कन्हैयालाल मुनशी) श्री मुनशी का यह ऋग्वेदकालीन उपन्यास बहुत मनोहर और रोचक है। महान अगस्त्य ऋषि की पत्नि लोपामुद्रा की यह जीवन कथा है १)

२. रोटी का राग—(श्री श्रीमन्नारायण अग्रवाल एम० ए०) यह रोटी का राग नये युग का राग है। महात्माजी के शब्दों में रचयिता का "हेतु स्पष्ट और निर्मल है।" और काका कालेलकर के शब्दों में सरल संस्कारी और सहृदय इन्ही शब्दों में श्रीमन्नारायणजी की कविता का वर्णन हो सकता है। ।।)

३. फ्रांस की राज्य-क्रांति—(डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार) डॉ० सत्यकेतु यूरोप का आधुनिक इतिहास लिख रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक उसका

✣ पुस्तकें अप्राप्य हैं। इनको मँगाने का कष्ट न करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहला भाग है। इसमें नैपोलियन तक का इतिहास आया है। १॥)

४. **गांधीवाद की रूपरेखा**—(श्री रामनाथ सुमन) इस पुस्तक में सुमनजी ने सभी पहलुओं से गांधीवाद का विवेचन किया है और सभी दृष्टियों से गांधीजी के विचारों को देखा परखा है। १)

५. **पिता के पत्र पुत्री के नाम**—(पंडित जवाहरलाल नेहरू) पडितजी ने इस पुस्तक में अपनी पुत्री कुमारी इंदिरा नेहरू के नाम दुनिया के शुरू की कहानी पत्रों में लिखी है। ।)

६. **बिखरे विचार**—(ले० श्री घनश्यामदास बिड़ला) श्री बिड़लाजी के लेखों का यह संग्रह है। पुराने होते हुए भी विचारों की दृष्टि से ये लेख नये हैं और विचारणीय, मननीय और अनुकरणीय हैं। १॥)

७. **प्रलय-वीणा**—(श्री सुधीन्द्र, एम. ए.) इसमें कवि की बिल्कुल नये दृष्टिकोणवाली नयी कवितायें संग्रहीत हैं। भूमिका-लेखक श्री सोहनलाल द्विवेदी के शब्दों में 'वे अतीत की काव्य-धारा के विरुद्ध एक प्रतिशोध हैं।' १)

८. **स्वास्थ्य के लिए शाक-तरकारियाँ**—इसमें बड़े सरल ढंग से बताया है कि जो शाक-तरकारियाँ हम रोज खाते हैं उनको किस प्रकार किस ढंग और किस हेरफेर के साथ खाने से हम स्वस्थ रह सकते हैं और इस प्रकार स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं। १।)

'मण्डल' से आगे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ

१. **अहिंसा की शक्ति** (रिचर्ड बी. ग्रेग)
२. **उद्देश्य और साधन** (आल्डस् हक्सले)
३. **हिन्दूधर्म की आख्यायिकायें** (आचार्य नानाभाई भट्ट)
४. **रूमी की कहानियाँ** (चौ० शिवनाथसिंह)
५. **हमारी आज़ादी की लड़ाई** (हरिभाऊ उपाध्याय)
६. **जीवन के बारे में**— (टॉल्सटॉय)
७. **मालिक और मज़दूर** „
८. **धर्म और सदाचार** „
९. **विद्यार्थी-धर्म** (महात्मा गांधी)
१०. **यंत्र की मर्यादा** (नरहरि परीख)
११. **हिन्दुस्तान की ग़रीबी** (दादाभाई नौरोजी)
१२. **हमारे आर्थिक प्रश्न** (छगनलाल जोशी)
१३. **भारतीय संस्कृति और नागरिक जीवन** (रामनारायण यादवेन्दु)
१४. **विश्वसंस्कृति का विकास** (कालिदास कपूर)

प्रचारित पुस्तकें

('मण्डल' के ग्राहकों को एक तिहाई कमीशन दिया जायगा)

१. **मेरा देश**—इसमें भगवत्प्रसाद सनातन की लिखी बालोपयोगी सुन्दर और मनोहर कवितायें हैं। पुस्तक बहुत दिलचस्प है। ।)

२. **आर्थिक संगठन**—दुनिया के मौजूदा पूंजीवादी संगठन की जगह किस प्रकार का संगठन हो जिससे ग़रीब जनता को आराम मिले और लाभ पहुँचे, यही इस पुस्तक का विषय है ।॥)

३. **रूपान्तर**—श्री जगन्नाथ प्रसाद की लिखी सरल और हृदयग्राही कविताओं का संग्रह। ।।)

४. **पौराणिक कथायें**—इस ग्रन्थ में भिन्न-भिन्न पुराणों से संकलित प्राचीन भारत के महान् पुरुषों तथा सती-देवियों के जीवन की विशेष-विशेष घटनाओं का वर्णन है। १॥)

*५. **आश्रम-भजनावलि**—महात्मा गांधी के आश्रम में प्रार्थना के समय गाये जानेवाले भजनों का सुन्दर संग्रह =)॥

७. **पाक चन्द्रिका**—भोजन बनाने आदि की शिक्षा देनेवाली उपादेय पुस्तक— ४)

८. **तुलसीदास और उनकी कविता**—पं० रामनरेशजी त्रिपाठी का लिखा खोजपूर्ण मौलिक ग्रंथ—दो भाग— ४।)

९. **रेल से माल भेजने का कायदा** (वाया गुड्स) इसमें भारतवर्ष की समस्त रेलवे लाइनों के नियम दिये हुए हैं। व्यापारियों के बड़े काम की चीज है। पुस्तकालयों व संस्थाओं के संग्रह-योग्य पुस्तक है। मू० ३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. हुगली का इमामबाडा (ले० स्वर्ण-कुमारी देवी) ऐतिहासिक, शिक्षाप्रद उपन्यास। सचित्र मूल्य १॥)

११. भगवान महावीर (सचित्र व सजिल्द) अहिंसा धर्म के प्रचारक एवं जैनधर्म के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर का प्रमाणिक जीवन। मूल्य ४॥) आर्टपेपर पर स्पेशल राजसंस्करण ६)

१२. हिन्दू विधवा या सती गौरव (मौलिक उपन्यास) एक विधवा स्त्री संसार के प्रलोभनों म न फँसकर अपने जीवन को किस तरह सेवामय बनाती है इसका सुन्दर वर्णन मू० १)

१३. गोरा (रवीन्द्र बाबू का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास) मूल्य २॥) सजिल्द ३)

* १४. ग्राम-आन्दोलन की आवश्यकता ।=)
* १५. सचित्र कृषि-शास्त्र १।)
* १६. शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति (महात्मा गांधी के शिक्षा विषयक लेख-संग्रह) ॥)
१७. कविता-कौमुदी भाग (१–२) संपादक (रामनरेश त्रिपाठी) प्रत्येक का ३)
१८. बीस कहानियाँ २)
१९. हिन्दुओं के व्रत और त्योहार १॥)
२०. हिन्दुस्तानी कोष २)
२१. यूरोप की कहानियाँ २॥)
२२. योग के आसन (सचित्र) १)
२३. जादू की कहानियाँ (बालोपयोगी) ।=)
२४. स्वप्न (काव्य : रामनरेशजी त्रिपाठी) ॥)
२५. मोतीचूर के लड्डू (बालोपयोगी) ।)
२६. बानर-संगीत ,, ।)
२७. मिलन (काव्य) ॥)
२८. किसानों की कहावतें ।)
२९. जयन्त (नाटक) ॥।)
३०. पेखन (बालोपयोगी एकांकी नाटक) ।)
३१. इतिहास की कहानियाँ ।)

(नोट—* इन्नमर ⅓ कमीशन नहीं मिलेगा)

३२. शिवा-बावनी ।)
३३. हमारा ग्राम-साहित्य (ग्राम साहित्य की सुन्दर पुस्तक) १।)
३४. सोहर ।)
३५. मुस्लिम सन्तों के चरित्र २)
३६. हिन्दी पद्य-रचना ॥)
३७. मारवाड़ के मनोहर गीत ।)
३८. वफाती चाचा ॥)
३९. राक्षसों की कहानियाँ (बालपयोगी) ।=)
४०. तरकस ॥)
४१. प्रेमलोक ॥।)
४२. मानसी (कविता-संग्रह) ॥)
४३. गुपचुप कहानियाँ (बालोपयोगी) ≡)
४४. पाकेट डिक्शनरी १॥)
४५. पथिक (काव्य) ॥)
४६. तूणीर ॥)
४७. बालकथा-कहानी भाग १-१७ बालोपयोगी उत्तम कहानी संग्रह (सम्पादक रामनरेश त्रिपाठी) दाम प्रत्येक ।=)
४८. मोहन-माला (बालोपयोगी) ॥।)
४९. हंसू की हिम्मत ,, ।=)
५०. बनाओ तो जानें ,, ॥)
५१. घर का वैद्य ,, १३)
५२. परियों की कहानियाँ ,, ।=)
५३. खोजो, खोज निकालो ,, ।)
५४. उर्दू-हिन्दी कोष १)
५५. हिन्दी मुहावरा कोष १॥)
५६. हिन्दी कहावत ।)
५७. बहादुर सुन्दरी ≡)
५८. हिन्दी शिक्षण-विधान ≡)
५९. अनोखा बलिदान ॥)
६०. श्री मद्वालमिकीय रामायण 'अनुवाद'
६१. श्री मद्भागवत ,,
६२. महाभारत ,, ५)
६३. जापान रहस्य (चमनलाल) १॥)
६४. चीन का स्वाधीनता युद्ध १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधना-मन्दिर-प्रकाशन

श्रीयुत बनारसीदास चतुर्वेदी हिन्दी-साहित्य में अद्वितीय शब्दचित्र और जीवनी-लेखक हैं। उनकी तथा महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, दीनबन्धु एण्ड्रूज, साधु वास्वानी और भदन्त आनन्द कौसल्यायन की लिखी कृतियाँ पढ़िए और प्रचारित कीजिए। पूरे सेट के लिए ।।।=) के टिकिट भेजिए। पुस्तकें आपके घर मुफ्त पहुँचा दी जावेंगी।

बनारसीदास चतुर्वेदी लिखित

१ जापान के गांधी कागावा ~)
२ अराजकवादी एमा गोल्डमेन ~)
३ अराजकवादी लुई माइकेल ~)
४ अराजकवादी मैलटेस्टा ~)
५ प्रिंस क्रोपाटकिन ~)
६ महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ~)
७ अराजकवादी माइकेल बाकूनिन ~)
८ इवान तुर्गनेव ~)
९ पतिव्रता जयनि ~)
१० श्रीमती हैरियट एलीजबेथ स्टो ~)
११ भारत भक्त दीनबन्धू एण्ड्रूज ~)
१२ स्व० देवमित्र धर्मपाल ~)
१३ मंगलमय महावीर (साधु वास्वानी) ~)
१४ स्वामी भवानीदयाल संन्यासी (राजबहादुर सिंह) ~)
१५ भगवान बुद्ध (भदन्त आनन्द-कौसल्यायन) ~)
१६ बालशिक्षण और माँ-बाप (भानुकुमार जैन) ~)
१७ विपल्व-गान क्रान्ति-गीत ~)
१८ अमर-गान भाग १ (रवीन्द्रनाथ ठाकुर) ~)
९ मेरी भावना (जुगलकिशोर मुख्तार))॥
२० पुस्तक महिमा और पुस्तकालय (लक्ष्मण त्रिपाठी))॥
२१ शान्तिनिकेतन का हिन्दी-भवन (दीनबन्धु एण्ड्रूज) मुफ्त

'मण्डल' की दिल्ली, लखनऊ और इन्दौर शाखाओं की दुकानों पर

निम्न प्रकाशकों की चुनी हुई उत्तम तथा सुरुचिपूर्ण पुस्तकें मिला करती हैं—

१. हिन्दी ग्रंथरत्नाकर, २. छात्रहितकारी पुस्तकमाला, ३. भारतीय-भण्डार, ४. हिन्दुस्तानी एकेडेमी, ५. नागरी प्रचारिणी सभा, ६. इंडियन प्रेस लि०, ७. गंगा पुस्तक माला, ८. हिंदी पुस्तक एजेन्सी, ९. साहित्य भवन लि० १०. हिन्दी मन्दिर, ११. किताबिस्तान १२. तरुण-भारत ग्रंथावलि, १३. आर्य साहित्य मंडल, १४. नवयुग साहित्य मन्दिर, १५. भारती साहित्य संघ, १६. साहित्य सदन, १७. सरस्वती प्रेस, १८. हिन्दी भवन, १९. वाणी मन्दिर, २०. प्रकाश पुस्तकालय, २१. नवयुग पुस्तक भंडार, २२. नवशक्ति प्रकाशन मन्दिर, २३. भूगोल कार्यालय, २४. पुस्तक भण्डार, २५. काशी विद्यापीठ, २६. ज्ञानमण्डल, २७. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, २८. हिन्दी पुस्तक भण्डार, २९. ३०. विशालभारत बुकडिपो ३१. रामनारायणलाल बुकसेलर्स, ३२. रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग, ३३. भार्गव पुस्तकालय, ३४. नवलकिशोर प्रेस, ३५. आदर्श ग्रंथमाला, ३६. मोतीलाल बनारसीदास, ३७. मेहरचन्द लक्ष्मणदास, ३८. खेमराज श्रीकृष्णदास, ३९. गीता-प्रेस, ४०. गीता-विज्ञान कार्यालय, ४१. नवजीवन कार्यालय, ४२. तिलक ब्रदर्स, ४३. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, ४४. परमश्रुत श्रावक मण्डल, ४५, देवीदत्त शर्मा के किंडर गार्टन बक्स, ४६. निर्णयसागर प्रेस ४७. भारतीय ग्रंथ माला, ४८. भार्गव पुस्तकालय, ४९. मिश्रबन्धु कार्यालय, ५१. हिन्दी विश्व भारती ५१ साधना मन्दिर, ५२. हिन्दी साहित्य मण्डल, ५३. सरस्वती प्रकाशन मन्दिर, ५४. चौधरी मुख्तार सिंह । ५५ अ० भा० ग्राम उद्योग संघ, ५६ अ० भा० चर्खा संघ, ५७ हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, ५८ आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ अंग्रेजी पुस्तकें

	Rs.	as.	ps.
×Ramgarh Congress Souvenir	2	0	0
Home & Village Doctor Leather bound	6	0	0
Cloth ,,	5	0	0
The Story of My Experiments with Truth (By Gandhiji)	4	0	0
Satyagraha in South Africa ,,	4	8	0
Self-restraint Vs Self-indulgence (2 Vols.) ,,	2	0	0
My Soul's Agony ,,	0	8	0
From Yervada Mandir ,,	0	2	0
Hind Swaraj ,,	0	4	0
Indian State Problem ,,	4	0	0
Cent per Cent Swadeshi ,,	1	8	0
To the Students ,,	2	0	0
Christian missions ,,	2	0	0
The Story of Bardoli (M. D.)	2	8	0
The Epic of Travancore ,,	1	8	0
With Gandhiji in Ceylon ,,	1	0	0
Gandhiji in Indian Villages ,,	2	0	0
Satyagraha in Champaran (Rajendra Prasad)	2	0	0
Public Finance and Our poverty (J. C. Kumarappa)	0	12	0
Education for Life (J. C.)	0	3	0
A Survey of Matar Taluka ,,	2	0	0
Seven Months with Mahatma Gandhi	3	8	0
The Epic Fast (Pyarelal)	1	4	0
Status of Indian Princes ,,	0	4	0
The Heart of a Gopi (Miss R. Tyabji)	1	8	0
Upanishad (C. R.)	0	6	0
Bhagawad-Gita ,,	0	6	0
The Shastras on Untouchability	0	1	3
Cow Protection (Valji Desai)	0	13	0

The Power of Non-violence (R. B. Gregg)	2	0	0
Through Congress Eyes (Subhas Bose)	2	8	0
Secret of Japan (Chaman Lal)	2	8	0
×Bleeding wound (Gandhiji)	1	0	0
An Autobiography (Jawaharlal)	6	0	0
Letters from a father to his Daughter	1	0	0
Glimpses of wor Hldistory ,;	6	0	0

A. I. C. C. PUBLICATIONS

Congress and War Crisis.	1	0	0
Congress and War	0	2	0
The Indian Federation.	0	8	0
Excluded Areas Under The New Constitution.	0	3	0
Public revenue and expenditure in India.	1	0	0
Survey of a South Indian Village.	0	2	0
Salaries of public Servants.	0	4	0
Indian Foreign Policy.	0	4	0
India on China.	0	8	0
Resolutions passed by the Congress during the period (January 1930 September 1934)	1	4	0
—do—1934-36	0	10	0
—do—April 1936-Jan. 1937	0	10	0
—do—1938-39.	0	8	0
History of the Congress	2	8	0
The Gandhian Way.	2	0	0
Non-violent Revolution.	0	4	0
The Latest Fad.-Basic Education.	1	0	0
Our Countrymen Abroad.	0	8	0
India's Challenge to Christians	2	0	0
India's Stand.	0	2	0
Indian National Congress (1939-40.)	0	8	0

× निशानवाली पुस्तकें 'मण्डल' तथा 'जी० सा०' के ग्राहकों को पौने मूल्य में मिलेंगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन-साहित्य

असतो मा सद्गमय; तमसो मा ज्योतिर्गमय; मृत्योर्माऽमृतंगमय।

जुलाई, १९४१ | सम्पादक | वर्ष पहला
नई दिल्ली | हरिभाऊ उपाध्याय | अंक बारहवाँ

व्रत

शिर झुके, तो तुम्हारे चरण में झुके
पग निरन्तर प्रगतिशील
पथ पर बढ़े
जो विपथ पर खड़े
क्रांतिरथ पर चढ़े
पर तुम्हारा न पाकर सहारा रुके
शिर झुके, तो तुम्हारे चरण में झुके
प्राण की लौ सदा
स्नेह पी-पी जगे
दुःख में भी नहीं
मंद पल भर लगे
ज्योति में ही जगे, ज्योति में ही लुके
शिर झुके, तो तुम्हारे चरण में झुके
नित्य तुमसे मुझे
देव ! अमृत मिले
पी जिसे जग विकल
लहलहाये, खिले
सैकड़ों को जिला अन्त जीवन चुके
शिर झुके, तो तुम्हारे चरण में झुके

सुधीन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्यकारी योजना

सस्ता-साहित्य-मण्डल के मंत्रीजी सूचित करते हैं :—

"इस बार जो काशी, प्रयाग, लखनऊ गया तो 'जी० सा०' के बारे में छोटे-बड़े सब मित्रों से चर्चा हुई। उनका यह कहना रहा कि जहाँतक 'साहित्य' और 'जीवन' से सम्बन्ध है, 'जी० सा०' ने एक विचार तो लोगों में पैदा करा दिया पर उसके अनुसार काम कैसे हो ? अब लोग यह आशा लगाये हैं कि 'जी० सा०' यह बतायेगा कि यह समन्वय कैसे स्थापित हो—कैसा जीवन-परक साहित्य दिया जाय ? उसकी कोई कार्यकारी योजना हो। अब जो चर्चा 'जी० सा०' में रहती है उससे कुछ ऊबे हुए-से जान पड़े। कुछ नवीनता चाहते हैं।"

मुझे यह आशा नहीं थी कि एक वर्ष में 'जी० सा०' इतना क़ाम कर लेगा। इससे यह जाना जाता है कि हिन्दी-साहित्य-जगत् भीतर-ही-भीतर इस सन्देश को सुनने के लिए तैयार था। 'जी० सा०' ने सिर्फ़ दियासलाई घिस दी--ज्योति जग उठी। अब अगले साल उसे ठोस काम करना है। जगाने का काम आसान था, यह विकट व कठिन है। परमात्मा की जिस कृपा व हिन्दी-भक्त लेखक व पाठक-बन्धुओं की जिस सहानुभूति ने 'जी० सा०' को एक साल में इतनी सफलता प्रदान की उसीके भरोसे मुझे यह आशा होती है कि अब रचनात्मक, सृजनात्मक या ठोस काम में भी वह उसे सफल बनावेगा।

वैसे तो चर्चात्मक या उद्बोधक लेखों के अलावा इस वर्ष भी 'जी० सा०' में सृजनात्मक लेख सामग्री गयी है। फिर 'जी० सा०' का कलेवर बहुत छोटा है। ताहम अगले वर्ष इसी में हमें अपनी शक्ति केन्द्रित करनी है। यों यह काम मण्डल—प्रकाशन-विभाग—के क्षेत्र में अधिक आता है। उसने आरम्भ से ही ऐसे साहित्य के प्रकाशन की ओर अधिक ध्यान दिया है; फिर भी हम उससे तृप्त या सन्तुष्ट नहीं हैं। मण्डल में हम--सञ्चालक या सदस्य—लोगों ने बार-बार इस प्रश्न पर विचार किया लेकिन हमेशा इसी नतीजे पर पहुँचे कि लेखक चाहिए। मण्डल अवश्य चाहता है कि उसे अच्छे-से-अच्छे और ऊँचे दरजे के लेखक-बन्धुओं का सहयोग मिले। जिन लेखकों के पास इस तरह का साहित्य--लिखित या अनुवादित पुस्तकें, लेख आदि—हो वे अपनी शर्तों के साथ मंडल को अवश्य भेजने की कृपा करें। 'जी० सा०' हमारी निगाह में मण्डल का नहीं सारे हिन्दी लेखकों व प्रकाशकों का पत्र है। अतएव इसके लिए वे जो कुछ ऐसी लेख-सामग्री भेजें वह बिना मूल्य होनी चाहिए--चाहें तो वे इसे 'धर्मार्थ' समझ लें।

पुस्तकों के सम्बन्ध में भी एक बात ध्यान में रखने की ज़रूरत है। सस्ता-साहित्य-मण्डल का उद्देश सस्ता साहित्य देना है, जिससे वह हमारे ग़रीब देश के झोंपड़ों तक पहुँच सके। इसमें लेखक भाई-बहनों का सहयोग भी ज़रूरी है। सही बात तो यही है कि लेखकों को यदि सुख-निर्वाह के योग्य मेहनताना या दक्षिणा मिलना आज की ग़रीबी में शक्य न हो तो कम-से-कम निर्वाह-पारिश्रमिक अवश्य ही मिलना चाहिए। लेखक को पूरा पारिश्रमिक मिलने के बाद जो कीमत पुस्तक पर लगे उसी में उसे खरीदना खरीदार को उचित है। वही उस पुस्तक का वाजिब दाम है। लेकिन आज के ज़माने में यह मुमकिन नहीं दीखता। इस दिशा में बहुत उद्योग करने की ज़रूरत है। परन्तु जबकि मण्डल लागत-मात्र पर पुस्तकें देने का उद्देश रखता है तब वह लेखकों से भी यह अपेक्षा रखना चाहता है कि वे उसे थोड़ी दक्षिणा पर पुस्तकें दें--खासकर उन लेखकों से जो पहले ही सम्पन्न हैं, जिनके सुख या निर्वाह की दूसरी व्यवस्था मौजूद है।

अब रही कार्यकारी योजना। बड़ा अच्छा हो यदि लेखक, विचारक व विशेषज्ञ अपनी-अपनी योजनायें मण्डल में विचारार्थ भेजने का कष्ट करें। लेखों या पुस्तकों के विषय ही नहीं, कौन उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए उपयुक्त लेखक हैं, कितनी पृष्ठ-संख्या होनी चाहिए, विषय-प्रतिपादन कैसा होना चाहिए, आदि बातों पर भी रोशनी डालने की कृपा करें।

सवाल रह गया कि जीवन-परक साहित्य कैसा दिया जाय? इसमें शक नहीं कि समाज के वर्तमान जीवन से सभी असन्तुष्ट हैं—उसमें परिवर्तन चाहते हैं। वह किस दिशा में हो? समाज की मौजूदा विषमता किसी के भी लिए सुखकर साबित नहीं हो रही है। उसे मिटाना है। अबतक हिंसा के द्वारा समाज में शान्ति, समता, व्यवस्था, सुख लाने का प्रयत्न किया गया है। वह सफल नहीं हुआ। अब जगत् के सभी विचारशील लोग मानते हैं कि शस्त्र-प्रयोग अर्थात् दबाव व बदला लेने की भावना से प्रेम, सहयोग का भाव समाज की स्थिरता, विकास, शान्ति, प्रगति सबके लिए अच्छा है। अतएव हमारा भावी समाज समभाव, सहिष्णुता, सहयोग की नींव पर खड़ा होना चाहिए, न कि कलह, द्वेष, बदले की भावना पर। ऐसी हालत में जीवन-परक साहित्य वही हो सकता है जो समाज को इसी दिशा में ले जावे। हमारे वर्तमान जीवन के किन अंगों में क्या दोष पैदा हो गया है व क्या सुधार होना चाहिए; या समाज में आमूल परिवर्तन ही होना चाहिए—इसके सम्बन्ध में मित्र लोग अपने विचार, अनुभव, योजनायें 'जी० सा०' में भेजने की कृपा करें। जहाँ कहीं ऐसे परिवर्तन हुए हों, हो रहे हों, उनका वर्णन, चर्चा आदि की जाय। ऐसे विषयों-प्रसंगों को लेकर लेख, कविता, कहानियाँ, संवाद आदि लिखे जायँ। साफ ही है कि प्रसंग कल्पित नहीं वास्तविक होने चाहिएँ। पाठक यह सहज ही देख सकेंगे कि यह काम अकेले सम्पादक के बूते का नहीं है। वर्त्तमान सम्पादक अपना सारा समय 'जी० सा०' में लगाता रहे तब भी उसके लिए यह शक्य नहीं है। कृपालु विद्वानों, अनुभवियों, सुधारकों, साधकों व विचारकों के पूर्ण सहयोग के बिना यह सम्भव नहीं। 'जी० सा०' अपनी पूरी शक्ति व प्राण के साथ सभी हिन्दी-भक्तों से प्रार्थना करता है कि वे ऐसी सामग्री भेजने की कृपा करते रहें।

हरिभाऊ उपाध्याय

कमाई

[जैनेन्द्रकुमार]

कमाई में भी पाप तो है ही। प्रत्येक गृहस्थ को बराबर इसका प्रायश्चित करते रहना चाहिए। इस ईश्वर की दुनिया में से अपना कहकर जिस धन को खींचते हैं और अपने तहत में हम रखते हैं वह धन और उसका उपयोग ईश्वर का यानी सबका है। ईश्वर की सेवा से हटाकर उसे अपने आराम में लगाना चोरी नहीं तो और क्या है? फ़र्क यही कि यह चोरी जायज़ समझी जाती है जबकि मामूली चोर अपना गुनाह जानता है। इसीलिए पहली तरह की चोरी और भी ख़तरनाक है। धनवान् इसी तरह की चोरी के पाप की पोट बाँधकर धनवान् बनता है। इसीसे तो इंजील ने कहा कि सुई के छेद से हाथी भले निकल जाय, असल सुख धनवान को नही मिल सकता। धन तो दुख की पुड़िया है। सोने की बेड़ी पहनकर जो क़ैदी सुख माने उस-सा भोला कौन होगा? मैं समझना चाहता हूँ कि जिसका पड़ौसी भूखा जग रहा है और बच्चे बिना दूध रोते-रोते अब पलक मींच सो गये हैं वह अपनी आत्मा को किस नरक में डालकर होश में आराम पा सकता है? ऐसे धन में भूले प्राणी का भगवान् ही सहायी हो!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्लील और अश्लील

[माधव विनायक किबे]

सुप्रसिद्ध शास्त्रज्ञ आइंस्टाइन ने सापेक्षता का जो सिद्धान्त भौतिक बातों में स्थापित किया है वही सामाजिक एवं नैतिक बातों में अश्लीलता पर लागू होता है। कोई घटना, लेख या बात श्लील है या अश्लील, यह समाज की संस्कृति एवं सभ्यता पर अवलम्बित है। जो बात किसी समाज में श्लील समझी जाती हो वह उसकी दूसरी सतह पर अश्लील समझी जा सकती है। इतना ही नहीं एक ही सतह पर देश-कालादि भेद से वह सापेक्षता के प्रभाव से नहीं बचती। उदाहरणार्थ, ८०० बरस पूर्व का यूरोपीय एवं भारतवर्षीय समाज का विचार करें तो ऐसा दिखाई देगा कि समाज की एक ही सतह में, जैसे रईस वर्ग में, जो कृत्य उधर श्लील समझा जाता था उसकी गणना इधर अश्लील में होती थी। नृत्यकलादि का उदाहरण लीजिए। भारतवर्ष में एक समय में—जैसा तत्कालीन वाङमय से पता चलता है—नृत्य सभ्य माना जाता था, और भारतवर्ष की जातियों यानी समाजों में, अब भी सभ्य स्त्रियाँ नृत्य करती हैं। वैसा कई समाजों में अब नहीं, परन्तु यूरोप में ऊँची से लेकर नीची श्रेणियों तक नृत्य श्लील समझा जाता है बल्कि युद्धपूर्व जर्मनी में भी समझा जाता था। अब यहाँ की तरह उसको सार्वजनिक रूप में सभ्य समाज के लिए स्वयं करना तो दूर देखना भी अश्लील समझा जाता है। पिछली शताब्दी के आखिरी चौथे हिस्से में नृत्य-दर्शन-विरोधी समिति (Anti-nauch Society) की स्थापना हुई थी। जो बात आचरण की वही दृश्य, श्रव्य, पठन इत्यादि बातों की है। इतना ही क्यों, सार्वजनिक या निजी रूप में भी सापेक्षता है। कई शास्त्रीय विषय ऐसे हैं कि जिनका अध्ययन करना समाज एवं व्यक्ति के हित का ही नहीं बल्कि आवश्यक होता है हालांकि उसका पठन या अध्ययन सार्वजनिक रूप में अश्लीलता में आ सकता है।

कला भी देश-काल की वजह से ही नहीं, बल्कि समाज की कोटि की दृष्टि से भी, सापेक्षतया, श्लील या अश्लील होती है। चित्र या शिल्प को ही लीजिए। दिगम्बर चित्र एवं शिल्प प्राचीन ग्रीस में कला के उत्तम नमूने समझे जाते थे व सार्वजनिक जगहों में रखे जाते थे। अब सब जगह, उनका समावेश बन्द जगह में, और परदा डालकर किया जाता है। जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ श्लील हैं या अश्लील, यह निश्चित करना कठिन है। सारांश इस प्रश्न को सापेक्षता की कसौटी पर कसकर, सामाजिक या व्यक्तिगत निर्णय करना ही अनिवार्य है। वस्तुतः यह विवाद कभी भी खतम होनेवाला नहीं है। जो दृश्य लेख, भाषण, गीत या कोई अन्य प्रकार, किसी समाज, वर्ग, व्यक्ति या वर्ण को किसी काल या संस्कृति अथवा सभ्यता की स्थिति में श्लील लगे तो वह सापेक्ष ही हो सकता है। इस निश्चय पर पहुँचना समाधानकारक मालूम पड़ता है।

ऐसा लगता है कि कोई चित्र या प्रसंग स्वयं श्लील अथवा अश्लील नहीं होता। वह सामाजिक सतहों या थरों से ही नहीं बल्कि व्यक्ति की भूमिका पर से भी सापेक्ष है। एकांत में नग्न स्त्री अश्लील नहीं बल्कि उचित ही है। लेकिन जब व्यक्ति की लौकिक भूमिका होती है तब ऐसा दृश्य अश्लील ही समझा जावेगा। हम सदा नग्न बालकों को देखते हैं, या रति-प्रसंग में स्त्री पुरुष को देखती है उस समय अश्लीलता मालूम नहीं पड़ती। जंगली जाति के नवागत पुरुष को, वस्त्रधारी लोग विशेषतः स्त्रियाँ, जो अपने शरीर के कुछ अंग को खुला रखती हैं, अश्लील मालूम पड़ेगी। इन बातों पर विचार करते हुए जो व्याख्या पूर्व लेखकों ने दी है वह मेरे विचार में अतिव्याप्ति के दोष से लांछित है।

कालिदास, शेक्सपियर आदि कवियों या नाटककारों की प्रतियों में ऐसे कई वर्णन व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उच्चारण हैं जो उनके समय में अश्लील नहीं समझे जाते थे बल्कि तत्कालीन संस्कृति एवं सभ्यता के अनुकूल थे। जैसे—

ज्ञातः स्वादो विवृतवसनां को विहीतुः समर्थः।
(मेघदूत)

A sailor might itch her wherever she liked. (Tempest)

रीति-शास्त्रों के ग्रंथों में संभोग-शृंगार का भी वर्णन है। वह क्या अश्लील है? पुराणों में भी ऐसे कई वर्णन हैं जो आधुनिक दृष्टि से अश्लील कहे जा सकते हैं। लन्दन में एकाध चल-चित्रपट के गृह पर (ई. स. १८३७ में) ऐसा लिखा देखने में आया था कि "१६ वर्ष से कम के प्रेक्षक यहाँ देखने के लिए नहीं आ सकते।" कई यूरोपीय ऐतिहासिक पुस्तकोंमें उदाहरणार्थ "The strange story of Hitler's Death 1940", अश्लील वर्णन है। सारांश किसी भी वस्तु या प्रसंग में श्लीलता या अश्लीलता का गुण सापेक्ष है। उसकी कोई सिद्धान्तरूप व्याख्या नहीं बन सकती।

सरस्वती-निकेतन, इन्दौर]

स्वगत

[हरिभाऊ उपाध्याय]

जब मैं तेरी 'सेवा' करता हूँ तो अपने 'अहम्' से उसे दूषित कर देता हूँ; लेकिन जब मैं तेरे लिए प्रार्थना करता हूँ तो तुझे मंगलमय परमात्मा की गोद में बिठाता हूँ।

× × ×

यदि तेरा दुख या विपता मुझे तेरी सहायता के लिए नहीं दौड़ाती तो या तो दुख या विपता से मेरा पाला नहीं पड़ा या मनुष्यता से नाता नहीं जुड़ा।

× × ×

ये सेवार्थ बढ़े तेरे क़दम रुक क्यों गये? क्या कुछ हिसाब लगाने लग गये?

× × ×

एक ने कहा—सेवाक्षेत्र में भी चालाकी—चतुराई की ही चाँदी होती है। जवाब मिला—पर सोना तो नहीं होता न?

× × ×

यदि तू मेरे लिए बुरा भाव रखता है तो अवश्य ही यह मेरी किसी बुराई का एक परिणाम है। यदि मैं तेरे लिए अपने यहाँ फूल ही बोता जाऊँगा, तो यदि तेरी संस्कारिता नहीं तो स्वार्थ अवश्य तुझे अपने यहाँ फूल बोने पर मजबूर कर देगा।

× × ×

यदि तू मेरे प्रति कठोर होता है तो अभी तुझे अपने प्रति ही अधिक कठोर होने की जरूरत है। अहिंसक कठोरता परिणामतः अपने प्रति ही कठोरता हो जाती है।

× × ×

तूने मेरे कार्यों का तो हिसाब लगा लिया, मेरी भावना को कैसे तौलेगा?

× × ×

जब मैं कम बोलता हूँ, कम हलचल मचाता हूँ तो तू समझता है मैं अकर्मण्य हो रहा हूँ। मगर मैं मानता हूँ कि मैं जबरदस्त सुप्त शक्तियों को जगा व इकट्ठा कर रहा हूँ।

× × ×

दुनिया ने तुझे निकम्मा ठहरा दिया तो तू क्यों घबराता है? जिस दिन तेरा दिल तुझे निकम्मा ठहरा देगा उस दिन सारी दुनिया की प्रशंसा तेरे काम नहीं आवेगी।

× × ×

दुनिया की प्रशंसा नहीं दुनिया का आदर कीमती चीज़ है। प्रशंसा मुहँ से, प्रेम आँखों से, आदर व्यवहार से टपकता है।

× × ×

सत्य बड़ा कि अहिंसा? आम बड़ा कि रस?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रचारक से

[वियोगी हरि]

जगत् आज तुम्हारा कृतज्ञ है। तुम्हारी प्रेरक सेवाओं से भला कौन इन्कार कर सकता है ? प्रत्येक प्रवृत्ति-क्षेत्र के तुम मानो गन्धवाही पवन हो।

प्रचार करते समय तुम कभी विचार के प्रकारों पर ध्यान नहीं देते। सुगन्ध और दुर्गन्ध में पवन कब अन्तर करता है ? उसका काम तो गन्ध का केवल वहन करना है।

तुम अपनी अद्भुत प्रचार-शक्ति से किसी भी विचार को इस तरह सर्वत्र फैला देते हो, जैसे सर्दियों में कभी-कभी समस्त वातावरण को कुहरा व्याप्त कर देता है--और खुद की अवसरवादिता से उस कुहरे को एक क्षण में तुम काट भी डालते हो।

सुनते हैं कि बहुत प्राचीन काल में प्रचार-शास्त्र शायद था ही नहीं। इसकी गरिमा या महिमा को किसी ऋषि या मुनि ने नहीं गाया।

वे कहते थे कि फूल अपनी गन्ध का कहाँ प्रचार करने जाते हैं ! पर वे उपमा-प्रयोगी लोग इस मोटी बात को भूल जाते थे कि मनुष्य प्रकृति के सहारे रहनेवाला कोई फूल-पत्ती नहीं है, वह एक प्रयत्नशील सर्वश्रेष्ठ प्राणी है।

उस युग का जीवन-शोधक अक्सर मूक साधन के ज़रिये अपने मत को फैलाने का यत्न करता था। स्वभावतः किसी मूक निश्चल मनुष्य को देखकर लोगों को काफ़ी कुतूहल होता होगा और उसके विषय की आसपास कुछ चर्चा भी फैलती होगी।

अपनी बातों को फैलाने के उनके अड्डे और साधन भी अद्भुत होते थे--ऊबड़-खाबड़ स्थानों की खूब यात्राएँ होती थीं, नदियों के तटों या पहाड़ों पर अव्यवस्थित मेले लगते थे, और अजीब-अजीब उत्सव मनाये जाते थे।

कहते हैं कि भिक्षु लोगों ने दूर-दूर के देशों में भी जाकर धर्म को फैला दिया था। पर इस-पर तुम शायद विश्वास नहीं करोगे। कारण कि भिक्षुओं को न तो विविध भाषाओं का ज्ञान था, न अखबारों और ध्वनि-प्रसारक यन्त्रों के ही उनके पास कोई अचूक साधन थे। यह सच है कि उनकी अजीब वेष-भूषा देख-देखकर लोग उन्हें ज़रूर घेर लेते होंगे, और पर्याप्त ज्ञानोदय न होने के कारण उन अजनबियों की तरफ़ सम्भवतः कुछ खिच भी जाते होंगे। ऐसा ही उनका धर्म-स्थापन होता होगा।

तुम्हें यह देखकर ज़रूर दुःख होता होगा कि उन अद्भुत साधनों के अवशेष परिवर्तित रूप में आज भी कुछ-कुछ बाक़ी रह गये हैं ! निश्चय ही अभागे हैं वे असंस्कारी लोग, जो प्रचार-यन्त्र का श्रद्धापूर्वक न तो उपयोग करते और न उससे पूरा-पूरा नैतिक लाभ उठाते हैं।

प्रचार करने के लिए पुराने ज़माने में ऐसा था ही क्या ? न तब धर्मोत्तेजक चुनाव लड़े जाते थे, न शान्तिमूलक युद्ध पैदा किये जाते थे, और न इतने लम्बे-चौड़े लोक-सेवा के ही क्षेत्र थे। तुम्हारे युग में सृजन और संहार की सैकड़ों संस्थाएँ हैं, समस्याएँ हैं और योजनाएँ हैं।

तुम्हारे विराट् कन्धों पर बड़ी-बड़ी ज़िम्मेदारियाँ हैं। तुम्हें आज सिद्ध करना है कि सेवा और रचना की प्रस्तावित योजनाएँ और प्रवृत्तियाँ धर्मप्रेरित हैं, और धर्म का तत्त्व चुनावों और प्रतिस्पर्धी आन्दोलनों की सफलता में बसता है।

तुम्हारी शोध ने तो एकदम युग पलट दिया है। 'किये जाओ' की जगह जबसे तुमने 'कहे जाओ' का महामन्त्र प्रतिष्ठित किया, लोक-प्रवृत्तियाँ तबसे आलोकित हो उठी हैं।

नये-नये जन-आन्दोलनों को जन्म देकर तुमने सिद्ध कर दिया है कि विज्ञापन-तत्त्व वैज्ञानिक है, और आचरणवाद अवैज्ञानिक।

तुम्हारी मान्यता है कि प्रचार-यन्त्र जितनी ज्यादा ताकत का होगा, उससे उतने ही बड़े चमत्कारी परिणाम निकलेंगे। इस यन्त्र-विज्ञान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से शुभ्र कपास देखते-देखते कोयला हो जाता है, और कोयला बन जाता है कपास।

शिवि और दधीचि अपना मांस और हड्डियाँ देकर भी, प्रचार का समर्थन न मिलने से, 'त्यागमूर्ति' न बन सके—जहाँ तुमने कइयों को अपनी वाणी और लेखनी के बल से वैसा बना दिया। और 'केसरी' तो कितने ही तुम्हारी बदौलत कानन छोड़-छोड़कर बस्तियों में आ बसे हैं।

तुम्हारे हाथ में यों तो आज अनेक अस्त्र हैं, पर सबसे ज़बर्दस्त अस्त्र तो अख़बार का हैं। इस ब्रह्मास्त्र से तुम अघटित को भी घटित कर सकते हो।

तुम्हारी आँखों से किसी घटना को जब दर्शक देखते हैं, तो उन्हें वह या तो बहुत बड़ी दिखाई देती है या बहुत छोटी। यथार्थता के तो तुम खंड-खंड कर देते हो।

बीड़ी हो या गीता, अपना अस्तित्व क़ायम रखने के लिए बाज़ार की शोभा बढ़ानेवाली हरेक चीज़ को तुम्हारा द्वार खटखटाना पड़ता है।

तुमने साहित्य और संगीत में भी एक नया युग उपस्थित कर दिया है। जिन विषयों को कवि-कल्पना ने कभी छुआ भी नहीं था, उनपर भी तुमने ठोस कविताएँ रच डाली हैं। इसी तरह नये-नये रागों का भी तुमने आविष्कार या सृजन किया है।

जिस किसी चीज़ को तुम हाथ में लेते हो-उसकी धूम मच जाती है। तुम चाहते हो कि उसकी चर्चा को अधिक-से-अधिक आँखें और कान किसी-न-किसी तरह छू लें।

तुम मानते हो कि अलंकारों में सर्वश्रेष्ठ 'अतिशयोक्ति' है, जो हृदय की विशालता या उदारता को बड़े रसात्मक ढंग से प्रकट करता है।

तुम्हारे तर्क आकाश-मंडल और भूमिगर्भ तक पहुँचते हैं। प्राचीन-से-प्राचीन इतिहास और नवीन-से-नवीन विज्ञान को भी उसके पीछे-पीछे चलना पड़ता है।

प्रचारक, तुम न होते, तो लोहे, पत्थर-जैसे वज़नदार विषय काग़ज़ या रुई की तरह जन-आन्दोलनों के वातावरण में कैसे चढ़ या उड़ सकते थे?

तब तुम्हारे प्रति जगत् क्यों न अपनी कृतज्ञता प्रकट करे? तुम महान् हो, तुम धन्य हो!

काव्योद्देश

मैं काव्य का एक ही मापदण्ड मानता हूँ और वह यह है कि उसका हमारी धमनियों पर, रक्त पर, हृदय पर, चित्त पर, मन पर, प्राणों पर कैसा प्रभाव पड़ता है? यदि उसका प्रभाव शुभ है, कल्याणप्रद है, आनन्दमय है, ऊपर उठानेवाला है, आत्मा को, चरित्र को नीचे गिरानेवाला नहीं, तो मैं उसे सत्काव्य की कोटि में रक्खूँगा—भले ही उसमें कविता का रस कम हो और नवरस से ओतप्रोत कविता को भी मैं कविता के नाम से सम्बोधित न करूँगा यदि उसका प्रभाव इसके विपरीत हो। उसे कविता नहीं, पागल का प्रलाप समझना चाहिए।

—सोहनलाल द्विवेदी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक बनाम प्रकाशक

प्रिय सम्पादकजी,

'जीवन-साहित्य' के पिछले एक अंक में आपने लेखक और प्रकाशक के संबंध की समस्या पर लिखा है। आप चाहते हैं कि उनके बीच एक आदर्श इक़रारनामा बने। उसमें दोनों पक्ष समान न्याय पावें।

इक़रारनामे से पहले की कुछ और बातें हैं। इक़रारनामा अक्सर जिस कारण से बनना ज़रूरी हुआ करता है, उस कारण में ही उसके टूटने के बीज होते हैं। इसलिए काफ़ी ज़मीन ऐसी है जिसपर इक़रारनामे से पहले विचार हो जाना चाहिए।

दो व्यक्ति किसी बाहरी अदालत को बीच में लेकर एक सामान्य इक़रार पर आते हैं तो उस इक़रार की क़ीमत कम है। जाने किस पल वह टूट जाय। उसमें दोनों का विश्वास आपस में नहीं होता, अदालत में होता है। तब इक़रारनामे का वह काग़ज़ उन दो को मिलाने के बजाय फाड़ने के अधिक काम आने लगता है।

इक़रारनामे पर आने से पहले बहुत ज़रूरी है कि दोनों पक्ष एक-दूसरे के प्रति सद्भाव की आवश्यकता पर आवें। अविश्वास रखकर इक़रारनामे की बड़ी-से-बड़ी कलमों की क़ीमत सिफ़र हो जायगी। मान लीजिए कि चालीस फ़ीसदी रॉयल्टी की क़लम बन जाती है; लेकिन लेखक प्रकाशक को बेईमान मानता है। तब काग़ज़ी चालीस से लेखक को कुछ भरोसा न बँधेगा। इकरारनामे के नीचे यह निश्चय है कि दोनों पक्ष वचन के पक्के हैं और तय हुई क़लमों का पालन करना चाहते हैं।

यह तो कम-से-कम है। इतना भी नहीं है तो इक़रारनामा व्यर्थ है। लेकिन मैं इससे आगे बढ़ना चाहता हूँ। दोनों में अविश्वास न हो, इतना ही नहीं, बल्कि उनमें विश्वास होना चाहिए। दोनों में यह वृत्ति होनी चाहिए कि हम-से दूसरे के लाभ का भाग बढ़ता ही जाय।

इक़रारनामों का भाग्य कुछ बहुत स्पृहणीय नहीं देखा जाता। राष्ट्रों के बीच इक़रार हुए। फिर भी लड़ाइयाँ हुईं। इतनी जो अदालतें बैठी हैं, टूटे इक़रारों के कारण। इक़रार क्यों तोड़ा जाता है, इसके कारणों में भी जाने की ज़रूरत है।

इक़रारनामा बनते समय चेतना दोनों ओर अधिकारों की रहती है। मतलब, दोनों ओर खींच रहती है। दोनों के मनों में एक इक़रारनामे के दो आशय रहते हैं। दोनों अपने-अपने हित में उसके मायने निकालते हैं। ऐसा इक़रार उल्टे वैर की गाँठ बन जाता है।

हिन्दी में लेखक-प्रकाशक की समस्या के समाधान के लिए पहली बात यह ज़रूरी है कि जिस प्रकाशक की नीयत पर लेखक को विश्वास न हो, उसके साथ संबंध न बाँधे। सिर्फ़ पैसे का संबंध आगे विष-फल लाता है। पैसे से आरंभ करके जबतक वह संबंध अधिकाधिक मानवीय अर्थात् प्रीति का संबंध नहीं बनता जाता तबतक वह अनिष्ट ही करता देखा गया है। रुपये के लेन-देन के पीछे सद्भावना चाहिए ही। उसके बिना रुपये का लेनदेन तरह-तरह की दुर्भावनाओं को जन्म देता है। लेखक लाचार है इसलिए यदि झुकता है, और प्रकाशक उसकी लाचारी से लाभ उठाता है तो यह दोनों के हक़ में पाप है। दोनों को इसके कारण नरक मिलेगा। कोई दूर का नरक नहीं, समाज का नरक। दोनों की आत्मा पर लपेट और उलझन बढ़ेगी। आज का पैसे का व्यवहार अधिकांश मानव-जाति की जकड़ को बढ़ा रहा है। उसके पीछे लालसा है, प्रीति नहीं। इस तरह धन धर्म का साधन न होकर, पाप का कारण बन रहा है। पूँजीवाद इसीका नाम है कि पूँजी को हम पहले और आदमी को पीछे गिनें।

तर्क हो सकता है कि लेखक और प्रकाशक के हित क्या विरोधी नहीं हैं? किसी पुस्तक के लाभ में से एक का भाग जितना अधिक होगा, दूसरे का उतना ही कम होगा। अर्थात्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक को अपने हित के लिए लेखक को चूसने की वृत्ति रखनी चाहिए, और लेखक में जितना बने, उतना प्रकाशक से वसूलने की तबीयत चाहिए। कहा जायगा कि स्वार्थ प्रधान है, इसलिए लेखक और प्रकाशक में इस प्रकार की मनोवृत्ति भी स्वाभाविक है। उसके प्रमाण भी मिलते हैं। लेखकों के मुँह की कटूक्तियाँ अखबारों में पढ़ मिलती हैं। और प्रकाशकों में भी औदार्य की अतिशयता तो देखी नहीं जाती।

मुझे इस तर्क के विरोध में कुछ कहना नहीं है। पर उसपर क़ायम रहकर इक़रारनामे की बात करना फ़िज़ूल होगा। जिन दो हितों में सर्वथा विरोध है, उनके बीच तो फिर लड़ाई ही चाहिए, समझौता क्यों चाहिए ? समझौते की यदि बात हो सकती है तो तभी जबकि कहीं जाकर उनमें एकता भी मानी जाय। मैं यह कहना चाहता हूँ कि जिस ज़मीन पर वह एकता है, इक़रारनामा उसी ज़मीन पर खड़ा होना चाहिए। उसकी भाषा और धारायें भी तद्नुकूल होनी चाहिएँ।

अर्थात् लेखक और प्रकाशक के संबंधों के प्रश्न को लेखक की अथवा प्रकाशक की जगह से खड़े होकर नहीं, बल्कि सम-सामान्य नागरिक की जगह से खड़े होकर, अर्थात् नीति के बिंदु से, देखना चाहिए। तब वह बीच की धरती प्राप्त होगी जहाँ स्वार्थों का संतुलित समन्वय है।

जो समाज हम चाहते हैं, उसका पहला सिद्धान्त होगा आर्थिक-समानता। समानता का मतलब गज़-फुट के पैमाने की नाप नहीं; बल्कि यह कि सबको उनकी आवश्यकता भर मिले। बालक दो रोटी में छक जाता है तो यह नहीं कि जवान की तरह छः रोटियाँ उसे भी मिलें। इस तरह का भेद तो रहना इष्ट ही है। यानी उन दोनों की छः और दो रोटियों का जोड़ निकाल कर जो चार-चार रोटी बाँट देने के सिद्धान्त को समता का आदर्श माने, उसकी हम बात नहीं करते। इस तरह समाज के व्यक्तियों में, सुविधा, क्षमता के मुताबिक, उनकी आर्थिक स्थितियों में किंचित भेद तो होगा ही। पर वह किसी को चुभेगा नहीं। मसलन् एक साधू को लाचार नहीं किया जा सकेगा कि वह एक वैश्य गृहस्थ की भाँति कई बकस-संदूक रक्खे।

इस दृष्टि से विचार करने पर मालूम होता है कि प्रकाशक और लेखक की स्थितियाँ भिन्न हैं। प्रकाशक रुपये के धरातल पर व्यवसायी है। लेखक का व्यवसाय विचार के धरातल पर है। फलतः रुपये के धरातल पर लेखक अव्यवसायी है। इसलिये रुपये की जहाँ बात है, वहाँ प्रकाशक चतुर और लेखक अचतुर हो तो कोई अचरज नहीं। मैं उस दिन को दुर्भाग्य का दिन समझूंगा जब लेखक प्रकाशक की व्यावसायिक चतुराई की होड़ करना चाहेगा। आज पैसे की कीमत जरूरत से ज्यादा होगयी है। इसी से उस चतुराई की क़ीमत भी ज्यादा कूती जाने लगी है। आज वैश्य ब्राह्मण से भारी है। पर पहले ऐसा नहीं था। और समाज शुद्ध होगा तो फिर ऐसा नहीं रहेगा। अर्थात् प्रकाशक की व्यावसायिक कुशलता यद्यपि बुरी चीज़ नहीं, पर वह बहुत ऊँची चीज़ भी नहीं है। उसी तरह लेखक की 'अ-व्यावहारिकता' एकदम निकम्मी चीज़ नहीं है।

यह बिलकुल ज़रूरी है कि लेखक को, यदि वह अपने काम के प्रति सच्चा है तो, जीने की ही नहीं, लेखन की भी सुविधा मिले। उसके बच्चों को दूध, सबको अन्न और आवश्यक साग-सब्जी और घर और वस्त्र और शिक्षा इत्यादि मिलें। इनके उपरांत उसे आवश्यक पुस्तकें, पत्र इत्यादि भी मिलें। इसका ज़िम्मा समाज की ओर से उन लोगों पर हो जो लेखकों के श्रम का आदान-प्रदान और वितरण करके धन बनाते हैं। दूसरे शब्दों में, यह ज़िम्मा प्रकाशक का हो।

Social Economy की दृष्टि से उचित यही होगा कि व्यावसायिक कुशलता रखनेवाला प्रकाशक लेखक को उसकी प्रकृति के लिए विदेशी व्यवहार-कुशलता की आवश्यकता से एकदम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चित कर दे। लेखक के पास अपनी जिस एक प्रकार की कुशलता है वह समाज को उसी का दान करने में लगा रहे। दूसरे प्रकार की चिन्ता उसके पास तक आने दी जाती है, तो इससे समाज के प्रति उसके आत्म-दान में बाधा होती है। प्रकाशक की व्यावसायिक कुशलता का लाभ क्यों न समूचे समाज को मिले? अर्थात् हम नहीं चाहेंगे कि प्रकाशक अकुशल हो। पर हम अवश्य चाहेंगे कि प्रकाशन-व्यवसाय की कमाई को वह अपनी कमाई न माने और आवश्यकता—जितना ही उसमें से अपनो जीविका निमित्त वह ले। वैश्य को अवश्य अपने वैश्यत्व के उपयोग का अवसर मिलना चाहिए। चाहिए कि उसकी प्रकृति में जो एक खास गुण है, वह विकसित हो और समृद्धि पाए। पर इस प्रकार जो धन का संग्रह हो, उसमें ममता न रक्खे। वैश्य इसलिए वैश्य है कि वैश्यत्व का वह सबके प्रति दान दे और ब्राह्मण अ-वैश्य होकर अकृतार्थ न हो।

इस लिहाज़ से प्रकाशक को अपना सब अतिरिक्त धन परनिमित्त मानना चाहिए। और क्योंकि उसके पास अतिरिक्त धन है, इसलिए उसी का जिम्मा है कि देखे कि लेखक को अभाव नहीं रहता है। लेखक का जिम्मा सिर्फ़ इतना होना चाहिए कि जो विशेष गुण उसकी प्रकृति में है, उसका सर्वतोभावेन वह दान करता चले।

आर्थिक समस्या के लिए जैसे किसी राज्य में अर्थ-सचिव को पकड़ा जाता है, वैसे ही हमारे बीच में यदि अर्थकष्ट देखने में आता है तो हमारी वैश्य-शक्ति को पकड़ा जाना चाहिए। यह जो आज विषमता फैल रही है सो इसीलिए कि लोग स्वधर्म भूल गये हैं। ब्राह्मण पेट की चिन्ता से परेशान है, क्षत्रिय गुलाम हो रहा है और वैश्य धर्म-व्याख्या कर रहा है।

ब्राह्मण सदा अर्थ से मुक्त ही रहता आया है। यह ब्राह्मण की शोभा है। वैश्य के साथ क्या वह हिसाब-किताब में पड़े! ऐसे तो वैश्य जीता रक्खा है। ऐसे ब्राह्मणत्व लज्जित होगा और वैश्यत्व की महिमा बढ़ेगी। वह अभी काफ़ी से अधिक बढ़ी हुई है। तभी तो आज की सत्ता को पूँजीवादी सत्ता कहना होता है। यह सच है कि पूँजीवाद का सवाल लेखक और प्रकाशक के इक़रारनामे के सवाल से बड़ा है। यह भी स्पष्ट है कि और परिस्थितियों के अपरिवर्तित रहते हुए आज के दिन जो एक न्याय-संगत इक़रारनामा लेखक और प्रकाशक के बीच बनाया भी जायगा, वह कामचलाऊ ही होगा। उसके आगे भी बढ़ना काफ़ी शेष रह जायगा।

आज की परिस्थिति में वह समस्या तिखूँट है। पहले लेखक है जो श्रम करता है। दूसरा प्रकाशक है जो पूँजी लगाकर छापता है। तीसरा विक्रेता है जो खपत करता है। प्रत्येक पुस्तक इन तीन के सहयोग से चलती है। ये तीनों उस पुस्तक के लाभ पर पलने चाहिएँ। इनमें तीनों का गुण-स्थान किसी क़दर भिन्न है। विक्रेता किसी नीति-सिद्धान्त से कम सम्बन्ध रखता है, वह बाज़ार का आदमी है। पैसे की खातिर वह चीज़ बेचता है। प्रकाशक भी बैठा बाज़ार में है; लेकिन नीति से भी उसे कुछ लेना-देना है। उसे अपनी प्रतिष्ठा की चिन्ता है। तीसरा लेखक बाज़ार का प्राणी नहीं है। उसकी दुनिया कुछ दूसरी है। वह पुस्तक से प्राप्त होनेवाले अर्थ से अधिक उस पुस्तक के प्रभाव में मन रखता है। ग्राहक से अधिक वह पाठक चाहता है। रसज्ञ पाठक उसके निकट धनाढ्य ग्राहक से कहीं अधिक क़ीमती है।

आजकल देखा जाता है कि पुस्तक-विक्रेता इन तीनों में सबसे आज़ाद जीव है। वह अपने कमीशन की दर तय कर सकता है। मैंने कई प्रकाशकों को इस बारे में अपनी लाचारी जतलाते पाया है। मेरी कल्पना है कि बाज़ार को पच्चीस फ़ीसदी कमीशन की दर से आगे नहीं जाना चाहिए। पर मान्य दर आज तेतीस है। इसके ऊपर चालीस, पचास, साठ, सत्तर और कभी उससे भी अधिक कमीशन दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विक्रेता से स्वतन्त्र होने के लिए बड़े-बड़े प्रकाशक यत्न कर रहे हैं। विज्ञापन के जरिये वे ग्राहक से सीधा सम्बन्ध बनाना चाह रहे हैं या फिर बिक्री का अपना ही इन्तजाम कर रहे हैं।

साफ़ है कि इस सारे मामले में कल प्रकाशक के हाथ है। उसके पास पूँजी है।

पर वह पूँजी समाज में फैले हुए ग्राहक-पाठकों से आती है। वैसा विस्तृत सम्पर्क प्रकाशक को चाहिए। उसके लिए या तो बीच के मध्यस्थ (middleman) का सहयोग हो या निजी संगठन या ख्याति-प्रतिष्ठा (Goodwill) हो। लेखक इसके बाद आता है। जिन लेखकों का नाम हो जाता है यानी किसी भी कारण सही, जिनके नाम की माँग फैले हुए पाठकों में हो जाती है, प्रकाशकों के साथ सम्बन्ध बनाने में उनको तनिक सुविधा होती है। पर लेखक के पास कोई सीधा साधन अपने नाम की गहराई को नापने का नहीं है। किताब की बिक्री ही वह साधन है। बिक्री के बीच में विक्रेता और प्रकाशक बैठे हुए हैं। इस तरह वह काफ़ी परवश है।

पुस्तक की कीमत रखने में इन तीनों पक्षों का ध्यान रखना होगा। आजकल क़ीमतें मामूली तौर पर लागत की ढाई गुनी से छः गुनी तक रक्खी जाती हैं। इन सबके सम्बन्ध में रॉयल्टी का एक नियम नहीं रक्खा जा सकता।

मोटा सिद्धान्त हम यह मान सकते हैं कि एक पुस्तक से होनेवाली आय में विक्रेता, प्रकाशक और लेखक बराबर के साझी हों। इस तरह लागत पच्चीस है तो शेष पचहत्तर में इन तीनों का भाग भी पच्चीस-पच्चीस हो। यह तब जबकि किताब लागत से ठीक चौगुनी क़ीमत की हो। जहाँ कीमत इससे ऊपर हो या इससे कम वहाँ पर आय को उसी हिसाब से बाँटा जाय।

पर परिस्थिति शायद इसका मौक़ा नहीं देगी। विक्रेता क्यों कम कमीशन की दर तक आने लगा? उसने पुस्तक बेचने या फिर अच्छी पुस्तक बेचने की कसम नहीं खायी है। वह शायद सहसा तेंतीस कमीशन से कम पर नहीं आयगा। पाठ्यपुस्तक की बात दूसरी है। वहाँ तो पन्द्रह, बारह और दस तक कमीशन पर वह राज़ी हो जाता है। वह केवल जीविका के सवाल के साथ बँधा होने के कारण आपकी नैतिक चर्चा की मर्यादा से बाहर है। इसलिए विक्रेता को छोड़कर प्रकाशक और लेखक को लिया जा सकता है। उनके बारे में मेरा तो यही मत है कि वे दोनों आय में बराबर के साझी हैं।

यहाँ लेखक के दो प्रकार देखने होंगे। एक, जो अपने में से पुस्तक लिखता है। दूसरा, जो संग्रह करता है या बाहर की सामग्री के उपयोग से पुस्तक संगठित करता है। दूसरा काम आदेशानुसार भी कराया जा सकता है।

परिश्रम में इस प्रकार का भेद होने के कारण, या दूसरे कारणों से भी, प्रकाशक के साथ लेखक की शर्तें दो तरह की होती हैं—एक रॉयल्टी, दूसरे कॉपीराइट।

रॉयल्टी के बारे में ये सूचनायें दी जा सकती हैं—

१. लागत से पुस्तक की कीमत तिगुनी के लगभग से चौगुनी तक हो तो रायल्टी बीस फ़ीसदी दी जाय।

२. क़ीमत कम या अधिक होने पर बराबरी के साझे के सिद्धान्त पर रॉयल्टी की दर निश्चित की जाय।

३. क़ीमत तय करते समय लेखक से परामर्श लेना भी उचित होगा।

४. पहले संस्करण पर अनुमानित रॉयल्टी की आधी रक़म तक लेखक को सुविधानुसार पेशगी मिल सके।

५. रॉयल्टी में गर्भित माना जाय (जैसे कि शायद वह है) कि पुस्तक पर अधिकार लेखक का है।

६. हिसाब एक साल से अधिक जमा न होने दिया जाय।

अधिकार-परिवर्तन (copyright) के विषय में ये सूचनायें दी जा सकती हैं —

१. अधिकार-पत्र में जो अधिकार लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर से प्रकाशक को दिये जाँय, उनका स्पष्ट उल्लेख हो।

२. जिसका उल्लेख न हो, ऐसा अधिकार लेखक का समझा जाय।

(उदाहरण के लिए एक-मुश्त रक़म देकर पुस्तक के अनुवाद, उसे घटाने-बढ़ाने या उसके रेडियो पर उपयोग करने या चित्र बनाने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है। उसके लिए अलग और स्पष्ट उल्लेख चाहिए।)

३. पारिश्रमिक की रकम एक रुपया प्रति पृष्ठ (२० × ३० सोलह पेजी) से कम न हो।

४. अनुवाद पर आठ आने प्रति पृष्ठ से कम न दिया जाय।

५. आधी रक़म पुस्तक के स्वीकार पर और शेष आधी मुद्रण पर दे दी जाय।

६. हर नये संस्करण या adaptation पर लेखक का परामर्श और अनुमति प्राप्त करना उचित होगा।

पहले प्रकार की, यानी जिन्हें लेखक की सृष्टि कहा जा सकता है वैसी, पुस्तकों पर यदि रॉयल्टी की शर्त न हो तो एक संस्करण से अधिक का अधिकार न लिया जाय। यानी ऐसी पुस्तकों का 'राइट' अन्ततः सदा लेखक का ही समझा जाय।

लेखक और प्रकाशक में मतभेद होने पर दोनों में से कोई भी सरकारी अदालत न जाय। बल्कि दोनों अपने-अपने प्रतिनिधि चुन दें और ये दो प्रतिनिधि अपनी सहमति से एक तीसरे व्यक्ति को अपने में शामिल करके यथायोग्य जो फ़ैसला दें लेखक और प्रकाशक दोनों को मान्य हो।

पहले ही कहा जा चुका है कि जो दो पक्ष इक़रारनामा करते हैं, वे दोनों ही अपने हित के साथ दूसरे के हित का विचार रखते और उसका संरक्षण करने की शर्त स्वीकार करते हैं। अर्थात् दोनों में से हरेक के ऊपर यह दायित्व है कि उससे दूसरा संतुष्ट रहे। लेखक को अपने से अधिक प्रकाशक और प्रकाशक को अपने से अधिक लेखक के हित का ज़ामिन मानना चाहिए। आर्थिक धरातल पर लेखक अपेक्षाकृत निरीह है। इसलिए उस धरातल पर प्रकाशक का कर्तव्य और लेखक का हक बढ़ जाता है। स्पष्ट रहे कि हमारा कर्तव्य दूसरों का हमारे ऊपर जो हक़ आता है उसके अदा करते रहने में है, यानी अपना कर्त्तव्य दूसरों के अधिकारों की स्वीकृति है। अपने तो अधिकार और दूसरों के कर्त्तव्य का विचार करने की पद्धति सही नहीं है। दूसरों को उनका जब हम हक़ देते हैं तब हम अनायास अपने हक़ का सम्मान करने का भाव उनमें पैदा कर देते हैं। अपने अधिकार पाने का इससे सच्चा और सीधा उपाय दूसरा नहीं है। मेरा पक्का विश्वास है कि सर्वाधिक सफल वही प्रकाशक होगा जो लेखकों का विश्वास-सम्पादन करता है। और लेखक भी वही सफल होगा जो प्रकाशन के बारे में सब बोझ प्रकाशक पर छोड़कर स्वयं अपने लेखन-कर्म के लिए स्वतन्त्र हो रहता है।

'जीवन-साहित्य' में छपे मसविदे की भाषा में अधिकार-चेतना की ध्वनि रह गयी है। पर अभी वह आपकी ओर से भी अन्तिम नहीं है न? उसे आप कुछ देर और खुला रखिए तो कैसा? काफ़ी उस विषय में मंथन चलने के बाद एक लेखक, एक स॰सा॰ मण्डल के प्रतिनिधि और एक शुद्ध नैतिक भूमिका के व्यक्ति को शामिल कर इन तीनों की सम्मिलित सम्मति से इक़रारनामे का अन्तिम मसविदा बने और स्वीकृत हो—यह मैं प्रस्ताव करना चाहूँगा। मैं समझता हूँ इसमें आपको आपत्ति न होगी और यह क्रम सबको संतोष देगा।

आपका सविनय

टीकमगढ़] जैनेन्द्रकुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्य-कला

[सद्गुरुशरण अवस्थी]

प्रत्येक कविता में या तो एक गीत रूप होता है या अनेक। वस्तु की वास्तव में उतनी प्रधानता नहीं रहती। ये रूप ऐतिहासिक तथ्य भी हो सकते हैं और सम्पूर्ण ऊहात्मक भी। पर उनके मानसीकरण में कवि का निश्छल होना परमावश्यक है। कवि की उद्भावना और उसका उद्गार गहरी भाव-विभोरता के भीतरी धक्के से बाहर अभिव्यक्त होता है। इसीलिए उनके प्रभाव में समूचेपन के साथ-साथ नवलता और सच्चाई रहती है, जिसके कारण पाठक का हृदय प्रस्तुत प्रत्युत्तर से झनझना जाता है। पाठक अथवा श्रोता कवि के अनुभव की सचाई का समभागी होता है। मानसीकरण की निश्छलता तथा राग और रूप की यथार्थता स्वतः सशक्त और सच्चा संगीत उत्पन्न कर देती है और उपयुक्त चित्र अथवा चित्रों की सृष्टि होने लगती है। कवि की सीता पाठक का सौन्दर्य-प्रतीक बन जाती है।

फिर जब अनुकरण और आवर्तन होने लगता है तो कुछ समय पश्चात् विषय घिस-घिसाकर पुराना पड़ जाता है। अनेक छुटभइये कवि-लोग आलोक-दर्शन का स्वाँग भरने लगते हैं। उसके साथ ओतप्रोत तो होते नहीं, मुलम्मेवाले चित्र खड़े करने लगते हैं। कुछ असाध्य प्रशंसक इन चित्रों को कला की ऊँची कृति कहकर अभिनन्दन करते हैं। इस हठधर्मी से साहित्य में अस्तव्यस्तता उत्पन्न हो जाती है। रूढ़ि-अनुकरण और परम्परा-प्रशंसा दोनों सच्ची कला की हत्या कर देती हैं। जो एक समय सच्ची कला की कृति थी, आगे चलकर कृत्रिमता की कृति रह जाती है। संस्कृत के पतन-युग में ऐसी कृतियों की भरमार मिलेगी। वर्तमान हिन्दी-कविता में भी सिद्धहस्त कवियों की कृतियों की अन्धानुसरण काव्य का नाश कर रहा है। किसी का नाम लेकर उसे अप्रसन्न करने का साहस मुझे नहीं। उदाहरण रघुराजसिंह के 'राम-स्वयंवर' का दिया जा सकता है। उर्दू के पतन-काल में लखनऊ और देहली—दोनों कोटि की कविताओं में बुलबुल, नरगिस, लैला-मजनू पर लिखे गये अशार इसी का नमूना हैं। सच्ची कला के लिए रूप और राग वस्तु से कहीं अधिक उपयोगी हैं। परन्तु मानसीकरण की निश्छलता और उद्भावना तथा अनुभव की यथार्थता कला के प्राण हैं। इनकी उपस्थिति अनिवार्य रूप से अपेक्षित है। तभी पाठक में समभावना का उदय होता है। अतएव यह निष्कर्ष स्पष्ट निकलता है कि यदि कवि अपने आलोक की वास्तविकता में स्वयं सन्देह करता है तो उसके निदर्शन में वह कैसे भी बहुमूल्य शब्दों का व्यय करे, उसका सारा संगीत निर्जीव, पीतल और ताँबे की ठनठनाहट से अधिक प्रभावोत्पादक नहीं हो सकता। और फिर यदि पाठक जान लेता है कि कवि किसी शव का शृंगार करके उसकी पूजा कराना चाहता है तो उसे भी कोई सौन्दर्यानुभूति नहीं होती और न कोई आनन्द ही आता है। कभी-कभी यह भी सम्भव है कि कवि है तो ईमानदार पर उसकी दृष्टि कुंठित है, अतएव भ्रम-वश वह मृत अश्व को जीवित समझकर उसपर कशाघात करता है। अथवा निष्प्राण विग्रह को सजीव समझकर उसकी आराधना करता है। परन्तु कोई भी तत्त्वदर्शी समीक्षक उसके इस प्रयास को सफल नहीं कहेगा। वर्तमान काल की छायावादी कही जानेवाली कविताओं में इसके उदाहरणों की भरमार है।

अस्तु, यह समझ में आता है कि कविता में वस्तु का ध्यान कवि के उद्गारों की निश्छलता और यथार्थता आँकने के लिए कभी-कभी आवश्यक होता है। इसी हेतु कविता में वस्तु का महत्त्व भी बढ़ जाता है। रूढ़िगत विषय, मरे हुए विचार, मिथ्या, भ्रांत तथा परित्यक्त धारणायें, उसी प्राचीन घिरे हुए पुराने ढंग से निष्कपटता के साथ अब कविता की बाढ़ नहीं बन सकतें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि में मौलिक उद्भावना और प्रेरणा के लिए यह परमावश्यक है कि जीवन के विषय में उसकी विचार-दृष्टि भी मौलिक हो। वह जीवन को अपने ढंग से देखे। यदि आज का कवि जीवन के प्रति उन्हीं परम्पराप्राप्त प्राचीन भावनाओं का पोषक है तो उसकी उद्भावना अवश्यमेव लीक पीटनेवाली और कृत्रिम होगी।

आज के दिन वैदिक देवताओं में कौन जीवन फूँक सकता है? प्रतीक-उपासना में किसको विश्वास हो सकता है? गणेश का प्राचीन विघ्नहारी स्वरूप किस कवि में भावावेश उत्पन्न कर सकता है? निसर्ग के ध्वंसकारी रूपों का भयावह व्यापार केवल प्राचीन मानवता की श्रद्धा का आलंबन हो सकता था। आज का युग तो रहस्यवादी की मानसीकृत परोक्ष सत्ता तक में विश्वास नहीं करता। युग कहता है कि रहस्यवादी की परोक्ष सत्ता उसकी निजी सत्ता है। उसी की अपने लिए निजी भक्ति है। एक विद्वान का तो यहाँ तक कथन है कि रहस्यवाद के नाम से हम अपने ही अहं का मलिनतम, निम्नतम तथा जघन्यतम अवशेष का मानसीकरण करते हैं और उसे अपनी ममता के बल पर ऊँचा उठाकर अपने बनाये हुए देवता के बराबर बिठा देते हैं। यदि कहीं यह रहस्यवादी कवि भी हुआ तो अपने उस छोटे-से देवता को खूब तड़कीले-भड़कीले साहित्यिक वस्त्रों से सजा देता है। परन्तु मनोविज्ञान के अनुसार इसमें तथा ऊपर कही हुई शव-उपासना में कोई अन्तर नहीं। दानवता, विवेकशून्यता, पक्षपात-वृत्ति, अज्ञान, निर्धनता तथा सामाजिक आतंक और शोषण से नृशंसता की पूजा, सब धार्मिक रहस्यवाद अथवा संदिग्ध आदर्शवाद के रूप हो सकते हैं। ऐसे रहस्यवाद को केवल ऋषि-मुनियों, चितकों एवं कवियों की कमजोरी, न्यूनता, स्वप्नशीलता, शिथिलता अमुखरता तथा कायरता का दर्पण समझना चाहिए। ऐसा ही रहस्यवाद अज्ञान और प्रतिक्रिया का पक्ष लेता है और मनुष्य को जीवन-संग्राम में ऐसे अवसरों पर दयनीय, अकर्मण्य, कमज़ोर, श्रांत, निराश, दैव, दैव पुकारनेवाला, आत्महीन बना देता है जहाँ उसे चेतन, सजग, आत्मनिरीक्षक, कठोर संघर्ष करनेवाला होना चाहिए। कवियों अथवा संतों का वह वर्ग जो हमें यह सिखाता है कि भावी स्वर्ग के लालच से हम इस पृथ्वी पर नारकीय यातनाओं को चुपचाप सहन करते जायँ, वह परोक्ष रूप से अन्याय का समर्थन करता है। वह शोषकों को रक्त चूसने में योग देता है और उन्हें आनन्द के साथ भोजन करने-कराने और सुखपूर्वक जीवन-यापन करने में सहायता पहुँचाता है। आज का युग समझदार व्यक्तियों से यह माँगता है कि वे प्रत्येक प्रकार के आवरण को विदीर्ण करके सुनिश्चित वास्तविकता सामने रक्खें। आज की दुनिया में संतों की जीवन-नकार-प्रियता, ऋषियों के इतर-लोकवाद, मुनियों की एकान्त समाधि और दर्शनकारों की लोक-बाह्य मननशीलता को कोई स्थान नहीं है। इस समय तो समस्त वातावरण ज्ञानप्रधान, शक्ति-प्राप्ति के लिए उतावला, छलकते हुए जीवन का निदर्शक, वर्तमान सामयिक जनसत्तात्मक विधान का घोर समर्थक है। केवल इहलोकसिद्धियों की व्याकुलता से ओत-प्रोत है। इहलोकवाद का बाह्यजीवन सामाजिक भावुकता को कुंठित करके सुला देता है और सजीव के प्रति अनुराग को मृत के प्रति आकांक्षाओं में परिवर्तित कर देता है। न्याय, स्वतंत्रता, समानता, सत्यता, सुन्दरता, विकास और विज्ञान का स्पष्टीकरण अब केवल उन व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है जो प्रतिक्रियावादिक सहयोग से नितांत पृथक् हैं। यह कविता के लिए उतना ही सत्य है जितना कि किसी भी दूसरी कला के लिए, क्योंकि सारी कलायें तत्त्वतः एक ही हैं।

इस विवाद से कोई यह न समझे कि लेखक किसी शुष्क, निस्तेज, नितांत-ज्ञानात्मक यथार्थता का पक्ष ग्रहण कर रहा है। मानवता के लिए अनुपयुक्त केवल नाम-मात्र के लिए भावना के कारागार में जकड़ा हुआ ज्ञान का प्रत्यय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी काम की वस्तु नहीं होता। भविष्य के लिए भूत का निषेध उतना आवश्यक नहीं जितना कि कष्ट और दुख से रगड़ खाते हुए नवीन जीवन का स्वीकार आवश्यक है। यथार्थता के समाजगत सन्देश को रागात्मकता और नीतिमत्ता के वैभव से अधिक सुहावना बना देना चाहिए। उसे बुद्धि के ऊँचे धरातल तक पहुँचाकर रूप और रस दोनों की सुन्दरता प्राप्त करनी चाहिए।

भाषा का सवाल

[शान्तिप्रसाद वर्मा]

भाषा का सवाल देश के बड़े और पेचीदा सवालों में से है। हर एक बढ़ती हुई क़ौम के लिए यह सवाल एक बहुत बड़ा और ज़रूरी सवाल होता है। क़ौम की एकता को जो कई चीज़ें मिलकर मजबूत बनाती हैं, भाषा उनमें से एक है। देश में एक भाषा का प्रचार हो, उसे ज्यादा से ज्यादा लोग समझें, तो जाग्रति की लहरें, और एक नये जीवन की चेतना उसके दूर-दूर के कोनों तक पहुँचाई जा सकती है। बिना राष्ट्र-भाषा के राष्ट्र का आगे बढ़ना मुश्किल होता है। हमारे देश में भी राष्ट्रीय जाग्रति ज्यों-ज्यों फैलती गयी, भाषा का सवाल महत्त्वपूर्ण बनता गया, और ज्यों-ज्यों हमारी राष्ट्रीयता उलझन में पड़ती गयी, भाषा का सवाल भी पेचीदा होता गया। उसे सुलझा पाने की हमारी असमर्थता से राष्ट्र को भी नुक़सान ही पहुँचा है।

मैं मानता हूँ कि हमारे देश में सच्ची राष्ट्रीयता का जन्म, गांधीजी के नेतृत्व में १९१९ के बाद हुआ। राष्ट्रीय चेतना अलग-अलग फ़िरकों में बँटती तो जा रही थी, पर उसके पीछे राष्ट्रीयता की भावना नहीं थी। वर्त्तमान युग की जाग्रति को हम मोटे तौर से, तीन हिस्सों में बाँट सकते हैं-- (१) धार्मिक चेतना की लहर, (२) सामाजिक सुधार का युग और (३) राष्ट्रीयता का विकास। हमारी जाग्रति दिन पर दिन अधिक व्यापक होती गयी है। उन्नीसवीं शताब्दि के प्रारंभ में धार्मिक सुधार को आधार बनाकर छोटी-छोटी संस्थायें बनीं, और उसके अन्तिम वर्षों में एक अधिक व्यापक समाज को जाग्रत करने के लिए हमने संगठित प्रयत्न किये। इन प्रयत्नों ने फ़िरकेवाराना (साम्प्रदायिक) रूप ले लिया। इसकी ज़िम्मेदारी उन परिस्थितियों पर थी जिनमें हमारी जाग्रति का विकास हुआ, और जिन्हें हमने जान-बूझकर नहीं चुना था। १९१९-२० के बाद हमने सच्ची राष्ट्रीयता के स्वरूप को पहचाना, और मुस्लिम-समाज को अपने साथ, अपना ही एक अंग बनाकर, ले लेना ज़रूरी समझा। वैसा करने की हमने अधिक-से-अधिक ज़ोरदार कोशिश की। मुसलमान भाइयों ने हमारी इस बढ़ती हुई राष्ट्रीयता को समझने में ग़लती की है। वे हमें आज भी पुरानें पैमाने से जाँच रहे हैं, और इसीलिए उनके मन में हमारे लिए इतनी ग़लतफ़हमी है।

१९१९-२० हमारी राष्ट्रीय जाग्रति में एक विभाजक-रेखा है। उसके पहले हमारी राष्ट्रीय चेतना का अर्थ हिन्दू-चेतना था; बाद में हम राष्ट्रवादी बने। भाषा के क्षेत्र में हिन्दी का आन्दोलन राष्ट्रवाद के युग के पहले का आन्दोलन है, हिन्दुस्तानी का आन्दोलन इस युग की अपनी चीज़। गांधीजी शुरू से हिन्दी को संस्कृत के शब्दों से भर देने के खिलाफ़ रहे हैं। इस देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य ही मानना चाहिए कि गांधीजी की भावनाओं के भी मुसलमानों ने ग़लत माने लगाये थे। १९३५ के इंदौर सम्मेलन में, गांधीजी की अध्यक्षता में, हिन्दी की जो नयी परिभाषा की गयी उसका उद्देश्य हिन्दी और उर्दू के भेद को कम करना था, पर मुसलमानों ने इस परिभाषा में--जो हिन्दी की ओर से उर्दू की ओर बढ़ा हुआ मैत्री का हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था—उर्दू को ख़त्म कर देने का एक षड्यन्त्र देखा। अँधेरे में रस्सी भी साँप दिखाई देती है!

अप्रैल १९३६ में नागपुर में भारतीय साहित्य-परिषद् का दूसरा अधिवेशन हुआ। तब फिर वही भाषा का सवाल सामने आया। एक साल के बीच में ग़लत-फ़हमियों का एक बड़ा अंबार खड़ा हो गया था। उसे साफ़ करना था। 'हिन्दी' नाम से मुसलमान नेता चौंकते थे। इसलिए गांधीजी ने उस नाम में एक सुधार पेश किया। यह नाम 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी' ('हिन्दी' अथवा 'हिन्दुस्तानी' भी) था। 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी' से गांधीजी का मतलब उस भाषा से था जो हिन्दी होते हुए भी हिन्दुस्तानी की ओर बढ़ रही है। यह हिन्दी को सादा बनाने और उसे उर्दू के नज़दीक ले जाने की ओर एक क़दम था। पर इससे ग़लत-फ़हमियाँ घटी नहीं, बढ़ ही गयीं। इन ग़लतफ़हमियों के कारण ही भारतीय साहित्य-परिषद् जैसी उपयोगी संस्था को, जो राष्ट्रीयता के विकास में एक बहुत बड़ा साधन बन सकती थी, ख़त्म हो जाना पड़ा।

झगड़ा हिन्दी और उर्दू के बीच नहीं है। जैसा गांधीजी ने एक बार लिखा था, "वास्तविक लड़ाई हिन्दी और उर्दू के बीच नहीं है, परन्तु हिन्दुस्तानी और अंग्रेज़ी के बीच है। यह एक कठिन लड़ाई है। मैं इसे बड़ी चिन्ता के साथ देख रहा हूँ।" हिन्दुस्तानी को अपनाने के पहले हिन्दी और उर्दू के बीच झगड़े की गुंजाइश थी भी। हिन्दी-प्रचार का आन्दोलन हिन्दू-राष्ट्रीयता के विकास के साथ फैला। उसमें उर्दू के प्रति विरोध नहीं था, पर उपेक्षा थी, जिससे उर्दू का नुक़सान होना जरूरी था। पर हिन्दुस्तानी तो इस झगड़े का एक सुन्दर निपटारा था—दो भाषाओं को, जो एक दूसरे से रूठकर दूर खिंचती जा रही थीं, फिर से मिला देने का संकल्प था। इसके सम्बन्ध में उर्दू के समर्थकों में क्यों इतनी ग़लत-फ़हमी दिखाई देती है? बशीर अहमद लिखते हैं: "मुसलमानों ने अपनी सांस्कृतिक भाषा (फ़ारसी) छोड़कर उर्दू (संस्कृत और फ़ारसी का मिश्रण) स्वीकृत की, और अब उनसे उसे भी छोड़ देने के लिए कहा जा रहा है। भला वे इस बात को कैसे मान सकते हैं?" हिन्दुस्तानी के प्रचार का मतलब यह हर्गिज़ नहीं है कि उससे उर्दू को नुक़सान पहुँचे। उसे ठीक मानों में लिया जाय तो उससे उर्दू को फ़ायदा ही पहुंचेगा। अंजुमने-तरक्किए-उर्दू के प्रवर्त्तक मौलवी अब्दुलहक़ साहिब की शिकायत है कि उर्दू में आज जो फ़ारसी और अरबी शब्दों की भरमार है उसकी ज़िम्मेदारी हिन्दुओं पर है। वे उर्दू को छोड़ते जा रहे हैं। यदि वे उर्दू में लिखते रहते तो यह प्रवृत्ति हरगिज़ नहीं फैल सकती थी। हिन्दुस्तानी के आन्दोलन का असर भी उर्दू को इस अप्राकृतिक प्रवाह के बहने से रोकने की दिशा में ही होगा।

पर हम—हिन्दीवाले—भी ग़लत-फ़हमी से खाली कहाँ हैं? हमारे यहाँ भी एक ऐसा दल ज़ोर पकड़ता जा रहा है जो समझता है कि हिन्दुस्तानी का स्वागत करने से हिन्दी का सर्वनाश हो जायगा, और हिन्दू-संस्कृति ख़त्म हो जायगी। हिन्दू-संस्कृति इतनी निःशक्त नहीं है। पाँच सौ वर्षों के मुस्लिम-शासन में वह ख़त्म नहीं हो सकी तो फ़ारसी और अरबी के कुछ प्रचलित शब्दों को अपनाने से वह मिट नहीं जायगी। नाम में क्या है? और यदि नाम एक महत्त्व की चीज़ हो भी तो 'हिन्दुस्तानी' और 'हिन्दी' में क्या भेद है? 'हिन्दी' भी शुद्ध भारतीय संस्कृति का प्रतीक नहीं है। आजकल की भाषा में कहा जाय तो वह भी उर्दू का शब्द है। मुसलमानों ने ही हिन्दी का निर्माण किया। यदि वह संस्कृत से नज़दीक है तो फ़ारसी से भी दूर नहीं। सच तो यह है कि संस्कृत और फ़ारसी से संयुक्त आधार पर उसकी सृष्टि हुई है। 'हिन्दी' नाम यदि हमें प्यारा है तो 'हिन्दुस्तानी' से परहेज़ क्यों? वर्त्तमान भारतीय संस्कृति में मुसलमानों की देन से इनकार नहीं किया जा सकता। हिन्दी और उर्दू के बीच यदि हिंदुस्तानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से समझौता हो सकता है तो हम उसे स्वीकार क्यों न करें ? हमारी प्रायः यह शिकायत रहती है कि मुसलमान उर्दू को अरबी और फ़ारसी के शब्दों से भर रहे हैं, पर हमारे प्रति उनकी शिकायत कि हम हिन्दी से अरबी और फ़ारसी के शब्दों का जानबूझ कर बहिष्कार कर रहे हैं, और उनके स्थान पर संस्कृत के शब्द भर रहे हैं, हमारे लेखकों के एक दल के सम्बन्ध में ग़लत नहीं कही जा सकती। उर्दू और हिन्दी दोनों में इस प्रकार की—विभाजन करनेवाली—प्रवृत्तियाँ हैं। हम उनपर क्यों इतना ज़ोर दें ?

मैं अपने मुसलमान भाइयों को यह बता देना चाहता हूँ कि पिछले दस वर्षों में (जबकि भाषा के सम्बन्ध में विवाद कटु-से-कटुतर होता चला गया है) हमारे साहित्य की भाषा सादगी की ओर काफ़ी झुकी है। प्रेमचन्द अपने समय में अकेले थे, पर आज सादी हिन्दी लिखनेवालों की संख्या बहुत बढ़ गयी है। कविता के क्षेत्र में, जहाँ भाषा को क्लिष्ट रखने का एक बहाना भी मिल जाता है, भगवतीचरण, 'दिनकर' 'बच्चन' और सोहनलाल द्विवेदी की भाषा को 'प्रसाद' 'पंत' और 'निराला' की भाषा से मिलाकर इस बात की सच्चाई का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। उर्दू में भी इस प्रकार का आन्दोलन ज़ोर पकड़ता जा रहा है। उस दिन मेरे एक मुसलमान मित्र ने जो उर्दू के एक प्रसिद्ध लेखक भी हैं, कहा : "मैं पहले एक रिसाले का एडीटर था, और उस ज़माने में मैं जो भाषा लिखता था उसपर मुझे आज भी शर्म मालूम होती है। अब मैं जान-बूझकर आसान शब्द काम में लाता हूँ।" हिन्दुस्तानी इन दोनों भाषाओं में बढ़नेवाले इन शुभ प्रयत्नों को एक दूसरे में गूँथ सकेगी। जवाहरलालजी ने लिखा था—"Scratch a Separatist in language and you will invariably find that he is a communalist, and very often a political reactionary," इस साम्प्रदायिकता का अन्त होना ही चाहिए।

हिन्दुस्तानी के सम्बन्ध में आज यह शिकायत है—और बहुत अंशों में वह सच्ची है—कि उसमें साहित्य नहीं है, पर पहले हम भाषा का तो निर्माण कर लें। यदि हम क्लिष्ट संस्कृत और फ़ारसी-अरबी के शब्दों से हिन्दी और उर्दू को मुक्त कर सकें तो कम-से-कम एक ऐसी भाषा का आधार तो हमें मिल सकेगा, जिसे अधिक-से-अधिक लोग समझ सकेंगे। तब उसमें साहित्य तो अपने-आप ही पैदा होगा, क्योंकि डॉ० जाकिरहुसैन के शब्दों में "हमारे लेखक भी, जो आज समाज के प्रति विरक्त दिखाई देते हैं, और ईश्वर जाने किसके लिए अपने साहित्य की रचना करते हैं, आदमी ही तो हैं, कुएँ के तले में रहनेवाले मेंढक नहीं जो अकेले टर्राते रहते हैं। वे भी दूसरे मनुष्यों द्वारा समझे जाना चाहते हैं, और वे अपनी भाषा और अभिव्यक्ति को सादा बनाने पर मजबूर होंगे, और एक ऐसी भाषा में लिखेंगे जो समझी जा सके। ××यह भाषा एक सामान्य जीवन का प्रतीक होगी। उसमें हमने भूतकाल में जो प्राप्त किया है उसका संदेश और भविष्य के प्रयत्न और उनकी सिद्धि का संकल्प होगा।" और संपूर्णानन्दजी के शब्दों में, "यदि हिन्दुस्तानी के विकास को अनधिकार चेष्टा करनेवाले साम्प्रदायिक लोगों ने जान-बूझकर रोक नहीं दिया तो निस्सन्देह संसार की सबसे सुन्दर और सशक्त भाषाओं में उसका स्थान होगा।"

सम्पत्ति वह चीज़ है जो मेरी है, जो बिल्कुल मेरे ही लिए दी गयी है, जिसका मैं जब जैसा चाहूँ उपयोग कर सकूँ जिसे दूसरा कोई मुझसे छीन न सके, जो जीवन-पर्यन्त मेरी ही बनी रहती है, अब जिसमें मैं वृद्धि और सुधार कर सकूँ। प्रत्येक मनुष्य की ऐसी सम्पत्ति तो उसके शरीर के सिवा और दूसरी कोई चीज़ नहीं हो सकती। कल्पित सम्पत्ति को असली सम्पत्ति बनाने की धुन के कारण ही संसार में युद्ध, फांसी, दण्ड, क़ैदखाने, भोगविलास, दुराचार, हत्या और मानव जाति के सर्वनाश के साधन प्रचलित हो रहे हैं।

—टॉलस्टॉय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन का उषाकाल

[प्रभुदास गांधी]

चौथा प्रकरण

कबाकाका

रानी के साथ बखेड़ा हो जाने के बाद ओताबापा फिर पोरबन्दर नौकरी करने गये ही नहीं। यद्यपि रियासत के हितचिन्तकों ने उन्हें ले जाने की अनेक कोशिशें कीं, परन्तु निवृत्ति से पुनः प्रवृत्ति में लौटना बापा ने पसन्द नहीं किया। फिर भी हितचिन्तकों के श्रम के फल स्वरूप तथा बापा की राणा विक्रमाजीत से राज्य के दफ्तर में लिखवाई हुई नोंध के कारण उनके सभी बेटों को पोरबन्दर में नौकरी हासिल हुई। जब राणा विक्रमाजीत के अन्तिम दिन आये तब ओताबापा ने समयसूचकता से राणा से अपने लिए लिखित प्रमाणपत्र माँगा, क्योंकि रानी के कच्चे कानवाली होने की वजह से बापा को अपना भविष्य राणा के पीछे खतरे से खाली नहीं दीखता था। राणा ने उदारता के साथ लिख दिया कि "ओता गांधी ने रियासत की क़ीमती सेवायें की हैं और मेरा और रियासत का कार्य पूरी वफ़ादारी के साथ किया है। इसलिए मेरे उत्तराधिकारी इस बात की सावधानी रखें कि ओता गांधी को कोई हानि न पहुँचे बल्कि वे उनके वारिसों को उदारतापूर्वक रियासत में हमेशा नौकरी देते रहें।" रानी के ज़माने में तो नहीं परन्तु सगीर बाल-राजा जब गद्दी पर आये तब इस आदेश को महत्त्व मिला और बापा के बेटों ने पोरबन्दर रियासत में प्रवेश पाया।

बापा के कुल छः पुत्र थे। द्वितीय पुत्र श्री पीताम्बर गांधी रानी के साथ झगड़ा होने से पहिले ही व्यापार के लिए कच्छ चले गये थे। वे और उनका पुत्र आजीवन कच्छ में ही व्यापार करते रहे। बाद में उनकी शाखा आगे न चली। बाकी पाँचों में से ज्येष्ठ पुत्र श्री वल्लभजी गांधी रियासत के मकान और सड़क-विभागके इंजिनियर रहे; तीसरे पुत्र श्री रतनजी गांधी ने दफ्तरी की नौकरी की, चौथे श्री जीवनजी गांधी छाया परगने के परगना-हाकिम और पाँचवें तथा छठे पुत्र श्री करमचन्द गांधी और तुलसीदास गांधी क्रमशः पोरबन्दर रियासत के दीवान बने। अन्तिम दीवान श्री तुलसीदास गांधी के वारिस अबतक पोरबन्दर रियासत में ऊँची नौकरी पर हैं।

छहों भाइयों में करमचन्द गांधी ने ओताबापा की विरासत सबसे अधिक पायी। विरासत दीवानी की नहीं बल्कि बापा की प्रतिभा की, तीक्ष्ण बुद्धि की, सत्यप्रीति और बहादुरी की। दीवानगिरी तो ओताबापा की तरह करमचन्द बापा ने भी स्व-पराक्रम से ही पायी ऐसा कहा जा सकता है, क्योंकि आरम्भ में तो उन्हें छोटी नौकरी मिली थी पर अपनी योग्यता से वे वज़ीर के पद पर पहुँच गये। इन्हींकी कर्तृत्व-शक्ति थी जिसने दूसरे भाइयों का मार्ग सरल करने में मदद दी।

करमचन्द बापा 'कबागांधी' नाम से प्रसिद्ध हुए। मेरे दादाजी ने अपने कबाकाका की कथा सुनाते हुए बताया है कि "वज़ीर की हैसियत से कबाकाका बहुत लोकप्रिय हुए। उनकी न्याय-बुद्धि बहुत विशद थी। उनके फैसले पर प्रायः राना अपील लौटा दिया करते थे। कोई प्रजाजन राजा के पास शिकायत लेकर पहुँचता, तो कहते—जाओ, गांधी के पास जाओ, उनको संतुष्ट करो। तुम्हें सही न्याय मिलेगा। आज की तरह न्याय-कार्य में बेहद ढील या करारी दौड़धूप के वे दिन नहीं थे। वकीलों का इन्द्रजाल भी न था। वादी सीधा हाकिम के पास पहुँचकर अपने कष्टों को उनके सामने रख सकता था। कबाकाका बहुत सादे थे। उनका पहनावा और चालढाल ऐसे थे कि मामूली आदमी और उनमें कुछ भी अन्तर नहीं दीखता था। इसी कारण दीन-ग़रीबों के अंतरंग बन्धु बनकर उनके पेट की बात जानने में उन्हें देर नहीं लगती थी।

"कबाकाका के ज्ञान की गहराई के अनेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण थे। उनकी पढ़ाई स्वल्प परन्तु श्रवण-ज्ञान विपुल था। पढ़ने के लिए पुस्तकें बहुत कम होने पर भी उनकी बुद्धि और हृदय का विकास नित्य होता रहता था। उन दिनों साधु-संतों की ज्ञान-प्रचारक संस्था जर्जरित नहीं हुई थी। फिर पोरबन्दर तो यात्रा-तीर्थ था। द्वारिका-धाम के दर्शन के लिए जानेवाले सुदामा नगरी (पोरबन्दर) की यात्रा शायद ही चूकते हों। सारे देश में रेलों का जाल अभी बिछ नहीं पाया था, इसलिए चारों धाम की यात्रा करने-वाले यात्री निरे अल्पप्राण नहीं हो गये थे। विचरते साधुओं में कोई-कोई श्रेयार्थी निकल आता था। धर्म-चर्चा, पूजा-अर्चना के अतिरिक्त प्रत्यक्ष जीवन का भी काफी ज्ञान उनके पास होता था। भारत के चारों कोनों की पैदल प्रदक्षिणा करने के कारण उनका भौगोलिक ज्ञान श्रेष्ठ होना लाज़िमी था। फिर तरह-तरह के मनुष्य-स्वभाव का अनुभव उनके पास था। इनमें भी जो साधु कथावाचक होते थे वे मानों उस समय के सजीव ज्ञानकोश थे। ऐसे सच्चरित्र विद्वानों का सत्संग कबाकाका को अतिप्रिय था आम तौर से सारे कुटुम्बी जन कथा-श्रवण करते थे, परन्तु काबाकाका की श्रवण-भक्ति विशिष्ट थी। प्रायः श्रीमद्भागवत और तुलसी-रामायण की कथा हुआ करती थी, लेकिन गीता के प्रवचन सुनने में उनकी विशेष रुचि थी। बुढ़ापे में मूल श्लोक कण्ठस्थ करने की उन्होंने काफ़ी कोशिश की थी। रियासत की सारी राज्य-व्यवस्था का कार्य करते हुए भी प्रातः-सायं डेढ़-डेढ़ घंटा कथा-श्रवण करने से वे नहीं चूकते थे। अक्षर-ज्ञान नहीं-सा होने पर भी जीवन की चतुर्मुखी उन्नति साध लेने का श्रेय इस नियमित सत्संग और स्वाध्याय को ही देना चाहिए।"

करमचन्द गांधी का समय गांधी-परिवार के जीवन का मध्याह्न-काल माना जाना चाहिए, नित्यप्रति बीस आसन आपके भोजन के समय बिछते थे। त्यौहार आदि के खास दिनों में जब सारे गांधी-परिवार का सम्मिलित भोज होता तब यह संख्या सौ-दो सौ तक पहुँच जाती थी। कबाकाका के विशाल कुटुम्ब में भाई-भतीजों के अतिरिक्त मुनीम-नौकरों का भी समावेश होता था। अपने और अपने पाँच भाइयों के परिवार के साथ-साथ रिश्तेदारों में से अनेक नवयुवक कबाकाका के पास नौकरी की खोज में पहुँचे थे। प्रत्येक की योग्यता और शक्ति देखकर रियासत के भिन्न-भिन्न महकमों में बीसियों युवकों को उन्होंने अपने हाथ के नीचे अपने काम पर लगाया था। इस विशाल कुटुम्ब के हर घर के व्यवहार की और बहू-बेटियों की छोटी-मोटी आवश्यकताओं की जाँच-पड़ताल खुद कबाकाका करते थे। परिवार के बच्चे की पढ़ाई से लेकर सगाई-विवाह के कार्य और बीमारों की शुश्रूषा तक उनकी प्रेरणा और निगरानी में होती थीं।

पुतली माँ भी सारे परिवार की माँ थीं। मेरी दादी-माँ कहती थीं कि "पुतली काकी हम बहुओं को खिलाने के बाद एक बच्चा भी भूखा नहीं रहा है इसकी जाँच कर लेने पर ही भोजन करती थीं। तू-तड़ाक की तो बात दूर, कभी ऊँची आवाज़ तक से न बोलतीं। क़दम-क़दम पर उनमें संस्कारिता टपकती थी। घर में बहू-बेटियों और नौकरों की भरमार होने पर भी आलस्य उनके पास फटकने न पाया था। प्रातः के अँधेरे से आधी रात तक वे घर और रसोई का काम करती रहतीं थीं। खान-पान भी बिलकुल सादा था। स्वयं बचा-खुचा खा लेतीं परन्तु परिवार में और किसी को थोड़ी भी तकलीफ न रहे इस बात की पूरी सावधानी रखतीं। सिर्फ़ पुतली माँ ही घर का काम करती हों ऐसी बात न थीं। रियासत के वज़ीर और इतने बड़े परिवार के मुखिया होते हुए भी कबाकाका गृहकार्य करते थे। बड़ी भारी रसोई के सारे शाक को साफ़ करने और काटने का जिम्मा उन्होंने ले रखा था। सवेरे की मुलाक़ातें साग कटाते-काटते होतीं और मुलाक़ाती भी इस कार्य में सहयोग देते। संक्षेप में पुतली माँ और कबाकाका आदर्श गृहस्थाश्रमी थे।

हमारे देश के बड़े-बड़े संयुक्त परिवारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की संस्कृति हज़ारों बरसों से विकसित होती रही है। इस परंपरा में होनेवाले श्रेष्ठ कुलपतियों की श्रेणी में करमचन्द बापा का स्थान किसी प्रकार कम न था। अच्छे-से-अच्छा कुलपति वही माना जायगा जो स्वयं 'भोक्ता' न रहकर केवल 'भर्ता' ही हो, अपने आश्रितों को सब प्रकार सुखी रखने के लिए अपने ऐशोआराम को तिलांजलि दे दे, अधिक-से-अधिक आमदनी होते हुए अपना व्यक्तिगत खर्च कौड़ियों का रखे और कम आमदनीवालों की तुष्टि-पुष्टि के लिए निरन्तर उद्योग करता रहे।

पूज्य बापूजी की आत्मकथा के पाठक जानते ही हैं कि पूज्य करमचन्द गांधी ने क्रमशः पोरबन्दर, राजकोट और बाँकानेर की रियासतों की वज़ारत की थी। उस इतिहास को यहाँ दोहराना छोड़कर सिर्फ उनके जीवन में जगमगाती हुई सतत जाग्रति, सत्य के तेज और धन-दौलत की निःस्पृहता के दो-एक विशिष्ट प्रसंग देना उचित होगा।

कबाकाका का पुण्यतेज इतना था कि राजकोट के ठाकुर साहब बाबाजीराज राजा होने पर भी आपका लिहाज करते थे। अपने से नीचे पदवाले या नौकर का लिहाज करके शराब आदि न पीनेवाले राजा कितने होंगे? या राजा पर नैतिक अंकुश रखनेवाले दीवान खोजने पर कितने मिलेंगे? पर कबाकाका ऐसे प्रखर दीवान थे। "गांधी आ रहा है" यह समाचार मिलते ही बाबाजीराज के राजमहल में रंगराग समेट लिये जाते, शराब की बोतलें हटा दी जातीं और शराब पी जा चुकी हो तो ठाकुर साहब कमरे में चुपचाप लेट जाते। पिये हुए वे कभी भी दीवान के सामने न आते। राजा को भी अपनी शह में रखनेवाला यह धर्मतेज व्यक्ति साधारण न होगा।

कबाकाका स्वयं लांच-रिश्वत से कोसों दूर रहकर सारे राजतंत्र में भरसक शुद्धता रखवाते थे। एक बार ठाकुर साहब ने उनसे मनमानी जमीन ले लेने का आग्रह किया। आपको उसमें खुशामद या लाँच की बू आयी। मेहनताने के वेतन के उपरांत दान लेने से उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। ठाकुर साहब ने उनसे अपने वारिसों के लिए इंतजाम कर जाने के लिए कहा तो भी वे न माने। बाद में जब रिश्तेदारों ने दबाव डाला तब रिहायशी मकान के वास्ते जमीन का छोटा-सा टुकड़ा ग्रहण करके उन्होंने परिवारवालों को चुप किया। अगर कोई वज़ीर चाहे तो निजी संपत्ति काफ़ी बटोर सकता है परन्तु रहने के मकान के अलावा बच्चों के लिए तालीम पाने लायक धन भी वे नहीं छोड़ गये थे। इधर-उधर का कुछ तो लिया ही नहीं बल्कि जो कमाया सो भी हाथ-के-हाथ अपने विशाल कुटुम्ब के लिए खर्च कर दिया। [क्रमशः]

व्यक्ति और साहित्य

[प्रयागनारायण त्रिपाठी]

साहित्य व्यक्ति के जीवन की, उसके उदात्त विचारों एवं ज्वलंत भावनाओं की यथेष्ट अभिव्यक्ति है। देखा जाय तो व्यक्तित्व और साहित्य दो अलग चीज़ें नहीं। व्यक्ति को हम शीघ्र भूल जाते हैं, साहित्य को याद रखते हैं। पर इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि व्यक्ति का निर्माण पहले हुआ, साहित्य का उसके पश्चात्। लेकिन आज क्या हो रहा है? आज हम व्यक्तित्व के विकास के लिए कितना प्रयत्न, कितनी साधना करते हैं? आज हम बिना व्यक्तित्व के विकास की ओर ध्यान दिये लेखनी उठा लेते हैं और अपनी अधूरी साधना द्वारा प्रस्तुत रचनाओं को बाज़ार में ऊँचे-से-ऊँचे दामों में रखना चाहते हैं। यही कारण है कि आज 'साहित्य' कही जानेवाली मौलिक रचनाओं का हिन्दी में नितांत अभाव है। यही कारण है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी जैसी जीवित भाषा आज एक सूर, एक तुलसी, एक रवीन्द्र और एक शेक्सपियर को जन्म नहीं दे सकी। यही कारण है कि आज का हिन्दी-साहित्य छिछली भावुकता से भर रहा है, स्वात्म-निरूपण और उसके अंतर्गत असंयम और स्फूर्ति-हीनता का प्रवेश हमारे साहित्य में धड़ल्ले के साथ हो रहा है।

मेरे कहने का तात्पर्य यह कदापि नहीं कि आज जो कुछ लिखा जा रहा है उसका अपना कोई मूल्य नहीं, महत्त्व नहीं। अपने-अपने सामर्थ्य और अपनी-अपनी साधना के फूल हममें से प्रत्येक माँ-भारती के चरणों पर अर्पित कर रहा है, और पुष्प गुलाब के हैं तो उनमें भक्त की श्रद्धा है और कनेर के हैं तो भी वे श्रद्धा से परिप्लुत हैं। पर गुलाब पुष्पों की प्राप्ति को कठिन अथवा असाध्य मानकर, कनेर पुष्पों की ढेरी लगाते जाना तो ठीक न होगा।

लिखना कोई कठिन काम नहीं। 'क' से लेकर 'ज्ञ' तक अक्षर सीख लेने और मात्राओं का ज्ञान हो जाने के बाद विचारों को काग़ज़ पर उतार देना सरल काम है। पर जो कुछ छापे में आ जाता है वह सब साहित्य ही हो, यह तो आवश्यक नहीं। पर आज तो इसी की हठ है। ऐसी धारणा भ्रमात्मक है। यह सत्य है कि साहित्य व्यक्ति की प्रतिच्छाया है पर यह भी सत्य है कि वह ऐसे व्यक्ति की प्रतिच्छाया है जो समग्र विश्व की अंतरात्मा में प्रवेश पाने की क्षमता प्राप्त कर चुका है। गोस्वामी जी ने एक स्थल पर लिखा है :

भगति हेतु विधि भवन बिहाई,
सुमिरत सारद आवति धाई।
रामचरित सर बिनु अन्हवाये,
सो स्रम जाइ न कोटि उपाये।

इन पंक्तियों का संकेत थोड़ा ग़ौर करने से स्पष्ट हो जाता है। अपने उपासकों की पुकार पर शारदा रुक नहीं सकतीं। उन्हें आना पड़ता है। पर आते ही वे देखना चाहती हैं कि राम-चरित-सर में उन्हें स्नान कराया जा रहा है या नहीं। और 'राम' क्या है ? चराचर में व्याप्त वह शक्ति ही राम है जो निखिल मानवता को स्नेह के एक सूत्र में पिरोती है; जो बापू को जन-सेवा की ओर खींच चुकी है, जिसने गौतम को, ईसा को, मुहम्मद को, लेनिन और मार्क्स को, तथा संसार के सारे महापुरुषों को सेवा-मार्ग पर प्रवृत्त किया था। 'मानव-मानव सब हैं समान' इसी का अनुभव कर लेना ही तो राम की उपासना है। "शुनि चैव श्वपाके च पंडिता समदर्शिनः" इसी का अनुभव कर लेना तो राम की उपासना है। अपने सेवा के क्षेत्र को एक से अनेक तक फैलाते जाना ही तो राम की उपासना है। राम की ऐसी उपासना में प्रवृत्त होने के बाद ही हम साहित्य की सृष्टि कर सकेंगे, सच्चे रूप में साहित्यिक हो सकेंगे। तब हमारे स्वरों में ऐसी प्राणदायिनी ओजस्विता होगी जो विश्व में स्नेह की मंदाकिनी प्रवाहित कर उसे सजग और चैतन्य कर दे। उससे पहले विग्रह और असंतोष के बीज हम भले ही बोते रहें, सत्य, शिव, सुन्दर और सृजनशील साहित्य शायद हम न दे सकेंगे। ऐसा तो हम तभी कर सकेंगे। जब पंत के शब्दों में हम कहेंगे :—

मेरा स्वर होगा जग का स्वर
मेरे विचार जग के विचार
मेरे मानस का स्वर्गलोक
उतरेगा भू पर नई बार

तब रवीन्द्र के साथ हमें अपनी असफलता का बोध होगा और हम कह उठेंगे :—

And I know I have failed
Wherever my song has heen 'eft incomplete
Wherever having traversed diverse ways
It has yet missed reaching all

"मैं जानता हूँ, मैं वहाँ असफल हुआ हूँ
जहाँ मेरा गीत अपूर्ण रह गया है
जहाँ विभिन्न दिशाओं में जाकर भी
वह समष्टि को नहीं छू सका।"

और विफलता का यह बोध हमें प्राण देगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन देगा, साहस देगा, शक्ति देगा। हम नये रूप में निर्माण के लिए प्रवृत्त होंगे। हम निरंतन चेतना का ऐसा सजीव स्फुलिंग बन जायँगे जो विभिन्न भावों से टकराता और जीवन को छूकर बहनेवाले विचारों से उलझता और उलझन को सुलझाता हुआ जगमगाता रहता है। ऐसा ही साहित्यिक होगा युग का साहित्यकार, और ऐसे ही साहित्कार की रचना होगी युग की प्रतीक रचना। रवीन्द्र के निम्न शब्द ऐसे ही साहित्यिक का तो आवाहन कर रहे हैं :—

So here I am waiting for the message
from the poet of the earth
of the peasant, the comrade
whose words and deeds have achieved true concurrence
May he give what I lack.

"मैं उस कवि के सन्देश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जो भू-माँ का कवि है,
जो कृषकों का कवि है और है उनका बन्धु,
जिसके विचार और कार्यों में पूर्ण ऐक्य है।
......मैं प्रार्थी हूँ कि वह मेरी अपूर्णता को पूर्ण करे।"

हमारे पाठक

[ओंकारलाल जोशी]

साहित्य के उपांगों की नित्य नवीन एवं सर्वत्र होनेवाली श्री–वृद्धि से हिन्दी. राष्ट्र-भाषा के गौरवान्वित पद के लिए सक्षम होती जा रही है तथा इसको बड़े से बड़े भारतीय व्यक्तित्व के तत्वावधान में अदमनीय उत्साह और दृढ़-संकल्प का सहयोग मिल रहा है। उत्तमोत्तम ग्रंथों, तथा सामयिक समस्या को हल करनेवाले प्रभावशाली मासिक पत्रों द्वारा हिंदी भाषा का कलेवर नित्य बढ़ता ही जा रहा है। कल के पाठक तथा लेखक आज लेखक और सम्पादक बनते जा रहे हैं।

आशा की इस प्रगतिशील सार्वभौमिकता में भी एक ऐसा अंग अछूता पड़ा है, जिसकी ओर से सभी मनीषियों को चिंता-सी हो रही है। वह अंग है, पाठकों का सुरुचि-निर्माण।

आज पाठकों की मनोवृत्ति को कुतरनेवाले, अनेक कीटाणु पैदा होते जा रहे हैं, जिसके लिए आधुनिक-ज्ञान-प्रसार के मुख्य तत्त्व, पाठक, लेखक, सम्पादक और प्रकाशक सभी जिम्मेदार हैं। आचार्य की महत्त्वपूर्ण प्रतिष्ठा को ठुकराने को उतारू लेखकों, सम्पादकों और प्रकाशकों के सामने, पाठकों में अपना "नक्का माल" खपाने का ही सवाल है। पाठक विज्ञापन-बाज़ी के इस भड़कीले युग में किंकर्तव्य-विमूढ होते जा रहे हैं कि नित्य बाढ़ की तरह उमड़नेवाली पुस्तकों में कौनसी पुस्तक पठनीय है, और कौन-सी नहीं ? संघर्ष के विविधता-पूर्ण युग में हमें भान नहीं है कि हमारा प्रिय विषय कौनसा है ? विज्ञापन के बवण्डर में हमारी चेतना शिथिल, और ज्ञान-विज्ञान की जननी जिज्ञासा जंग खाई हुई सी कुंठित होती जा रही है। इस दर्दनाक वातावरण की जिम्मेदारी अन्य शक्तियों के साथ पाठकों पर अधिक मात्रा में है। जरूरत इस बात की है कि हम अपना अन्तर्निरीक्षण करें और अध्ययन की अपनी सुरुचि, प्रवृत्ति और प्रेरणा को परखें।

पाठकों का एक बड़ा समुदाय ऐसा है जिसका 'अध्ययन' केवल मनोरंजन अथवा काल यापन के लिए होता है। स्वाध्याय का यह उद्देश्य पुस्तक की अच्छाई-बुराई, आदर्श तथा विषय के कारण नहीं है। यह तो उस गन्दी मनोवृत्ति की उन्मत्त प्यास की उत्पादक है जो संस्कारी और जीवनदायी साहित्य की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बदहज़मी बढ़ाती है। इस भयानक मनोवृत्ति के कारण पाठक का अध्ययन निरुद्देश्य, असावधानतापूर्ण केवल सरसरी अवलोकन भर रह जाता है। विजय को उड़ती और सरसरी निगाह से पढ़ने की वृत्ति को लक्ष्य करके पं० जवाहरलाल नेहरू ('वि०इ०की झलक' के पृ० ६३ में) लिखते हैं **"जो लोग बहुत सी किताबें जल्द जल्द पढ़ डालते हैं, उन्हें मैं संदेह की नज़र से देखता हूँ। उनपर शक होने लगता है कि वे लोग ठीकतौर से किताबें नहीं पढ़ते, सिर्फ उनपर सरसरी निगाह डाल लेते हैं। फिर दूसरे दिन सब कुछ भूल जाते हैं। अगर कोई किताब पढ़ने के क़ाबिल है तो सावधानी और बहुत अच्छी तरह पढ़नी चाहिए।"** इस तरह के अचेतन अध्ययन से बुद्धि में फिसलन, अग्राह्यता और निस्तेजस्विता पैदा होती है और शनैः शनैः जड़ता का उद्रेक होता है।

पुस्तक के सच्चे स्वरूप को जानने में, पाठक की विशेषज्ञता की भावना सबसे बड़ी बाधा है। लेखक अन्तर में बहनेवाली भावधारा को जानने के स्थान पर वह अपने विशेष ज्ञान के रक्षार्थ, उसके गूढतर दोषों को ही अधिक देखता है, जिससे अनावश्यक वितण्डावाद बढ़ता है। इन दोषान्वेषियों के परिणाम की समीक्षा नीचे लिखे श्लोक में खूब की गयी है:—

यत्र यत्र मनोदेही, धारयेत् सकलं धिया।
स्नेहाद्द्वेषाद्याभद्वापि, याति तत्स्वरूपताम्॥

यानी चित्त के प्रबल आवेश-द्वारा जिस गुण-अवगुण का हम अध्ययन करते हैं, शनैः शनैः हम तद्रूप हो जाते हैं।

इस मनोवृत्ति का एक अन्य पहलू, पाठक का लेखक पर अतिशय श्रद्धालु होना है। श्रद्धा किसी हद तक मनन एवं स्वाध्ययन में काफ़ी सहायक होती है। परन्तु चिन्ता यह है कि ग्रंथकार की विचार-धारा के साथ सद्विवेक व न्याय बरता जा सकेगा अथवा नहीं। कहीं ऐसा न होने लगे, कि पाठक लेखक की उक्ति, उदाहरण तर्क, प्रमाण को आँख बन्द कर मानने लगे। और लेख के रूपक के गर्भ में छिपी कल्पना को न समझकर रूपक को ही सत्य समझने लगे। वस्तुतः दोनों ही दृष्टि-बिन्दु सत्यान्वेषक को गुमराह बनानेवाले हैं।

आचार्य के चरणों में अध्ययन करने की अपेक्षा पुस्तकों से अध्ययन किया जाना अधिक दुष्कर है। आचार्य अपने विद्यार्थी की रुचि जिज्ञासा तथा उत्कंठा को उत्तेजित करने में हरप्रकार से सचेष्ट रहते हैं, थकान, तन्द्रा व आलस से आक्रान्त नहीं होने देते। किन्तु ग्रंथ अपने अध्येता को इतनी अधिक सुविधा नहीं देता।

पुस्तक से ज्ञानार्जन करनेमें, तीव्र उत्कंठा, उद्दाम जिज्ञासा, उच्छृंखल कौतूहल के साथ-साथ, अथक धैर्य, विवेक-शीलता तथा आत्म-नियमन की बहुत आवश्यकता है। निरंतर बिखरनेवाली चित्त-वृत्तियों को मनोयोग-पूर्वक संयत करके पाठ की तरफ प्रवृत्त करना पाठक की प्रधान साधना है। लेखक की भाषा के अन्तराल में बहनेवाली भाव-धारा को अव्यग्र चित्त से चिंतन करना क्षमता-पूर्ण तप है। अध्ययन के साथ जीवन-शक्तिदायी अवतरणों का स्मरण करते रहना पाठक का विशुद्ध पौरुष है।

अन्त में, हमें श्री जैनेन्द्रकुमार के इस उद्धरण को न भूलना चाहिए **"किताबों और पुस्तकालयों में ज्ञान नहीं है। उनसे लाभ तभी है, जब हममें माँग हो, तड़प हो, कि हम पायें। पुस्तक से आपका सम्बन्ध हो सकता है तो जीवन से ही। जिल्दसाज किताब को जुज से जानता है। पुस्तक-विक्रेता जानता है कीमत से। किंतु आपको उसे गहरे जीवन से जानना चाहिए। क्योंकि इसी जिज्ञासा के उत्तर में साहित्य की उत्पत्ति है।"**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-प्रचारिणी सभा, बरेली

[शंकरसहाय सक्सेना]

रुहेलखंड और विशेषकर बरेली हिन्दी-साहित्य के लिए अभी तक मरुस्थल से भी अधिक अनुर्वर प्रदेश प्रमाणित हुआ है। इतने विशाल प्रदेश के केन्द्र से एक भी हिन्दी पत्र-पत्रिका का न निकलना, स्थानीय स्कूलों और कॉलेज में हिन्दी की अपेक्षा उर्दू के विद्यार्थियों का अधिक होना, और लगभग दो लाख की जन-संख्यावाले नगर में हिन्दी की एक भी संस्था का न होना इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इसका यह अर्थ कभी नहीं है कि बरेली में विद्या का निरादर है। नहीं, फ़ारसी और अरबी के प्रसिद्ध ग्रन्थों की छानबीन करनेवाले और मुस्लिम विद्वानों से भी अधिक उन ग्रन्थों की आलोचना कर सकनेवाले सैकड़ों हिन्दू यहाँ मिल सकते हैं। हिन्दी के लिए मरुभूमि जैसे स्थान में कभी एक छोटे से साहित्यिक सरोवर का भी निर्माण हो सकेगा इसका किसी को ध्यान तक नहीं था।

आज से लगभग सोलह वर्ष हुए कॉलेज के कतिपय हिन्दी-प्रेमी अध्यापकों और छात्रों ने कॉलेज में हिन्दी के प्रति रुचि उत्पन्न करने के अभिप्राय से इस सभा की स्थापना की थी। जिस समय सभा को जन्म दिया गया था उस समय कॉलेज में इंटरमीडियेट में हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था न होने के कारण कॉलेज के विशाल पुस्तकालय में हिन्दी की एक पुस्तक भी मौजूद नहीं थी। इसलिए जन्म लेते ही सभा ने अपने सीमित साधनों और शक्ति का उपयोग एक पुस्तकालय स्थापित करने में किया। क्रमशः छात्रों में हिन्दी-साहित्य का अध्ययन करने की रुचि उत्पन्न हुई और आज सभा के निजी पुस्तकालय तथा कॉलेज के पुस्तकालय में सब मिलाकर उत्तम हिन्दी पुस्तकों का एक बहुत बड़ा संग्रह है।

सभा ने अपने शैशव-काल में ही कॉलेज में हिन्दी इंटर तथा बी० ए० कक्षायें खोलने का आन्दोलन आरम्भ कर दिया था। कॉलेज की प्रबन्ध-कारिणी कमेटी को "आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है" कहने का बहाना न मिल जावे इसलिए दो हिन्दी-भक्त अध्यापकों ने (जो कि सभा के प्रधान कार्यकर्ता थे) हिन्दी-कक्षाओं को अवैतनिक पढ़ाने का वचन दे दिया। यद्यपि सभा को इस प्रयत्न में तात्कालिक सफलता नहीं मिली परन्तु अन्त में आन्दोलन सफल हुआ और कॉलेज कमेटी ने अपने व्यय से ही इंटर तथा बी० ए० में हिन्दी कक्षायें खोल दीं।

सभा के कार्यकर्ताओं का स्वप्न लगभग पूरा हो चुका था। कतिपय सभासद यह आशा करते थे कि सभा का लक्ष्य पूरा हो जाने पर उसका गौरवपूर्ण अन्त हो जावेगा। नवीन कार्यक्रम सामने न होने के कारण सभा के कार्य में कुछ समय के लिए शिथिलता आ गयी, परन्तु सभा के उत्साही कार्यकर्ताओं के मस्तिष्क में यह बात शीघ्र ही आगयी कि हिन्दी की एम० ए० कक्षायें खुलवाने के लिए, बरेली नगर में हिन्दी का प्रचार करने के लिए तथा नगर और कॉलेज में साहित्यिक वातावरण उत्पन्न करने के लिए सभा को जीवित रखने की ही नहीं वरन् उसको अधिक शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता है।

कॉलेज की जैसी आर्थिक स्थिति थी और अधिकारियों की जैसी नीति थी उससे यह स्पष्ट था कि सुदूर भविष्य में भी हिन्दी एम० ए० कक्षायें न खुल सकेंगी। सौभाग्य-वश एक बार सभा ने 'भारतेन्दु-जयन्ती' मनायी। अत्यन्त उत्साहपूर्ण वातावरण में यह निश्चय हुआ कि सभा हिन्दी एम० ए० कक्षायें चलाने का आर्थिक दायित्व अपने ऊपर ले ले। कॉलेज-प्रबन्ध कमेटी ने सात हज़ार रुपये लेकर हिन्दी एम० ए० कक्षायें खोलना स्वीकार कर लिया। समय बहुत कम था, किन्तु हिन्दी-प्रेमी नागरिकों के सहयोग से सभा ने शीघ्र ही यथेष्ट धन इकट्ठा करके कॉलेज को दे दिया। अतः १९३५ के जुलाई मास से कॉलेज में हिन्दी एम०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ए० कक्षायें खुल गयीं और आज वे अत्यन्त सफलतापूर्वक चल रही हैं।

हिन्दी एम० ए० कक्षायें खुल जाने के उपरान्त सभा का ध्यान बरेली नगर में हिन्दी के प्रति जनता का प्रेम और उसमें साहित्यिक अभिरुचि करने की ओर विशेष रूप से आकर्षित हुआ। इसके पूर्व भी सभा का वार्षिक अधिवेशन बरेली का एकमात्र साहित्यिक समारोह बन गया था किन्तु १९३५ से सभा इस ओर विशेष प्रयत्नशील हुई। प्रतिवर्ष हिन्दी के प्रमुख साहित्यिकों को आमंत्रित करके उनके व्याख्यानों का आयोजन करना, कवि-सम्मेलन, प्रान्तीय वादविवाद, लेख तथा गल्प-प्रतियोगिता तथा अन्य साहित्यिक समारोहों के द्वारा नगर तथा कॉलेज में हिन्दी-प्रचार का सभा ने पिछले वर्षों में भरसक प्रयत्न किया है और इसमें उसे आशा से अधिक सफलता मिली है। बरेली जैसे स्थान में जहाँ कि साहित्यकों के लिए कुछ भी आकर्षण नहीं है, हिन्दी के अधिकांश प्रमुख कवि, उपन्यासकार और लेखक आ चुके हैं। यह जहाँ इस बात का द्योतक है कि हमारे साहित्यिक हमपर विशेष कृपा करते हैं, वहाँ सभा की कर्मण्यता का भी यह एक प्रमाण है।

किन्तु एक ऐसी भी दिशा है जिस ओर इच्छा रहते हुए भी सभा अधिक प्रयत्नशील न हो सकी। पिछले तीन वर्षों से सभा ने रुहेलखंड में प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों की खोज का कार्य हाथ में लिया है किन्तु अभी तक दो पुस्तकें प्राप्त करने से अधिक इस ओर कुछ न हो सका। सभा के सामने दूसरी योजना हिन्दी-भवन (हिन्दी संग्रहालय) स्थापित करने की है। किन्तु इसके लिए अधिक धन की आवश्यकता होगी। फिर भी हिन्दी-भक्तों की दानशीलता के भरोसे शीघ्र ही सभा इस कार्य को हाथ में लेना चाहती है।

सभा का यह सोलह वर्षों का संक्षिप्त इतिहास है। यद्यपि जो कुछ कार्य सामने किया है वह कोई असाधारण नहीं है परन्तु बरेली की स्थिति को देखते हुए हमें उतने से निराश होने का कोई कारण नहीं दिखाई देता। भविष्य में यह सभा हिन्दी की इस क्षेत्र में अधिक सेवा कर सकेगी ऐसी हमारी आशा है।

विद्यार्थीवर्ग और अनुशासन

स्वतन्त्रता के लिए उतावला होना स्वाभाविक है, पर साथ ही उसको पाने के लिए हमको शक्ति भी जुटानी है। स्वाधीनता सामाजिक और वैयक्तिक नियंत्रण के बिना आकाश-कुसुमवत् है और सभी आशा रखते हैं कि अनुशासन की आदत, संतुलित विचार और न्याय-बुद्धि आदि सद्गुण विश्वविद्यालयों में प्राप्त होते हैं। सस्ते समाचारपत्र तथा रेडियो के हालचाल हमारे दिमाग़ों पर बहुत-सा मसाला भरते रहते हैं। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि हम लोग सच्चे ज्ञान तथा समाचा ों तथा तथ्यों के ढेर के बीच में विवेक करना सीखे।

दुर्भाग्य का विषय है कि आजकल छात्रों की मनोवृत्ति टोलीवाद (Mob mentality) की अधिक है। छात्रों के कुछेक अग्रनायक फुसलाहट और धाँधलबाजी के द्वारा छात्र-समूह को उत्तेजित कर देते हैं जो स्वयं बिना सोचे-समझे अपने नायकों के पीछे चलने लगता है। इस समय सारे विद्यार्थी-जगत् को एक अतिविपुल, संवेदनशील अविचार ने अभिभूत कर रक्खा है। विश्वविद्यालय के स्वाधीन और उदार वातावरण में रहकर प्राप्त की गयी उनकी शिक्षा 'अशुद्ध' है, यदि वे अपने नायकों की बनी-बनायी सम्मति का अन्धानुकरण करें। विद्यार्थियों को हमें प्रेरणा देनी चाहिए कि वे अपने मन में शुद्ध-सात्त्विक सामाजिक प्रवृत्तियाँ विकसित कर सकें।

सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्तुत प्रश्न

विज्ञापन-नीति

['जीवन-साहित्य' के मई के अंक में पाठकों से 'जी० सा०' व 'मण्डल' के विषय में कतिपय प्रश्नों के उत्तर मांगे गये थे। उनमें से कुछ प्रश्नों के उत्तर श्री 'एक पाठक' ने भेजे हैं—जिनमें से नीचे दिया हुआ विचारणीय है। —संपादक]

"**विज्ञापन-नीति**—आज शिक्षित समाज का, जिन्हें वस्तुत: शिक्षित कहना चाहिए, विज्ञापनों पर से विश्वास उठ गया है, जिससे सच्चे और उत्तम विज्ञापनदाताओं को भी अत्यधिक क्षति पहुंच रही है। समझदार पाठक व पाठिकायें भी उत्तम विज्ञापनों से लाभ नहीं उठा रहे हैं बल्कि अन्य निकृष्ट विज्ञापनों से अत्यधिक हानि उठा रहे हैं। इसका यह भी प्रत्यक्ष परिणाम दृष्टि-गोचर हो रहा है कि उत्तम विज्ञापनदाता विज्ञापन भेजना प्राय: कम कर रहे हैं और सिर्फ सच्चे विज्ञापन ही प्रकाशित करनेवाले पत्र की कमी महसूस कर रहे हैं।

मैं समझता हूँ कि जी० सा० यथासंभव निकृष्ट विज्ञापनों को स्थान नहीं दे रहा है और सम्भव है इसके लिए हानि भी उठा रहा हो। किन्तु पाठकों को इसका विश्वास कैसे हो सकता है ? मैं स्वयं भी इसके विज्ञापनों को उसी दृष्टि से देखता हूँ जैसे अन्य पत्र-पत्रिकाओं के।

इस परिवर्तित नीति के लिए मैं यह आवश्यक समझता हूँ कि—

(१) विज्ञापनों की भाषा स्वयं विज्ञापन-दाताओं की न हो बल्कि सम्पादकीय अथवा समालोचकीय हो।

(२) प्रत्येक वस्तु का विज्ञापन परीक्षित हो।

(३) अपरीक्षित वस्तु का नाम भी पत्र में न निकाला जावे।

(४) विज्ञापन प्रकाशित हो जाने पर यदि कुछ धोखादेही या खराबी मालूम हो तो उसे भी शीघ्र प्रकाशित किया जावे।

(५) इसके लिए पत्र अपने कुछ विशेष निरीक्षक व समालोचक नियत करे।

(६) यदि समालोचकों की ओर से कोई पक्षपात या अन्य बेजा कार्रवाई ज्ञात हो तो उसे शीघ्र प्रकाशन में लाया जावे और उससे पुन: कभी किसी वस्तु की समालोचना न कराई जावे।

(७) अन्य पत्रों के विज्ञापनों की भी समालोचना निकाली जावे।

मैं समझता हूँ यदि जी० सा० विज्ञापन की नीति इस प्रकार की कर दे तो विज्ञापनदाता व पाठकों का अत्यधिक लाभ व उपकार हो और उसका इस समय निकृष्ट विज्ञापन न लेने से जो घाटा हो रहा है, उसे पूरा कर सके। कुछ समय में इससे ऐसा वातावरण बन जायगा कि अन्य पत्र-पत्रिकायें भी इस नीति को ग्रहण करेंगी जिससे समाज बुराइयों से बचेगा।"

एक पाठक

अनुवाद के नामों में भारतीयकरण

अप्रैल के अंक में श्री प्रवीणचन्द्र की एक टिप्पणी 'अनुवाद और अनुवादक' छपी है, उसकी अधिकतर बातों से सहमत होते हुए भी एक बात से मुझे बहुत मतभेद है। मेरा यह निश्चित मत है कि अनुवादक को मूल पुस्तक में आये हुए पात्रों और स्थलों के नाम अनुवाद में भी जैसे-के-तैसे ही रखने चाहिएँ नहीं तो बड़ा अनर्थ हो सकता है। कहानी आदि में उस देश या प्रान्त की संस्कृति की पृष्ठभूमि होती है। नाम आदि बदलने से पृष्ठभूमि बदल जावेगी जिससे उसकी बहुत-सी चीज़ें अस्पष्ट हो जायेंगी। एक बिलकुल मोटा-सा उदाहरण ले लीजिए। आप किसी रूसी कहानी का अनुवाद कर रहे हैं। उसमें ज़ार के अत्याचारों का वर्णन आता है, साइबेरिया और याकूत प्रदेश में निर्वासन की बात आती है और लीना के गुणगान होते हैं। क्या उन अमानुषी अत्याचारों को भी भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम देकर भारतीय जामा पहिनाना उचित होगा और साइबेरिया के नगरों को भारतीय नाम देकर आप वहाँकी ऋतुओं का वर्णन यहाँ के नगरों पर घटाने लगेंगे ? यहूदियों पर नाजियों के अत्याचारों की कहानी का अनुवाद करते हुए क्या उन लोगों को हिन्दुस्तानी लिबास में पेश करना उचित होगा ?

कुछ समय पहले मैंने उर्दू में एक यूरोपीय कहानी का अनुवाद देखा था। अनुवादकमहोदय ने उसमें यूरोपीय नामों की जगह भारतीय मुसलमानों के नाम रख दिये थे। कथानक में दो प्रेमी कोर्टशिप करते हैं, कहानी में प्रेयसी की पिण्डलियों का कई बार जिक्र आता है और एक जगह वह प्रेमी के पीछे सड़क पर दौड़ने लगती है। क्या कभी यह सम्भव है कि भारतीय मुसलमानों की अच्छे घरों की बेटियाँ कोर्टशिप करें, अपनी पिण्डलियाँ दिखलाएँ या सड़क पर दौड़ लगाएँ ? क्या ऐसे स्थलों पर भारतीय नाम देने से चीज़ उपहासास्पद नहीं बन जाती ? कहीं पर नाम बदलना एक हदतक क्षम्य भी हो सकता है जैसे मूल में क्यूपिड (Cupid) आया तो आपने उसे कामदेव बना दिया। यद्यपि उसके साथ भी कामदेव की यूरोपीय कल्पना को स्पष्ट करने के लिए एक टिप्पणी देनी चाहिए, क्योंकि कामदेव की आँखें बहुत सुन्दर हैं और क्यूपिड बेचारा अंधा है। परन्तु साधारणतः तो अनुवाद में नाम बदलना एकदम् अनुचित है। वह आज उपहासास्पद है और कल आनेवाले ऐतिहासिक को हमारे इतिहास और हमारी संस्कृति तथा हमारे रस्म-रिवाज के बारे में ग़लत बातें बतलायेगा।

एक कसौटी

मैं जैनेन्द्रजी के साथ पूरी तरह सहमत हूँ जब वे कहते हैं कि अश्लीलता दृश्य में होने की जगह दृष्टा में होती है जिसका वह दूसरे पर आरोप कर देता है। जब ये पंक्तिया लिखी जा रही हैं, बाहर चाँदनी छिटकी हुई है और आज भगवान् बुद्ध का जन्म-दिन, सिद्धि-दिन और महापरिनिर्वाण-दिवस है, आज की चाँदनी को देख बहुतों के मन में भगवान की याद जाग्रत हो रही होगी, एक अनिर्वचनीय शान्ति और पवित्रता का भाव जाग्रत हो रहा होगा। इसी चाँदनी का कामपीड़ित मनुष्य पर कुछ और ही असर हो रहा होगा। तो क्या यह चन्द्रिका एक के लिए पावन और दूसरे के लिए अश्लील है ?

अश्लील क्या है और क्या नहीं इसकी बहस तो खूब लम्बी चल सकती है पर मैं यहाँपर अपना अनुभूत और क्रियात्मक प्रयोग बतलाने की धृष्टता करूँगा। शायद किसी और को भी इससे सहायता मिल सके। लोग कई बार अपनी दबी हुई अतृप्त वासनाओं को उकसाने के लिए और एक प्रकार के मानसिक व्यभिचार का सुख प्राप्त करने के लिए ही 'अश्लील' रचना करने बैठ जाते और पूरे प्रयत्न से अपने प्राण की सारी अशुद्धियाँ उसमें उँडेल देते हैं।

मेरी एक अठारह-उन्नीस वर्ष की बहिन हैं, जो सुरुचिपूर्ण और कलाप्रिय हैं। उन्हें यह आदत है कि मेरी लेखनी से जो कुछ निकल जाये उसे अवश्य पढ़ेंगी। मैं जब कभी कोई कहानी लिखने बैठता हूँ तो एक दम उनका खयाल हो आता है और लिख चुकने पर मैं एक बार उसे इस दृष्टि से पढ़ता हूँ कि कहीं इसमें कोई ऐसा भाग तो नहीं है जो मैं अपनी बहन को पढ़कर सुनाते हुए झिझकूँ अथवा कोई ऐसा स्थल तो नहीं है जिसके बारे में वे पूछें तो मैं उसका स्पष्टीकरण करने से पहले इधर-उधर बगलें झांकने लगूँ ? बस यही मेरी कसौटी है और मुझे विश्वास है कि यह मुझे कभी ऊटपटांग रास्ते पर न जाने देगी और साधारण दृष्टि से कामोत्तेजक तो दूर, किसी भी प्रकार की विकारोत्पादक चीज़ मेरी लेखनी से नहीं निकल पायेगी। यदि साधारणतः लेखकगण अपनी कृतियों को इस प्रकार की कसौटी पर कस लिया करें तो अश्लील साहित्य का प्रश्न काफी हद तक आसान हो सकता है।

अरविन्दाश्रम, पांडीचरी] रवीन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कसौटी पर

'साहित्य सन्देश' का 'शुक्ल-अङ्क' संपादक श्री गुलाबराय एम. ए., श्री महेन्द्र और श्री गोपाल प्रसाद व्यास; साहित्य-रत्न - भण्डार, आगरा।

हमारे सुप्रसिद्ध आलोचना-प्रधान सहयोगी 'साहित्य-सन्देश' ने समालोचना-क्षेत्र में स्तुत्य प्रयत्न किया है। उपन्यास-अंक, परीक्षा-अंक, द्वारा ठोस सामग्री पाठकों को मिल चुकी है। स्व० आचार्य शुक्लजी ने समालोचना में जिस आदर्श की स्थापना की, उसको देखते हुए 'सन्देश' का यह अर्घ्य श्लाघ्य है।

विशेषांक के तीन अंग हैं—(१) परिचय (२) समीक्षा, (३) आभार।

'परिचय' में शुक्लजी के निकट सम्पर्क में आये हुए साहित्यिकों (सर्वश्री श्यामसुन्दरदास, सोहनलाल द्विवेदी, शुक्लजी के सुपुत्र, केशवचन्द्र शुक्ल, शिवमंगलसिंह 'सुमन' और श्री उदय) के द्वारा प्रस्तुत किये हुए परिचय और संस्मरण हैं।

समीक्षा में सर्वश्री जैनेन्द्र, रामविलास शर्म्मा, नगेन्द्र, नन्ददुलारे वाजपेयी, शांतिप्रिय द्विवेदी, सद्गुरुशरण अवस्थी, गुलाबराय आदि लब्ध-प्रतिष्ठ साहित्यकारों की लेखनीसे दी हुई साहित्य-अंजलियाँ है, जिसमें शुक्लजी के सब साहित्यिक स्वरूपों पर अच्छा अध्ययन प्रस्तुत हुआ है। यदि इन लेखों के अतिरिक्त अन्य आलोचकों से भी लेख लिखवाकर उन्हें संकलित किया जाये तो शुक्लजी पर एक प्रामाणिक आलोचना-ग्रंथ तैयार हो सकता है।

'आभार' में कुछ लेखकों के पत्र जिनमें शुक्लजी का 'आभार' स्वीकृत किया गया है संकलित किये गये हैं—श्री चन्द्रबली पाण्डे, श्री ललिताप्रसाद सुकुल, श्री प्रभाकर माचवे, श्री रामकृष्ण शुक्ल, श्री बनारसीदास चतुर्वेदी। यह अंश 'शुक्ल-अंक' के अनुरूप नहीं हो सका। सम्भवतः इसका कारण विभिन्न लेखकों को लिखे गये पत्रों का समय पर उत्तर न मिलना हो।

अस्तु, 'शुक्ल-अंक' पठनीय, मननीय अतः संग्रहणीय है और आलोचना-साहित्य की एक स्थायी निधि है। मूल्य १) है।

'साधना' का 'परिचयांक' : सम्पादक—श्री सत्येन्द्र एम. ए., बाँके विलास आगरा।

आगरे की दूसरी पत्रिका 'साधना' को जिस परिचयांक की तैयारी में इतना समय लगा आखिर वह अच्छा निकला। अच्छा निकला—इस दृष्टि से नहीं कि वह समस्त साहित्यिकों के परिचय का कोष है—परन्तु इस दृष्टि से कि इतने समय में जो कुछ उसने प्रस्तुत किया वह कम नहीं है।

आरम्भ में साहित्य की कुछ प्रवृत्तियों की समीक्षा पर लेख जुटाये गये हैं और बाद में साहित्यिकों के परिचय—'अपनी-अपनी लेखनी से' और 'दूसरों की लेखनी से'—दिये गये हैं।

विशेषांक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि हिन्दी में यह प्रयत्न बिल्कुल अपूर्व है और दिशा-दर्शक है। अब आवश्यकता इस बात की है कि जिनके परिचय आने से रह गये हैं, उनको भी उपलब्ध किया जाय। ऐसे प्रयत्न साहित्य के इतिहास-लेखकों के लिए बड़े उपयोगी होंगे। भाई सत्येन्द्र जी और उनके सहयोगी इसके लिए बधाई के पात्र हैं। जो हिन्दी-प्रेमी हिन्दी-साहित्यिकों का 'परिचय' जानना चाहते हैं वे इसे अवश्य पढ़ें। मूल्य १) है।

कौमुदी (मासिक) : संचालक—श्री चन्द्र शंकर त्रिवेदी; संपादक—राधाबल्लभ हल्दिया; चाँदनी चौक दिल्ली, वार्षिक मूल्य ६)

दिल्ली, जो आज से १ वर्ष पूर्व साहित्य के लिए मरुभूमि था—अब उर्वर होगया मालूम होता है। जीवन-साहित्य, मा, धारा हिन्दी-पत्रिका, कौमुदी ये ५ हिन्दी मासिक इस समय निकल रहे हैं।

'कौमुदी' के जनवरी से जून ४१ तक के अंक हमारे सामने हैं। संचालक और संपादक यद्यपि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी में अख्यात हैं, परन्तु लब्धप्रतिष्ठ लेखकों की रचनायें 'कौमुदी' के इन अंकों में पढ़ने को मिलीं। इससे हमें यह आशा हुई कि इस प्रगति से यह पत्र हिन्दी-साहित्य में अच्छा स्थान बना लेगा।

संपादक और संचालक पत्रिका के लिए अच्छे लेख जुटाने में सतर्क हैं। कुछ नये लेखकों को भी 'कौमुदी' द्वारा प्रोत्साहन मिला है, यह तो प्रशंसा की बात है, पर सम्पादकगण कविता की कोटि सुयोग्य संपादन द्वारा उठा सकें, तो अच्छा हो। अंतरंग चलचित्रों की नयनाभिराम तस्वीरों से आकर्षक बनाया गया है। सिनेमा के विज्ञापन भी आवश्यकता से अधिक हैं। आशा है, 'कौमुदी' सिनेमा-क्षेत्र को भी आलोचना द्वारा सुधारने का प्रयत्न करेगी।

एक गुजराती भाई श्री चंद्रशंकर त्रिवेदी की इस समारोह के साथ हिन्दी में कार्य करने की लगन की प्रशंसा के साथ हम सहयोगी का अभिनन्दन करते हैं।

निर्झर : ले० श्री रामकृष्ण 'भारती'; प्रकाशक—भारती-प्रकाशन-मंदिर, लाहौर; पृ० सं० ११२; मूल्य १)

'निर्झर' का कवि अपने में कविहृदय छुपाये बैठा है। थोड़ी-सी कलात्मकता के संसर्ग से उसकी प्रतिभा सजीव हो उठेगी, ऐसी हमें आशा है।

कवि जिस युग का अधिवासी है, उस युग के बाह्य संघर्ष ने उसे व्यथित और उत्पीड़ित किया है और यह व्यथा उसकी लेखनी द्वारा व्यक्त हुई है :

बजती अशांति की भेरी सर्वत्र आज भूतल में
चिन्ता, पीड़ा, परवशता, दुख फैले अतल-वितल में
भीषणता ही भीषणता, कोलाहल ही कोलाहल
संसार अखिल में फैला बनकर यह आज हलाहल

और कवि ऐसे स्वर्ग की कामना में लीन है—

है बसी बस्ती निराली; हैं जहाँ शत-शत उमंगें
आग भी अनुराग भी है प्यार की चंचल तरंगें
आज मिलकर सब बसायें जग नया, जगका अदेखा

एक जगह पीड़ा को कवि ने वरदान माना है—

इस पीड़ा में ही तो मेरा अपनापन सोता है,
तेरा ध्यान मुझे पीड़ा की चोटों में होता है,
पीड़ा तो वरदान मिली है, मेरे तप साधन की
पीडा इस सूने मन की—

तो दूसरी जगह साहस और पौरुष का गीत भी गाया है।

सागर सम्मुख ठाठें मारे
चाहे घिर आयें घन कारे
चाहे टूटें नभ से तारे
बिजली गिरे, प्रलय फुफकारे,
यात्री, यात्रा लक्ष्य तुम्हारा
तुम्हें दुःख-सुख संचय से क्या?

वस्तुतः कवि का 'निर्झर' ऐसा है कि

उसमें सुख के गाने मुखरित
उसमें दुख के गानें सञ्चित
करके अपने प्राण प्रवाहित
जग में जीवन भरता है।

'निर्झर' में कुछ गद्यगीत भी दिये गये हैं—इसलिए कि—'मैं अपने हृदय भावों को उनमें कविताओं की अपेक्षा स्पष्ट कर सकने में अधिक समर्थ हुआ हूँ।'

चूँकि 'निर्झर' में कवि की प्रारंभिक और प्रौढ़ दोनों प्रकार की रचनायें हैं, इसलिए रसात्मकता में भी उतार-चढ़ाव है। पर इतना निःसंकोच कहा जा सकता है कि प्रतिभा उनकी प्रगतिशील है।

हिन्दी-कविता का विकास : ले०—श्री आनन्दकुमार; प्रकाशक—हिन्दी-मन्दिर प्रयाग; पृ. सं० २७९; मूल्य २)

जैसाकि नाम से विदित होता है इस पुस्तक में हिन्दी-कविता के विकास पर १६ निबंध हैं—(१) हिन्दी-साहित्य की रूपरेखा, (२) हिन्दी-साहित्य में कविता का स्थान, (३) हिन्दी-कविता की विशेषतायें, (४) हिन्दी-कविता की प्रगति, (५) हिन्दी-कविता के श्रेष्ठ ग्रन्थ, (६) हिन्दी-कविता का सौन्दर्य, (७) हिन्दी-कविता में भारतीयता, (८) हिन्दी-कविता में स्वाभा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकता, (९) हिन्दी-कवितायें, (१०) प्रकृति-वर्णन, (११) विरह वर्णन, (१२) स्त्रियाँ, (१३) विलासिता, (१४) कलाबाज़ी, (१५) भावापहरण, और (१६) हिन्दी-कविता की आवश्यकतायें।

'रूपरेखा' में शुक्लजी के इतिहास के आधार पर हिन्दी-साहित्य के इतिहास का काल-विभाजन करते हुए संक्षिप्त परिचय दिया गया है। और शेष लेख भी अत्यन्त रोचक और पठनीय हैं। सर्वत्र पुस्तककार ने अपनी व्यक्तिगत सम्मति प्रस्तुत की है और इस बात की चिन्ता नहीं की है कि प्रचलित धारणा क्या है?

अंतिम लेख—हिन्दी कविता की आवश्यकतायें—में लेखक ने "हिन्दी में स्थायी साहित्य की बड़ी कमी है। साहित्य का वास्तविक उद्देश्य मनुष्य-हृदय को छूना और उसको आन्दोलित करके उसपर अपना स्थायी प्रभाव डालना है।...हिन्दी कवियों को शुद्ध अर्थ में युगान्तरकारी कवि बनने का प्रयत्न करना चाहिए।...हमारे कवियों को युग के साथ-साथ चलने की आवश्यकता है।" लिखकर कुछ अभाव बतलाये हैं और नवीन वस्तुओं—प्रबन्ध-काव्यों, कविता, साहित्य और संस्कृति का समन्वय, भाषा-सुधार आदि—की माँग की है।

कहीं-कहीं हमें लेखक से मतभेद है, फिर भी उनका प्रयत्न अच्छा है और उनके लेख काफी परिश्रमपूर्ण और विचारोत्तेजक हैं। लेखक की शैली मनोरंजक, स्पष्टवादितापूर्ण और तीक्ष्ण है। हिन्दी-प्रेमियों को एकबार यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए।

सु०

सहोदरा : लेखिकायें—सुश्री रत्नकुमारी : कृष्णकुमारी माथुर; प्रकाशक—'मीरा' कार्यालय, अजमेर; पृ० सं० ७८; मूल्य ॥); १)

'सहोदरा' राजस्थान प्रांत की दो सहोदराओं की कविताओं का संग्रह है। कविताओं को पढ़कर प्रतीत हुआ कि सहोदराओं में कवयित्रियों का हृदय है। जो कुछ उन्होंने लिखा है, उसमें श्रम या आडम्बर नहीं है। 'रत्न' की एक रचना 'रहस्य' बड़ी स्वाभाविक लगी—

कितने ही मनचले यहाँ तक कह बैठे हैं नाथ !
प्रेम कदाचित् मैं करती हूँ किसी एक के साथ,
जाने दो, कहने दो प्रीतम ! दुनिया को मनमाना
उसी राह से जावेंगे हम जिससे हमको जाना,
प्रेमनगर की प्रेम-पन्थ को क्या जानेंगे मूढ़ ?
भला जान सकते हैं कैसे, यह रहस्य है गूढ़ !
—(रहस्य)

कृष्णा की रचनायें और भी अधिक रसमय हैं:

मैं खडी हुई हूँ मौन-मुग्ध इस कोलाहल के बीच ठगी
मेरे इस सूने-से उर में क्यों अरमानों की भीर लगी ?
सारा जग 'पगली' कहता है
मुझको मेरे परिवर्तन पर !
मैं नहीं जानती स्वयं अहो !
किसने जादू डाला मन पर ?
कोईआ मुझको बतलावे क्यों अनजाने यह पीर लगी?
—(क्यों ?)

इतना सुनकर चले गये वें,
मैं मूर्छित गिर गई वहाँ !
आँख खुली तो अंधकार था—
और न कोई मिला वहाँ !
कहाँ ? कुछ न था ! केवल भ्रम था—
थी न कहीं फुलवारी ही
हँसी आ गई स्वप्न याद कर—
मैं हूँ अभी कुमारी ही !!
—(सुख-स्वप्न)

जिस वातावरण को कभी वीणावादिनी मीरा ने अपने मधुमय मादक गीतों से गुंजित किया था, उसीकी छाया में इन कवयित्रियों की प्रतिभा उसी के पदांक पर प्रगतिशील हो सके, यह हमारी कामना है। अन्त में, 'प्रलयवीणा' के गायक के शब्दों में इतना अवश्य कहना है कि—

आज मधुर मुरली पर मुग्धा
राधा बने प्रलय-रचयित्री
गिरिधर की दीवानी मीरा
बने क्रांति की अब कवयित्री

और इसकी इन कवयित्रियों से सहज ही आशा की जा सकती है। जौहर, लक्ष्मीबाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झाँसी की रानी, जन में जनार्दन, माँ, वसुधैव कुटुम्बकम् आदि रचनायें उनके उज्ज्वल भविष्य की ओर संकेत करती हैं। इन दोनों कवयित्रियों की प्रतिभा गंगा-जमुना की भाँति मरुस्थल को परिप्लावित करती रहें! मृत्युञ्जय

गत्ते का काम : लेखक—श्री लक्ष्मीश्वर सिंह; प्रकाशक—हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम, वर्धा; पृष्ठ १०० (७"×९॥"); मूल्य १)

मूल पुस्तक अंग्रेज़ी में 'कार्डबोर्ड माडलिंग' नाम से पहले प्रकाशित हो चुकी है यह उसी का अनुवाद है।

बुनियादी तालीम के शिक्षकों को गत्ते का काम सिखाने के लिए यह पुस्तक लिखी गयी है। लेखक के कथनानुसार 'गत्ते का काम अकेला पूरी बुनियादी दस्तकारी नहीं है, बल्कि गत्ते, लकड़ी और धातु की सम्पूर्ण बुनियादी दस्तकारी का पहला कदम है। इसलिए यह पुस्तक आगे पूरी की जानेवाली माला की पहली पुस्तक है'।

बुनियादी दस्तकारी में तीन चीजें ली गयी हैं, कताई, खेती तथा गत्ते आदि का काम। इनमें से कताई तो शिक्षा तथा आर्थिक उद्योग दोनों दृष्टियों से सफलता के समीप पहुँच रही है और खेती के बारे में हमें कुछ नहीं कहना है, क्योंकि यह भारत का मुख्य धंधा है। पर भारतीय ग्रामीण जीवन के लिए गत्ते की दस्तकारी उपयोगी होगी यह शंकास्पद है। और शहरी जीवन में भी क्या वह स्थिति आ गयी है जिसमें गत्ते की दस्तकारी आर्थिक दृष्टि से लाभदायक सिद्ध हो?

प्रस्तुत पुस्तक में गत्ते का काम सीखने-सिखाने के तरीके दिये हैं। साथ ही शिक्षा का इस उद्योग के साथ गठबन्धन, एकीकरण कैसे किया जाय यह भी समझाया गया है। बीच-बीच में प्रयोग-रूप में इस सम्बन्ध की कहानियाँ आदि दी हैं।

इस साधारण से काम में शिक्षा की कितनी सामग्री है, यह पुस्तक से स्पष्ट हो जाता है। अवश्य ही इस तरह के कामों के लिए भारत से बाहर बहुत धन जाता है। अबरी, गत्ता आदि भी शहरों में विदेशों से आते हैं। इतना सरल, सुन्दर शिक्षाप्रद धंधा पाठशालाओं के छोटे-छोटे बच्चों को सिखाना उनके बौद्धिक विकास में सहायक होगा। इस विचार से इस पुस्तक का प्रकाशन उपयोगी है।

जो कुछ भी पुस्तक में समझाया गया है सरल रीति से समझाया गया है। गत्ते के काम सम्बन्धी चित्रों से पुस्तक अधिक उपयोगी बना दी गयी है। कागज, तथा छपाई सुन्दर है।

पूर्णानन्द

स्वास्थ्य के लिए शाक-तरकारियाँ: लेखक—कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद-विशारद सोलएजेन्ट—सस्ता साहित्य मण्डल, कनाट सर्कस, नई दिल्ली। पृष्ठ संख्या १४७, मूल्य १।)।

प्राकृतिक चिकित्सा और आयुर्वेद तो एक तरह से भोजन-शास्त्र पर ही आश्रित है। प्राकृतिक चिकित्सा में तो विशेष आग्रह भोजनोपचार पर ही किया जाता है वैद्य कभी जो-सो खाने की इजाजत नहीं देता। इधर कुछ वर्षों से अन्य चिकित्सा-पद्धतियों में भी भोजन पर विशेष छानबीन होने लगी है उसीके फल-स्वरूप आज विटामिन का सिद्धान्त लोगों के सामने आया है। यह भी समझा जाने लगा है कि प्राकृतिक लवण-लोहा, ताँबा, चूना, आयोडीन, सोडियम, सलफर, पोटैशियम, मैगनैशियम क्लोरीन सिलिकन आदि—भी खान से न लेकर भोज्य पदार्थों से लेना अधिक श्रेयस्कर है। इसी आधार पर विदेश में रोगों की चिकित्सा भोजन में हेर-फेर से की जाने लगी है। अमेरिका-स्थित हालीवुड के सौन्दर्य-निर्देशक श्रीयुत गाइलाड हासर साहब तो सभी अभिनेत्रियों को उनकी सौन्दर्य-रक्षा के हेतु तरकारी और फलों का रस ही बताते हैं। बाल, आँख, दाँत, त्वचा आदि के अनेक रोग वे इन्हीं भोजनौषधियों से अच्छा करते हैं। अभी तक हमारे यहाँ इस तरह के प्रयोग बहुत कम हुए हैं और ऊपर कोई साहित्य तो है ही नहीं। प्रसन्नता की बात है कि पाण्डेयजी ने अपनी पुस्तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'स्वास्थ्य के लिए शाक-तरकारियाँ' में इसपर कुछ ध्यान दिया है। जो सूचनायें उन्हें प्राप्त हो सकी हैं उनका उन्होंने इस पुस्तक के 'सौन्दर्य-प्राप्ति के लिए शाक-तरकारियों का प्रयोग' प्रकरण में समावेश किया है। विटामिन और प्राकृतिक लवण की आवश्यकता और उपयोगिता पर भी सम्यक् विचार करने के बाद उनकी प्राप्ति के सरल साधन शाक-तरकारी भी बता दिये गये हैं। पत्तेवाले शाक, हरी फलदार भाजी और कन्द-शाक पर अलग-अलग उनकी ओषधि एवं स्वास्थ्यदायक गुण पर विचार करते हुए एक बहुत ही उपयोगी प्रकरण रोग-निवारण में शाक-तरकारियों का उपयोग जोड़ा गया है।

पुस्तक के अन्त में जो अनुक्रमणिका दे दी गयी है उससे पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ जाती है।

स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है कि फल-तरकारियों का उपयोग किया जाय। पर इन दोनों में से किसी एक से भी पूरा काम निकल सकता है। जो फल को महँगा बताकर न फल का और न तरकारियों का ही यथोचित उपयोग करते हैं उनके लिए और स्वास्थ्य-लाभ करने के सभी इच्छुकों के लिए यह पुस्तक बहुत काम की साबित होगी। पुस्तक की एक कापी प्रत्येक गृहिणी के हाथ में होनी ही चाहिए।

विट्ठलदास मोदी

समालोचनार्थ प्राप्त

सरस्वती-प्रेस, काशी के प्रकाशन

शेखर : एक जीवनी : ले०— श्री 'अज्ञेय'; मूल्य ३)

आज का हिन्दी-साहित्य : श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त; मूल्य ।।)

प्रेमचन्द : एक अध्ययन : ले०—श्री रामनिवास शर्म्मा; मूल्य ।।)

स्नेह-यज्ञ भाग १, २, : ले०—श्री रमणलाल देसाई; मूल्य ।।)

गाड़ीवालों का कटरा (तीन भाग) : अनुवादक–श्री चन्द्रभाल जौहरी; मूल्य आठ-आठ आने

सात इनक़िलाबी इतवार (तीन भाग) : अनु०–श्री नारायणस्वरूप; मूल्य आठ-आठ आने

कँटीले तार (दो भाग) अनुवादक—श्री श्याम् सन्यासी; मूल्य ।।)

कार्ल और अन्ना : श्री देवराज उपाध्याय; मूल्य ।।)

कोकिला : ले०—श्री रमणलाल देसाई; मूल्य ।।)

लहरी बुकडिपो बनारस के प्रकाशन

स्वर्गपुरी : ले०—दुर्गाप्रसाद खत्री

सुवर्ण रेखा : ले०— ,, ,,

मास्टर बलदेवप्रसाद सागर, के प्रकाशन

मर्यादापुरुषोत्तम राम : ले०—श्री जहूर बख्श, मूल्य ।।।)

वीरगाथाएँ : ले०—श्री रामकृष्ण शर्म्मा; मूल्य =)

सुगम कहानियाँ : ले०—लोकनाथ सिलाकारी; मूल्य ।=)

सुगम नागरिकता : ले०—पं० गौरीशंकर पण्ड्या; मूल्य =)।।

हमारे बापूजी : ले०—श्री मुन्नीलाल गुप्त; मूल्य =)

बाल-सरोज : ले०–पं० शंकरलाल त्रिपाठी; मूल्य ≡)

सुगम बालबोध : ले०—श्री मुन्नीलाल गुप्त

विदेश की कहानियाँ : ले०—श्री बाबूलाल भार्गव; मूल्य ।)

पाञ्चजन्य : ले०—ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी; मूल्य ।।)

गांधी-मीमांसा : ले०—पं० रामदयाल तिवारी, प्रकाशक—इण्डियन प्रेस प्रयाग, मू० ३)

कथा-कहानी और संस्मरण : ले०—श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय, प्रकाशक—जन संगठन देहली; मूल्य १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साम्राज्यशाही के कर्णधार : ले०—श्री हनुमानप्रसाद गोयल, प्रकाशक—मातृभाषा-मन्दिर प्रयाग

वैदिक लोरियाँ : श्री चिरंजीलाल; प्रकाशक—श्री जगदेव श्रीनगर

अभिनव मेघ : अनुवादक—श्री अनिरुद्ध एम. ए.; प्रकाशक—स्वतन्त्र कार्यालय झाँसी, मूल्य ।।)

संसार का भविष्य : ले०—श्री जगदम्बा-प्रसाद जौहरी; प्रकाशक—शन्नोदेवी जौहरी, मूल्य १)

लोरियाँ और बालगीत : ले०—कन्हैयालाल 'मत्त'; इटारोड; बुलन्दशहर; मूल्य ।)

मदन-सन्देश : ले०—आचार्य श्री आनन्द; पृष्ठ संख्या ७२; मूल्य ।।=)

स्वास्थ्य-रक्षा के लिए आवश्यक सुझाव : डा. एल. डी. सारनवाला; प्रकाशक—पब्लिक हैल्थ डिपार्टमेण्ट जोधपुर

पत्र-पत्रिकाएँ

जैन-सन्देश—(साप्ताहिक) का (अहिंसांक): संपादक—श्री कैलाशचन्द्र; भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ आगरा

जिज्ञासु—(पाक्षिक) : सं०—श्री स्वामी अभयानन्द; ४४ हनुमानरोड़ विलेपार्ले बंबई २४;

राष्ट्रभाषा-समाचार (मासिक) : राष्ट्र-भाषा-प्रसार समिति वर्धा

शिक्षा : सम्पादक—श्री रामेश्वर 'करुण', शिक्षा-सदन, सन्त नगर लाहौर

समाज : सम्पादक—श्री राजकिशोर, समाज कार्यालय लखनऊ

मराठा राजपूत—सम्पादक—श्री रामचन्द्र जाधव, मराठा राजपूत कार्यालय, देवास जूनियर

राँकावत ब्राह्मण : प्रकाशक—राँकावत ब्राह्मण सभा जोधपुर

बच्चों की दुनिया : सम्पादक—श्री मास्टर बलदेवजी "सुन्दर प्रिंटिंग प्रेस" सागर

मनस्वी : सम्पादक—श्री रमणलाल अग्रवाल नवराष्ट्र प्रेस, २३ हमाम स्ट्रीट; फोर्ट बम्बई

जैन-सिद्धान्त-भास्कर : सम्पादक मण्डल:—प्रो० हीरालाल जैन; प्रो० ए० एन उपाध्याय, बा० प्रो० कामताप्रसाद जैन, पं० क० भुजबली शास्त्री, जैन सिद्धान्त-भवन आरा (बिहार)

नयी दुनिया : सम्पादक—श्री रघुवीरशरण दिवाकर बी० ए० एल०-एल० बी० सत्याश्रम, वर्धा

कृष्ण-मन्दिर में

श्री सिद्धनाथ माधव आगरकर: लब्धप्रतिष्ठ सहयोगी 'स्वराज्य' के अनुभवी सम्पादक, देशी राज्यों के कर्मठ कार्यकर्ता । इस समय मुक्त

श्री गोकुललाल असावा : राजनीति और दर्शनशास्त्र के पंडित, अजमेर प्रांतीय के प्रमुख जन-सेवक ।

श्री सुरेन्द्र बालूपुरी: हिन्दी के प्रसिद्ध तरुण लेखक, माननीय श्री सम्पूर्णानन्दजी के जामाता ।

'जीवन-साहित्य' के जिन ग्राहकों का चन्दा समाप्त हो गया है उनकी ग्राहक-संख्यायें दूसरी जगह दी गयी हैं, और अगले वर्ष के लिए 'जी०-सा०' के मूल्य में कुछ कमी भी की गयी है, उसे अन्तिम आवरण (टाइटिल) पृष्ठ पर पढ़िए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैर-सपाटा

[यह अध्ययन उन्हीं पत्र-पत्रिकाओं तक सीमित है, जो 'जीवन-साहित्य' के परिवर्तन में हमें उपलब्ध हैं। —**संपादक**]

पिछले दिनों सहयोगी **'साहित्य-सन्देश'** ने **'शुक्ल-अंक'** निकाला था, उसमें **'शुक्लजी का कविहृदय'** लेख समय पर न आने से नहीं आ-सका था। वह जून के 'सन्देश' में छपा है, उसे पढ़ने से पाठकों को शुक्लजी के कविहृदय की एक झलक मिल सकेगी। उसी अंक में श्री हजारीप्रसादजी का **'प्रेमाश्रम'** पर एक सुन्दर विवेचनात्मक अध्ययन है।

जून की **'वीणा'** में श्रीमती सरोजिनी नायडू ने साहित्य की अपनी धारणा को ज़ोरदार शब्दों में व्यक्त किया है।

जून की **'सुधा'** में डॉ० दुर्गादत्त गंगाधर ओझा का लेख **'भारतीय लिपियों की एकता एवं उनका एकीकरण'** बड़ी खोज के साथ लिखा गया है। जहाँतक ओझाजी के उद्देश्य का प्रश्न है, वह श्लाघनीय है परन्तु इन्होंने जो समन्वित रूप वर्णों के स्थिर किये हैं, वे सुन्दर न होने के साथ-साथ विवादास्पद भी हैं। नागरी-लिपि-सुधार या राष्ट्रलिपि में दिलचस्पी लेनेवालों को यह लेख पढ़ना चाहिए। इसी अंक में श्री सूर्यनारायण व्यास का **'वैदिक रहस्य-विज्ञान'** सम्बन्धी लेख भी अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण है।

'कमला' के जून-अंक में **'हमारे पति क्या चाहते हैं?'** लेख में श्रीरामनाथ 'सुमन' ने महिलाओं को रोचक ढंग से पतियों के स्वभाव की चर्चा करते हुए यह बतलाया है कि पतियों को किस प्रकार वश में रखना चाहिए। उनके विचार स्त्रियों को अत्यन्त लाभदायी होंगे। इसी अंक में श्री गजानन माधव मुक्तिबोध ने साहित्य के 'आदर्शवाद,' 'यथार्थवाद' आदि दृष्टिकोणों पर अपने निष्पक्ष विचार प्रकट करते हुए साहित्य और कला के मूल्य की कसौटी बतायी है।

'विश्ववाणी' (प्रयाग) के जून-अंक में श्री जैनेन्द्र का **'राष्ट्रीयता'** लेख राष्ट्रीयता की विवेचना, व्याख्या, समीक्षा करता है। **हिन्दू-मुसलमान लड़ते किन बातों पर हैं? हमारी राष्ट्रीय पोशाक क्या हो?** और **युद्ध का अंत कैसे सम्भव है?** लेख सामयिक समस्याओं पर हैं। **अकबर का पत्र** भी पठनीय है।

'कौमुदी' (दिल्ली) के जून अंक में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने **'मनुष्य की सर्वोत्तम कृति--साहित्य'** में 'साहित्य' की महत्ता व्यक्त की है; उनके विचार स्वस्थ और निभ्रान्ति हैं।

जून के **'विश्वमित्र'** में श्री 'विष्णु' का एक बड़ा जानकारी देनेवाला लेख है—**'महापुरुषों के प्रसिद्ध होने की आयु'**। देश-देश के बड़े-बड़े लोग कितनी-कितनी आयु में किस प्रकार प्रसिद्ध हुए, इसकी जानकारी इसमें मिलती है। युद्ध के दिनों में हवाई हमलों से बचने की तरकीब बताने के उद्देश्य से लिखा गया श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव का लेख भी पठनीय है। एक लेख में श्री अमरनाथ खन्ना ने अन्तर्जातीय विवाह को वैज्ञानिक दृष्टि से भी उपयोगी सिद्ध किया है। विचार उनके प्रामाणिक हैं और बल रखते हैं।

'दीपक' के जून-अंक में प्रो० लालजीराम शुक्ल ने **'नुक्ताचीनी की आदत'** लेख लिखा है। लेखक ने मनोवैज्ञानिक ढंग से इस आदत की जाँच-पड़ताल की है। आचार्य हरभाई त्रिवेदी का **'नयी शिक्षा के चार तत्व'** लेख शिक्षाविषयक, मननीय लेख है और इसी अंक में डॉ० लीलावतीदेवी गर्ग का अचरज में डालनेवाला लेख है—**'हैजा हमारा मित्र है।'** उसमें बतलाया गया है कि 'यदि हम रोग के साथ किसी प्रकार की छेड़छाड़ न करें अर्थात् उसे दवाओं द्वारा दबाने की चेष्टा न करें तथा उसे हो लेने दें तो निस्सन्देह कुछ घण्टों में रोग के लक्षण स्वयं शान्त हो जायेंगे और रोग के चले जाने पर रोगी पहले से भी अधिक उत्तम स्वास्थ्य का अनुभव करेगा।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या और कैसे ?

आशीर्वाद दें

'जी० सा०' की शुरुआत में पहले साल की लेख-सामग्री की जो रूपरेखा हमने बनायी थी, हमें खेद है कि, उसको पूरा करने में हम समर्थ न हो सके। हिन्दी की प्रतिष्ठित संस्थाओं, लेखकों, गतिविधियों, हलचलों आदि के बारे में हम जितनी जानकारी देना चाहते थे वह न दी जा सकी। हमने अपने बसभर यह सामग्री पाने की खूब कोशिश की; प्रकाशक-बन्धुओं, संस्थाओं के संचालकों, अन्य मित्रों व लेखकों को बार-बार पत्रादि द्वारा प्रेरित किया, पर हम अधिकांश में असफल ही रहे। इसका दोष-भागी तो हमें खुद अपने को ही मानना चाहिए। हमारी ही कोशिश में, पुण्य में, सामर्थ्य में कमी होनी चाहिए। 'जी० सा०' अभी इस लायक नहीं समझा गया होगा, संस्थाओं या लेखकों आदि के परिचय-विस्तार की जरूरत न महसूस की गयी होगी, या हमारा और कोई कुसूर रहा होगा। साल के इस आखिरी अंक में हम अपनी कमियों, गलतियों, दोषों के लिए क्षमा-प्रार्थना करते हैं व आशा रखते हैं कि अगले वर्ष हमारे पाठक व लेखक भाई-बहन हमें अधिक सफल बनने में सहायक होंगे। हमारे जिन आदरणीय व प्रिय मित्रों ने इस वर्ष अपनी लेख-सामग्री व सलाह-सूत या सुझावों के द्वारा हमारी सहायता की है, उनके प्रति किन शब्दों में हम अपनी कृतज्ञता प्रकट करें ? यदि पिछले वर्ष 'जी० सा०' हिन्दी जगत् की कुछ भी सेवा कर सका है तो वह उन्हीं के कृपापूर्ण सहयोग के बल पर। हमें विश्वास है कि अगले साल 'जी०-सा०' को और चमकाने में हमें उनका पूरा बल व प्रोत्साहन मिलेगा। युद्ध की परिस्थितियों ने 'जी०-सा०' की प्रगति पर भी प्रतिकूल असर डाला है जिससे अगला वर्ष ज्यादा कठिनाइयों से घिरा दीखता है। 'जी० सा० से कुछ सेवा लेना परमात्मा को मंजूर होगा तो वह उसे उन कठिनाइयों को हल करते हुए आगे बढ़ने का बल देता रहेगा। हम तो दिन-दिन यही अनुभव करते जाते हैं कि वास्तव में परमेश्वर की इच्छा व योजना ही पूरी या सफल होती है। मनुष्य—वह कितना ही महान् या प्रतापी क्यों न हो—ईश्वरीय इच्छा या शक्ति के आगे बिल्कुल पामर है। उसकी सफलता या संतोष इसी ज्ञान व अनुभव में है कि वह ईश्वरीय इच्छा या योजना का एक साधन है और वह बसभर अच्छा साधन बनने का यत्न करता रहे। 'जी० सा०' ने अबतक ऐसा ही करने की कोशिश की है, व आगे भी करता रहेगा। पाठक उसे इसमें सफल बनने का आशीर्वाद दें।

भगवान-भरोसे !

हिन्दुस्तान का राजनैतिक वातावरण ज्यों-का-त्यों बना हुआ है। बीच में एमरी साहब का वही टकसाली भाषण हुआ था और क़ायदेआज़म ने भी वही पाकिस्तान की टकसाली बात दुबारा ज़ोर के साथ कही थी, मगर कोई काम की बात उसमें से नहीं निकली। हिन्दू-मुसलमानों के दंगे अलबत्ता कई जगहों पर हो गये, जिन्होंने देश के चिन्ताशील और जिम्मेदार व्यक्तियों को काफी सोचने-विचारने पर मजबूर किया है। यह निर्विवाद है कि यदि हमें स्वराज्य लेना है और हम अपने आपको उसके लायक मानते भी हैं—तो इन भीतरी झगड़ों और बाहरी हमलों से रक्षा करने की योग्यता हममें होनी ही चाहिए। जो अहिंसा के कायल नहीं हैं या जो बुद्धि से तो कायल हैं, मगर जिनमें काफी आत्म-बल नहीं है वे हथियार लेकर भी अपनी और समाज की रक्षा करने में स्वतन्त्र हैं। डरने, छिपने या भागजाने की तो गुंजायश कहीं भी न होनी चाहिए। इसमें कोई शक नहीं कि हिंदुस्तान का एक बड़ा भाग अभी संगठित रूप से भीतरी और बाहरी उपद्रवों का सफलतापूर्वक अहिंसात्मक मुकाबला करने के लिए तैयार नहीं है। अभी तक हमने जेल जाने और लाठियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाने में ही अपनी अहिंसात्मक शक्ति का प्रदर्शन किया है। दंगों और हमलों का मुकाबला करने का न तो अनुभव ही किसी को है, न उसकी शिक्षण की कोई व्यवस्था ही है। अब शांति-सेना (Peace Brigade) बनाये जाने की योजनायें चल रही हैं, जो कुछ समय के बाद संगठित रूप से कुछ कर सकेंगी। प्रत्यक्ष और तात्कालिक फल की दृष्टि से तो ऐसा मालूम होता है कि आज हिन्दुस्तान के पास अपना न कोई पर्याप्त व संगठित हिंसा-बल है, न अहिंसा-बल, नृसिंह मेहता का काम जैसे भगवान-भरोसे चलता था और चला वैसे ही भारत की नैया भी भगवान-भरोसे चलती दीखती है।

हिन्दुस्तान के लिए इस समय बुरी से बुरी दो कल्पनायें की जा सकती हैं। एक लड़ाई में अंग्रेजों का हार जाना, दूसरे 'पाकिस्तान' की योजना का अमल में आ जाना। अभी तो दोनों की कोई संभावना नहीं मालूम पड़ती, परन्तु बुरे से बुरे भविष्य की कल्पना कर लेने के बाद मनुष्य की व्यर्थ की चिन्तायें कम हो जाया करती हैं और उसकी बुद्धि उपाय में लग जाती है। अंग्रेज अगर लड़ाई में जीतना ही चाहते है तो हिन्दुस्तान को मुहँ माँगे दाम देकर राज़ी कर देना चाहिए। कायदे-आज़म अगर मुसलमानों का सुख व हित ही चाहते हों तो उन्हें काँग्रेस और महात्माजी को हिन्दू-प्रतिनिधि कहने का हठ छोड़कर उनसे सुलह कर लेनी चाहिए। कांग्रेस हिन्दू-महासभा, लिबरल-फेडरेशन और खुद मुसलमानों की बहुत बड़ी जमात, सिक्ख समाज, इन सबके विरोध में रहते हुए जिन्ना साहब 'पाकिस्तान' की योजना कैसे अमल में ला सकेंगे? और ब्रिटिश सरकार ने भी तो अभी कहाँ उसके पक्ष में अपना रुख दिखाया है? कुछ साल पहले मुसलमानों के प्रति बड़ी हमदर्दी रखते हुए मैंने कहा था कि हिन्दुस्तान के मुसलमानों का कोई भविष्य नहीं है क्योंकि उनमें कोई सुधारक नहीं है। यहाँ तक भी गनीमत थी मगर अब उनमें 'कायदे आजम' जैसे सुधारक की जगह उल्टे "बिगाड़क" पैदा हो गये, इससे तो मुझे मुसलमानों का भविष्य और भी अन्धकारमय मालूम देता है। ईश्वर इस महान जाति को बचावे!

अंग्रेज अपनी किस्मत के लिए बड़ी बहादुरी और जी-जान से लड़ रहे हैं, वे हारें या जीतें। मगर उनका यह बहादुराना और शहीदाना मुकाबला संसार के इतिहास में अमर रहेगा, सफलता का ठेकेदार दुनियाँ में अभी तक न कोई हुआ है, न होगा, प्राण-पण से जूझ मरना भी एक साधक या सैनिक के लिए है। एक-एक हिन्दुस्तानी में यदि यह भावना पैदा हो जाय कि वह हिंसा से हो या अहिंसा से—जैसा जिसका विश्वास हो—जान की बाज़ी लगाकर जूझता ही रहेगा, निष्क्रिय और कायर बनकर बैठा ही न रहेगा, न एक कदम पीछे हटायगा, तो सामने के तमाम अन्धकार और सिर पर आये आँधी, तूफान, भूचाल के रहते हुए भी उसकी बाज़ी बिलकुल बिगड़ी नहीं है। सामने क्या दीखता है इसके बनिस्बत यह ज्यादा महत्त्व की चीज है कि हमारे मन में क्या है और हम क्या कर रहे हैं? जो सामने नहीं बल्कि अपने आपमें देखते हैं उन्हें सब जगह भगवान् और भगवान् का भरोसा दिखायी देता है।

अन्तर्निरीक्षण करेंगे?

कुमारी राथबोन ने जो खुला पत्र हिंदुस्तानियों के नाम लिखा था उसे पढ़कर मुझे संस्कृत की यह उक्ति याद आगयी :

प्रायः समापन्न विपत्तिकाले
धियोपि पुंसां मलिना भवन्ति ॥

इसका मतलब यह है कि मुसीबत के समय बड़े-बड़ों की अक्ल चकरा जाती है। उनके देश पर जो विपत्ति आयी हुई है, उससे हरेक हिन्दुस्तानी की सहानुभूति है, मगर अपनी मुसीबत का कारण जब मनुष्य दूसरे में देखने लगता है तो वह और गुमराह हो जाता है क्योंकि यह कभी हो नहीं सकता कि हमारी मुसीबत का कारण हमारे अलावा कोई दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हों। सच पूछा जाये तो मुसीबत का ही एक ऐसा समय होता है जब मनुष्य आत्म-निरीक्षण करता है और उसे अपनी गलती या दोष मिल जाता है। मगर अफसोस तो यह है कि कुमारी राथबोन जैसी समझदार और जिम्मेदार व्यक्ति ने उल्टा हिन्दुस्तानियों और खासकर कांग्रेसियों को बुरी तरह कोसने की ज़रूरत समझी है। समझ में नहीं आता कि इससे अंग्रेज़ों को लड़ाई में हिन्दुस्तान से क्या ज्यादा मदद मिल गयी? उल्टे कवीन्द्र रवीन्द्र जैसे से भी उनको दो कड़ी बातें सुननी पड़ीं।

हम मानते हैं कि अंग्रेज़ों पर इस समय घोर संकट है और जिस दृढ़ता और धैर्य के साथ वे उसका मुकाबला कर रहे हैं उससे उनके प्रति हमारा आदर ही बढ़ता है। उनके इस महान् संकट-काल में हम उन्हें कोई कड़वी या चुभनेवाली बात नहीं कहना चाहते। यह आर्य सभ्यता के खिलाफ है। लेकिन उनके मित्र के नाते हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि अभी उन्होंने अपने मर्ज़ को नहीं पहचाना है। अपना स्वार्थ साधने के लिए उन्होंने दूसरे देशों और जातियों के साथ क्या-क्या किया है इसका सिंहावलोकन यदि कुमारी राथबोन करेंगी, तो उनका हृदय बोल उठेगा कि अंग्रेज़ जाति को प्रायश्चित की ज़रूरत है। जिस दिन उनके मन में प्रायश्चित की भावना जगेगी उसी दिन उनकी विजय निश्चित हो जायेगी। क्या वे अन्तर्निरीक्षण करेंगे?

संशयात्मा विनश्यति

ब्रिटिश हिन्दुस्तान में और देशी रियासतों में जो राजनैतिक आंदोलन चलते हैं उनमें एक बड़ा फर्क है। वहाँ के शासक विदेशी हैं और देशी रियासतों के देशी। यह सच है कि तमाम देशी रजवाड़े अखीर में जाकर अंग्रेजी हुकूमत के ही ताबे हैं, फिर भी कई बातों में वे इतने स्वतन्त्र हैं कि ज़रा हिम्मत करें तो अपने राज की उन्नति और सुधार के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं, इसीलिए देशी रियासतों के राजनैतिक आन्दोलन में सहयोग की नीति रखी गयी है, लेकिन इसकी सफलता में शासक और जन-सेवक दोनों की ओर से कठिनाइयाँ आती हैं। शासक यह समझते हैं कि ये जन-सेवक आन्दोलन करके हमारी सत्ता छीनना चाहते हैं, हमारी कुर्सियों पर बैठना चाहते हैं, इसलिए वे उन्हें संदेह और अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं और उनके काम में सीधे-उल्टे सब तरीकों से रुकावट डालते हैं। इससे वे लोकनायकों और जन-सेवकों का सहयोग तो नहीं, उल्टा विरोध मोल ले लेते हैं, इधर जन-सेवक महत्त्व और मुद्दे की बातों को छोड़कर शासकों की व्यक्तिगत बुराइयों और निन्दा-स्तुतियों के फेर में पड़ जाते हैं जिससे जनता के कष्ट और राजनैतिक अधिकारों की माँग के प्रश्न एक ओर रह जाते हैं और शासकों और उनके बीच व्यक्तिगत कलह खड़ा हो जाता है और बात जब सिद्धांत और नीति से हट कर जाती रूप धारण कर लेती है तब प्रायः सबकी समतोलता चली जाती है और 'आये थे हरि-भजन को, ओटन लगे कपास' वाली कहावत चरितार्थ होने लग जाती है। शासकों को तो यह समझना चाहिए कि हम जनता-द्वारा मिली हुई सत्ता के संरक्षक (ट्रस्टी) हैं और उसे उनके योग्य प्रतिनिधियों के हाथों में, जितने जल्दी बने, सौंप देना है तबतक उनका सहयोग, प्रेम और विश्वास प्राप्त करते हुए उस सत्ता का उपयोग जन-कल्याण के लिए करना है। यह भावना उन्हें टीका-टिप्पणियों, निन्दाओं और आन्दोलनों को सहने का बल देगी। इधर जन-सेवकों को उचित है कि वे व्यक्तिगत बातों को महत्त्व न दें। अगर किसी शासक ने उनको नुकसान पहुँचाया है तो वे यह समझें कि उनका यह त्याग जन-सेवा के अर्थ है। अगर किसी शासक में कोई बुराई है तो उसका फल वह आप पा लेगा हम अपने को हर तरह की बुराई से पाक-साफ़ रखें। वे शासकों के उन्हीं कार्यों पर ध्यान रखें जिनका सीधा सम्बन्ध प्रजा-हित से है। दोनों पक्ष के लोग यदि इन दो गलतियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से बचते रहेंगे, तो देशी राज्यों में बिना संघर्ष के ही राजनैतिक सुधार हो सकेंगे। संघर्ष मोल लेते रहना कोई बुद्धिमानी नहीं; संघर्ष सामने आ जाये, तो उससे पीठ न दिखाना सच्ची वीरता है। वीरता और शंकाशीलता का जोड़ा नहीं है। चाहे शासक हों चाहे जन-सेवक, संशय-चित्त के लिए मरण और विनाश ही अन्तिम गति है—"संशयात्मा विनश्यति"

क़ायदेआज़म सोचें

सचाई आज नहीं तो कल अपना असर जताये बिना नहीं रह सकती। झुठाई या ढकोसला थोड़े दिन के लिए कैसा ही रूप खड़ा कर दे लेकिन अख़ीर में उसे मुँह के बल गिरना पड़ता है। मुस्लिम लीग की स्थिति के बारे में इस समय ऐसा ही अनुभव होता हुआ दिखाई देता है। वह रईसों, नवाबों, मंत्रियों—यानी सरकारपरस्तों की एक ख़ासी खिचड़ी जमात है, जिसने 'पाकिस्तान' या ऐसी ही मजहबी ढंग की भाषा बोलकर व भावनाओं को उभाड़कर एक सियासी संगठन खड़ा किया है व अज्ञान, अशिक्षित मुसलमानों पर रंग चढ़ाने की कोशिश की है। मगर अब उसके नेताओं को ही, वास्तविकताओं के आगे, अपने सही विचार व भाव जनता के सामने रखने पड़ रहे हैं। पंजाब के सर सिकन्दर पहले ही कह चुके हैं कि 'पाकिस्तान' को भूलो; बंगाल के प्रधान-मंत्री फजलुलहक़ साहब ने लीग के कुलकुलां जिना साहब के फर-मान व मन्शा के खिलाफ़ सर सप्रू की राष्ट्रीय सरकारवाली माँग के हक में अपना रुख साफ़ तौर पर ज़ाहिर कर दिया। इधर सर सप्रू व जिना साहब के वक्तव्यों के फलस्वरूप निष्पक्ष परिषद्वालों ने पाकिस्तान की योजना से जूझने का विचार किया था। हिन्दू-सभा व हिन्दू लीग तो शुरू से ही उसका विरोध कर रही हैं। कांग्रेस ने अभी अधिकृत रूप से इस योजना पर विचार नहीं किया है; मगर महात्माजी इस कल्पना का—दो राष्ट्र के सिद्धान्त का घोर-विरोध कर चुके हैं। ब्रिटिश सरकार और अंग्रेज भी इसके समर्थक नहीं दीखते। और यदि मुस्लिम लीग का सचमुच यही राजनैतिक आदर्श है तो उसका खोखलापन वर्तमान वाता-वरण से अच्छी तरह स्पष्ट हो रहा है। ऐसी स्थिति में क्या कायदेआजम कुछ आत्म-निरीक्षण करेंगे ?

गुप्त विवाह

इधर कुछ दाम्पत्य-जीवन सम्बन्धी घटनायें ऐसी देखी गयी हैं जिनपर विचार करना ज़रूरी है। एक ब्राह्मण-युवक ने एक वैश्य-कन्या के साथ किसी तरह शादी की रस्म गुप्त रूप से पूरी करली। न लड़की के माता-पिता को खबर की गयी न दूसरे इष्ट-मित्रों को ही। लड़की का कहना है कि मुझे डरा-धमकाकर ऐसा किया गया और वह उसके साथ जाने को राज़ी नहीं है। एक दूसरी घटना इस प्रकार है: एक ब्राह्मण-कन्या और एक हरिजन-युवक ने आपस में विवाह कर लेना निश्चित किया। यह भी बहुत-कुछ गुप्त रीति से हुआ। अब सामाजिक कारणों से कन्या बहुत संकट में है और युवक भी खतरे से खाली नहीं है।

ऐसे गुप्त-सम्बन्धों की और भी कथायें सुनने में आया करती हैं। गुप्तता के समर्थकों की दलील है कि यदि पहले से माता-पिताओं को मालूम हो जाय तो वे मंजूरी नहीं देंगे। यह आशंका बहुत अंश तक सत्य हो सकती है; परन्तु इस कठिनाई से बचने का उपाय गुप्तता का आश्रय लेना नहीं है। सगाई या विवाह कोई बुरा और गन्दा काम नहीं है। जहाँ आपस में प्रेम हो, अनुमति प्राप्त करने के लिए किसी पर ज़ोर-ज़बरदस्ती न की गयी हो, कुल-शील और गृह-व्यवस्था की दृष्टि से सम्बन्ध उचित हो तो कर लेना ठीक है। जातपाँत का महत्त्व अगर कुछ है तो सांसारिक या कौटुम्बिक दृष्टि से ही। प्रेम और आत्मीयता का उससे कोई खास ताल्लुक नहीं। परन्तु ऐसी सगाई और विवाह खुले आम होने चाहिएँ। अगर यह समाज-सुधार है तो गुपचुप क्यों ? अगर सम्बन्ध सब बातों को सोचकर किया गया है तो बड़े-बूढ़े अवश्य ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

28753

अनुमति देंगे। न दें तो उनसे आदरपूर्वक लड़ना कर्तव्य हो जाता है, और यही सीधा, सच्चा और बहादुराना तरीक़ा है। न तो छिपाव, न धोखा-धड़ी, न झाँसापट्टी, न डराव-धमकाव, इसका इलाज हो सकता है। अगर सगाई और विवाह के मूल में प्रेम का अभाव अधिक है, भोग का भाव कम, तो उसका नतीजा यह होना चाहिए कि हम स्वयं कष्ट और ज़िल्लत उठावें और अपने प्रेमपात्र को उनसे बचावें। प्रेम की कसौटी बलिदान है, अहिंसा है; न कि अपना सुखोपभोग और स्वार्थ-साधन या हिंसा। इस कसौटी पर आजकल के ये सगाई और ब्याह कितने ठहरते होंगे ?

जो माँ-बाप बड़ी उमर की लड़कियों के सगाई-ब्याह में इस बात का ध्यान नहीं रखते कि लड़के-लड़कियों का झुकाव किधर है और अपनी ज़बरदस्ती से उनका सगाई-ब्याह कर देते हों या करना चाहते हों वे सख़्त ग़लती करते हैं। मैंने कुछ विवाहिता बहनों को यह कहते हुए सुना है कि हमारे माता-पिता ने हमारी अज्ञान-अवस्था में शादी करदी; अब अगर हमारे मन में उनके (पति के) लिये प्रेम उत्पन्न नहीं होता है तो हम क्या करें ? ऐसे विवाह लड़के-लड़की दोनों की ज़िन्दगी के लिए दुखदायी होते हैं। हमें यह भूलना नहीं चाहिए कि प्रेम और भोग दो अलहदा चीज़ें हैं। प्रेम मानसिक या आत्मिक और भोग शारीरिक होता है। भोग की इच्छा एक अवस्था के पश्चात् ख़तम हो जाती है। मगर प्रेम शुरू से आखिर तक क़ायम रहता है। जो नहीं रहता है उसमें भोग और स्वार्थ की मिलावट समझ लो। फिर भोग और प्रेम दोनों सदा एक ही जगह रहते हों सो बात नहीं। ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनमें कि भोग का सम्बन्ध एक जगह है और प्रेम का दूसरी जगह। विवाह-सगाई में छिपाव को जायज़ स्थान कैसे मिल सकता है, यह मेरी समझ में नहीं आता। इस छिपाव की प्रवृत्ति को मिटाने में बड़ी सहायता होगी यदि माता-पिता और अभिभावक लड़के-लड़कियों को यह आश्वासन देते रहें कि अगर सगाई विवाह पूर्वोक्त शर्तों को पूरा करके किया जायगा तो साधारण तौर पर वे आपत्ति न करेंगे।

अगर विवाहेच्छु लड़के-लड़की माता-पिता पर अपनी इच्छायें प्रकट करते रहेंगे और माता-पिता उन्हें अपने नज़दीक इतनी आज़ादी और निश्चिन्तता देंगे तो माता-पिताओं को गुप्तता का खतरा नहीं रहेगा। माता-पिता और अभिभावकों का--उनकी सलाहों और सम्मतियों का--मूल्य इसलिए बहुत अधिक है कि उन्हें दुनिया के भले-बुरे आदमियों का, उतार-चढ़ावों का काफ़ी अनुभव रहता है। अनुभव की चाल धीमी हो जाती है, इसलिए नवयुवकों को—भावुक हृदयों को उसमें सुस्ती, अनुत्साह, जीवन और प्रगति का अभाव मालूम होता है। परन्तु खामख्वाह ही, बिना विचारे ही, खन्दक में गिरना कोई अच्छी बात न हो, तो माता-पिता और अभिभावकों के अनुभवों की पूरी-पूरी क़दर करनी चाहिए।

अगले अंक में

जी० सा० कार्यालय से मुझे खबर मिली है कि **'लेखक बनाम प्रकाशक'** के सिलसिले में कई पत्र व सुझाव आये हैं, जो मेरी अस्वस्थता के कारण मुझे भेजे नहीं गये हैं। इसी विषय में 'हंस' में प्रकाशित श्री चौहानजी की टिप्पणी तो मैंने यहाँ पढ़ ली है। खेद है कि अस्वस्थता के कारण पिछले महीनों से मुझे यहाँ के एक प्राकृतिक चिकित्सालय में भरती होना पड़ा है जिससे अबतक मैं तमाम पत्रों, सुझावों व टीकाओं पर आवश्यक विचार करने में असमर्थ रहा हूँ। उसके लिए पाठक अगले अंक की प्रतीक्षा करने की कृपा करें।

ह० उ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लज्जा की बात

आगरा जेल में आजकल देश के राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त, आचार्य नरेन्द्रदेव जैसे सपूत नज़रबन्द हैं; जिनपर राजद्रोही होने या राजद्रोह में प्रोत्साहन देने का अपराध लगाया गया है। कहने को वे नज़रबन्द हैं परन्तु उनके साथ जो दुर्व्यवहार किया जा रहा है, उससे नृशंसता भी लज्जित होती है। यहाँ यह कहने का अवसर नहीं है कि उन्हें नज़रबन्द किया ही क्यों गया है? फिर भी हम इतना अवश्य पूछ सकते हैं कि नज़रबन्दों को जो मामूली से मामूली सुविधायें भी नहीं दी जा रही हैं क्या यह ब्रिटिश शासन द्वारा प्रजातन्त्र की रक्षा की दुहाइयों से कुछ भी मेल खाता है? हिन्दुस्तान भर के पत्रों के इसके विरोध में आवाज़ उठाते रहने पर भी सरकार अपना रुख नहीं बदल रही है, यह सचमुच बड़ी लज्जा की बात है।

'सत्साहित्य-सेवक-समाज' को सहयोग

पिछले अंक में श्री सूर्यनारायणजी व्यास की मृत साहित्यकारों के परिवार की सहायतार्थ बनायी हुई **'सत्साहित्य-सेवक-समाज'** संस्था की योजना दी गयी थी। स्व० श्री 'हृदयजी' के परिवार की आर्थिक सहायता के निमित्त १२ श्रेष्ठ हिन्दी-लेखक अपनी रचनायें संस्था को देंगे। अभी तक श्री हरिभाऊ उपाध्याय और श्री पांडेय बेचन शर्म्मा 'उग्र' से एक-एक रचना मिलने का वचन मिला था। अब सूचना मिली है कि श्रीमती महादेवी वर्मा और श्री रामकुमार वर्मा भी अपनी एक-एक कृति उसे देंगे। हमारा आग्रह है कि अन्य साहित्यकार भी संस्था को सहयोग दें।

सु०

मण्डल की ओर से

प्रथम वर्ष का अंत

'जी० सा०' के इस अंक के साथ उसका पहला वर्ष समाप्त हो रहा है। इस वर्ष जिन कृपालु पाठकों, ग्राहकों तथा विज्ञापनदाताओं ने कृपापूर्वक अपनी अमूल्य सहायतायें दी उनके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं और आशा करते हैं कि उनकी यही कृपा-दृष्टि आगे भी बनी रहेगी।

'जी० सा०' के मूल्य में कमी

अगले वर्ष के लिए 'जी० सा०' के मूल्य में जो कमी और विशेष रिआयतें भावी ग्राहकों तथा पाठकों के लिए की गयी हैं उनपर ध्यान देने की प्रार्थना की जाती है तथा आशा की जाती है कि उसका पूरा लाभ उठाया जायगा।

नवीन पुस्तकें तथा पुनर्मुद्रण

पिछले अंकों में नवीन पुस्तकों की सूचना तो ग्राहकों को दी ही जा चुकी थी तथा कई ग्राहकों ने तो पुस्तकें मँगा भी ली हैं। पर जिन्होंने न मँगाई हों वे शीघ्र मँगा लेने की कृपा करें।

नये संस्करण

विनोबा के विचार और **लड़खड़ाती दुनिया** की प्रतियाँ समाप्त होगयी हैं पर पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि उनके नये संशोधित तथा परिवर्द्धित संस्करण छपने जा रहे हैं। **मेरी कहानी** इस महीने के अंत तक तैयार होजायगी। इस बार कागज की मँहगी के कारण उसका मूल्य २॥) से ३) कर दिया गया है। इसी प्रकार **भाई के पत्र, राष्ट्रीय गायन, प्रेम में भगवान, संतवाणी,** आदि पुस्तकों के भी नये संस्करण शीघ्र ही छपकर तैयार हो रहे हैं।

नवीन पुस्तकें—

जो प्रेस में छप रही हैं वे भी जल्दी ही तैयार हो जायेंगी। उनमें **मालवीयजी के साथ तीस दिन, उपनिषदों की कहानियाँ, पशुओं के इलाज, महावीर-वाणी** आदि खास हैं।

नागपुर में 'मण्डल' की शाखा

सब पाठकों को और खासकर मध्यप्रांत, महाराष्ट्र और निज़ाम स्टेट के पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि श्री रिषभदासजी राँका तथा श्री लक्ष्मीनारायणजी भारतीय के सहयोग से नागपुर या वर्धा में 'मण्डल' की शाखा खुलने का निश्चय हो चुका है। पहली अगस्त से शाखा का काम नियमित रूप से शुरू हो जायगा।

व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको

रुपया चाहिए

और हमको

आपका समय चाहिए

रुपये तथा समय की तुलना नहीं हो सकती, क्योंकि रुपया तो वापस भी मिल सकता है, परन्तु बीता समय फिर कभी हाथ नहीं आ सकता।

प्रति दिन नियमित रूप से आप केवल २ घण्टे का समय देकर

न्यू एशियाटिक

की जीवन-बीमा पालिसी

बेचकर हजारों रुपये कमा सकते हैं

आप प्रगतिशील कम्पनी के साथ प्रगतिशील बनें

जिसने—

१९३४ ई० में	१५,३८,५००	रु०
१९३५ ई० में	२५,०१,०००	,,
१९३६ ई० में	३०,६६,७५०	,,
१९३७ ई० में	३५,५९,५००	,,
१९३८ ई० में	४१,७४,७५०	,,
१९३९ ई० में	५०,११,७६८	,,
१९४० ई० में	६०,१३,२५०	,,

के बीमे किये हैं

आज ही पत्र भेजकर विवरण मँगाकर देखें

न्यू एशियाटिक लाइफ़ इन्शुरेन्स कम्पनी लिमिटेड

कनाट सर्कस, नयी दिल्ली।

शाखायें—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, नागपूर, हैदराबाद दक्षिण, अर्नाकुलम (कोचीन), लाहौर तथा पटना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाजारू कहानियों व गल्पों की मृगतृष्णा से आपको

'कहानी'

ही बचा सकती है।

इसकी विशेषताएँ हैं

(१) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकारों की प्रगतिशील व मौलिक रचनाएँ।

(२) अंतर्राष्ट्रीय व अंतर्प्रान्तीय ख्यातिप्राप्त लेखकों की कहानियों का अनुवाद।

(३) कहानी, गल्प, एकांकी नाटक तथा उपन्यासों की रचना, उनकी शैली आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण विवेचनाएँ।

सभी समालोचकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है कि 'कहानी' सामग्री तथा सस्तेपन दोनों दृष्टियों से बेजोड़ है।

'कहानी' के विशेषांक पर चन्द सम्मतियाँ

दी इंडियन पी० ई० एन—

'...इसमें जो कहानियाँ हैं, वे औसत दर्जे की कहानियों से कहीं श्रेष्ठ हैं।...इस विशेषांक की कहानियाँ पश्चिमी देशों के लेखकों की कहानियों से टक्कर लेती हैं...यह पत्रिका हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य सेवा कर रही है...हिन्दी के प्रमियों को निश्चय ही इसे अपनाना चाहिये।

श्री जैनेन्द्र—

'...विशेषांक के सभी लेख मार्मिक हैं। उनके चुनने में गहरे विवेक की दृष्टि दीखती है...'

श्री सुदर्शन—

'...इतना कामयाब नम्बर आप इतनी कम क़ीमत में कैसे दे सकते हैं, यह आश्चर्य की बात है।...मैं आपको बधाई देता हूँ।'

श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क'—

'...छः आने में इतनी सामग्री देना तुम्हारा ही काम है। गेट-अप, कहानियों और लेखों और फिर उनकी तरतीब—सब विचार से अंक सर्वांग सुन्दर है।...'

श्री उषादेवी मित्रा—

'...'कहानी' पत्रिका का विशेषत्व है—अत्यल्प मूल्य में इस प्रकार उच्चकोटि की वस्तुओं को भेंट देना...'

श्री देवराज उपाध्याय—

'कथा-साहित्य संबंधी जितनी पत्रिकाएँ निकलती हैं, उनमें 'कहानी' का स्थान सर्वश्रेष्ठ है...'

श्री उदयशंकर भट्ट—

'...पढ़कर चित्त उत्फुल्ल हो उठा...इस अंक की संपूर्ण सफलता के लिए आपको बधाई।'

श्री रवीन्द्र

'Cheap Sentimental कहानियों से मुझे वैर है, पर इस बार का विशेषांक देखकर तबियत खुश हो गई...'

श्री पहाडी—

'...'कहानी' के विशेषांक में जितनी श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह है, उस टक्कर की एक भी कहानी व्यवसायी कहानी-पत्रों की फाइलों में शायद ही मिलेंगीं।'

इतनी उत्कृष्ट और लोकप्रिय पत्रिका का वार्षिक मूल्य केवल तीन रु० है। एक प्रति का चार आना। कृपया आज ही ३) मनीआर्डर से भेज दें : पुस्तकालय २।।) भेज सकते हैं।

सरस्वती प्रेस, बनारस कैंट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिड़ला जूट मैन्युफ़ैक्चरिंग कम्पनी, लि॰

के

जूट कार्पेट

ट्रेडमार्क—पद्म (लोटस)

हर प्रकार की सजावट के लिए

सबसे बेहतरीन चीज़

सस्ते, आकर्षक और मज़बूती के लिए प्रसिद्ध

दिल्ली, लाहौर, अमृतसर इत्यादि
मेसर्स, एम. डी. ज़िन्दल एण्ड सन्स,
मरीना होटल आर्केड, नई दिल्ली.

बनारस, कानपुर, इलाहाबाद, गोरखपुर
मेसर्स, खन्ना इन्डस्ट्रीज़,
बीबीहटिया, बनारस सिटी.

झाँसी, जबलपुर, सागर
मेसर्स, बीडीचन्द मक्खनलाल,
छावनी, झाँसी.

देहरादून, मेरठ, मसूरी
मेसर्स, एस. एल. अग्रवाल ऐण्ड कम्पनी,
१३ जी. राजपुर रोड, देहरादून.

बरेली, मुरादाबाद, रामपुर
मेसर्स बी. डी. गोयल एण्ड सन्स,
बांस-मण्डी, बरेली.

नैनीताल, अल्मोड़ा, रानीखेत
मेसर्स, हरिदत्त एण्ड ब्रदर्स,
दी माल, नैनीताल.

सेलिंग एजेन्ट्स :—

सब एजेण्ट और स्टाकिस्ट प्रत्येक जगह हैं।

बिड़ला ब्रादर्स, लिमिटेड.

मैनेजिंग एजेन्ट्स,

८, रायल एक्सचेन्ज प्लेस, कलकत्ता।

टेलीग्राम:—"जूटवीवर" टेलीफोन:—कलकत्ता ५६५.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालोपयोगी इतिहास-माला

उथल-पुथल के इस ज़माने में अनेक देश के भावी नागरिकों को संसार के उलट-फेर से परिचित कराने के लिये **'बालोपयोगी संसार का संक्षिप्त इतिहास'** ३७ खंडों में निकालने की योजना है। पुस्तकें सरस और रोचक ढंग से लिखी गयी हैं कि इन्हें ऐतिहासिक जानकर नीरस और उलझनदार न समझें। कहानी के ढंग पर लिखी पुस्तकें सब सचित्र हैं। ज्ञान का भंडार, **मूल्य प्रत्येक का १)**

प्रकाशित—**वैदिक भारत, पौराणिक भारत, रामायण, महाभारत, अमेरिका, ब्रह्मदेश** और **बौद्ध भारत।**

प्रेस में—**तुर्क भारत, मुगल भारत, राजस्थान, दक्षिणापथ (द्रविड़ों का इतिहास) सिख जाति और महाराष्ट्र, विशेष जानकारी के लिये विवरण पत्र मँगाइए।**

बिहार, युक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त और बड़ौदा
में शिक्षा-विभाग की स्वीकृत

किशोर

विद्यार्थियों को लोकप्रिय और ज्ञानवर्धक पठन-सामग्री देनेवाला अपने ढंग का अकेला सचित्र मासिक।

'किशोर' विज्ञान, इतिहास की प्राचीन संस्कृति, साहित्य, व्यायाम और शिक्षा आदि के सम्बन्ध में किशोरों की ज्ञान-पिपासा शान्त करता है।

अपने पाठकों को मानव-जीवनक्रम, दुनिया के इतिहास, विज्ञान के शोधकों और साहसिकों के रोमांचक प्रसंगों का परिचय कराता है।

प्रेरक कवितायें, प्रकृति का सजीव वर्णन, यात्रा-विषयक लेख 'किशोर' की विशेषतायें हैं।

वार्षिक ३) : प्रत्येक ।-)

अप्रैल का अंक **'उपकथांक'** है।

इस विशेषांक का मूल्य ।।)

हमारा साहित्यिक प्रकाशन

भारतीय ईश्वरवाद	पांडेय रामावतार शर्मा	३)
बिहार-दर्पण	गदाधर प्रसाद अंबष्ट	५)
बिहार के दर्शनीय स्थान	,, ,, ,,	१।।)
प्रजातन्त्र	बा० रा० मोदक	१।।)
कलापी	आरसीप्रसाद सिंह	२)
रिमझिम	हंसकुमार तिवारी	१)
हमारे साहित्य-निर्माता	शांतिप्रिय द्विवेदी	१)
साहित्यिकी	,, ,,	१।।)
जीवन-यात्रा	,, ,,	।।।=)
रामचरित चिंतामणि	रामचरित उपाध्याय	२)
पद्य-प्रमोद	हरिऔध	।।)
हिन्दी मुहावरे	रामदहिन मिश्र	२।)
हिंदुस्तानी भाषा कोष	मिश्र और अंबष्ट	१।)
नवजीवन	राजा राधिकारमण प्र० सिंह	।)
उद्भ्रांत प्रेम	चन्द्रशेखर उपाध्याय	।।।)
मेरे यूरोप के अनुभव	डा० राजेन्द्रप्रसाद	।=)
सम्मोहन विद्या	पी० सी० सरकार	।।।)
लाल चीन	रामवृक्ष बेनीपुरी	२)
स्टालिन	रामइक़बालसिंह	२)
खिलौना घर	हेनरिक इसेन	।।।)
मज़दूरों की छाती पर	के० पी० झा	२)
भाई-बहन	मोहनलाल महता	१)
रजकण	,, ,,	।।।)
विभेद	राधाकृष्ण प्रसाद	।।।)
भूली हुई कहानियाँ	सरयू पंडा गौड़	१।।)
पुण्य फल	व्यथित हृदय	।।)
तुलसी-साहित्य	देवदत्त त्रिपाठी	।।)
शकुन्तला	राजा लक्ष्मणसिंह	।।।)
कहानी-एक कला	गिरधारीलाल शर्मा गर्ग	।।।)
विमान	गिरधारीलाल शर्मा	१।।)
ग्राम्य-पंचायत	वि० ग० वझे	।।=)
सन्त-साहित्य	भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'	२)

बाल-शिक्षा-समिति और ग्रंथमाला-कार्यालय, बाँकीपुर (पटना)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका व्यापार

केवल सुन्दर और चित्ताकर्षक

- ब्लाक
- छपाई
- कलेन्डर
- कार्ड बोर्ड बक्स
- लेबिल आदि

पर ही निर्भर है

फोन नं० ६३२७

इसलिये उपरोक्त सामग्री के लिये—

मुरारी फ़ाइन आर्ट वर्क्स,

४, दरियागंज देहली

ब्रांच- कटराबड़ियान देहली

को हमेशा याद रखिये

ब्रांच- कसेरट बाजार आगरा

और हमारे

२० वर्ष के अनुभव

से लाभ उठाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार की सर्वश्रेष्ठ प्रकाशन-संस्था

'पुस्तक-भण्डार' की कुछ

साहित्यिक पुस्तकें

काव्य-ग्रन्थ

१ विद्यापति की पदावली २)
२ बिहारी-सतसई १॥)
३ तुलसी-सतसई १॥।)
४ गोविन्द-गीतावली १॥)
५ रसकलस (हरिऔध) ४)
६ पारिजात (,,) ४)
७ रेणुका (दिनकर) २॥)
८ रसवन्ती (,,) १)
९ द्वन्द्वगीत (,,) ॥)
१० गुनगुन (मनोरंजन) ॥।)
११ अन्तर्जगत् (लक्ष्मीनारायण मिश्र) ।)

आलोचनात्मक

१ भारतेन्दु-साहित्य (स्व० रामचन्द्र शुक्ल) १)
२ हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास ५)
३ बिहार का साहित्य २)
४ वाग्विलास (महावीरप्रसाद द्विवेदी) १॥)
५ कविरत्न मीर (रामनाथ सुमन) १)
६ दागे जिगर (,, ,,) १॥)
७ नूरजहाँ २॥)

उपन्यास-कहानी

१ देहाती दुनिया (शिवपूजनसहाय) १॥)
२ प्रेमिका (स्व० ईश्वरीप्रसाद शर्मा) २॥)
३ प्रेम-पथ (भगवतीप्रसाद बाजपेयी) २)
४ विमाता (अवधनारायण) २)
५ पुरुष-परीक्षा १)
६ विभूति (शिवपूजन सहाय) २)
७ किसलय (प्रो० जनार्दनप्रसाद झा 'द्विज') १॥)
८ कानन (जानकीवल्लभ शास्त्री) १॥)

बालमनोरंजक

१ बड़ों का बचपन १॥)
२ आविष्कार और आविष्कारक ॥)
३ सियार पाँड़े ॥)
४ बगुला भगत ॥)
५ बिलाई मौसी ॥)
६ हीरामन तोता ॥)
७ जादू का राग ≡)
८ बाल बोस्ताँ ≡)
९ बालकों का योरप ।≡)
१० देवता ।≡)

यात्रा-सम्बन्धी

१ आवारे की यूरप-यात्रा २॥)
(सत्यनारायण, पी-एच. डी.)
२ कैलाश-दर्शन १॥)
३ उत्तराखंड के पथ पर २)

कुछ अमूल्य और उत्तमोत्तम पुस्तकें

[भारतीय-दर्शन-परिचय—न्याय खण्ड ५); बिहार—एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन २); बिहार का चित्रित गौरव १); भारतीय इतिहास की बालपोथी १॥); भूलोक-परिचय २); प्रतिवेश-परिचय १॥); बच्चों का चिड़ियाखाना २); आदर्श राघव १); आत्मचरित-चम्पू १॥); रचना-नवनीत १॥।) व्याकरण-चंद्रोदय १)]

पता—पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय और गोविंदमित्र रोड, पटना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबी जनरल इंश्योरेंस कंपनी लि०

चेयरमेन--सेठ ब्रजमोहन बिड़ला

आयोजित पूँजी—४५,००,०००) रुपये
भुगतान पूँजी--१४,४०,०००) रुपये

ज़िन्दगी, आग, जहाज़ और (मोटर आदि सब) दुर्घटनाओं का बीमा कराने में

सबसे सुरक्षित बीमा कम्पनी

इसमें बीमा कराइए या एजेंसी लीजिए

जहाँ हमारे प्रतिनिधि नहीं हैं, उन शहरों में जीवन-बीमा-विभाग के लिए एजेण्टों की आवश्यकता है

प्रार्थनापत्र भेजिए

↓

जनरल मैनेजरः—

८, रॉयल एक्सचेन्ज प्लेस, कलकत्ता

या

बम्बई, कराची, रामपुर, लाहौर, मद्रास, नई दिल्ली, कानपुर, पटना शाखाओं को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार की एकमात्र प्रगतिशील मासिक-पत्रिका

वार्षिक-मूल्य ५) रुपए

आरती

एक प्रति ।।) आना

सारा भारत एक स्वर में बोलता है—

डा० राजेन्द्रप्रसाद (बिहार)—

मुझे 'आरती' को देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। अंक बहुत सुन्दर और सारगर्भित है। मैं आशा करता हूँ कि 'आरती' की ज्योति दिनोंदिन अधिकाधिक चमकेगी।

स्वा० भवानीदयाल संन्यासी (अफ्रीका-प्रवासी)

वास्तव में 'आरती' हिन्दी-साहित्य की अनमोल संपत्ति है और बिहार में प्रकाश फैलानेवाला एक दीप-स्तंभ।

महापंडित राहुल सांकृत्यायन, सेंट्रल जेल, हज़ारी बाग

'आरती' को इतना अच्छा निकालने पर बधाई! मेरी सदिच्छा तुम्हारे इस शुभ कार्य के साथ है।

दैनिक 'आज' (यू० पी०)—

लेखों और कविताओं का चयन अति सुरुचिपूर्ण है। हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ कलाकारों का सहयोग पत्रिका को प्राप्त है।

दैनिक 'प्रताप' (यू० पी०)—

'मुक्त' और 'अज्ञेय' का सहयोग हिन्दी-साहित्य की एक स्मरणीय घटना है।

मासिक 'साधना' (यू० पी०)—

'आरती' हिन्दी का मेरुदण्ड दृढ़ करेगी, ऐसा हमारा विश्वास है।

आरती-मन्दिर, पटना सिटी

गांधीवाद का अभिनव काव्य

कविश्री सोहनलाल द्विवेदी

रचित

भै र वी

सजिल्द : सचित्र : दाम दो रुपये

प्रकाशक

इण्डियन प्रेस लि० प्रयाग

सस्ता-साहित्य-मण्डल की सब शाखाओं, संयुक्तप्रान्त के गांधी आश्रम खादी-भण्डारों तथा प्रतिष्ठित पुस्तक-विक्रेताओं से प्राप्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजक, रोमांचक, एवं शिक्षाप्रद

चार नये उपन्यास व कहानी-संग्रह

(१) **नरमेध**—रचयिता श्री सर्वदानंद वर्मा, जिनके 'संस्मरण' नामक उपन्यास ने उपन्यास-जगत् में तहलका मचाकर सन् १९४० के उपन्यासों में अपने को सर्वश्रेष्ठ प्रमाणित किया था, उन्हीं का इस साल का यह सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है; यह उपन्यास क्या है, भविष्य के आर्थिक आधारों पर स्थित समाज की रूपरेखा है। **मूल्य १।)**

(२) **कुचक्र**—रचयिता—नरसिंहराम शुक्ल। प्रस्तुत उपन्यास-लेखक की सातवीं कृति है। इस उपन्यास में भारत की विख्यात नगरी बम्बई के कुछ प्रसिद्ध व्यापारी पश्चिमी भारत की कुछ रियासतों में व्यापारिक एकाधिपत्य क़ायम करने के लिए षड्यन्त्र रचते हैं—जालसाजों का एक भयंकर गुट्ट तैयार हो जाता है, जिसमें दो सुन्दरियों के आ पडने से एक अनूठी सरसता और रोमान्स आजाता है। यह उपन्यास वर्णनशैली घटनाओं की विचित्रता तथा सरसता के कारण बेजोड़ है। **मूल्य १।)**

(३) **मातृ-मन्दिर**—रचयिता जगदीश झा 'विमल'। इस उपन्यास में अपने जनस्थान के प्रति मनुष्य के हृदय में कितनी ममता होती है, निराश्रय हो अन्यत्र पाले-पोसे जाने के बाद तिरस्कृत होने पर अनाथ बालक कैसी ग्लानि का अनुभव करता है तथा सिर पर सैकड़ों मुसीबतें उठाकर वह किस प्रकार अपने को समर्थ बनाकर अपने जन्म-स्थान पर विशाल भवन बनाता है, इन सब बातों का सजीव और ओजस्वी वर्णन मिलेगा। इस उपन्यास को पढ़कर आप अपने हृदय में पवित्रता, त्याग तथा आशा का संचार पायेंगे।

(४) **सच्ची रोमांचक कहानियाँ**—ले० चौधरी शिवनाथसिंह 'शाडिल्य'। यों तो आपने सनसनी घटनाओं से पूर्ण तथा रोमांचक कई कहानियाँ पढ़ी होंगी, पर इस पुस्तक की कहानियाँ सब सच्ची घटनाओं पर लिखी हुई हैं, जो काल्पनिक कहानियों से भी रोचक तथा रोमांचकारी हैं। आप इन्हें पढ़कर आश्चर्य रोमांच और करुणा से पूर्ण हो जायँगे।

व्यवस्थापक—

छात्रहितकारी पुस्तकमाला,

दारागंज, प्रयाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकतन्त्र के लिए शिक्षा ?

※ आज के इस जलते हुए सवाल का उत्तर आपके पास क्या है ?

※ विश्व में युद्ध, कलह और अशान्ति क्यों है ? इसका मूल कारण आप जानते हैं ?

※ आपका लाडला इतना दुखी और अव्यवस्थित क्यों है ? वह स्कूल जाना क्यों पसन्द नहीं करता ? घर को सर पर क्यों उठाये हुए है ? इन सभी महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर आप जानते हैं ?

※ माता-पिता के कर्त्तव्य क्या हैं ? सच्चा शिक्षक और स्कूल क्या है, आप जानते हैं ? श्री हरिपद मैति कलकत्ता विश्व-विद्यालय के चित्त-विश्लेषण के अभ्यासी विद्वान् हैं। वे बालकों के कठिन प्रश्नों का उत्तर देते हैं। पर यह सब महत्वपूर्ण ज्ञान आपको—

बालहित

में प्रतिमास मिल जायेगा।

वार्षिक २)　　नमूना ≡)　　उदयपुर (मेवाड़)

दिल्ली में सब प्रकार की उत्तम छपाई और खास करके

हिन्दी पुस्तकों की छपाई

का काम

फेडरल ट्रेड प्रेस

नया बाज़ार : दिल्ली : : फोन नं० ५३७७

में

बहुत अच्छा और सावधानी से किया जाता है

एक बार परीक्षा कर देखें

यही एक प्रमाणपत्र काफी है कि हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ प्रकाशन-संस्था 'सस्ता साहित्य मण्डल' की पुस्तकें हमारे यहाँ छपती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छप गई ! छप गई !! छप गई !!!

अपनी प्रति शीघ्र रिज़र्व कराइये !

जैनेन्द्र, अज्ञेय, भगवतीप्रसाद बाजपेयी, विष्णु, श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरिक्सा, अंचल सुमित्राकुमारी सिन्हा, पुष्कर, सर्वदानन्द वर्मा, कांतिचन्द्र सौनरिक्सा आदि श्रेष्ठतम कहानीकारों का संकलन

मूल्य २] **वैजयन्ती** [पृष्ठ संख्या २३२

सम्पादक—चन्द्रशंकर त्रिवेदी

१५ श्रेष्ठ कला-चित्रों का अपूर्व संकलन

मिलने का पता :—मधुकर ऐण्ड ब्रदर्स, चाँदनी चौक, देहली।

शीघ्र आर्डर दीजिये

सचित्र मासिक पत्र

धर्म-दूत

वार्षिक मूल्य १) : नमूना मुफ्त

यदि आप संसार के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष भगवान बुद्ध की जीवनी और उनका उपदेश पढ़ना चाहते हैं, यदि आप बौद्धकालीन भारतीय संस्कृति, सभ्यता, साहित्य और कला का अध्ययन करना चाहते हैं और यदि आप यह जानना चाहते हैं कि बौद्धधर्म के साथ साथ इन वस्तुओं का संसार में कैसे प्रचार हुआ तो शीघ्र ही "धर्म दूत" के ग्राहक बनिये।

पता—

"धर्म-दूत" सारनाथ (बनारस)

बच्चों का एकमात्र मासिक

बानर

सम्पादक—रामनरेश त्रिपाठी

वार्षिक मूल्य २।।)

श्री महादेव देसाई—[महात्मा गांधी के प्राइवेट सेक्रेटरी] लिखते हैं—'बानर' बड़ा स्वच्छ, उत्कृष्ट और निर्मल रुचि-पोषक मासिक है।

घर में बच्चे हों और आप उनकी उन्नति भी चाहते हों तो 'बानर' के ग्राहक बनकर उनको ज्ञान के प्रकाश में पनपने दीजिए।

पता—

मनेजर, 'बानर'

हिन्दी-मन्दिर प्रेस, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी समालोचना के अग्रदूत
मासिक
साहित्य संदेश का ही यह साहस है

शुक्ल-अंक का परिचय

प्रस्तुत अंक तीन खण्डों में है और सचित्र छपा है

परिचय—

१. परिचय — स्वर्गीय श्री रामचन्द्र शुक्ल
२. पंडित रामचन्द्र शुक्ल : जीवन-परिचय — बा० श्यामसुन्दरदास
३. आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल : एक झांकी — श्री केशवचन्द्र शुक्ल
४. स्वर्गीय आचार्य का अन्तिम दर्शन — श्री शिवमंगलसिंह 'सुमन'
५. उन चार वर्षों की याद में — श्री उदय एम० ए०

समीक्षा—

६. शुक्लजी की मानसिक भूमिका — श्री जैनेन्द्र
७. शुक्लजी और हिन्दी की परम्परा — श्री रामविलास शर्मा
८. आ० शु० और आई. ए. रिचर्ड्स — श्री नगेन्द्र एम० ०
९. हिन्दी आलोचना और आचार्य शुक्ल — श्री नन्ददुलारे बाजपेयी
१०. आलोचक पं० रामचन्द्र शुक्ल — श्री रामस्वरूप शर्मा
११. आ० शु० और काशी नागरीप्रचारिणी सभा — श्री रामबहोरी शुक्ल
१२. शुक्लजी का आलोचकों में स्थान — श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी
१३. रामचन्द्र शु० : समालोचक और निबन्धकार — श्री नलिन विलोचन शर्मा एम.ए
१४. प्रबन्धकार शुक्लजी — श्री सद्गुरुशरण अवस्थी
१५. शुक्लजी के मनोवैज्ञानिक निबन्ध — श्री गुलाबराय एम० ए०
१६. हिन्दी-साहित्य का इतिहास — श्री विश्वम्भरदयाल 'मानव' एम.
१७. आ० शु० की सर्वप्रथम मौलिक रचना — श्री शिवपूजन सहाय
१८. शु० के इंदौरवाले भाषण की कुछ विशेषताएँ — श्री प्रभाकर माचवे
१९. शु० के काव्य में रहस्यवाद की झलक — श्री गुलाबराय एम० ए०
२०. अनूदित बुद्धचरित — श्री गोपाल व्यास एम० ए०
२१. शुक्लजी के अनुवाद — श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़
२२. शु० की तीन भूमिकाएँ : जायसी, तुलसी, सूर — श्री कन्हैयालाल सहल एम० ए०, श्री सत्येन्द्र एम. ए. श्री गुलाबर
२३. शुक्लजी की हिन्दी साहित्य को देन — श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय, श्री नलिनीमोहन सान्याल, श्रीवासुदेव शरण अग्रवाल, श्री उदयनारायण तिवारी और श्री प्रभाकर माचवे

आभार—इसमें अनेकों लेखकों के व्यक्तिगत पत्र संकलित हैं, संपादकीय

६ महीनों में चार विशेषांक

दो छप गये : दो और भी छपेंगे

* नमूना मुफ्त मँगाइए *

मूल्य ३) वार्षिक, विद्यार्थियों के लिए २) पता—साहित्य-सन्देश कार्यालय, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बापू' के बाद

श्री घनश्यामदास बिड़ला की दो और नवीन मौलिक पुस्तकें

'डायरी के पन्ने' :: 'बिखरे विचार'

'बापू' पुस्तक ने हिन्दी प्रकाशन-क्षेत्र में एक आश्चर्य उत्पन्न किया

प्रथम संस्करण (२ अक्तूबर १९४०) में ३००० प्रतियाँ छपीं
और द्वितीय संस्करण (फरवरी १९४१) में ५००० प्रतियाँ छपीं

जिनमें से अब केवल २००० शेष रही हैं।

'बापू' की श्रेष्ठता का प्रमाण यही है कि हिन्दी, मराठी, गुजराती, अंग्रेज़ी के सभी पत्रों तथा समस्त भाषाओं के विद्वानों ने 'बापू' को अपने विषय की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक माना है।

गुजराती, मराठी, अंग्रेज़ी, तामिल, तेलगू, कन्नड़ भाषाओं में 'बापू' का अनुवाद हो रहा है।

'बापू' के बाद ही बिड़लाजी की दूसरी पुस्तक

'डायरी के पन्ने'

हिन्दी-संसार में आई। पहले संस्करण में इसकी क़ीमत ज्यादा रही, फिर भी १९४१ के शुरू में १००० प्रतियाँ छपीं और अप्रैल में फिर दूसरा सस्ता संस्करण छापना पड़ा। हिन्दी के कुछ विद्वानों ने तो इसे 'बापू' से भी श्रेष्ठ पाया है।

'बिखरे विचार'

बिड़लाजी के चुने हुए लेखों और पत्रों का संग्रह है। पर इसमें के कुछ लेख (जैसे 'मुझसे सब अच्छे', 'पानी में भी मीन पियासी', 'हम पराधीन क्यों हैं ?' आदि) हिन्दी में पर्याप्त प्रसिद्ध हो चुके हैं। इन सबको संग्रह रूप में पाने से पाठकों को विचार, मनन और मनोरंजन की भरपूर सामग्री मिलती है। यह निबन्धों का एक उत्कृष्ट संग्रह है।

ये तीनों पुस्तकें प्रत्येक पुस्तक-प्रेमी के घर होनी चाहिएँ। वे उसके पुस्तकालय की शोभा हैं।

'मण्डल' के प्रकाशन

'बापू' : मूल्य ||=), सजिल्द १|), हाथ कागज की सजिल्द २)
'डायरी के पन्ने' : मूल्य |||) सजिल्द १|)
'मण्डल' से प्राप्य
'बिखरे विचार' : मूल्य १||), २)

'मण्डल की' नई पुस्तकें भी मंगाइए

सस्ता-साहित्य मण्डल, कनाट सर्कस, नई दिल्ली

उसकी शाखाओं चर्खासंघ या खादी भण्डारों से लीजिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Regd No L 6

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक खुश ख़बर

नये वर्ष से 'जीवन-साहित्य' के मूल्य में कमी

२००० ग्राहकों को पत्र मुफ्त में

इस अंक के साथ 'जीवन-साहित्य' का पहला वर्ष समाप्त होता है। कठिनाइयों यूरोपीय युद्ध के कारण छपाई तथा काग़ज की घोर महँगी के बीच 'जी० सा०' से नये वर्ष में प्रवेश कर रहा है। इन कठिनाइयों के बावजूद 'जी० सा०' हिन्दी-प्रेमियों की सेवा नये साधनों और नये रूपों में करने को अग्रसर हो रहा है

पाठकों को सुनकर खुशी होगी कि नये वर्ष से ग्राहक बननेवालों के लि सा०' का वार्षिक मूल्य २) के बजाय १॥) हो जायगा। जो पुराने ग्राहक हैं और नये में ग्राहक बने रहना चाहते हैं उनसे १) ही लिया जायगा। जो 'मण्डल' के ग्राहक हैं भी १) लिया जायगा। जो १॥) देकर 'जीवन-साहित्य' के ग्राहक बनेंगे उनको वर्ष के लिए 'मण्डल' का भी ग्राहक मान लिया जायगा और उनको 'मण्डल' की पु एक वर्ष तक पौने मूल्य में मिलेंगी। पर

ललचानेवाली ख़ास बात

तो यह है कि जो सज्जन १०) की क़ीमत की मण्डल की पुस्तकें एक मुश्त ख़रीदेंगे उ

'जीवन-साहित्य' एक वर्ष तक मुफ्त

दिया जायगा। ग्राहक १०) की पुस्तकें लेकर, 'मण्डल' की सब शाखाओं तथा कार्यालय से 'जीवन-साहित्य' मुफ्त में ले सकेंगे। इस प्रकार १०) की पुस्तकें लेने पर 'जी० सा०' मुफ्त में प्राप्त कर लेने पर ग्राहकों से मण्डल की पुस्तकें एक वर्ष तक पौने में मिलती रहेगी। इन १०) की पुस्तकों पर ग्राहकों को 'मण्डल' के नियम नं० ७ के अनु =) रुपया कमीशन मिलेगा।

इसके अनुसार अगले दो महीनों तक ही ग्राहक पुस्तकें मँगा सकेंगे।

व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

...ध्याय द्वारा हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नई दिल्ली, में छपकर वहींसे मार्तण्ड उपाध्याय

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

371
255
116

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain.